धर्मपाल समग्र लेखन

६.

भारत में गोहत्या का अंग्रेजी मूल

धर्मपाल

अनुवाद

राम गोपाल सिंह जदौन

धर्मपाल समग्र लेखन ६

भारत में गोहत्या का अंग्रेजी मूल

लेखक
धर्मपाल

सम्पादक
इन्दुमति काटदरे

अनुवाद
राम गोपाल सिंह जदौन

प्रकाशक
पुनरुत्थान ट्रस्ट,
४, वसुंधरा सोसायटी, आनन्दपार्क, कांकरिया, अहमदाबाद - ३८००२८
दूरभाष : ०७९ - २५३२२६५५

मुद्रक
साधना मुद्रणालय ट्रस्ट
सिटी मिल कम्पाउण्ड, कांकरिया मार्ग, अहमदाबाद - ३८००२२
दूरभाष : ०७९ - २५४६७७९०

मूल्य : रु. ३७५-००

प्रति
१,०००

प्रकाशन तिथि
चैत्र शुक्ल १, वर्षप्रतिपदा, युगाब्द ५१०९
२० मार्च [illegible]

अनुक्रमणिका

धर्मपाल समग्र लेखन

ग्रन्थ सूची

१. भारतीय चित्त, मानस एवं काल

२. १८ वीं शताब्दीमें भारतमें विज्ञान एवं तंत्रज्ञान : कतिपय समकालीन यूरोपीय वृत्तान्त
Indian Science and Technology in the Eighteenth Century : Some Contemporary European Accounts

३. भारतीय परम्परामें असहयोग
Civil Disobedience in Indian Tradition

४. रमणीय वृक्ष : १८ वीं शताब्दी में भारतीय शिक्षा
The Beautiful Tree : Indigenous Indian Education in the Eighteenth Century

५. पंचायत राज एवं भारतीय राजनीति तंत्र
Panchayat Raj and Indian Polity

६. भारत में गोहत्या का अंग्रेजी मूल
The British Origin of Cow slaughter in India

७. भारतकी लूट एवं बदनामी : १९ वीं शताब्दी की अंग्रेजों की जिहाद
Despoliation and Defaming of India :
The Early Nineteenth Century of British crusade

८. गांधी को समझें
Understanding Gandhi

९. भारत की परम्परा
Eassys in Tradition, Recovery and Freedom

१०. भारत का पुनर्बोध
Rediscovering India

मनोगत

गांधीजी के अगस्त १९४२ के 'अंग्रेजों, भारत छोड़ो' आन्दोलन के कुछ समय पूर्व से ही मैं देश के स्वतन्त्रता आन्दोलन से पूर्णरूप से प्रभावित हो चुका था। उस समय मैंने जीवन के बीस वर्ष पूरे किए थे। अगस्त १९४२ में, हम दो चार मित्र, जिनमें मित्र श्री जगदीश प्रसाद मित्तल प्रमुख थे, उत्तरप्रदेश से 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के लिए ही कांग्रेस के अखिल भारतीय सम्मेलन में भाग लेने मुम्बई गए। मैंने उससे पूर्व १९३० का लाहौर का कांग्रेस सम्मेलन देखा था, परन्तु मुम्बई के सम्मेलन का स्वरूप और अपेक्षाएँ हमारे लिए एकदम नई थीं। सम्मेलन में हमें दर्शक के रूप में भाग लेने की अनुमति मिल गई। हमने वहाँ की सम्पूर्ण कार्यवाही देखी, सभी भाषण सुने। ८ अगस्त की सायंकाल का गांधीजी का सवा दो घण्टे का भाषण तो मुझे आज भी कुछ कुछ याद है। उन्होंने प्रथम डेढ़ घण्टा हिन्दी में भाषण दिया, फिर पौन घण्टा अंग्रेजी में। सम्मेलन में ५० हजार से अधिक भीड़ थी। सभी उपस्थित लोगों से, सभी भारतवासियों से तथा विश्व के सभी देशों से गांधीजी का मुख्य निवेदन तो यही था कि वे सभी भारत और अंग्रेजों के वार्तालाप में सहायक हों । हमारे जैसे अधिकांश लोगों ने उस समय विचार किया होगा कि आन्दोलन का प्रारम्भ तो कुछ समय बाद ही होगा।

परन्तु दूसरे ही दिन सवेरे ५-६ बजे से ही पूरे मुम्बई में हलचल शुरू हो गई। मुम्बई से बाहर जानेवाली रेलागाड़ियां दोपहर के बाद तक बन्द रहीं। अंग्रेज और भारतीय पुलिस व्यापक रूप से लोगों की गिरफ्तारी करती रही। अन्ततः ९ अगस्त को शाम तक हमें दिल्ली जाने के लिए गाड़ी मिल गई। परन्तु रास्ते भर हलचल थी और गिरफ्तारियां हो रही थीं। हममें से अधिकांश लोग अपनी अपनी जगह पहुँचकर 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' आन्दोलन शुरू करनेवाले थे।

दिल्ली पहुँचकर मैं अन्य साथियों के साथ आसपास के क्षेत्रों में चल रहे आन्दोलन में जुड़ गया। कितने महीने तक इसी में ही संलग्न रहा। उस बीच अनेक गाँवों और कसबों में भी गया। वहाँ लोगों के घरों में रहा। वहीं से ही भारत के सामान्य जीवन

के साथ मेरा परिचय प्रारम्भ हुआ। दिसम्बर १९४२ में अनेक घनिष्ठ मित्रों ने सलाह दी की मुझे आन्दोलन के काम के लिए मुम्बई जाना चाहिए। इसलिए फरवरी १९४३ में मैं मुम्बई गया और वहाँ रहा। आन्दोलन का साहित्य लेकर वाराणसी और पटना भी गया। मुम्बई में गांधीजी के निकटस्थ स्वामी आनन्द ने मेरे रहने खाने की व्यवस्था की थी। वे अलग अलग लोगों से मेरा परिचय भी कराते थे। वस्तुत: मेरा मुम्बई के साथ परिचय तो उनके कारण ही हुआ। मुम्बई में ही मैं श्रीमती सुचेता कृपलानी से भी एक दो बार मिला। उसी प्रकार गिरिधारी कृपलानी से मिलना हुआ। उस समय मैं खादी का धोती कुर्ता पहनता था और स्वामी आनन्द आदि के आग्रह के बाद भी मैंने कभी पतलून आदि नहीं पहना।

मार्च १९४२ में मैं मुंबई से दिल्ली और उत्तरप्रदेश गया। अप्रैल १९४३ में दिल्ली के चाँदनीचौक पुलिस थाने में मेरी गिरफ्तारी हुई और लगभग दो महीने अलगअलग थानों में रहा। वहाँ मेरी गहन पूछताछ हुई, धमकाया भी गया। यद्यपि मारपीट नहीं हुई। जून १९४३ में मुझे सरकार के आदेशानुसार दिल्ली से निष्कासित किया गया। एकाध वर्ष बाद यह निष्कासन समाप्त हुआ।

लम्बे अरसे से मेरा मन गाँव में जाकर रहने और काम करने का था। मेरे एक पारिवारिक मित्र गोरखपुर जिले के एक हजार एकड़ जितने विशाल फार्म के मैनेजर थे। उन्होंने मुझे फार्म पर आकर रहने के लिए निमंत्रण दिया। यह फार्म सुन्दर तो था परन्तु यह तो वहाँ रहनेवालों से कसकर परिश्रम कराने की जगह थी। गाँव जैसा सामूहिकता का वातावरण वहाँ नहीं होता था। वहाँ गाँव के लोगों से मिलने, बात करने का अवसर भी नहीं मिलता था। परन्तु एक बात मैंने देखी कि वहाँ लोग गरीब होने के बाद भी प्रसन्नचित्त दिखाई देते थे।

एक वर्ष बाद जून अथवा जुलाई १९४४ में यह फार्म छोड़ कर मैं वापस आ गया। तत्काल ही मेरठ के मित्रों ने मुझे श्रीमती मीराबहन के पास जाने की सलाह दी। मीरा बहन रूड़की के निकट एक आश्रम स्थापित करने का विचार कर रही थीं। बात सुनकर मैंने पहले तो मना करने का प्रयास किया परन्तु मित्रों के आग्रह के कारण अक्टूबर १९४४ में मैं मीराबहन के पास गया। रूड़की से हरिद्वार की दिशा में सात-आठ मील दूर गाँव वालों ने मीरा बहन को आश्रम निर्माण के लिए जमीन दी थी। आश्रम हरिद्वार से बारह मील दूर था। आश्रम का नाम दिया गया 'किसान आश्रम'। यहीं से मेरा ग्रामजीवन और उसके रहनसहन के साथ परिचय शुरू हुआ। उनकी कुशलताएँ और अपने व्यवहार, रहन सहन तथा उपाय ढूंढ निकालने की योग्यता मुझे यहीं जानने

को मिली। मैं तीन वर्ष किसान आश्रम में रहा। उसके बाद पाकिस्तान से आए शरणार्थियों के पुनर्वसन का कार्य चलता था उसमें सहयोग देने के लिए मैं दिल्ली गया। उस दौरान मेरा अनेक लोगों के साथ परिचय हुआ। उसमें मुख्य थीं कमलादेवी चट्टोपाध्याय और डॉ. राममनोहर लोहिया। १९४७ से १९४९ के दौरान श्री रामस्वरूप, श्री सीताराम गोयल, श्री रामकृष्ण चाँदीवाले (उनके घर में मैं महीनों रहा), श्री नरेन्द्र दत्त, श्रीमती स्वर्णा दत्त, श्री लक्ष्मीचन्द जैन, श्री रूपनारायण, श्री एस. के. सक्सेना, श्री ब्रजमोहन तूफ़ान, श्री अमरेश सेन, श्री गोपालकृष्ण आदि के साथ भी मित्रता हुई।

दिल्ली में भारतीय सेना के कुछ अधिकारियों ने कहा कि फिलिस्तीन के यहूदी इज़रायल नामक छोटा देश बना रहे हैं। वहाँ सामूहिकता के आधार पर जीवन रचना के महत्त्वपूर्ण प्रयास हो रहे हैं। उन लोगों ने इतने आकर्षक ढंग से उसका वर्णन किया कि मैंने इज़रायल जाकर यह देखकर आने का निर्णय किया। नवम्बर १९४९ में इज़रायल जाने के लिए मैं इंग्लैण्ड गया। वहाँ आठदस महीने रह कर नवम्बर-दिसम्बर में मैं पत्नी फ़िलिस के साथ इज़रायल तथा अन्य अनेक देशों में गया। इज़रायल के लोगों ने जो कर दिखाया था वह तो बहुत प्रशंसनीय और श्रेष्ठ कार्य था परन्तु भारतीय ग्रामरचना और भारतीय व्यवस्थाओं में उस का बहुत उपयोग नहीं है, ऐसा भी लगा।

जनवरी १९५० में मैं और फिलिस हृषीकेश के निकट निर्माणाधीन, मीराबहन के 'पशुलोक' में पहुँच गये। वहाँ मीराबहनने, मेरे अन्य मित्रों, और सविशेष मार्कसवादी मित्र जयप्रकाश शर्मा के साथ मिलकर एक नए छोटे गाँव की रचना की शुरुआत की थी। उसका नाम रखा गया 'बापूग्राम'। गाँव ५० घरों का था। उसमें सभी पहाड़ी और मैदानी जाति के लोग साथ रहेंगे ऐसा प्रयास किया था। यह भी ध्यान रखा गया कि लोग अत्यन्त गरीब हों। परंतु उस के कारण गाँव की रचना का काम अधिक कठिन हो गया। गाँव के लोगों के कष्ट बढ़े। गाँव में ५०० एकड़ जमीन थी, किन्तु अनेक जंगली जानवर भी वहाँ घूमते थे। हाथी भी वहाँ आता-जाता रहता। इस लिए प्रारम्भ में खेती भी बहुत दुष्कर थी। खेती में कुछ बचता ही नहीं था। आज भी यह गाँव जैसे तैसे टिका हुआ है। १९५७ से गाँव के साथ मेरा सम्बन्ध ठीक-ठीक बढ़ा। मैं विभिन्न पंचायतों का अध्ययन करता था। इसलिए गाँव के लोगों की समझदारी और अपने प्रश्नों की ओर देखने और उसे हल करने का उनका दृष्टिकोण भलीभाँति ध्यान में आने लगा। इस बात का भी एहसास होने लगा कि अपने अधिकांश शहरी और समृद्ध लोग गाँव को जानते ही नहीं। राजस्थान, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा आदि राज्यों में तो यह एहसास सविशेष हुआ। इस एहसास के कारण ही मैं १९६४-६५ में सन् १९०० के आसपास के अंग्रेजों

द्वारा तैयार किए गए दस्तावेजों के अध्ययन की ओर मुड़ा।

लगभग १७५० से १८५० तक अंग्रेजों ने सरकारी अथवा गैर सरकारी स्तर पर इंग्लैण्ड में रहने वाले अपने अधिकारियों तथा परिचितों को लिखे पत्रों की संख्या शायद करोड़ों दस्तावेजों में होगी। उसमें ८० से ८५ प्रतिशत की प्रतिलिपियां भारत के कोलकता, मद्रास, मुम्बई, दिल्ली, लखनऊ आदि के अभिलेखागारों में भी हैं। लन्दन की ब्रिटिश इंड़िया ऑफ़िस में और अन्य अनेक अभिलेखागारों में पाँच से सात प्रतिशत ऐसे भी दस्तावेज होंगे जो भारत में नहीं होंगे। उसमें से बहुत से ऐसे हैं जिनके अध्ययन से अंग्रेजों ने भारत में क्या किया यह समझ में आता है। उस समय के इंग्लैण्ड् के समाज और शासन तंत्र की यदि हमें जानकारी होगी तो अंग्रेजों ने भारत में जो किया उसे समझने में सहायता मिल सकती है।

१९५७ से ही, जब मैं एवार्ड (Association of Voluntary Agencies for Rural Development [AVARD]) का मंत्री बना तब से ही अनेक प्रकार से सीखने का अवसर मिला और अनेक व्यक्तियों की अनेक प्रकार से सहायता भी मिली। उसमें मुख्य थे श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे और श्री जयप्रकाश नारायण। नागपुर के श्री आर. के. पाटिल ने भी १९५८ से १९८० तक इस काम में बहुत रुचि ली और अलग अलग ढंग से सहायता करते रहे। श्री आर. के. पाटिल पुराने आई. सी. एस. थे, योजना आयोग के सदस्य थे, पूर्व मध्यप्रदेश के मंत्री थे और विनोबा जी के निकटवर्ती थे। १९७१ से गांधी शांति प्रतिष्ठान के मंत्री श्री राधाकृष्ण का सहयोग भी बहुत मूल्यवान था। इसी प्रकार गांधी विद्या संस्थान और पटना की अनुग्रह नारायण सिन्हा इन्स्टीटयूट का भी सहयोग मिला। डॉ. डी. एस. कोठारी भी शुरू से ही उसमें रुचि लेते थे।

१९७१ में 'इंड़ियन सायन्स एण्ड टेक्नोलॉजी इन द एटीन्थ सेन्चुरी' Indian Science and Technology in the Eighteenth Century और 'सिविल डिसओबिड़ियन्स इन इंड़ियन ट्रेड़िशन' Civil Disobedience in Indian Tradition ऐसी दो पुस्तकें प्रकाशित हुई। उनका विमोचन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष डॉ. दौलतसिंह कोठारी ने किया। पहले ही दिन से उस पुस्तक का परिचय करनेवाले प्रजा समाजवादी पक्ष के नेता और साहित्यकार श्री गंगाशरण सिन्हा, विवेकानंद केन्द्र, कन्याकुमारी के श्री एकनाथ रानडे और अमेरिका की बर्कले यूनिवर्सिटी के प्रोफ़ेसर यूजिन ईर्शिक थे। ईर्शिक के मतानुसार 'सिविल डिसओबिडियन्स इन ईंड़ियन ट्रेड़िशन' मेरी सबसे उत्तम पुस्तक थी। श्री रामस्वरुप और श्री ए. बी. चटर्जी, जो आई. सी. एस. थे और मिनिस्ट्री ऑफ़ स्टेट्स के सचिव थे, उनके मतानुसार 'इंड़ियन सायन्स एण्ड

टेक्नोलॉजी इन द एटीन्थ सेन्चुरी' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पुस्तक थी। १९७१ से १९८५ के दौरान इन दोनों पुस्तकों का अनेक प्रकार से उल्लेख होता रहा। देशभर में इसका उल्लेख करनेवालों में मुख्य थे श्री जयप्रकाश नारायण, श्री रामस्वरुप और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के श्री एकनाथ रानड़े, प्रोफ़ेसर राजेन्द्रसिंह और वर्तमान सरसंघचालक श्री सुदर्शन जी।

अभी तक ये पुस्तकें मुख्य रूप से अंग्रेजी में ही हैं। उसका एक विशेष कारण यह है कि उसमें समाविष्ट दस्तावेज सन् १८०० के आसपास अंग्रेजों और अन्य यूरोपीय लोगों ने अंग्रेजी में ही लिखे हैं। प्रारंभ में ही यह सब हिन्दी अथवा अन्य भारतीय भाषा में प्रकाशित करना बहुत मुश्किल लगता था। लेकिन जब तक यह सब भारतीय भाषाओं में प्रकाशित नहीं होता तब तक सर्वसामान्य लोग दो सौ वर्ष पूर्व के भारत के विषय में न जान सकेंगे, न समझ सकेंगे, और न ही चर्चा कर सकेंगे।

इसलिए इन पुस्तकों का अब हिन्दी भाषा में अनुवाद प्रकाशित हो रहा है यह बहुत प्रशंसनीय कार्य है।[१]

मैं १९६६ तक अधिकांशतः इंग्लैण्ड और सविशेष लन्दन में रहा। उस समय भारत से सम्बन्धित वहाँ स्थित दस्तावेंजों में से पांच अथवा दस प्रतिशत सामग्री का मैंने अवलोकन किया होगा। उनमें से कुछ मैंने ध्यान से देखे, कुछ की हाथ से नकल उतार ली, अनेकों की छायाप्रति बना ली। उस दौरान बीच बीच में भारत आकर कोलकता, लखनऊ, मुम्बई, दिल्ली और चेन्नई के अभिलेखागारों में भी कुछ नए दस्तावेज देखे।

उन दस्तावेजों के आधार पर अभी गुजरात से प्रकाशित हो रही अधिकांश पुस्तकें तैयार की गई हैं। ये पुस्तकें जिस प्रकार सन् १८०० के समय के भारत से सम्बन्धित हैं उसी प्रकार १८८० से १९०३ के दौरान गोहत्या के विरोध में हुए आन्दोलन के और १८८० के बाद के दस्तावेजों के आधार पर लिखी गई हैं। उनमें एकाध पुस्तक इंग्लैण्ड और अमेरिका के समाज से भी सम्बन्धित है। इसकी सामग्री इंग्लैण्ड में मिली है और यह पढ़ी गई पुस्तकों के आधार पर तैयार की गई है।

१९६० से शुरू हुए इस प्रयास का मुख्य उद्देश्य दो सौ वर्ष पूर्व के भारतीय समाज को समझना ही था। लेकिन मात्र जानना, समझना पर्याप्त नहीं है। उसका इतना महत्त्व भी नहीं है। महत्त्व तो यह जानने समझने का है कि अंग्रेजों से पूर्व का स्वतंत्र भारत, जहाँ उसकी स्थानिक इकाइयां अपनी अपनी दृष्टि और आवश्यकतानुसार अपना समाज चलाती थीं, वह कैसा रहा होगा। अचानक १९६४-६५ में चेन्नई के एगमोर

अभिलेखागार में ऐसी सामग्री मुझे मिली, और ऐसी ही सामग्री इग्लैण्ड में उससे भी सरलता से मिली। यदि मैं पोर्टुगल और हॉलेण्ड की भाषा जानता तो १६ वीं, १७ वीं सदी में वहाँ भी भारत के विषय में क्या लिखा गया है यह जान पाता। खोजने के बाद भी चालीस वर्ष पूर्व भारतीय भाषाओं में इस प्रकार के वर्णन नहीं मिले।

हमें तो गत दो तीन हज़ार वर्ष के भारत और उसके समाज को समझने की आवश्यकता है। हम जब उस तरह से समझेंगे तभी भारतीय समाज की पारम्परिक व्यवस्थाओं, तंत्रों, कुशलताओं और आज की अपनी आवश्यकताओं और अपनी क्षमता के अनुसार पुनःस्थापना की रीति भी जान लेंगे और समझ लेंगे।

भारत बहुत विशाल देश है। चार पाँच हज़ार वर्षों में पड़ोसी देश - ब्रह्मदेश, श्रीलंका, चीन, जापान, कोरिया, मंगोलिया, इंड़ोनेशिया, वियतनाम, कम्बोड़िया, मलेशिया, अफ़गानिस्तान, ईरान आदि के साथ उसका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। भारतीयों का स्वभाव और उनकी मान्यताएँ उन देशों के साथ बहुत मिलती जुलती हैं। सन् १५०० के बाद एशिया पर यूरोप का प्रभाव बढ़ा उसके बाद उन सभी पडोसी देशों के साथ की पारस्परिकता लगभग समाप्त हो गई है। उसे पुन: स्थापित करना ज़रूरी है। इसी प्रकार यूरोप, खासकर इंग्लैण्ड और अमेरिका के साथ तीन सौ चार सौ वर्षों से जो सम्बन्ध बढ़े हैं उनका भी समझ बूझकर फिर से मूल्यांकन करना जरूरी है। यह हमारे लिए और उनके लिए भी श्रेयस्कर होगा। देशों को बिना जरूरत से एक दूसरे के अधिक निकट लाना अथवा एक देश दूसरे देश की ओर ही देखता रहे यह भविष्य की दृष्टि से भी कष्टदायी साबित हो सकता है।

मकरसंक्राति
१४, जनवरी २००५
पौष शुद ५, युगाब्द ५१०६

धर्मपाल
आश्रम प्रतिष्ठान
सेवाग्राम
जिला वर्धा (महाराष्ट्र)

---

१. यह प्रस्तावना गुजराती अनुवाद के लिये लिखी गई है। हिन्दी अनुवाद के लिये श्री धर्मपालजी की ही सूचना के अनुसार उसे यथावत् रखा है : मूल प्रस्तावना हिन्दी में ही है, गुजराती के लिये उसका अनुवाद किया गया था। - सं.

सम्पादकीय

१.

सन् १९९२ के जनवरी मास में चैन्नई में विद्याभारती का प्रधानाचार्य सम्मेलन था। उस सम्मेलन में श्री धर्मपालजी पधारे थे। उस समय पहली बार The Beautiful Tree के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त हुई। दो वर्ष बाद कोईम्बतूर में यह पुस्तक खरीद की और पढ़ी। पढ़कर आश्चर्य और आघात दोनों का अनुभव हुआ। आश्चर्य इस बात का कि हम इतने वर्षों से शिक्षा क्षेत्र में कार्यरत हैं तो भी इस पुस्तक में निरूपित तथ्यों की लेशमात्र जानकारी हमें नहीं है। आघात इस बात का कि शिक्षा विषयक स्थिति ऐसी दारुण है तो भी हम उस विषय में कुछ कर नहीं रहे हैं। जो चल रहा है उसे सह लेते हैं और उसे स्वीकृत बात ही मान लेते हैं ।

तभी से उस पुस्तक का प्रथम हिन्दी में और बाद में गुजराती में अनुवाद करके अनेकानेक कार्यकर्ताओं और शिक्षकों तक उसे पहुँचाने का विचार मन में बैठ गया। परन्तु वर्ष के बाद वर्ष बीतते गये। प्रवास की निरन्तरता और अन्यान्य कार्यो में व्यस्तता के कारण मन में स्थित विचार को मूर्त स्वरूप दे पाने का अवसर नहीं आया। इस बीच विद्या भारती विदर्भ ने इसका संक्षिप्त मराठी अनुवाद प्रकाशित किया। 'भारतीय चित्त, मानस एवं काल', 'भारत का स्वधर्म' जैसी पुस्तिकायें भी पढ़ने में आयीं। अनेक कार्यकर्ता भी इसका अनुवाद होना चाहिये ऐसी बात करते रहे। इस बीच पूजनीय हितरुचि विजय महाराजजी ने गोवा के 'द अदर इंड़िया बुक प्रेस' द्वारा प्रकाशित पांच पुस्तकों का संच दिया और पढ़ने के लिये आग्रह भी किया। इन सभी बातों के निमित्त से अनुवाद भले ही नहीं हुआ परन्तु अनुवाद का विचार मन में जाग्रत ही रहा। उसका निरन्तर पोषण भी होता रहा। चार वर्ष पूर्व मुझे विद्याभारती की राष्ट्रीय विद्वत् परिषद के संयोजक का दायित्व मिला। तब मन में इस अनुवाद के विषय में निश्चय सा हुआ। उस विषय में कुछ ठोस बातें होने लगीं। अन्त में पुनरुत्थान ट्रस्ट इस अनुवाद का प्रकाशन करेगा ऐसा निश्चय युगाब्द ५१०६ की व्यास पूर्णिमा को हुआ। सर्व प्रथम तो यह अनुवाद

हिन्दी में ही होना था। उसके बाद हिन्दी एवं गुजराती दोनों भाषओं में करने का विचार हुआ। परन्तु इस कार्य के व्याप को देखते हुए लगा कि दोनों कार्य एक साथ नहीं हो पायेंगे। एक के बाद एक करने पड़ेंगे।

साथ ही ऐसा भी लगा कि यह केवल प्रकाशन के लिये प्रकाशन, अनुवाद के लिये अनुवाद तो है नहीं। इसका उपयोग विद्वज्जन करें और हमारे छात्रों तक इन बातों को प्रहुँचाने की कोई ठोस एवं व्यापक योजना बने इस हेतु से इस सामग्री का भारतीय भाषाओं में होना आवश्यक है। ऐसे ही कार्यों को यदि चालना देनी है तो प्रथम इसका क्षेत्र सीमित करके ध्यान केन्द्रित करना पड़ेगा। इस दृष्टिसे प्रथम इसका गुजराती अनुवाद प्रकाशित करना ही अधिक उपयोगी लगा।

निर्णय हुआ और तैयारी प्रारम्भ हुई। सर्व प्रथम श्री धर्मपालजी की अनुमति आवश्यक थी। हम उन्हें जानते थे परन्तु वे हमें नहीं जानते थे। परन्तु हमारे कार्य, हमारी योजना और हमारी तैयारी जब उन्होंने देखी तब उन्होंने अनुमति प्रदान की। साथ ही उन्होंने अपनी और पुस्तकों के विषय में भी बताया। इन सभी पुस्तकों के अनुवाद का सुझाव भी दिया।

हम फिर बैठे। फिर विचार हुआ। अन्त में निर्णय हुआ कि जब कर ही रहे हैं तो काम पूरा ही किया जाय।

इस प्रकार एक से पांच और पांच से ग्यारह पुस्तकों के अनुवाद की योजना आखिर बन गई।

योजना तो बन गई परन्तु आगे का काम बड़ा विस्तृत था। भिन्न भिन्न प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित मूल अंग्रेजी पुस्तकें प्राप्त करना, उन्हें पढ़ना, उनमें से चयन करना, अनुवादक निश्चित करना आदि समय लेनेवाला काम था। अनुवादक मिलते गये, कई पक्के अनुवादक खिसकते गये, अनेपक्षित रूप से नये मिलते गये और अन्त में पुस्तक और अनुवादकों की जोड़ी बनकर कार्य प्रारम्भ हुआ और सन २००५ और युगाब्द ५१०६ की वर्ष प्रतिपदा को कार्य सम्पन्न भी हो गया। १६ अप्रैल २००५ को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के परम पूजनीय सरसंघचालक माननीय सुदर्शनजी एवं स्वयं श्री धर्मपालजी की उपस्थिति में तथा अनेपक्षित रूप से बडी संख्या में उपस्थित श्रोतासमूह के मध्य इन गुजराती पुस्तकों का लोकार्पण हुआ।

प्रकाशन के बाद भी इसे अच्छा प्रतिसाद मिला। विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, ग्रन्थालयों में एवं विद्वज्जनों तक इन पुस्तकों को पहुँचानें में हमें पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई। साथ ही साथ महाविद्यालयों एवं विद्यालयों के अध्यापकों एवं

प्रधानाचार्यों के बीच इन पुस्तकों को लेकर गोष्ठियों का आयोजन भी हुआ।

इसके बाद सभी ओर से हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने का आग्रह बढने लगा। स्वयं श्री धर्मपालजी भी इस कार्य के लिये प्रेरित करते रहे। अनेक वरिष्ठजन भी पूछताछ करते रहे। अन्त में इन ग्रन्थों के हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन तय हुआ। गुजराती अनुवाद कार्य का अनुभव था इसलिये अनुवादक ढूँढ़ने में इतनी कठिनाई नहीं हुई। सौभाग्य से अच्छे लोग सरलता से मिलते गये और कार्य सम्पन्न होता गया। आज यह आपके सामने है।

इस संच में कुल दस पुस्तकें हैं। (१) भारतीय चित्त, मानस एवं काल (२) १८ वीं शताब्दी में भारत में विज्ञान एवं तंत्रज्ञान (३) भरतीय परम्परा में असहयोग (४) रमणीय वृक्ष : १८ वीं शताब्दी में भारतीय शिक्षा (५) पंचायत राज एवं भारतीय राजनीति तंत्र (६) भारत में गोहत्या का अंग्रेजी मूल (७) भारत की लूट एवं बदनामी (८) गांधी को समझें (९) भारत की परम्परा एवं (१०) भारत का पुनर्बोध। सर्व प्रथम पुस्तक '१८ वीं शताब्दी में भारत में विज्ञान एवं तंत्रज्ञान' १९७१ में प्रकाशित हुई थी और अन्तिम पुस्तक 'भारत का पुनर्बोध' सन् २००३ में। इनके विषय में तैयारी तो सन् १९६० से ही प्रारम्भ हो गई थी। इस प्रकार यह ग्रंथसमूह चालीस से भी अधिक वर्षों के निरन्तर अध्ययन एवं अनुसन्धान का परिणाम है।

२.

विश्व में प्रत्येक राष्ट्र की अपनी एक विशिष्ट पहचान होती है। यह पहचान उसकी जीवनशैली, परम्परा, मान्यताओं, दैनन्दिन व्यवहार आदि के द्वारा निर्मित होती है। उसे ही संस्कृति कहते हैं।

सामान्य रूप से विश्व में दो प्रकार की विचारशैली, व्यवहारशैली दिखती हैं। एक शैली दूसरों को अपने जैसा बनाने की आकांक्षा रखती है। अपने जैसा ही बनाने के लिए यह जबर्दस्ती, शोषण, कत्लेआम आदि करने में भी हिचकिचाती नहीं, यहां तक की ऐसा करने में दूसरा समाप्त हो जाय तो भी उसे परवाह नहीं। दूसरी शैली ऐसी है जो सभी के स्वत्व का समादर करती है, उनके स्वत्व को बनाए रखने में सहायता करती है। ऐसा करने में दोनों एक दूसरे स प्रभावित होती हैं और सहज परिवर्तन होता रहता है फिर भी स्वत्व बना रहता है।

यह तो स्पष्ट है कि इन दोनों में से पहली यूरोपीय अथवा अमेरिकी शैली है तो दूसरी भारतीय। इन दोनों के लिए क्रमश: 'पाश्चात्य' और 'प्राच्य' ऐसी अधिक व्यापक

संज्ञा का प्रयोग हम करते हैं।

यह तो सर्वविदित है कि भारतीय संस्कृति विश्व में अति प्राचीन है। केवल प्राचीन ही नहीं तो समृद्ध, सुव्यवस्थित, सुसंस्कृत और विकसित भी है।

परन्तु आज से ५०० वर्ष पूर्व यूरोप ने विस्तार करना शुरू किया। समग्र विश्व में फैल जाने की उसको आकांक्षा थी। विश्व के अन्य देशों के साथ भारत भी उसका लक्ष्य था। इंग्लैण्ड में ईस्ट इंड़िया कम्पनी बनी। वह भारत में आई। समुद्रतटीय प्रदेशों में उसने अपने व्यापारिक केन्द्र बनाए। उन केन्द्रों को किले का नाम और रूप दिया, उनमें सैन्य भी रखा, धीरे धीरे व्यापार के साथ साथ प्रदेश जीतने और अपने कब्जे में लेने का काम शुरू किया, साथ ही साथ ईसाईकरण भी शुरू किया। सन् १८२० तक लगभग सम्पूर्ण भारत अंग्रेजों के कब्जे में चला गया।

भारत को अपने जैसा बनाने के लिए अंग्रेजों ने यहाँ की सभी व्यवस्थाओं-प्रशासकीय और शासकीय, सामाजिक और सांस्कृतिक, आर्थिक और व्यावसायिक, शैक्षणिक और नागरिक को तोड़ना शुरू किया। उन्होंने नए कायदे कानून बनाए, नई व्यवस्थाएँ बनाईं, संरचनाओं का निर्माण किया, नई सामग्री और नई पद्धति की रचना की और जबरदस्ती से उसका अमल भी किया। यह भी सच है कि उन्होंने भारत में आकर जो कुछ किया उसमें से अधिकांश तो इंग्लैण्डमें अस्तित्व में था। इसके कारण भारत दरिद्र होता गया। भारत में वर्ग संघर्ष पैदा हुए। लोंगो का आत्मसम्मान और गौरव नष्ट हो गया। मौलिकता और सृजनशीलता कुंठित हो गई, मूल्यों का ह्रास हुआ। मानवीयता का स्थान यांत्रिकता ने लिया और सर्वत्र दीनता व्याप्त हो गई। लोग स्वामी के स्थान पर दास बन गए। एक ऐसे विराट, राक्षसी, अमानुषी व्यवस्था के पुर्जे बन गये जिसे वे बिल्कुल मानते नहीं, समझते नहीं और स्वीकार भी करते नहीं थे, क्योंकि यह उनके स्वभाव के अनुकूल नहीं था।

भारत की शिक्षाव्यवस्था की उपेक्षा करते करते उसे नष्ट कर उसके स्थान पर यूरोपीय शिक्षा लागू करने, प्रतिष्ठित करने का कार्य भारत को तोडने की प्रक्रिया में सिरमौर था। क्योंकि यूरोपीय शिक्षाप्राप्त लोगों के विचार, मानस, व्यवहार, दृष्टिकोण सभी कुछ बदलने लगा। उसका परिणाम सर्वाधिक शोचनीय और घातक हुआ। हमें गुलामी रास आने लगी। दैन्य अखरना बन्द हो गया। अंग्रेजों का दास बनने में ही हमें गौरव का अनुभव होने लगा। जो भी यूरोपीय है वह विकसित है, आधुनिक है, श्रेष्ठ है और जो भी अपना है वह निकृष्ट है, हीन है और लज्जास्पद है, गया बीता है ऐसा हमें लगने लगा। अपनी शिक्षण संस्थाओं में हम यही मानसिकता और यही विचार एक के

बाद एक आनेवाली पीढ़ी को देते गए। इस गुलामी की मानसिकता के आगे अपनी विवेकशील और तेजस्वी बुद्धि भी दब गई। यूरोपीय, या यूरोपीय जैसा बनना ही हमारी आकांक्षा बन गई। देश को वैसा ही बनाने का प्रयास हम करने लगे। अपनी संरचनाएँ, पद्धतियां, संस्थाएँ वैसी ही बन गईं।

गांधीजी १९१५ में दक्षिण अफ्रिका से भारत आए तब भारत ऐसा था। उन्होंने जनमानस को जगाया, उसमें प्राण फूंके, उसकी भावनाओं को अपने वाणी और व्यवहार में अभिव्यक्त कर, भारत के लिए योग्य हज़ारों वर्षों की परम्परा के अनुसार व्यवस्थाओं, गतिविधियों और पद्धतियों को प्रतिष्ठित किया और भारत को फिर से भारत बनाने का प्रयास किया। स्वतंत्रता के साथ साथ स्वराज को भी लाने के लिए वे जूझे।

परंतु स्वतंत्रता मात्र सत्ता का हस्तान्तरण (Transfer of Power) ही बन कर रह गया। उसके साथ स्वराज नहीं आया। सुराज्य की तो कल्पना भी नहीं कर सकते।

आज की अपनी सारी अनवस्था का मूल यह है। हम अपनी जीवनशैली चाहते ही नहीं हैं। स्वतंत्र भारत में भी हम यूरोप अमेरिका की ओर मुँह लगाये बेठे हैं। यूरोप के अनुयायी बनना ही हमें अच्छा लगता है।

परन्तु, यह क्या समग्र भारत का सच है ? नहीं, भारत की अस्सी प्रतिशत जनसंख्या यूरोपीय विचार और शैली जानती भी नहीं और मानती भी नहीं है। उसका उसके साथ कुछ लेना देना भी नहीं है। उनके रीतिरिवाज, मान्यताएं, पद्धतियां, सब वैसी की वैसी ही हैं। केवल शिक्षित लोग उन्हें पिछड़े और अंधविश्वासी कहकर आलोचना करते हैं, उन्हें नीचा दिखाते हैं और अपने जैसा बनाना चाहते हैं। यही उनकी विकास और आधुनिकताकी कल्पना है।

भारत वस्तुत: तो उन लोगों का बना हुआ है, उन का है। परन्तु जो बीस प्रतिशत लोग हैं वे भारत पर शासन करते हैं। वे ही कायदे-कानून बनाते हैं और न्याय करते हैं, वे ही उद्योग चलाते हैं और कर योजना करते हैं। वे ही पढ़ाते हैं और नौकरी देते हैं, वे ही खानपान, वेशभूषा, भाषा और कला अपनाते हैं (जो यूरोपीय हैं) और उनको विज्ञापनों के माध्यम से प्रतिष्ठित करते हैं। यहाँ के अस्सी प्रतिशत लोगों को वे पराये मानते हैं, बोझ मानते हैं, उनमें सुधार लाना चाहते हैं और वे सुधरते नहीं इसलिए उनकी आलोचना करते हैं। वे लोग स्वयं तो यूरोपीय जैसे बन ही गए हैं, दूसरों को भी वैसा ही बनाना चाहते हैं। वे जैसे कि भारत को यूरोप के हाथों बेचना ही चाहते हैं, जिन लोगों का भारत है वे तो उनकी गिनती में ही नहीं हैं।

इस परिस्थिति को हम यदि बदलना चाहते हैं तो हमें अध्ययन करना होगा -

स्वयं का, अपने इतिहास का और अपने समाज का। भारत को तोड़ने की प्रक्रिया को जानना और समझना पड़ेगा। भारत का भारतीयत्व क्या है, किसमें है, किस प्रकार बना हुआ है यह सब जानना और समझना पड़ेगा। मूल बातों को पहचानना होगा। देश के अस्सी प्रतिशत लोगों का स्वभाव, उनकी आकांक्षाएँ, उनकी व्यवहारशैली को जानना और समझना पड़ेगा। उनका मूल्यांकन पश्चिमी मापदण्डों से नहीं अपितु अपने मापदण्डों से करना पड़ेगा। उसका रक्षण, पोषण और संवर्धन कैसे हो यह देखना पड़ेगा। भारत के लोगों में साहस, सम्मान, आत्मगौरव जाग्रत करना पड़ेगा। भारत के पुनरुत्थान में उनकी बुद्धि, भावना, कर्तृत्वशक्ति और कुशलताओं का उपयोग कर उन्हें सचे अर्थ में सहभागी बनाना पड़ेगा। यह सब हमें पाश्चात्य प्रकार की युनिवर्सिटियों से नहीं अपितु सामान्य, 'अशिक्षित', 'अर्धशिक्षित' लोगों से सीखना होगा।

आज भी यूरोप बनने की इच्छा करनेवाला भारत जोरों से प्रयास कर रहा है और कुंठाओं का शिकार बन रहा है। भारतीय भारत उलझ रहा है, छटपटा रहा है, और शोषित हो रहा है। भाग्य केवल इतना है कि क्षीणप्राण होने पर भी भारतीय भारत गतप्राण नहीं हुआ है। इसलिए अभी भी आशा है - उसे सही अर्थ में स्वाधीन बनाकर समृद्ध और सुसंस्कृत बनाने की।

३.

धर्मपालजी की इन पुस्तकों में इन सभी प्रक्रियाओं का क्रमबद्ध, विस्तृत निरूपण किया गया है। अंग्रेज भारत में आए उसके बाद उन्होंने सभी व्यवस्थाओं को तोड़ने के लिए किन चालबाजियों को अपनाया, कैसा छल और कपट किया, कितने अत्याचार किए और किस प्रकार धीरे धीरे भारत टूटता गया, किस प्रकार बदलती परिस्थितियों का अवशता से स्वीकार होता गया उसका अभिलेखों के प्रमाणों सहित विवरण इन ग्रंथों में मिलता है। इंग्लैण्ड के और भारत के अभिलेखागारों में बैठकर, रात दिन उसकी नकल उतार लेने का परिश्रम कर धर्मपालजी ने अंग्रेज क्लेक्टरों, गवर्नरों, वाइसरायों ने लिखे पत्रों, सूचनाओं और आदेशों को एकत्रित किया है, उनका अध्ययन कर के निष्कर्ष निकाले हैं और एक अध्ययनशील और विद्वान व्यक्ति ही कर सकता है ऐसे साहस से स्पष्ट भाषा में हमारे लिये प्रस्तुत किया है। लगभग चालीस वर्ष के अध्ययन और शोध का यह प्रतिफल है।

परन्तु इसके फलस्वरूप हमारे लिए एक बड़ी चुनौती निर्माण होती है, क्योंकि -

- आजकल विश्वविद्यालयों में पढ़ाए जाने वाले इतिहास से यह इतिहास भिन्न

है। हम तो अंग्रेजों द्वारा तैयार किए और कराए गए इतिहास को पढ़ते हैं। यहाँ अंग्रेजों ने ही लिखे लेखों के आधार पर निरूपित इतिहास है।

- विज्ञान और तंत्रज्ञान की जो जानकारी उसमें है वह आज पढ़ाई ही नहीं जाती।
- कृषि, अर्थव्यवस्था, करपद्धति, व्यवसाय, कारीगरी आदि की अत्यंत आश्चर्यकारक जानकारियां उसमें है। भारत को आर्थिक रूप में बेहाल और परावलम्बी बनानेवाला अर्थशास्त्र आज हम पढ़ते हैं। यहाँ दी गई जानकारियों में स्वाधीन भारत को स्वावलम्बन के मार्ग पर चल कर समृद्धि की ओर ले जानेवाले अर्थशास्त्र के मूल सिद्धांतों की सामग्री हमें प्राप्त होती है।
- व्यक्ति को किस प्रकार गौरवहीन बनाकर दीनहीन बना दिया जाता है इसका निरूपण है, साथ ही उस संकट से कैसे निकला जा सकता है उसके संकेत भी हैं।
- संस्कृति और समाजव्यवस्था के मानवीय स्वरूप पर किस प्रकार आक्रमण होता है, किस प्रकार उसे यंत्र के अधीन कर दिया जाता है इसका विश्लेषण यहाँ है। साथ ही उसके शिकार बनने से कैसे बचा जा सकता है, उसके लिए दृढता किस प्रकार प्राप्त होती है इसका विचार भी प्राप्त होता है।

यह सब अपने लिए चुनौती इस रूप में है कि आज हम अनेक प्रकार से अज्ञान से ग्रस्त हैं।

हमारा अज्ञान कैसा है ?

- शिक्षण विषय के वरिष्ठ अध्यापक सहजरूप से मानते हैं कि अंग्रेज आए और अपने देश में शिक्षा आई। उन्हें जब यह कहा गया कि १८ वीं शती में भारत में लाखों की संख्या में प्राथमिक विद्यालय थे, और चार सौ की जनसंख्या पर एक विद्यालय था, तो वे उसे मानने के लिए तैयार नहीं थे। उन्हें जब 'The Beautiful Tree' दिखाया गया तो उन्हें आश्चर्य हुआ (परन्तु रोमांच अथवा आनन्द नहीं हुआ।)
- शिक्षाधिकारी, शिक्षासचिव, शिक्षा महाविद्यालय के अध्यापक अधिकांशत: इन बातों से अनभिज्ञ हैं। कुछ जानते भी हैं तो यह जानकारी बहुत ही सतही है।

यह अज्ञान सार्वत्रिक है, केवल शिक्षा विषयक ही नहीं अपितु सभी विषयों में है।

इसका अर्थ यह हुआ कि हम स्वयं को ही नहीं जानते, अपने इतिहास को नहीं जानते, स्वयं को हुई हानि को नहीं जानते और अज्ञानियों के स्वर्ग में रहते हैं। यह स्वर्ग भी अपना नहीं है। उस स्वर्ग में भी हम गुलाम हैं और पश्चिममुखापेक्षी, पराधीन बनकर रह रहे हैं।

४.

इस संकट से मुक्त होना है तो मार्ग है अध्ययन का। धर्मपालजी की पुस्तकें अपने पास अध्ययन की सामग्री लेकर आई हैं, हम सो रहे हैं तो हमें जगाने के लिए आई हैं, जाग्रत हैं तो झकझोरने के लिए आई हैं, दुर्बल हैं तो सबल बनाने के लिए आई हैं, क्षीणप्राण हुए हैं तो प्राणवान बनाने के लिए आई हैं।

ये पुस्तकें किसके लिए हैं ?

ये पुस्तकें इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, जिसे आज की भाषा में ह्यूमेनिटीज़ कहते हैं, उसके विद्वानों, चिन्तकों, शोधकों, अध्यापकों और छात्रों के लिए हैं।

ये पुस्तकें भारत को सही मायने में स्वाधीन, समृद्ध, सुसंस्कृत, बुद्धिमान और कर्तृत्ववान बनाने की आकांक्षा रखने वाले बौद्धिकों, सामान्यजनों, संस्थाओं, संगठनों और कार्यकर्ताओं के लिए हैं।

ये पुस्तकें शोध करने वाले विद्वानों और शोधछात्रों के लिए हैं।

प्रश्न यह है कि इन पुस्तकों को पढ़ने के बाद क्या करें ?

धर्मपालजी स्वयं कहते हैं कि पढ़कर केवल प्रशंसा के उद्‌गार, अथवा पुस्तकों की सामग्री एकत्रित करने के परिश्रम के लिए लेखक को शाबाशी देना पर्याप्त नहीं है। उससे अपना संकट दूर नहीं होगा।

आवश्यकता है इस दिशा में शोध को आगे बढ़ाने की, भारत की १८ वीं, १९ वीं शताब्दी से सम्बन्धित दस्तावेजों में से कदाचित पांच सात प्रतिशत का ही अध्ययन इस में हुआ है। अभी भी लन्दन के, भारत की केन्द्र सरकार के तथा राज्यों के अभिलेखागारों में ऐसे असंख्य दस्तावेज अध्ययन की प्रतीक्षा में हैं। उन सभी का अध्ययन और शोध करने की योजना महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, शैक्षिक संगठनों और सरकार ने करना आवश्यक है। आवश्यकता के अनुसार इस कार्य के लिए अध्ययन और शोध की स्थानीय और देशी प्रकार की संस्थाएं भी बनाई जा सकती हैं।

इसके लिए ऐसे अध्ययनशील छात्रों की आवश्यकता है। इन छात्रों को मार्गदर्शन तथा संरक्षण प्राप्त हो यह देखना चाहिये।

साथ ही एक साहसपूर्ण कदम उठाना जरूरी है। विश्वविद्यालयों, और महाविद्यालयों के इतिहास, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषयों के अध्ययन मण्डल (बोर्ड ऑफ़ स्टडीज़) और विद्वत् परिषदों (एकेडमिक काउन्सिल) में इन विषयों पर चर्चा होनी चाहिए, और पाठ्यक्रमों में इसके आधार पर परिवर्तन करना चाहिए। युनिवर्सिटी ग्रन्थ निर्माण बोर्ड इसके आधार पर सन्दर्भ पुस्तकें तैयार कर सकते हैं। ऐसा होगा तभी आनेवाली पीढ़ी को यह जानकारी प्राप्त होगी। यह केवल जानकारी का विषय नहीं है, यह परिवर्तन का आधार भी बनना चाहिए। आवश्यकता पडने पर इसके लिए व्यापक चर्चा जहां सम्भव है ऐसी गोष्ठियों एवं चर्चा सत्रों का आोयजन करना चाहिए।

इसके आधार पर रूपान्तरण कर के जनसामान्य तक ये बातें पहुँचानी चाहिए। कथाएँ, नाटक, चित्र, प्रदर्शनी तैयार कर उस सामग्री का प्रचार-प्रसार किया जा सकता है। इससे जनसामान्य के मन में स्थित सुषुप्त भावनाओं और अनुभूतियों का यथार्थ प्रतिभाव प्राप्त होगा।

माध्यमिक और प्राथमिक विद्यालय में पढ़ने वाले किशोर और बाल छात्रों के लिए उपयोगी वाचनसामग्री इसके आधर पर तैयार की जा सकती है।

ऐसा एक प्रबल बौद्धिक जनमत तैयार करने की आवश्यकता है जो इसके आधार पर संस्थाएँ निर्माण करे, चलाये, व्यवस्था का निर्माण करे। या तो सरकार के या सार्वजनिक स्तर पर व्यवस्था बदलने की, और नहीं तो सभी व्यवस्थाओं को अपने नियंत्रण से मुक्त कर जनसामान्यके अधीन करने की अनिवार्यता निर्माण करे। सच्चा लोकतंत्र तो यही होगा।

बन्धन और जकड़न से जन सामान्य की बुद्धि को मुक्त करनेवाली, लोगों के मानस, कौशल, उत्साह और मौलिकता को मार्ग देने वाली, उनमें आत्मविश्वास का निर्माण करनेवाली और उनके आधार पर देश को फिर से उठाया और खड़ा किया जा सके इस हेतु उसका स्वत्व और सामर्थ्य जगानेवाली व्यापक योजना बनाने की आवश्यकता है।

इन पुस्तकों के प्रकाशन का यह प्रयोजन है।

५.

श्री धर्मपालजी गांधीयुग में जन्मे, पले। गांधीयुग के आन्दोलनों में उन्होंने भाग लिया, रचनात्मक कार्यक्रमों में भाग लिया, मीराबहन के साथ बापूग्राम के निर्माण में वे सहभागी बने।

महात्मा गांधी के देशव्यापी ही नहीं, तो विश्वव्यापी प्रभाव के बाद भी गांधीजी के अतिनिकट के, अतिविश्वसनीय, गांधीभक्त कहे जाने वाले लोग भी उन्हें नहीं समझ सके, कुछ ने तो उन्हें समझने का प्रयास भी नहीं किया, कुछ ने उन्हें समझा फिर भी उन्हें दरकिनार कर सत्ता का स्वीकार कर भारत को यूरोप के तंत्रानुरूप ही चलाया। उन नेताओं के जैसे ही विचार के लगभग दो चार लाख लोग १९४७ में भारत में थे (आज उनकी संख्या शायद पाँच दस करोड़ हो गई है)। यह स्थिति देखकर उनके मन में जो मंथन जागा उसने उन्हें इस अध्ययन के लिये प्रेरित किया। लन्दन के और भारत के अभिलेखागारों में से उन्होंने असंख्य दस्तावेज एकत्रित किए, पढ़े, उनका अध्ययन किया, विश्लेषण किया और १८ वीं तथा १९ वीं शताब्दी के भारत का यथार्थ चित्र हमारे समक्ष प्रस्तुत किया। जीवन के पचास साठ वर्ष वे इस साधना में रत रहे।

ये पुस्तकें मूल अंग्रेजी में हैं। उनका व्यापक अध्ययन होने के लिए ये भारतीय भाषाओं में हों यह आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। कुछ लेख हिन्दी में हैं और 'जनसत्ता' आदि दैनिक में और 'मंथन' आदि सामयिकों में प्रकाशित हुए हैं । मराठी, तेलुगु, कन्नड आदि भाषाओं में कुछ अनुवाद भी हुआ है परन्तु संपूर्ण और समग्र प्रयास तो गुजराती में ही प्रथम हुआ है। और अब हिन्दी में हो रहा है।

इस व्यापक शैक्षिक प्रयास का यह अनुवाद एक प्रथम चरण है।

६.

इस ग्रन्थ श्रेणी में विविध विषय हैं। इसमें विज्ञान और तंत्रज्ञान है; शासन और प्रशासन है; लोकव्यवहार और राज्य व्यवहार है; कृषि, गोरक्षा, वाणिज्य, अर्थशास्त्र नागरिक शास्त्र भी है। इसमें भारत, इंग्लैंड और अमेरिका है। परन्तु सभी का केन्द्रबिन्दु हैं गांधीजी, कोंग्रेस, सर्वसामान्य प्रजा और ब्रिटिश शासन।

और उनके भी केन्द्र में है भारत।

अत: एक ही विषय विभिन्न रूपों में, विभिन्न संदर्भो के साथ चर्चा में आता रहता है। और फिर विभिन्न समय में, विभिन्न स्थान पर, भिन्न भिन्न प्रकार के श्रोताओं के सम्मुख और विभिन्न प्रकार की पत्रिकाओं के लिये भाषण और लेख भी यहां समाविष्ट हैं। अत: एक साथ पढ़ने पर उसमें पुनरावृत्ति दिखाई देती है-विचारोंकी, घटनाओं की, दृष्टान्तों की। सम्पादन करते समय पुनरावृत्ति को यथासम्भव कम करने का प्रयास किया है। इसीके परिणाम स्वरुप गुजराती प्रकाशन में ११ पुस्तकें थीं और हिन्दी में १० हुई हैं। परंतु विषय प्रतिपादन की आवश्यकता देखते हुए पुनरावृत्ति कम करना हमेशा संभव नहीं हुआ है।

फिर, सर्वथा पुनरावृत्ति दूर कर उसे नये ढ़ंग से पुनर्व्यवस्थित करना तो वेदव्यास

का कार्य हुआ। हमारे जैसे अल्प क्षमतावान लोगों के लिये यह अधिकारक्षेत्र के बाहर का कार्य है।

अत: सुधी पाठकों के नीरक्षीर विवेक पर भरोसा करके सामग्री यथातथ स्वरूप में ही प्रस्तुत की है।

यहां दो प्रकार की सामग्री है। एक है प्रस्तुत विषय से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित यूरोप के अधिकारियों और बौद्धिकोंने प्रत्यक्षदर्शी प्रमाणों एवं स्वानुभव के आधार पर, विभिन्न प्रयोजन से प्रेरित होकर प्रस्तुत की हुई भारत विषयक जानकारी, और दूसरी है धर्मपालजीने इस सामग्री का किया हुआ विश्लेषण, उससे प्राप्त निष्कर्ष और उससे प्रकाशित ब्रिटिशरों के कार्यकलापों का, कारनामों का अन्तरंग।

इसमें प्रयुक्त भाषा दो सौ वर्ष पूर्व की अंग्रेजी भाषा है, सरकारी तंत्र की है, गैर साहित्यिक अफसरों की है, उन्होंने भारत को जैसा जाना और समझा वैसा उसका निरूपण करनेवाली है। और धर्मपालजी की स्वयं की भाषा भी उससे पर्याप्त मात्रा में प्रभावित है।

फलत: पढ़ते समय कहीं कहीं अनावश्यक रूप से लम्बी खींचनेवाली शैली का अनुभव आता है तो आश्चर्य नहीं।

और एक बात।

अंग्रेजो ने भारत के विषय में जो लिखा वह हमारे मन मस्तिष्क पर इस प्रकार छा गया है कि उससे अलग अथवा उससे विपरीत कुछ भी लिखे जाने पर कोई उसे मानेगा ही नहीं यह भी सम्भव है। इसलिए यहाँ छोटी से छोटी बात का भी पूरा पूरा प्रमाण देने का प्रयास किया गया है। साथ ही इतिहास लेखन का तो यह सूत्र ही है कि नामूलं लिख्यते किञ्चित् - बिना प्रमाण तो कुछ भी लिखा ही नहीं जाता। परिणामतः यहाँ शैली आज की भाषा में कहा जाए तो सरकारी छापवाली और पांडित्यपूर्ण है, शोध करनेवाले अध्येता की है।

प्रमाणों के विषयमें तो आज भी स्थिति यह है कि इसमें ब्रिटिशरों के स्वयं के द्वारा दिये गये प्रमाण हैं इसलिये पाठकों को मानना ही पडेगा इस विषय में हम आश्वस्त रह सकते हैं। (आज भी उसका तो इलाज करना जरूरी है।)

साथ ही, पाठकों का एक वर्ग ऐसा है जो भारत के विषय में भावात्मक, या भक्तिभाव पूर्ण बातें पढ़ने का आदी है, अथवा वैश्विक परिप्रेक्ष्य में लिखा गया, अर्थात् अमेरिका के दृष्टिकोण से लिखा गया विचार पढ़ने का आदी है। इस परिप्रेक्ष्य में विषय सम्बन्धी पारदर्शी, ठोस, तर्कनिष्ठ प्रस्तुति हमें इस ग्रंथवाली में प्राप्त है। अनेक विषयों

में अनेक प्रकार से हमें बुद्धिनिष्ठ होने की आवश्यकता है इसकी प्रतीति भी हमें इसमें होती है।

७.

अनुवादकों तथा जिन जिन लोगों ने ये पुस्तकें मूल अंग्रेजी में पढ़ी हैं अथवा अनुवाद के विषय में जाना है उन सभी का सामान्य प्रतिभाव है कि इस काम में बहुत विलम्ब हुआ है। यह बहुत पहले होना चाहिये था। अर्थात् सभी को यह कार्य अतिमहत्त्वपूर्ण लगा है। सभी पाठकों को भी ऐसा ही लगेगा ऐसा विश्वास है।

अनुवाद का यह कार्य चुनौतीपूर्ण है। एक तो दो सौ वर्ष पूर्व की अंग्रेज अधिकारियों की भाषा, फिर भारतीय परिवेश और परिप्रेक्ष्य को अंग्रेजीं में उतारने और अपने तरीके से कहने के आयास को व्यक्त करने वाली भाषा और उसके ही रंग में रंगी श्री धर्मपालजी की भी कुछ जटिल शैली पाठक और अनुवादक दोनों की परीक्षा लेनेवाली है।

साथ ही यह भी सच है कि यह उपन्यास नहीं है, गम्भीर वाचन है।

संक्षेप में कहा जाय तो यह १८ वीं और १९ वीं शताब्दी का दो सौ वर्ष का भारत का केवल राजकीय नहीं अपितु सांस्कृतिक इतिहास है ।

८.

इस ग्रंथावलि के गुजराती अनुवाद कार्य के श्री धर्मपालजी साक्षी रहे। उसका हिन्दी अनुवाद चल रहा था तब वे समय समय पर पृच्छा करते रहे। परन्तु अचानक ही दि. २४ अक्टूबर २००६ को उनका स्वर्गवास हुआ। स्वर्गवास के आठ दिन पूर्व तो उनके साथ बात हुई थी। आज हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन के अवसर पर वे अपने बीच में विद्यमान नहीं हैं। उनकी स्मृति को अभिवादन करके ही यह कार्य सम्पन्न हो रहा है।

९.

इस ग्रंथावलि के प्रकाशन में अनेकानेक व्यक्तियों का सहयोग एवं प्रेरणा रहे हैं। उन सभी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना हमारा सुखद कर्तव्य है।

अनेकानेक कार्यकर्ता एवं विशेष रूप से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सहसरकार्यवाह माननीय सुरेशजी सोनी की प्रेरणा, मार्गदर्शन, आग्रह एवं सहयोग के कारण से ही इस ग्रंथावलि का प्रकाशन सम्भव हुआ है। अत: प्रथमत: हम उनके आभारी हैं।

सभी अनुवादकों ने अपने अपने कार्यक्षेत्र में अत्यन्त व्यस्त होते हुए भी समय सीमा में अनुवाद कार्य पूर्ण किया तभी समय से प्रकाशन सम्भव हो पाया। उनके परिश्रम के लिये हम उनके आभारी हैं।

यह ग्रंथावलि गुजरात में प्रकाशित हो रही है। इसकी भाषा हिन्दी है। हिन्दी भाषी लोगों पर भी गुजराती का प्रभाव होना स्वाभाविक है। इसका परिष्कार करने के लिये हमें हिन्दीभाषी क्षेत्र के व्यक्तियों की आवश्यकता थी। जोधपुर के श्री भूपालजी और इन्दौर के श्री अरविंद जावडेकरजी ने इन पुस्तकों को साद्यन्त पढ़कर परिष्कार किया इसलिये हम उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।

अच्छे मुद्रण के लिये साधना मुद्रणालय ट्रस्ट के श्री भरतभाई पटेल और श्री धर्मेश पटेल ने भी जो परिश्रम किया है इसके लिये हम उनके आभारी हैं।

'पुनरुत्थान' के सभी कार्यकर्ता तो तनमन से इसमें लगे ही हैं। इन सभी के सहयोग से ही इस ग्रन्थावलि का प्रकाशन हो रहा है।

१०.

सुधी पाठक देश की वर्तमान समस्याओं के निराकरण की दिशा में विचार विमर्श करते समय, नई पीढ़ी को इस देश के इतिहास में अंग्रेजों की भूमिका का सही आकलन करना सिखाते समय इस ग्रंथावलि की सामग्री का उपयोग कर सकेंगे तो हमारा यह प्रयास सार्थक होगा।

साथ ही निवेदन है कि इस ग्रंथावलि में अनुवाद या मुद्रण के दोषों की ओर हमारा ध्यान अवश्य आकर्षित करें। हम उनके बहुत आभारी होंगे।

इति शुभम् ।

सम्पादक

वसन्त पंचमी
युगाब्द ५१०८
२३, जनवरी २००७

विभाग १

गोहत्या और अंग्रेज

१. आमुख

२. प्रस्तावना

३. भारत के विभिन्न राज्यों में पशुहत्या विरोधी आन्दोलन

४. बिहार में गोरक्षा आन्दोलन

५. गोरक्षिणी सभाओं के कार्य और उनका निधिस्त्रोत

६. गाय की पवित्रता विषयक कुछ आरम्भिक ब्रिटिश दृष्टिकोण

७. ब्रिटिश अवबोधन एवं अनुक्रियाएँ

८. पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के सम्बन्ध में
ब्रिटिश खुफिया विभाग की टिप्पणी

१. आमुख

भारत के लोगों की यह आस्था रही है कि भारत आरम्भ से ही पवित्र भूमि रहा है। यहाँ कीटपतंगों, चींटियों, समस्त जानवरों एवं पौधों समेत समस्त जीवन में, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो या कितना ही छोटा क्यों न हो, प्रत्येक का जीवन पवित्र है। ऐसी धारणा रही है कि प्रत्येक आत्मा एक योनि से दूसरी योनि में पुनर्जन्म लेती है तथा मोक्ष की प्राप्ति तक अनगिनत योनियों में जन्म एवं पुनर्जन्म लेने का यह उपक्रम निरन्तर चलता रहता है। आत्मा के परमात्मा में मिलन होने तक यह जीवनचक्र चलता ही रहता है। भारत में विगत शताब्दियों में इस्लाम, ईसाईयत जैसे धर्मों में जिन लोगों ने मतान्तरण किया है, उनकी भी इस योनिचक्र के सिद्धान्त में, आत्मा के एक योनि से दूसरी योनि में जन्म लेने के सिद्धान्त में, मूल रूप से आस्था है।

भारत में समस्त प्राणियों में गाय सर्वाधिक पवित्र, शुभ एवं पुनीत मानी जाती है। गाय के प्रति यह अद्वितीय पुनीत भावना प्राचीन भारतीय ऋषियों द्वारा रचित साहित्य (जैसे वेद आदि में) तथा परवर्ती साहित्य एवं लोकसाहित्य में अभिव्यक्त है। सन १८६० के आसपास से ब्रिटिश एवं युरोपीय विद्वानों ने भारत में पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगे वर्ग को प्रभावित करने के उद्देश्य से वेदों की व्याख्या नये ढंग से आरम्भ की और अपनी नव्य वैदिक विचारधारा की दुहाई देकर कहा कि प्राचीन वेदों तथा सम्बधित साहित्य में विशेष अवसरों पर गाय या बैल के माँसभक्षण की बात कही गई है। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य के इस पाश्चात्य दृष्टिकोण ने भारतीय समाज में गाय की प्रतिष्ठा घटाने की अत्यन्त विद्वत्तापूर्वक चेष्टा करने के बावजूद भी भारतीय मानस पर इसका नगण्य प्रभाव ही रहा है।

ब्रिटिशों के द्वारा डेढ़ सौ वर्षो तक गोमाँस हेतु निरन्तर प्रतिदिन गोहत्या की जाती रही। ब्रिटिश शासन में गाय की व्यापक रूप से अवहेलना की जाती रही तथा उसका दर्जा कम किए जाने के प्रयत्न किए जाते रहे। आज भी निरन्तर प्रयास चल रहे हैं। फिर भी अधिकांश भारतीय लोगों के लिए गाय पवित्र एवं पावन बनी हुई है।

२

गोउत्पीड़न एवं गोहत्या का प्रथम प्रयास भारत में इस्लाम मतावलम्बी विजेताओं के आगमन से बताया जाता है। भारत के कुछ भागों में इस्लाम का आठवीं शताब्दी से प्रवेश हुआ। भारत के उत्तरी एवं पश्चिमी बड़े भागों में इस्लाम का व्यापक प्रभाव सन् १२०० के लगभग आरम्भ हुआ। लगभग सन २०० से १७०० तक इस्लाम मतावलम्बी शासकों ने, जो पश्चिमी एवं मध्य एशिया से सम्बन्धित थे, उत्तरी एवं पश्चिमी भारत की राजनीति पर वर्चस्व कायम कर लिया तथा यहीं बस गए, और इन्हीं क्षेत्रों के बड़े नगरों एवं कस्बों पर शासन किया। इस पाँच शताब्दियों की अवधि में बड़ी संख्या में ग्रामीण बंगाल में, इस्लाम में मतान्तरण हुआ। जो लोग पश्चिमी एवं मध्य एशिया से विजेता के रूप में भारत आए, वे अधिकांशतः नगरों में बस गए तथा मतान्तरण किए हुए भारत के लोग किसान, बुनकर, शिल्पकार आदि के रूप में काम करते हुए बंगाल, पंजाब, बिहार या उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों के गाँवों एवं छोटे कस्बों में रहने लगे।

भारत में आने से पूर्व इन पश्चिमी एवं मध्य एशिया के इस्लाम मतावलम्बी आप्रवासियों का मुख्य भोजन भेड़, बकरी एवं ऊँट का माँस एवं रोटी था। त्योहार एवं धार्मिक अवसरों (विशेषकर वर्ष में एक बार मनाई जाने वाली बकरईद की दावतों) पर इस्लामी परम्परा में भेड़ या बकरी को बलि के रूप में मारकर खाने का चलन रहा है। सात या उससे अधिक लोग दावत में शामिल हों तो ऊँट की बलि चढ़ाकर मारकर खाने का चलन रहा है। गाय की बलि चढ़ाकर खाने का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि इस्लाम की इस भूमि पर बहुत गायें नहीं होती थी।

जब इस्लाम ने भारत में अपनी जडें जमायीं तो बकर ईद एवं ऐसे अन्य अवसरों पर भेड़, बकरी एवं ऊँट की बलि दी जाती रही। समय बीतते गाय की बलि चढाई जाने लगी। तत्पश्चात् भारतीय लोगों एवं इन इस्लाम मतावलम्बियों के बीच वैमनस्य स्वाभाविक रूप से बढ़ता ही गया तथा समय समय पर यहाँ के लोगों को नीचा दिखाने तथा उनकी भावनाओं का अनादर करने के उद्देश्य से शासितों पर विजेताओं की शक्ति का प्रदर्शन गोहत्या आरम्भ करके उन्हें प्रभावित करने के लिए किया जाने लगा। परन्तु ऐसा लगता है कि राजनीतिक उद्देश्यों एवं विजेताओं के इस्लामी प्रभुत्व को बढ़ाने के लिए वैमनस्य को कम करने की दिशा में प्रयास किए जाते रहे। कई इस्लामी बादशाहों ने विभिन्न समय पर अपने शासित क्षेत्र में गोहत्या पर रोक लगाई थी। फिर भी, इस्लामिक शासन के इन पाँच सौ वर्षों (१२००-१७००) में हुई गोहत्या पर कोई

अधिक काम नहीं हुआ है। हो सकता है कि २००-३०० वर्षों तक गायों की नियमित रूप से हत्या नहीं की गई हो। यह भी सम्भव है कि गायों की निरन्तर व्यापक रूप से हत्या की जाती रही हो। एक आधुनिक प्रसिद्ध व्यक्ति द्वारा किए गए आधुनिक आकलन (१९५०) के अनुसार इस्लामी शासन के दौरान किसी भी वर्ष में सामान्य रूप से २०,००० से अधिक गायों की हत्या नहीं की गई।

तार्किक रूप से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि लगभग सन १७०० के बाद बहुत कम संख्या में गोहत्या की गई। पहली बात तो यह थी कि भारतीय लोगों के बड़ी संख्या में इस्लाम में मतान्तरण करने पर वे न तो गोहत्या करते थे और न गाय का माँस ही भक्षण करते थे। दूसरे, सन १७०० के आसपास इस्लाम का प्रभुत्व कम हो गया था, अतः गोहत्या भी कम हो गई थी।

फिर भी आश्चर्य इस बात का है कि उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य के आसपास उद्भूत यह धारणा कि गोहत्या इस्लाम धर्म के प्रभुत्व से निरन्तर तथा पिछले दो सौ वर्षों में भी बनी रही, उसमें आज भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। भारत के उच्चतम न्यायमूर्ति वर्तमान समय में की जाने वाली गोहत्या पर अपना निर्णय देने में निरुपयोगी मवेशी जैसी शब्दावली का प्रयोग करते हैं। इससे यह नहीं लगता कि विगत दो शताब्दियों में बहुत बडे पैमाने पर हुई गायों तथा अन्य मवेशियों की हत्या और इस्लामी शासन के ५०० वर्षों के दौरान हुई बलि या राजनीतिक गोहत्या का कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध है या नहीं यह जानने का प्रयास उन्होंने किया नहीं है।

जो लोग गोहत्या पर तत्काल एवं पूर्ण प्रतिबन्ध की माँग करते है, वे भी मानते हैं कि ब्रिटिश लोगों ने खाल एवं चमड़े के लिए बड़ी संख्या में गोहत्या कराई थी। वे भूल जाते हैं कि ये गोहत्याएँ कदाचित एक भारतीय के लिये गोमाँस खाने के लिए की जाती थीं। यह कल्पना करना कठिन है कि गोमाँस भक्षण के लिए गायों की हत्या की जाती रही होगी। परन्तु कुछ आधुनिक भारतीय को यह बात अवश्य गले उतर सकती है कि खाल एवं चमडा हेतु गोहत्या की जाती रही होगी।

३

आधुनिक युरोप का भारत के साथ सम्पर्क सन १४९८ में पुर्तगालियों के कालीकट आगमन के साथ हुआ। कालीकट में आने के कुछ ही वर्षों में पुर्तगालियों ने उत्पीड़न आरम्भ कर दिया तथा गोवा क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। उनका नियन्त्रण लगभग सन १९५० तक अर्थात् लगभग ४५० वर्षों तक रहा। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि सन १५०० के आसपास का समय वही समय था जब यूरोप ने अमेरिका,

अफ्रीका, जापान, फिलीपीन्स, तथा बाद में आस्ट्रेलिया एवं न्यूजीलैण्ड को तहस नहस कर दिया था। लगभग सन १५०० से सन १७५० तक भारत धीरे धीरे विभिन्न पश्चिमी यूरोपीय देशों, विशेषतः पुर्तगाल, नीदरलैण्ड, फ्रान्स, तथा ग्रेट ब्रिटन की समुद्री शक्तियों की घेराबन्दी में रहा। इस घेराबन्दी के परिणामस्वरूप विच्छेद हो गया और इस बढ़ती हुई कमजोरी के कारण कुछ भारतीय शासकों ने यूरोपीय शक्तियों को उनकी व्यापारिक चौकियाँ स्थापित करने तथा किले बनाने की अनुमति दी तथा कुछ छोटे क्षेत्रों में तो सत्ता तक उन्हें अन्तरित कर दी। कुछ शासकों ने तो उन्हें भारत के आन्तरिक व्यापार में प्रतिभागिता करने के अधिकार भी दे दिए। मुगल शासक जहाँगीर (सन १६१५) ने तो फारस की खाड़ी में अपने जहाजों को पुर्तगालियों द्वारा रोके जाने से मुक्ति दिलाने के लिए ब्रिटिश नौसेना की सहायता भी ली। पुर्तगालियों, तथा सम्भवतः कुछ अन्य के विरुद्ध इस प्रकार की सहायता मिलने के कारण उसने सूरत तथा उसके आसपास के इलाके जैसे कुछ भाग ब्रिटिशों को हस्तान्तरित कर दिए थे।

गोवा क्षेत्र में पुर्तगालियों के कब्जे को छोड़कर अन्य कोई यूरोपीय शक्ति लगभग सन १७५० तक भारत के किसी भी बड़े भाग पर अपनी सत्ता कायम करने में असमर्थ रही हालाँकि उन्होंने भारत के पश्चिमी एवं पूर्वी समुद्री तटों पर सेंकडों व्यापारिक चौकियाँ स्थापित की थीं तथा बड़े बडे. किले तक बना लिए थे।

तथापि, सन १७४८ के आसपास ब्रिटिश एवं फ्रांसीसी दोनों ने अपनी आपसी रंजिश के बहाने आर्कोट के छोटे से तमिल मुस्लिम क्षेत्र पर अपनी अपनी दावेदारी प्रस्तुत की। इससे उनके बीच बड़े पैमाने पर युद्ध हुआ। एक ही दशक में दक्षिण भारत के अधिकांश हिस्सों को समाहित करके भीषण युद्ध हुआ जिसके परिणामस्वरूप सन १७९९ तक ब्रिटिश समग्र दक्षिण भारत के शासक बन गए।

मद्रास क्षेत्र की इस जीत के नशे से ब्रिटिशों ने बड़ी त्वरित गति से अपने शासन के क्षेत्र विस्तार के लिये पैर पसारे। दक्षिण भारत में १७५० अधिग्रहणों की प्राप्ति एवं उनके विस्तार के साथ वे उत्तर की ओर बढ़े तथा सन १७५७ तक बंगाल एवं उसके आसपास के बड़े भूभाग पर उनका अधिकार हो गया। चारों ओर निरन्तर आक्रमण करके, सर्वत्र लूटपाट मचाकर, उद्धत आचरण से तथा उत्कट स्वच्छन्दता के वशीभूत होकर उन्होंने सन १७६२ तक उत्तर भारत की राजनीति में अराजकता की ऐसी छाप छोड़ी कि उन्होंने अपने पसन्द के मुगल शहजादे को दिल्ली के बादशाह के रूप में घोषित कर दिया। वैसे बादशाही तो नाममात्र की थी। शहजादा अधिकांशतः पहले ब्रिटिश का, उनके पश्चात् मराठों का तथा पुनः ब्रिटिशों का कैदी तथा

पैन्शनभोगी व्यक्ति होता था। यद्यपि इस नाममात्र की बादशाहत से उन्हें दूसरा कमजोर एवं नाममात्र का मुस्लिम शासक प्राप्त हो जाया करता था परन्तु उन्हें बहुत बड़ी पदवी जैसे अवध के नवाब, तथा हैदराबाद के नवाब (बाद में निझाम के रूप में) से नवाजा जाता था तथा दूसरों को उनके मातहत ब्रिटिशों के आदेश की तामील करने के लिए रखा जाता था। यद्यपि अर्कोट के नवाब, तथा और अधिक सुना-सुनाया नाम बंगाल के नवाब, ये सभी सन १७५० से १७५७ तक ब्रिटिशों द्वारा सत्तारूढ़ किए जाते थे परन्तु ये ब्रिटिशों द्वारा कानूनी तौर पर दिल्ली के बादशाह के फरमान को मानने के लिए बाध्य होते थे जो स्वयं एक नियुक्त किया गया, बन्दी तथा ब्रिटिश सत्ता का पैन्शन पानेवाला था।

४

यह सब सन १७८० तक ऐसे ही चलता रहा। सन १७७३ में वारन हैस्टिंग्स की भारत के ब्रिटिश गवर्नर जनरल के रूप में (लन्दन में ब्रिटिश शासन द्वारा) नियुक्ति हुई तथा उसका राजस्थान के, विशेषकर जोधपुर, जयपुर एवं उदयपुर के शासकों से निकट संपर्क स्थापित हुआ। राजस्थान के शासक अठारहवीं शताब्दी में मराठों से अभिभूत रहे। अतः भले ही विदेशी परन्तु मराठों के शत्रु ऐसे ब्रिटिश शासकों के साथ मित्रता करने के लिए जोधपुर और राजस्थान के शासक रुचि दिखाने लगे।

सन १७८० के आसपास, वारेन हैस्टिंग्ज के दूत और राजस्थान, जोधपुर एवं अन्य रियासतों के महाराजाओं के बीच सम्पन्न संक्षिप्त सम्पर्क के दौरान उन्होंने आशा व्यक्त की कि उनके एवं ब्रिटिशों के बीच एक ऐसी औपचारिक सन्धि की जाए कि वे उनके क्षेत्र में गोहत्या नहीं करेंगे। स्पष्टतया कुछ ब्रिटिश लोगों ने तत्कालीन महाराजा के अधिकार क्षेत्र में भोजन के लिए बहुत सी गायों का बध किया था। माँस भक्षण के लिए गोवध करने की ब्रिटिश शासन की पिछले दशक की छबि से भारत के विभिन्न भागों के लोग परिचित हो चुके थे। इसकी भनक लगते ही वारेन हैस्टिंग्ज ने अपने दूत से कहा, मुझे अफसोस है कि राजस्थान के शासकों द्वारा सुझाव दिए जाने से पहले इस संवेदनशील मुद्दे (गोहत्या न करने) पर विचार नहीं किया गया था।

तथापि, उस समय की गई इन सन्धियों का कोई सार्थक परिणाम नहीं निकला फिर भी दोनों के मध्य इस प्रकार की सन्धियाँ होती रहीं। लगभग ३८ वर्ष पश्चात् सन १८१८ में ब्रिटिश समग्र भारत के असली शासक बन गए। तब ब्रिटिश शासकों ने उदयपुर, जोधपुर आदि रियासतों को सूचित किया कि वे इस बात का पूरा ख्याल रखें कि उनकी रियासतों में कोई गोहत्या न हो। हालाँकि ब्रिटिश शासकों ने किसी भी

सन्धि में गोहत्या निषेध का इस प्रकार का उल्लेख इससे पूर्व कभी नहीं किया था।

जैसे जैसे भारत में उनकी शक्ति का विस्तार होता गया तथा उनके प्रति विषम स्थितियाँ कमजोर पडती गईं, ब्रिटिशों की संवेदनशील मुद्दे की चिन्ता भी कमजोर पड़ती गई। यदि कोई शासक या क्षेत्र सुदृढ होता या सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होता था तो ब्रिटिश उसकी शक्ति और ताकत का सम्मान करते हुए उस के साथ इस प्रकार की शर्तो पर सहमत हो जाते थे। सन १७८० के दशक में जोधपुर तथा अन्यों को ब्रिटिशों ने ऐसी सहमति दी। लगभग इसी अवधि में, महाराजा रणजीत सिंह ने भी इसी प्रकार की माँग की थी जिसे पूरा किया गया था। महाराजा रणजीत सिंह के निधन के उपरान्त कश्मीर सहित उनके शासित अधिकार क्षेत्र में ऐसी स्थिति थी, उन्हें नए शासक की गोहत्या पर प्रतिबन्ध की शर्त से सहमत होना पड़ा। राजस्थान के अधिकांश भागों में, सन १८१८ में किए गए अधिकांश नैमित्तिक वायदों के साथ १९४७ में ब्रिटिशों द्वारा भारत से जाने के समय तक यह स्थिति बनी रही। यह भी सम्भव है कि ब्रिटिश शासकों द्वारा अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य भाग तक की अवधि में अनेक भारतीय शासकों के साथ ऐसे समझौते एवं वायदे किए गए हों परन्तु उनका कहीं उल्लेख नहीं मिलता। यह भी सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि त्रावनकोर, मैसूर, रामनाद, बडौदा, ग्वालियर, कोल्हापुर के शासकों द्वारा शासित क्षेत्रों के साथ विभिन्न काठियावाड़ी रियासतों में गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाया गया होगा।

परन्तु त्रिपुरा (बंगाल) जैसी रियासत में सन १७८० के आसपास गोहत्या पर प्रस्तुत प्रतिबन्ध की शर्त को अस्वीकार कर दिया गया। त्रिपुरा बहुत छोटी रियासत थी। ऐसी अस्वीकृतियों की संख्या भी बहुत अधिक रही होगी। यह भी अध्ययन करने लायक विषय है कि गोवा में पुर्तगालियों ने गोहत्या कब से करनी शुरू की : आरम्भ से या वहुत बाद में।

यह निश्चित तथ्य है कि इस्लाम धर्मावलम्बी शासकों ने भारत के विभिन्न इस्लाम वहुसंख्यक भागों में जब पूर्ण रूप से स्थायित्व प्राप्त कर लिया तो उन्होंने हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों के बीच की शत्रुता की भावना को कम करने के उद्देश्य से अपने शासित अधिकार क्षेत्र में गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगा दिया। ठीक इसी प्रकार, प्रमुख मुस्लिम शासक हिन्दू राजाओं के शासित अधिकार क्षेत्र में गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए उन पर आश्रित रहकर सहमत हो गए। समय बीतने के साथ अधिकांश मुस्लिम समाज में गोहत्या के प्रति कोई रुचि नहीं रही। इसका कारण कदाचित यह

भी रहा होगा कि यह समाज कृषक समाज बन गया। सन १७०० के आसपास इस्लामी शक्ति के ध्वस्त होने के साथ ही गोहत्या अत्यन्त त्वरित गति से बन्द हो गई। अतः सन १७०० से १७५० तक की अवधि को गाय एवं बछड़े आदि की हत्या से मुक्त अवधि कहा जा सकता है। यह भी सम्भव है कि सन १७५० से पूर्व ब्रिटिशों एवं फ्रान्सीसियों ने सूरत, मछलीपटनम, मद्रास, पांडिचेरी जैसे स्थानों तथा ब्रिटिश व्यापारिक बन्दरगाहों पर गोहत्याएँ की हों। परन्तु ऐसी गोहत्याएँ अत्यल्प मात्रा में ही हुई होंगी क्योंकि सन १७५० तक भारतीय भूमि पर ब्रिटिश या फ्रान्सीसी लोगों की संख्या बहुत कम थी।

५

सन १७५० के कुछ समय पश्चात् अंग्रेज सेना की आवश्यकता की प्रतिपूर्ति के लिए आरम्भ में मद्रास तथा उसके बाद बंगाल, बिहार और उड़ीसा क्षेत्रों में मवेशियों एवं अन्य पशुओं की हत्या राज्य द्वारा प्रायोजित एवं राज्य द्वारा नियन्त्रित रूप में आरम्भ हुई होगी। सन १८०० तक फैक्टरी जैसे बूचड़खाने उन जगहों पर बनने आरम्भ हुए होंगे जहाँ ब्रिटिश सेना या यूरोपीय लोग बड़ी संख्या में रह रहे होंगे। आरम्भ में लगभग सन १७६० तक अंग्रेजों के उपभोग के लिए सूखा माँस ब्रिटेन से आयात होता था। परन्तु अंग्रेजों द्वारा भारत के बड़े भूभाग पर कब्जा किए जाने के तुरन्त बाद इस प्रकार की आयात पर रोक लगा दी गई।

बूचडखाने बनने के साथ पेशेवर कसाइयों की माँग उठी। ऐसे कसाई उन्हें मुस्लिम समुदायों से कुछ हद तक मिल सकते थे जो ऐसे कार्य पहले से करते आ रहे हों या उन्हें पशु हत्या करने के लिए राजी या बाध्य किया जा सके। उनके पास कदाचित ऐसे भारतीय लोग भी रहे होंगे जिन्होंने पाश्चात्य ईसाई धर्म स्वीकार किया होगा या वे हिन्दुओं के उस वर्ग से सम्बन्धित रहे होंगे जिनका व्यवसाय शिकार करना या मृत पशुओं की खाल उतारने का रहा होगा। परन्तु अंग्रेजी सेना एवं अंग्रेजों की संख्या में वृद्धि हुई और बूचड़खानों में पशु हत्या एवं उससे सम्बन्धित विविध कार्यों के लिए ऐसे लोगों की माँग अधिक बढ़ी। ऐसे और लोग प्रमुख रूप से उन भारतीय मुस्लिम समाजों से मिल सकते थे जो ऐसे पेशे करने के अभ्यस्त हो गए हों।

बकरईद जैसे कुछ अवसरों पर मुसलमानों में गोबलि देना जारी रहा तथा उन्हें यह महसूस कराया गया कि कसाई का पेशा बहुत ही अच्छा एवं सम्मानजनक है।

इसकी भारत में ब्रिटिश शासन की आधारभूत राजनीतिक आवश्यकता भी थी। भारत के विभिन्न क्षेत्रों और जातियों से प्रमुख रूप से पन्द्रहवीं, सोलहवीं एवं सत्रहवीं शताब्दी में मतान्तरित भारत के मुसलमानों के भारत में अंग्रेजों के आगमन तक यह आसानी से नहीं पता लगाया जा सकता था कि वे जिनसे अलग हुए हैं उनसे सांस्कृतिक एवं नृजातीय दृष्टि से कितने एकरूप हैं। विभेदक रूप में उस समय लोकज्ञात प्रमुख विशेषता जो थी वह आज भी एक मुस्लिम की पहचान के लिए कही जाती है कि वह गोहत्या करेगा और उसका माँस भक्षण करेगा जबकि दूसरे नहीं करेंगे। वास्तविक तथ्य कदाचित यह है कि बहुत से आप्रवासी मुसलमानों तथा बहुसंख्यक मतान्तरित मुसलमानों ने वास्तव में कभी कभार ही गोमाँस भक्षण किया हो। यह बात आज भी पाकिस्तान या बांगलादेश में रहनेवाले बहुत से मुसलमानों पर खरी उतरती है। विशेष रूप से इन दोनों क्षेत्रों में इस्लाम स्वीकार करने वाले अधिकांश लोग कृषि व्यवसाय से जुड़े हुए थे। अतः उनमें से अधिकांश की आदतें और रुचि समान थीं जैसी कि भारत के अन्य भागों के लोगों में उस भाग के अनुरूप पाई जाती है।

परन्तु अंग्रेजों के लिए यह बात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी कि भारत में मुसलमानों की अलग पहचान हो। भारतीयों में पारस्परिक सामाजिक व्यवहार कम होता गया और दिन प्रतिदिन मुस्लिम अलग क्षेत्रों में रहने लगे। इस प्रकार कुछ निश्चित क्षेत्रों में लोगों ने सुसम्बद्ध रूप में इस्लाम स्वीकार किया तो कहीं छोटे समूह ने इस्लाम में मतान्तरण किया परन्तु मुसलमानों को सघन ग्रामीण, ग्रामीण या नगरीय मुस्लिम बस्तियों में रहने के लिए प्रोत्साहित किया गया। ठीक इसी प्रकार, सोलहवीं शताब्दी के लगभग मध्य में ईसाइयों के रोमन कैथोलिक एवं प्रोटेस्टेंट इन दो समूहों में विभाजित होने के पश्चात् उन्हें अपने अपने समूह में यूरोप के विभिन्न भागों में रहने के लिए उकसाया गया।

६

भारत के विविध क्षेत्रों में ब्रिटिश शासन का पूर्ण रूप से नियन्त्रण हो जाने के तत्काल बाद कभी समाप्त न होने वाले निष्ठुर लगान एवं आत्यन्तिक लूट खसोट के माध्यम से अंग्रेजों ने प्राचीन भारतीय कृषि समृद्धि को चौपट कर दिया। अंग्रेजों की नीतियों ने भारतीय किसान को कंगाल तथा उसकी भूमि को बंजर बना दिया। बंगाल का ब्रिटिश प्रेरित १७६९-७० का अकाल अनाज का संग्रह करके तथा बाजार के साथ खिलवाड़ करके पैदा किया गया था जिसमें बंगाल की एक तिहाई से आधी तक की जनसंख्या अकाल की चपेट में आकर भूख से काल कवलित हो गई। इस तबाही के तुरन्त बाद बंगाल के ब्रिटिश शासकों ने लन्दन में अपने मालिकों के समक्ष शेखी बघारी

कि बंगाल में सर्वत्र अकाल एवं भुखमरी के होते हुए भी बंगाल से इस वर्ष किसानों से वसूल की गई भूराजस्व की राशि विगत वर्ष की राशि की अपेक्षा कहीं अधिक है।

सन १७६९-७० के बंगाल के अकाल के समय से भारत में ब्रिटिश शासन वाले अधिकांश क्षेत्रों में निरन्तर विपदाएँ आती रहीं। अधिकांश वर्षों में प्रत्येक जिला निश्चित रूप से अकाल की चपेट में रहा। चाहे उत्तर भारत हो या दक्षिण भारत, सर्वत्र यही स्थिति रही। परिणाम यह हुआ कि जहाँ भारत में आवश्यकता से अधिक अनाज का उत्पादन हुआ करता था, वहीं भारतीय कृषि व्यवस्था चौपट हो गई। अब सामान्यतः किसानों के पास बड़ी मुश्किल से आगामी फसल लेने के लिए बोने के लिए बीज शायद ही शेष रहा। उसके बैल, हल एवं अन्य कृषि उपकरण विगत वर्षों का ऋण चुकाने के लिए या तो बेच दिए गए या गिरवी रख दिए गए। लगभग सन् १७७० से १९४० तक बहुसंख्यक कृषकवर्ग भूमिहीन हो गया या बिना कौशल का श्रमिक मात्र बन कर रह गया। अधिकांश क्षेत्रों में नियमित रूप से कुछ वर्षों के अन्तराल के बाद भीषण अकाल पड़ने लगे और तभी से भारत के लोग ब्रिटिशों के सम्पर्क में आने से पूर्व के अपने भाग्य की सराहना करने लगे। एक सामान्य भारतीय के लिए भारत में अंग्रेजों का शासन २०० वर्षों का विनाशकाल है।

'भारत भारती' (सन·१९१२) के महान हिन्दी रचयिता मैथिलीशरण गुप्त के अनुसार १८९०-१९०० के दस वर्षों में भारत में अकाल और भूख से एक करोड़ नब्बे लाख (१,९०,००,०००) भारतीयों की मृत्यु हुई जब कि पूरी उन्नीसवीं शताब्दी में समग्र यूरोप में युद्धों में मरनेवालों की संख्या ५० लाख थी।

लगभग सन् १७५० या उसके बाद से ही·ब्रिटिशों को, जिनमें फ्रांसीसी भी समाहित हैं, आरम्भिक दशकों में सेना के सामान को बैलगाड़ी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने के लिए, गोला बारूद ढोने के लिए यूरोपीय सैनिकों तथा अन्य यूरोपीय नागरिकों के अन्यान्य कामों के लिये विविध प्रकार की आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति हेतु, लम्बी दूरी तक उनके सामान को ढोने के लिए तथा बैलगाड़ी खींचने के लिए कृषकों के हृष्ट पुष्ट बैलों की आवश्यकता थी।

इससे बैलों, बैलगाड़ियों, आपूर्ति, खाद्य आदि की माँग बढ़ी तथा गाँव के लोगों पर निरन्तर बेगार कराने के लिए अंग्रेजों ने अपना शिकंजा कसा। सन १८५० के आसपास से जहाँ रेल व्यवहार था उन स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों पर इस प्रकार की विवशतापूर्ण बेगार प्रथा भारत के अधिकांश भागों में सन १९३० के आसपास तक पूर्ण रूप से व्याप्त रही।

७

हमें ग्रेट ब्रिटेन की महारानी विक्टोरिया को धन्यवाद देना चाहिए कि उनके द्वारा भारतीय वायसराय को लिखे गए पत्र में उन्होंने भारत में ब्रिटिशों द्वारा व्यापक रूप से की जानेवाली गोहत्या के सम्बन्ध में सत्य उद्घाटित किया। सन १८८० से १८९४ तक के बहुत बड़े पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के दौरान महारानी विक्टोरिया ने ८ दिसम्बर १८९३ को अपनी प्रजा को इस प्रकार सम्बोधित करते हुए हवाला दिया, 'मुसलमानों की गोहत्या तो इस आन्दोलन के लिए बहाना है। वास्तव में यह आन्दोलन हमारे विरोध में किया गया है जो अपनी सेना आदि के लिए मुसलमानों की अपेक्षा कहीं अधिक गोहत्या करते है।'

इस प्रकार गोहत्या से केवल भारतीय हिन्दू, मुसलमान, ईसाई ही नहीं तो बड़ी संख्या में उच्च ब्रिटिश अधिकारी भी भलीभाँति अवगत थे तथा उस विषय में चर्चा भी किया करते थे कि पशु हत्या विरोधी आन्दोलन वास्तव में व्यापक रूप से एक लाख से भी अधिक ब्रिटिश सेना के जवानों एवं अधिकारियों तथा भारत में ब्रिटिश साम्राज्य प्रणाली को गतिमान करने में सहायक कई लाख ब्रिटिश एवं यूरोपीय नागरिकों की दैनिक भोजन की आवश्यकता के लिए गोमाँस भक्षण हेतु की जाने वाली गोहत्या के विरुद्ध है।

पंजाब, बिहार, उत्तरप्रदेश से सम्बन्धित सन १८८०-१८९३ के ब्रिटिश खुफिया दस्तावेज के सावधानीपूर्वक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन से यह साक्ष्य प्रस्तुत होता है कि इन प्रदेशों में मुसलमानों ने पहले तो गोहत्या पूर्ण रूप से बन्द कर दी थी परन्तु प्रमुख रूप से ब्रिटिश लोगों के बहकावे में आकर वे इस ओर पुनः प्रवृत्त हुए। इस सम्बन्ध में सम्भवतः यह भी कहा जा सकता है कि गोहत्या के प्रति मुसलमानों का आग्रह रहा हो और जहाँ भी यह कहा जाता है तो यह भारत में सन १८८० से ब्रिटिशों द्वारा बलप्रयोग करके जबर्दस्ती कराने के परिणामस्वरूप हुआ है तथा ब्रिटिशों का आग्रह भी यह रहा है कि मुसलमान गोहत्या करते रहें क्योंकि वे गोहत्या को मुसलमानों की परम्परा से जोड़कर देखते है और ब्रिटिश लोग यह चाहते हैं कि मुसलमान गोहत्या करने के अपने अधिकार पर टिके रहें।

८

लगभग २००० वर्षों से यूरोप गोमाँस का प्रमुख उपभोक्ता रहा है। यह स्वाभाविक ही है कि अठारहवीं सदी के आरम्भ में भारत के विभिन्न भागों में ब्रिटिश

लोगों के पैर जमाने के साथ ही यूरोपीय लोगों, विशेषरूप से अंग्रेजों द्वारा गोहत्या आरम्भ की गई। आरम्भ में कितनी गोहत्या की गई होगी, इस ओर ध्यान नहीं दिया गया होगा। परन्तु अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक ऐसी गोहत्याओं की तादाद में बहुत अधिक वृद्धि हुई होगी तथा तीनों ब्रिटिश सेनाओं की सेनारसद विभाग की शाखा के भारत में स्थापित होने के बाद (बंगाल, मद्रास एवं मुम्बई रियासत) उनकी खाद्य आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति हेतु यूरोपीय मॉडल के आधार पर भारत में बड़ी संख्या में बूचड़खाने खुलने लगे। इस प्रकार की हत्याएँ करने के लिए बड़ी संख्या में कसाइयों की माँग होने लगी। एक कच्चे अनुमान के अनुसार लगभग सन १८०० से १९०० तक ऐसे बूचड़खानों की संख्या में पाँच से दस गुना वृद्धि हुई।

सन १८०० में भारत में ब्रिटिश अधिकारियों और सैनिकों की कुल संख्या लगभग २०,००० थी। सन १८५६ में यह संख्या बढ़कर लगभग ४५,००० हो गई। तथापि सन १८५८ की समाप्ति तक भारत में ब्रिटिश सैनिकों की संख्या एक लाख तक पहुँच गई। इस बढ़ी हुई संख्या के अधिकांश भाग के सैनिक कार्मिकों की तैनाती उत्तरी भारत में की गई। परिणामतः उत्तर भारत में गोहत्या तथा ब्रिटिश लोगों द्वारा गोमाँस उपभोग करने की मात्रा चार गुनी से भी अधिक हो गई। इस प्रकार को गोहत्या में आकस्मिक वृद्धि होने से तथा हृष्ट पुष्ट बैलों का ब्रिटिश सेना के सामान को बैलगाड़ी खींचने में उपयोग करने से लोगों का ध्यान इस ओर गया। सन १८३० के तुरन्त बाद लोगों ने इस ओर वास्तविक रूप में ध्यान देना आरम्भ किया। सन १८७० तक इस प्रकार की अनवरत पशुहत्या से इसमें एक भयंकर संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई। भारतीय क्रोध एवं नाराजगी की प्रथम प्रमुख अभिव्यक्ति कूकाओं (नामधारी सिखों) द्वारा की गई। कुछ वर्षों के अनन्तर स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं अन्य संन्यासियों ने गोहत्या रोकने के लिए ब्रिटिशों का आह्वान किया तथा गोसंवर्धिनी सभाओं के गठन हेतु सुझाव दिया। सन १९१० तक अर्थात् ५० वर्षों तक भारत में ब्रिटिश सेना की संख्या निरन्तर एक लाख तक रही। सन १८९३-९४ की पराजय के बावजूद भी पशुहत्या विरोधी आन्दोलन पूर्ण रूप से समाप्त नहीं हुआ। यह प्रति वर्ष किसी न किसी रूप में ब्रिटिश चंगुल से भारत को १९४७ में स्वतन्त्रता मिलने के दिन तक निरन्तर चलता रहा। परन्तु तब से भारत में एक बड़ा शक्तिशाली वर्ग भारत की जनता के हितचिन्तन की बात ही नहीं भूलता जा रहा है अपितु भौतिक एवं व्यापारिक लाभ के प्रलोभन से प्रेरित होकर उसने गोहत्या आरम्भ करा दी है। आश्चर्य की बात है कि जब राज्य सरकारें गोहत्या पर पूर्णरूप से प्रतिबन्ध लगाने के लिए चर्चा करके योजनाएं बना रही थीं तब भारत

सरकार ने उन्हें सुझाव दिया कि बूचड़खानों को बन्द नहीं किया जाए क्यों कि बूचड़खानों से प्राप्त चमड़ा मृतपशु के चमडे से कहीं अधिक उमदा तथा अधिक मूल्यवान होता है। गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए भारत सरकार ने सन १९५४ में एक समिति गठित की। इस समिति ने अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करते हुए सुझाव दिया कि भारत में पशुओं के लिए चारा बहुत कम मात्रा में है तथा भारत अपनी मवेशी के ४० प्रतिशत के लिये ही चारा जुटा सकता है अतः समिति का सुझाव है कि शेष ६० प्रतिशत मवेशी बेकार है। तत्पश्चात् उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुसार भारत सरकार ने गौ एवं उसके बछड़ों आदि (तथा अन्य पशु भी) की बूचड़खानों को हत्या करने की अनुमति दे दी तथा बड़े पैमाने पर गोहत्या होने लगी। वर्तमान दशक में माँस निर्यात करने के उद्देश्य से बड़े बड़े अद्यतन बूचड़खाने स्थापित करने के लिए अनुदान एवं ऋण भी दिए जाने लगे।

१०

इस ग्रन्थ में सन १८८०-१८९४ के पशुहत्या विरोधी आन्दोलन से सम्बन्धित तीन प्रमुख दस्तावेज समाहित हैं। प्रथम दस्तावेज ठगी एवं डकैती विभाग के अधीक्षक द्वारा अपने वरिष्ठ अधिकारियों को आन्दोलन के सम्बन्ध में लिखी गई संक्षिप्त रिपोर्ट (९ अगस्त, १८९३) है। द्वितीय दस्तावेज पंजाब खुफिया विभाग के रिपोर्ट के रूप में लिखित सन १८८२ से १८९३ की पंजाब की घटनाओं से सम्बन्धित है। तृतीय दस्तावेज, बिहार के कुछ भागों में सन १८८६ से १८९३ के मध्य घटित कुछ घटनाओं पर पत्राचार के रूप में रिपोर्ट है। इन दस्तावेजों के अतिरिक्त महारानी विक्टोरिया द्वारा भारत में उनके वायसराय को लिखित पत्र, वायसराय लैंसडोन का कार्यवृत्त, तथा कुछ अन्य सामग्री भी प्रस्तुत की गई है।

सन १८९१ में, २२ वर्ष की अवस्था में लन्दन में बार एट लॉ बनने के तुरन्त बाद मोहनदास करमचंद गांधी उम्र में कहीं अत्यधिक बड़ी ब्रिटिश साम्राज्ञी की भाँति तत्कालीन प्रवर्तित पशुहत्या विरोधी आन्दोलन से भी परिचित थे। बाद में, गांधीजी के अनुसार सन १९१७ में अंग्रेजों को भोजन हेतु गोमाँस उपलब्ध कराने के लिए अंग्रेजों द्वारा लगभग ३०,००० गायें प्रतिदिन मारी जाती थीं। ये दो कथन भी इस ग्रन्थ में समाहित किए गए है।

११

मैंने इस सामग्री को कई वर्ष पूर्व सन १९७० के दशक में लन्दन के भारत कार्यालय पुस्तकालय (इण्डिया आफिस लाईब्रेरी-IOL) संग्रहालय से खोज निकाला

था। अधिकांश दस्तावेज वायसराय लेंसडोन एवं एल्जिन के निजी पत्रों से सम्बन्धित हैं तथा बहुत सारे भारत कार्यालय श्रेणी एल/पी.एण्ड.जे. से हैं। मैं भारत कार्यालय पुस्तकालय का इस सामग्री का उपयोग करने देने के लिए आभारी हूँ तथा इसके कार्मिकों को सहायता देने के लिए धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

इस पशुहत्या विरोधी आन्दोलन से सम्बन्धित हजारों पृष्ठों की सामग्री तथा इसका एक बड़ा हिस्सा दिल्ली के राष्ट्रीय अभिलेखागार में उपलब्ध है या भारत सरकार के ठगी एवं डकैती विभाग के दस्तावेजों (सन १८४०-१९१०) में उपलब्ध है।

इस ग्रन्थ में पुनर्प्रस्तुत एवं चर्चित सामग्री पूर्ण रूप से भारत एवं ब्रिटेन के ब्रिटिश शासकों के उपयोग के लिए थी, अतः इसमें विभिन्न दृष्टिकोण समाहित हो सकते हैं। जैसे कि मुस्लिमों द्वारा पूर्ण रूप से गोहत्या का त्याग करने की इच्छा या आन्दोलन का ब्रिटिश हकूमत के खिलाफ हिन्दू एवं मुसलमानों की साजिश होना। इसका आगे उल्लेख किया गया है। महारानी विक्टोरिया द्वारा वायसराय को लिखते समय उनका यह सोचना कि मुसलमानों को हिन्दुओ की अपेक्षा अधिक संरक्षण देने की आवश्यकता है तथा वे निश्चित रूप से अधिक राजसी है, यद्यपि मुसलमानों की गोहत्या तो इस आन्दोलन के लिए बहाना है, वास्तव में हम लोगों के विरोध में यह किया गया है जो अपनी सेना आदि के लिए मुसलमानों की अपेक्षा कहीं अधिक गोहत्या करते है - भी इसका एक मुखर उदाहरण है।

इस ग्रन्थ की प्रस्तावना चैन्नई के श्री टी.एम. मुकुन्दन ने लिखी है जो कई समूहों एवं संस्थाओं से जुड़े हुए हैं, विशेषरूप से जो पीपीएसटी फाउण्डेशन एवं समाज नीति अध्ययन केन्द्र चेन्नई से सम्बन्धित हैं। उनकी इस पुस्तक के सम्बन्ध में सतत चिन्ता के अभाव में इस ग्रन्थ को इस रूप में प्रस्तुत करना सम्भव ही नहीं होता। उनके सहयोग से ही यह कार्य सम्पन्न हुआ है जिस पर कुछ दशक पूर्व विचार किया गया था। इस कार्य में अन्य लोगों से जो सहायता प्राप्त हुई उनमें श्री पवन गुप्ता, श्रीमती अनुराधा जोशी, श्री अणित चक्रवर्ती, श्री प्रदीप दीक्षित, श्री राम, श्रीमती रमा, तथा मेरी पुत्री गीता हैं।

धर्मपाल

सेवाग्राम

बुद्ध पूर्णिमा, विक्रम सम्वत २०५९

२६ मई, २००२

२. प्रस्तावना

ब्रिटिश शासन के खिलाफ विशेष रूप से पंजाब एवं बिहार में लगभग सन १८८०-१८९४ की अवधि में घटित पशुहत्या विरोधी आन्दोलन की घटनाओं का संक्षिप्त लेखा जोखा।

गाय सदैव भारतीय सभ्यता की पहचान का प्रतीक रही है। महात्मा गांधी ने कहा है कि गाय की पवित्रता हिन्दू धर्म की मूल आस्था है तथा यह समस्त हिन्दू जाति की आस्था एवं अस्मिता में समायी हुई है। इस्लामी आक्रमणों से लेकर भारत के कई भागों में इस्लामी शासन की अवधि तक, विशेष रूप से ब्रिटिश साम्राज्य के दुर्दम शासन में भारतीय लोगों द्वारा गाय की पवित्रता को सुरक्षित रख पाना कठिन हुआ।

यह सर्वविदित तथ्य है कि भारत में ब्रिटिश सेना तथा असंख्य ब्रिटिश यूरोपीय लोगों की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए रोज बहुत बड़ी संख्या में गाय एवं उसकी प्रजाति की हत्या की जाती थी तथा सन १७५० के पश्चात् ऐसी हत्याओं के विरोध में करोडों भारतीय लोगों द्वारा अखिल भारतीय स्तर के बहुत से आन्दोलन किए गए जिनके सम्बन्ध में अधिकांश विद्वानों एवं इतिहास के अनुसन्धाताओं को बहुत कम जानकारी है। ब्रिटिश शासन के खिलाफ इनमें एक ऐसा पशुहत्या विरोधी आन्दोलन लगभग सन १८८०-१८९३ की अवधि में हुआ। आज लगता है इसका किसी को स्मरण नहीं है। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त के भारत के विविध इतिहासों में इसका कहीं भी उल्लेख भी नहीं दिखता है। फिर भी, यह बड़ी अजीब बात है कि उन लोगों को भी इसका अत्यल्प स्मरण है जिनके पुरखे गाय की पूजा करते थे तथा गाय के रक्षक भी थे तथा चार से पाँच पीढ़ी पूर्व अपने जीवन के मध्य पडाव में वे इस आन्दोलन में सक्रिय रूप से सन्नद्ध थे।

यह भी सत्य है कि इस आन्दोलन के सम्बन्ध में बहुत ही कम भारतीय विद्वानों ने बहुत ही कम ध्यान दिया है तथा इसे हाशिये पर धकेल दिया है परन्तु इसे उन्होंने विशेष रूप से उत्तर भारत में हिन्दू और मुसलमानों के बीच हुए व्यापक रूप में कभी वादविवाद के रूप में तो कभी हिंसक रूप में हुए झगड़ों की संज्ञा दी है।

ब्रिटिश साम्राज्ञी महारानी विक्टोरिया तथा उनके उच्च अधिकारियों ने इस आन्दोलन को मुसलमानों के विरूद्ध न कहकर ब्रिटिश शासन के विरूद्ध होने की बात कही है परन्तु अजीब बात है कि विद्वानों पर इसका कोई भी प्रभाव नहीं हुआ।

इस आन्दोलन की सामग्री लाखों पृष्ठों की है। इस आन्दोलन की सामग्री भारत सरकार के अभिलेखों के रूप में अभिलेखागार की सामग्री के रूप में है। भारतीय रियासतों की सरकारी सामग्री में भी यह सामग्री समाहित है जिसे लन्दन की भारत कार्यालय पुस्तकालय के अभिलेखों में सरलता से उपलब्ध किया जा सकता है। इस आन्दोलन के सम्बन्ध में मुख्य रिपोर्ट भारत कार्यालय ग्रन्थालय श्रेणी एल/पी.एण्ड.जे. में समाहित है। इस आन्दोलन के सम्बन्ध में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सामग्री वायसराय लैंसडोन एवं एल्जिन के दस्तावेजों में समाहित है। पंजाब एवं बिहार में हुए आन्दोलन के सम्बन्ध में यहाँ सामग्री दी गई है। भारत सरकार के तत्कालीन राजनीतिक खुफिया विभाग ठगी एवं डकैती विभाग (९ अगस्त १८९३) के अधीक्षक की रिपोर्ट तथा लैंसडोन के कार्यवृत्त (२८ दिसम्बर १८९३) को भी यहाँ समग्र रूप में दिया गया है।

अंग्रेजों द्वारा गायों की दैनिक बड़े पैमाने पर हत्या किए जाने के कृत्य से भारतीय अत्यन्त भयभीत एवं क्षुब्ध थे परन्तु लगभग सन १७७० तक ऐसी किसी भी गोहत्या का विरोध करने की स्थिति में वे नहीं थे। सन १७८० के आसपास राजस्थान में जोधपुर एवं उदयपुर के भारतीय राजाओं ने तथा बंगाल के छोटे से राज्य त्रिपुरा के राजाने अंग्रेजों से उनके अधिकार क्षेत्र में गोहत्या न करने के लिए वचन ले लिया था। इससे पूर्व इन राजाओं ने उनके साथ किसी प्रकार के समझौते या राजनीतिक सन्धियाँ भी की होंगी।

कुछ दशकों के बाद इस प्रकार के समझौतों का कोई व्यावहारिक मूल्य नहीं रहा। भारत में ब्रिटिश सैनिक कर्मियों की संख्या उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में २०,००० के लगभग थी तथा उन्होंने पुराने भारतीय शहरों और कस्बों में सामान्यतः बूचड़खाने नहीं बनाए थे अपितु सैनिक छावनियों वाले शहरों में ही बूचड़खाने खोले थे ताकि भारतीय लोग बूचड़खानों में पशुहत्या से अवगत न हो पाएँ या दुकानों पर गाय का माँस बिक्री के लिए टँगा हुआ न देख पाएँ।

तथापि, सन १८३० के आसपास तक यह मामला अत्यन्त संगीन बन गया। ब्रिटिश शासन की धूमिल होती हुई छबि के लिये अन्य कारण भी थे जिनमें प्रमुख थे - निरन्तर अकाल, कमरतोड़ लगान, लगान वसूली में उत्पीड़न का अत्यधिक प्रयोग, भारतीय उद्योगों का त्वरित विध्वंस, भारतीय रीति रिवाजों, सामाजिक एवं सांस्कृतिक

प्रचलनों के विषय में बढ़ते हुए मतभेद, स्थानीय लोगों एवं समुदायों से जंगल एवं चारागाहों की जमीन का अधिग्रहण, ब्रिटिश सेना एवं अधिकारियों के लिए आपूर्ति हेतु बँधुआ मजदूरी में वृद्धि, ब्रिटिश सेना एवं ब्रिटिश लोगों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ढोने के लिए बैलों के लिए बढ़ता हुआ दबाव आदि सब अधिकाधिक रूप में निरंकुश एवं असह्य हो गया। गायों एवं उसकी प्रजातियों की दैनिक रूप से बड़ी मात्रा में की जाने वाली हत्या से यह स्थिति और अधिक असह्य हो गई। इस प्रकार, गोसंकट ब्रिटिश निरंकुशता का प्रमुख प्रतीक बन गया जिसे अवसर मिलने पर जितना जल्दी सम्भव हो निरस्त करना आवश्यक था। इसमें कारतूस की टोपी पर गाय या सूअर की चर्बी लगाए जाने की अफवाह ने भारतीयों के लिए आग में घी डालने का काम किया और उनका क्रोध और अधिक भभक उठा जिससे अंग्रेजों के प्रत्येक कार्य को भारतीयों द्वारा शंका की दृष्टि से देखा जाने लगा। इस प्रकार के घृणाभाव एवं क्रोध ने सन १८५७ की घटना का रूप ले लिया। भारतीय लोग बहादुर एवं साहसी थे परन्तु राजनीतिक क्षितिज लम्बे अरसे से उनकी पहुँच से दूर था। एक वर्ष के अन्दर ही अंग्रेजों ने बर्बरतापूर्वक भारतीय लोगों को परास्त किया सन् १८५८ की समाप्ति तक उनकी चुनौती रहित प्रतिशोधी विजेता की छबि बन गई।

अंग्रेजों की इस विजय के परिणामस्वरूप ब्रिटिश सेना की अंगभूत ब्रिटिश भारतीय सेना की संख्या दुगुनी से तिगुनी हो गई। सन १८५८ में ब्रिटिश सेना की संख्या में एक लाख या उससे भी अधिक वृद्धि हुई जबकि उसकी अंगभूत भारतीय सेना की संख्या को पूर्व की चार पाँच लाख से कम करके दो लाख कर दिया गया। ब्रिटिश सेना में बढ़े हुए सैनिकों का अधिकांश हिस्सा उत्तर भारत के विविध भागों में तैनात था। अतः उनके भोजन के लिए गोमाँस हेतु अन्य स्थानों की अपेक्षा उत्तर भारत में अधिक गोहत्याएँ की जाने लगीं। इस प्रकार की बढ़ती हुई दैनिक गोहत्या के परिणामस्वरूप विघटन की स्थिति और अधिक विषम होती गई क्योंकि भारतीय कृषि एवं ग्रामीण जीवन तहसनहस होने लगा तथा कुछ वर्षों में कूका जैसे समूह (नामधारी सिख) अंग्रेजों द्वारा संवर्धित एवं उनके द्वारा व्यवस्थापित गोहत्या का उग्र रूप से विरोध करने लगे। इस प्रकार की स्थितियाँ सन १८७० के दशकों में खुलकर सामने आने लगी थीं।

कूकाओं की भूमिका

पंजाब में गायों की रक्षा के लिए समयसमय पर विविध आन्दोलन होने लगे।

सिखों के कूका या नामधारी पन्थने सन १८६० के आरम्भिक दशक में अंग्रेजों के विरुद्ध शस्त्र उठा लिए थे और इसके कारक कारणों में से एक प्रमुख कारण गोरक्षा करना था। समस्त सनातनी हिन्दुओं की भाँति कूकाओं का भी यह विश्वास था कि गोहत्या करने वाला या गोहत्या का समर्थन करने वाला कोई भी शासक शासन करने का अधिकारी नहीं हो सकता।

सन १८६९ में कूकाओं ने बगावत की जिसके परिणाम स्वरूप पंजाब में फिरोजपुर में सिखों का राज घोषित किया गया। सन १८७० में अमृतसर में कुछ मुसलमान कसाइयों की हत्या की गई। जिन कूकाओं ने इसका दायित्व अपने ऊपर लिया था उन्हें सन १८७२ में अंग्रेजों द्वारा फाँसी की सजा दी गई। ६३ कूकाओं को तोप से उड़ा दिया गया तथा कुछ को फाँसी पर लटका दिया गया। सन १८७२ में कूकाओं ने पुनः विद्रोह किया जिसका श्री गणेश गोहत्या विरोधी आन्दोलन के रूप में हुआ। दिसम्बर १८८७ में अमृतसर और उसके आसपास के इलाकों में कूकाओं में ऐसे गीत गाए जाने की बात कही गई जिसका तात्पर्य था 'गन्दे लोग लन्दन से आए और उन्होंने सब जगह बूचड़खाने बनाए। इन्होंने हमारे गुरुओं की हत्या की अतः हमें अब अपना बलिदान देना होगा।' इस प्रकार पूरी अवधि में कूकाओं ने गोरक्षा आन्दोलन को पंजाब में इस तरह सक्रिय रूप से चलाया।

कूकाओं के अतिरिक्त समग्र भारत में अन्य लोग भी बढ़ती हुई गोहत्या के विरोध में ठोस कदम उठाने हेतु सोचने लगे थे। बहुत बड़ी संख्या में संन्यासियों ने इसी समय से अपना जीवन गोरक्षा के इस कार्य हेतु समर्पित कर दिया। इनमें से एक सर्वाधिक प्रतिष्ठित संन्यासी दक्षिण के श्रीमन स्वामी थे जिनकी वाणी ने समग्र भारत में विशेष प्रभाव छोड़ा। उनके बाद आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती का नाम महत्त्वपूर्ण है। सन १८८० के आरम्भ के दशक तक इनमें से अधिकांश का सम्बन्ध गोरक्षा सभाओं से अवश्य था।

गोरक्षिणी सभाएँ

गोरक्षिणी सभा इस आन्दोलन का अन्ततोगत्वा एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संगठन बन गया और समग्र उत्तर भारत, विशेष रूप से उत्तर प्रदेश एवं बिहार में आन्दोलन को व्यापक और तीव्र रूप से गति देने में इसकी मुख्य भूमिका रही। कई भ्रमणशील संन्यासियों एवं साधुओं ने प्रायः गौरक्षिणी सभाओं के माध्यम से इस आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। असंख्य सरकारी कर्मचारियों ने इन सभाओं के सदस्यों के

रूप में इस आन्दोलन में अपनी महत्त्वपूर्ण भागीदारी प्रस्तुत की। इन सभाओं में कुछ ने तो हिन्दू राजाओं को भी अपना सदस्य बनाने के प्रयास किए। कई धनाढ्य हिन्दुओं ने इन सभाओं को प्रभूत मात्रा में धनराशि देकर अपना योगदान दिया।

मूल रूप से ये सभाएँ बूचड़खाने में कत्ल करने के उद्देश्य से लाई जानेवाली गायों को कसाइयों के चंगुल से छुड़ाकर उन्हें उनके द्वारा खोली गई गोशालाओं में आश्रय देने तथा सरकार के समक्ष याचिका प्रस्तुत करने के कार्यों में सन्नद्ध थीं। आन्दोलन के व्यापक एवं निश्चयात्मक स्थिति में पहुँचने पर ये सभाएँ आन्दोलन के प्रमुख केन्द्र बन गईं। वे कसाइयों से गायों को खरीदकर भी लगातार गोरक्षा में लगी रहीं। उन्होंने हिन्दुओं से अनुरोध किया कि वे अपनी गायों को कसाइयों या बिचौलियों के हाथों न बेचें। सभाओं द्वारा बनाए गए इन नियमों का हिन्दुओं द्वारा उल्लंघन करने पर उन्हें नकद जुर्माना अदा करना होता था। इन सभाओं ने अपने विभिन्न निर्णयों को सामाजिक दबावों एवं विभिन्न वर्णों के संगठनों के माध्यम से प्रायः लागू किया। उत्तर प्रदेश क्षेत्र से तो इस प्रकार की रिपोर्ट आई कि जब तक कोई हिन्दू सभा को अपना योगदान न दे, तब तक वह अपने आप को हिन्दू कहलाने का अधिकारी नहीं हो सकता। इन सभाओं की कुछ बैठकों में तो मुसलमानों ने भी भाग लिया था।

परिभ्रमी आन्दोलनकारी

इस आन्दोलन की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विशेषता यह थी कि अनेक साधुसंन्यासी सम्पूर्ण उत्तर एवं मध्य भारत में यात्राएँ करके गोहत्या के विरोध में अभियान जारी रखते थे, लोगों से दानस्वरूप धन इकट्ठा करते थे तथा गोसंरक्षण आदि उद्देश्यों के लिए विभिन्न संगठनों की स्थापना करते थे। उन्होंने समाज के विविध विशिष्ट एवं सामान्य वर्गों के बीच सम्पर्क सूत्र स्थापित करने का काम भी किया। ऐसे अनेक संन्यासियों में कुछ नाम श्रीमन स्वामी, स्वामी अलाराम, गोपालनन्द स्वामी, स्वामी भास्करानन्द, स्वामी ब्रह्मानन्द एवं खाकी बाबा आदि के गिनाए जा सकते है जिन्होंने लोगों को इस कार्य में प्रवृत्त करने में अत्यन्त सक्रिय भूमिका निभाई। नागा साधुओं जैसे घुमक्कड साधुओं एवं संन्यासियों के बड़े समूह उत्तरप्रदेश एवं बिहार के जिलों में अत्यन्त सक्रिय रूप से कार्यरत थे। इन संन्यासियों के अतिरिक्त अन्य अनेक भ्रमणशील प्रवाचक दूर दूर तक यात्राएँ करके स्थान स्थान पर बड़ी संख्या में एकत्रित लोगों को सम्बोधित करते तथा अपने प्रवचन देते। ये सभी भ्रमणशील प्रवाचक और संन्यासी असंख्य पुस्तिकाएँ एवं गोमाता के चित्र वितरित करते तथा इस बात पर जोर

देते कि गोहत्या अपनी सगी माँ की हत्या करने के समान है।

दयानन्द सरस्वती और आर्यसमाज की भूमिका

सन १८८०-९४ की अवधि में गोहत्या के विरोध में अभियान चलाने वाले तथा गोरक्षिणी सभाओं का श्रीगणेश करने वाले संगठनों में प्रथम एक संगठन था। तदनन्तर, आर्यसमाज के साथ समग्र भारत की विविध धर्मसभाएँ एवं अन्य हिन्दू संगठन जुड़ गए। स्वामी दयानन्द सरस्वती सन १८६६ से ही गोसंरक्षण के विषय में चिन्तित थे। उन्होंने गोस्तुति हेतु तथा गोहत्या के विरोध में गोकरुणानिधि नामक एक पुस्तिका भी लिखी। इस पुस्तिका का प्रथम अर्धभाग गो एवं अन्य उपयोगी पशुओं की हत्या पर प्रतिबन्ध लगाने के मामले को प्रस्तुत करता है। आर्थिक दलीलों को प्रतिपादित करते हुए, धर्मग्रन्थों से उद्धरण प्रस्तुत करते हुए विषय को निरूपित किया गया है तथा विरोधियों के प्रश्नों के उत्तर विस्तारपूर्वक दिए गए है। स्वामी दयानन्द ने तर्क प्रस्तुत करते हुए कहा कि गायों की हत्या किए जाने से, समाज के लिए सर्वाधिक उपयुक्त सम्भावित भोजन निर्माण के उपक्रम को दुर्बल करने से समाज विनाश के कगार पर पहुँच जाएगा और प्रकृति के नियम तथा सामंजस्य को भंग करके भीषण विनाश को निमन्त्रित करेगा। किसी भी रूप में माँस भक्षण करना पाप है। दयानन्दजी ने दावे के साथ कहा कि वेदों में किसी ऐसे धार्मिक अनुष्ठान का कहीं भी कोई उल्लेख नहीं मिलता जिससे पशु हत्या या माँस भक्षण को समर्थन मिलता हो।

गोकरुणानिधि के द्वितीय भाग में गोकृष्यादिरक्षिणी सभा जिसे संक्षिप्त नाम गौरक्षिणी सभा के रूप में जाना जाता है, से सम्बन्धित नियम एवं उपनियम समाहित है। इस दस्तावेज से सभा की सदस्यता, संगठन एवं सभा के प्रबन्धन का ब्यौरा प्राप्त होता है। जो लोग सभी के कल्याणार्थ इस कार्य के लिए तन-मन-धन से सहायता करने तथा उनके प्रयत्नों के प्रति समर्पित होने की कामना रखते हों उन्हें इस सभा का सदस्य बनने के लिए आमन्त्रित किया गया तथा समान उद्देश्य वाले समाजों को इसके साथ जुड़ने के लिए अनुरोध किया गया। दयानन्द की इच्छा थी कि इसकी सदस्यता के द्वार सभी के लिए खुले रहें। इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि इसका कोई भी सदस्य किसी भी समुदाय या किसी भी समूह का हो सकता है तथा किसी भी सन्नद्ध समुदाय या संगठन के एक प्रतिनिधि को सभा की कार्यकारिणी में स्थान मिलना चाहिए। आर्यसमाज के सदस्यों द्वारा इस पुस्तिका को उत्तर भारत के अनेक भागों में वितरित किया गया तथा यह अत्यन्त लोकप्रिय बन गई। आगरा में एक

गोरक्षिणी सभा तुरन्त आरम्भ हुई तथा उसके पश्चात् कई अन्य सभायें भी आरम्भ हुईं।

स्वामी दयानन्दजी ने इस आन्दोलन का सुनियोजित रूप में और अधिक तीव्रता से व्यापक स्तर पर प्रसार करने के उद्देश्य से कम से कम एक लाख लोगों के हस्ताक्षर लेकर उन्हें महारानी विक्टोरिया, ब्रिटिश संसद एवं भारत के ब्रिटिश गवर्नर जनरल को देने की योजना बनाई। यह दस्तावेज मार्च १८८२ में मुम्बई में प्रकाशित किया गया जिसमें गोहत्या के मामले को उठाते हुए सरकार से कहा गया कि वह गाय, बैल एवं भैंस की हत्या पर शीघ्रातिशीघ्र रोक लगाए। स्वामी दयानन्द ने इस अपील की सैंकडों प्रतियाँ एक पत्र के साथ आर्यसमाज की विविध शाखाओं, प्रमुख व्यक्तियों, संगठनों तथा रियासतों के शासकों को भेजीं। मेवाड़ से ४०,००० हस्ताक्षर तथा पटियाला से ६०,००० हस्ताक्षर किए जाने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। इसके साथ कई लाख हस्ताक्षर प्राप्त किए गए।

सम्बन्धित आन्दोलन

इस समयावधि में अन्य कई सम्बन्धित आन्दोलन भी हुए। सन १८८१ में लाहौर एवं अमृतसर में हुए आन्दोलन की रिपोर्ट प्राप्त हुई जो यूरोपीय पद्धति से चीनी उत्पादन करने से सम्बन्धित थी जिसमें कहा गया था कि चीनी निर्माण में शुद्धीकरण की प्रक्रिया में पशुओं की हड्डियों का उपयोग किया जाता है। यह आन्दोलन इसके विरोध में किया गया था। इस आन्दोलन ने पुनः सन १८८४ में गोसंरक्षण आन्दोलन के साथ गति पकड़ी। नवम्बर १८८४ में यह आन्दोलन बहावलपुर में फिर से शुरू हुआ तथा लाहौर, अमृतसर, पेशावर, लुधियाना, मुल्तान, गुरुदासपुर, जलन्धर आदि तक व्याप्त हो गया। सन १८८५ की वसन्त ऋतु तक यह आन्दोलन दिल्ली तक पहुँच गया, परन्तु उसके पश्चात् वह मन्द पड़ गया। सन १८८७ में हरिद्वार में भारत धर्म महामण्डल गठित हुआ। इस आन्दोलन को नवीन स्फूर्तियुक्त प्रेरणा प्राप्त हुई जिसमें गोसंरक्षण का मामला भी था। सन १८९० तक यूरोपीय चीनी विरोधी आन्दोलन बंगाल, उत्तरप्रदेश, पंजाब में पुनरुज्जीवित हुआ। सन १८९१ के आरम्भ से बंगाल के नदिया के हिन्दुओं ने विदेशी चीनी और नमक का त्याग कर दिया था क्योंकि कहा जाता था कि इनका हड्डी के चूरे से शुद्धीकरण किया जाता था। सन १८९१ में यह आन्दोलन मध्य भारत तक फैल गया।

३. भारत के विभिन्न राज्यों में पशुहत्या विरोधी आन्दोलन

१. पंजाब

सन १८६२ में पटियाला के महाराजा ने वायसराय की विधान परिषद के सदस्य के रूप में भारत में गाय के माँस की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगाने हेतु एक विधेयक प्रस्तुत किया परन्तु परिषद ने विधेयक को मंजूरी नहीं दी।

सन १८८२ के आरम्भ से ही समग्र पंजाब में गोहत्या के विरोध में भारत सरकार के समक्ष अनेक याचिकाएँ प्रस्तुत की जाती रहीं। इस अभियान की प्रेरक शक्ति आर्यसमाज था। उत्तरप्रदेश एवं पंजाब में आर्यसमाज के सदस्य विविध केन्द्रों पर याचिकाओं की प्रतियों पर हस्ताक्षर कराने के लिए उपस्थित थे। इस अभियान में मेरठ, गुडगाँव, फिरोजपुर, मुल्तान, लाहौर, सियालकोट और रावलपिण्डी की आर्यसमाज शाखा सन्नद्ध थी। दिल्ली, लुधियाना, गुजराँवाला, हिसार, सिरसा, रोहतक, लाहौर और सियालकोट में याचिकाएँ परिचालित की गईं। कुछ स्थानों पर तो इन याचिकाओं पर लाखों लोगों ने अपने हस्ताक्षर किए। अनेक स्थानों पर तो हिन्दू और मुस्लिम दोनों ने गोहत्या के विरोध में इन याचिकाओं पर अपने हस्ताक्षर किए। इस अवधि में पंजाब के सभी बड़े बड़े नगरों एवं कस्बों में आर्यसमाज द्वारा गोरक्षिणी सभाएँ आरम्भ की गईं। जुलाई १८८२ के अन्त तक गोहत्या विरोधी आन्दोलन में बड़ी संख्या में सरकारी कर्मचारियों समेत समाज के विभिन्न वर्गों के लोग बड़ी संख्या में जुड़ने लगे थे।

सन १८८३ तक जैसे जैसे इस आन्दोलन प्रचण्ड एवं व्यापक रूप लिया हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच तनाव की स्थिति उत्पन्न होने लगी। हिन्दू ऐसे मेलों एवं स्थानों का बहिष्कार करने लगे जहाँ गाय का माँस सरे आम बेचा जाता था। गोहत्या में सहायक बनने के विरोध में मुसलमानों पर हिन्दू तरह तरह के सामाजिक दबाव डालने का प्रयास कर रहे थे। सन १८८४ तक कई समाचार पत्रों ने गोसरंक्षण को वाणी देने का जिम्मा उठाया। कुछने हिन्दू मुस्लिम एकता एवं सामंजस्य की बात

उठाई। जुलाई १८८४ में लाहौर के एक समाचारपत्र ने लिखा कि हिन्दू और मुस्लिम के बीच तनाव का मुख्य कारण यूरोपीयों द्वारा प्रचलित किया गया गोमाँस भक्षण है, अतः हिन्दुओं को सरकार से गोहत्या निषेध के लिए कहना चाहिए। अक्टूबर १८८४ में इसी समाचार पत्र ने लिखा कि यद्यपि गोहत्या मुस्लिम कसाइयों द्वारा की जाती है तो भी ये हत्याएँ उन अंग्रेज अधिकारियों के आदेश के तहत की जाती हैं जो चाहते है कि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच वैरभाव बना रहे।

जून १८८४ में स्वामी अलाराम ने स्वर्णमन्दिर के पास गोसंरक्षण पर प्रवचन दिया। सन १८८५ के सम्पूर्ण वर्ष में वे समग्र पंजाब में घूम घूमकर गोसंरक्षण हेतु अपना अभियान चलाते रहे तथा लोगों से दान स्वरूप में धन ग्रहण करते रहे जिससे गायों का संरक्षण हो सके, उन्हें कसाइयों के चंगुल से छुड़ाने के लिए खरीदा जा सके एवं गोशालाओं की स्थापना की जा सके।

ऐसे ही अन्य घुमक्कड प्रवचनकर्ता, साधु तथा अन्य लोग भी थे जो मेलों, पवित्र नदियों के स्नानार्थ बने घाटों तथा अन्य स्थानों पर जहाँ भी बड़ी संख्या में हिन्दू एकत्रित होते थे, वहां उनके समक्ष प्रवचन देते। ऐसे ही एक वक्ता बनारसीदासजी थे जिन्होंने सन १८८२ में मध्य भारत एवं राजस्थान में भारत के समग्र हिन्दू राज्यों में अपना अभियान चलाया। सन १८८४ में वे पंजाब में हिन्दुओं को एकत्रित करके उन्हें सम्बोधित करके यात्राएँ कर रहे थे।

गोहत्या विरोधी आन्दोलन के प्रचण्ड रूप में चलने के कारण सरकार ने प्रतिशोध की भावना से गोरक्षिणी सभाओं से जुड़े सरकारी कर्मचारियों को दण्डित करके इन सभाओं को बन्द करने की ठानी। सन १८८४ में ऐसे सरकारी कर्मचारियों को दण्डित किया गया जिन्होंने कालका में गोरक्षिणी सभा आरम्भ करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। जुलाई १८८४ की समाप्ति तक अम्बाला की गोरक्षिणी सभा को उपायुक्त के आदेश के तहत बन्द करा दिया गया। तथापि इसके सदस्य सभा के कार्यों को गोपनीय ढंग से उसी प्रकार चलाते रहे तथा निधि हेतु धन एकत्रित करते रहे। ऐसी गुप्त बैठकें अन्य स्थानों पर भी आयोजित होने की रिपोर्ट प्राप्त हुईं। बूढ़ी गायों को हत्या से बचाने के लिए तथा मवेशियों के लिए चारागाह हेतु जमीन खरीदने के लिए धन एकत्रित किया गया। कभी कभी तो ऐसी बैठकें खुले आम आयोजित की गईं थी जिनमें वड़ी संख्या में लोगों ने भाग लिया था। अक्टूबर १८८५ में अमृतसर में आयोजित एक इसी प्रकार की आर्यसमाज की बैठक में भाग लेनेवालों की संख्या लगभग २०,००० थी। सैंकडों बूढ़ी एवं अनुत्पादक गायों को मेलों से क्रय किया गया

तथा उन्हें हरिद्वार जैसे स्थानों पर भेजा गया जहाँ गोशालाओं एवं चारागाहों की व्यवस्था पहले ही थी। कभी कभी गोहत्या के प्रश्न को लेकर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच तनाव बढ़ने पर गम्भीर प्रकार के दंगे भी हुए। सन १८८६ के अन्त में दिल्ली और लुधियाना से ऐसे दंगों की रिपोर्ट प्राप्त हुई।

सन १८८६ के अन्त तक रिपोर्ट प्राप्त होने लगी कि आर्यसमाज के सदस्य सिपाहियों में आन्दोलन छेड़ने के उद्देश्य से सेना में भर्ती हो रहे थे। यह भी माना जाता था कि सेना में सिखों के बीच इस आन्दोलन को हवा देने के लिए कूका भी प्रयासरत थे। पंजाब के कई भागों में इस प्रकार की अफवाहें फैली हुई थीं कि रूस के लोग ब्रिटिश सेना को परास्त करके भारत पर विजय प्राप्त करेंगे और गोहत्या बन्द कराएँगे।

सितम्बर १८८७ में जब झझ्झर के हिन्दुओं ने शहर में गोहत्या के सरकारी निषेध के लिए सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए याचिका तैयार की तब कुछ मुसलमानों ने भी उनका समर्थ किया था। इसी महीने में दिल्ली के दो समाचारपत्रों ने बादशाह शाहआलम द्वारा जारी किए गए फरमान की साक्ष्यांकित प्रति प्रकाशित की जिसमें कहा गया था कि हदिस के अनुसार गायों और साँड़ों की हत्या पूर्ण रूप से निषिद्ध है तथा समग्र साम्राज्य में इन जानवरों की हत्या करना निषिद्ध कर दिया गया है।

सन १८८७-८८ के शीतऋतु तक, गोहत्या विरोधी आन्दोलन ने इतना अधिक व्यापक रूप ले लिया कि भारत सरकार के सन १८४० में गठित ठगी एवं डकैती विभाग ने अपनी एक विशेष केन्द्रीय शाखा स्थापित की तथा विभिन्न स्थानीय सरकारों के मुख्यालयों में इसकी शाखायें स्थापित कीं ताकि विभिन्न सूबों से आन्दोलन के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त हो सके।

अप्रैल १८८८ के आसपास जब गुजराँवाला के बूचडखाने ने गोहत्या हेतु पंजाब सरकार के नीति नियमों की अवज्ञा की तब बूचड़खाने को किसी अन्य उपयुक्त जगह पर ले जाने कि लिए प्रमुख हिन्दू एवं मुस्लिमों द्वारा हस्ताक्षरित याचिकाएँ जिला प्राधिकरणों एवं नगरपालिकाओं को सौंपी गईं। नगरपालिका के बहुत से कर्मचारी बूचड़खाने को अन्य स्थान पर ले जाने के पक्ष में थे।

इसी समय फिरोजपुर में एक साधुने हिन्दुओं के कर्तव्यों पर एक प्रवचन दिया। उन्होंने कहा कि घी की कीमत आसमान छू रही है तथा कुछ वर्षों के बाद घी खरीद पाना सम्भव नहीं होगा। उन्होंने यह भी कहा कि मुस्लिम भी खूब घी खाते है अतः

उन्हें भी हिन्दुओं के साथ मिलकर सरकार से गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाने तथा शहर में खोली गई गोमाँस की दुकानों को बन्द करने के लिए कहना चाहिए। कुछ समाचार पत्रों के आलेखों में भी यह बात कही गई कि व्यापक स्तर पर गोहत्याएँ किए जाने के कारण दूध और घी की कीमतें आसमान छूने लगी है।

जुलाई १८८८ में फिरोजपुर में एक हिन्दू वकील की अध्यक्षता में हिन्दू मुस्लिम दोनों की एक जनसभा आयोजित की गई जिसमें विचार किया गया कि उपराज्यपाल के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत करके शहर के उपनगरीय इलाकों में हाल ही में स्थापित बूचड़खानों को बन्द करने के लिए कहा जाए। मुसलमान इस बात से भयभीत थे कि गाय का माँस बेचने की दुकान खोलने से हिन्दू मुसलमानों के बीच पहले से स्थापित शान्ति एवं सौहार्द की भावना को ठेस पहुँचेगी। उन्होंने कहा कि जिन्हें गोमाँस की आवश्यकता हो वे इसे छावनियों से आसानी से प्राप्त कर सकते हैं।

तथापि ब्रिटिश सरकार एवं उसके समर्थक अखबारों ने मुस्लिमों को हिन्दुओं का पक्ष लेने के लिए मना करने का स्वर छेड़ा। उपर्युक्त उल्लिखित सभा का हवाला देते हुए इम्पीरियल पेपर (लाहौर) ने अपने २१ जुलाई १८८८ के अंक में टिप्पणी की कि फिरोजपुर के मुसलमान गोहत्या विरोधी आन्दोलन के मूल उद्देश्य को नहीं समझ पाए है। इस समाचारपत्र ने मुसलमानों को आन्दोलन के समर्थन के खिलाफ चेतावनी देते हुए लिखा कि इस आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य गोमाँस भक्षी अंग्रेजों एवं मुसलमान दोनों के खिलाफ आवाज उठाना, तथा हिन्दुओं को संगठित करना है।

तथापि कुछ और अंग्रेजी समाचारपत्रों ने फिरोजपुर के मुसलमानों की हिन्दुओं के साथ संगठित होकर गोमाँस की दुकानें बन्द कराने के प्रयास की सराहना की। एक समाचार पत्र ने लिखा कि कुछ अत्यन्त गरीब लोगों को छोड कर कोई मुस्लिम गोमाँस भक्षण नहीं करते और न ऐसा करना अपना कर्तव्य ही मानते है। इसने दोनों समुदायों को सलाह दी कि दोनों के बीच होने वाले समस्त झगड़ों की जड़ गोहत्या है अतः उसे बन्द करने के लिए उन्हें सहयोग करना चाहिए। एक अन्य समाचारपत्र ने लिखा कि फिरोजपुर के हिन्दुओं एवं मुसलमानों ने एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया है जिसका अन्य शहरों ने भी अनुकरण करना चाहिए।

दिल्ली के एक समाचारपत्र ने लिखा कि गोहत्या को रोके जाने के एक प्रचण्ड समर्थक पारसी सज्जन के अनुसार विगत ३० वर्षों में (उदाहरणार्थ बगावत के समय से) ब्रिटिश सेना के लिए कम से कम ४०,५०,००० गायों की हत्या की गई थी। उसने टिप्पणी की कि जिन हिन्दुओं ने इसके लिए मुसलमानों को दोषी ठहराया है,

उन्हें इस तथ्य पर पुनर्विचार करना चाहिए। एक अन्य समाचार पत्र ने इस ओर संकेत करते हुए लिखा कि इस्लाम में किसी भी पशु की हत्या करने की आवश्यकता नहीं बताई गई है। ऐसा कोई भी कृत्य शान्तिभंग करने के उद्देश्य से किया जाता है। अतः मुस्लिम गायों के हत्यारे नहीं है। उन्हें हिन्दुओं के साथ ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिससे उनके बीच सौहार्दपूर्ण मैत्रीयुक्त सम्बन्ध विकसित हो तथा ऐसा कुछ भी नहीं करना चाहिए जिससे उनके सिर पर दोष मढ़ा जाए।

लाहौर के एक समाचार पत्र में एक मुस्लिम कार्मिक ने संकेत दिया कि भारत के अंग्रेज शासक इस्लामी देशों के शासकों की तुलना में अधिक गोमाँस भक्षण करते है। कपूरथला के एक समाचार पत्र ने लिखा कि जिन देशों में मछली और छिपकली के अलावा कुछ भी पैदा नहीं होता उन देशों के अंग्रेजों में गोहत्या का प्रचलन है क्योंकि वे गाय से होने वाले लाभ से अवगत ही नहीं है।

दिसम्बर १८८८ में इस आन्दोलन ने नए तरीके के साथ पुनः जोर पकड़ा। लखनऊ की खैराती गोशाला से पंजाब के विविध जिलों के लिए गोहत्या विरोधी सैकड़ों पुस्तिकाएँ डाक से भेजी गईं। ऐसी पुस्तिकाएँ सन १८८० के अन्त में व्यापक स्तर पर परिचालित की गईं थीं।

अगस्त १८८९ में रोहतक में एक गाय की हत्या के मामले को लेकर दोनों समुदायों ने एक दूसरे का बहिष्कार किया तथा उन्होंने अपने अपने समुदायों के लिए सब्जियों की छोटी छोटी दुकानें आदि खोलनी शुरु कीं। ऐसे भी अवसर आए जब हिन्दू मुस्लिम दोनों ने साथ मिलकर कार्य किया। अगस्त माह में जलन्धर से एक सूचना प्राप्त हुई कि वहाँ के प्रमुख हिन्दुओं एवं मुसलमानों ने उपायुक्त को एक हस्ताक्षरित संयुक्त याचिका प्रस्तुत की जिसमें शहर के एक बूचड़खाने को हटाने के लिए कहा गया तथा सुझाव दिया गया कि यदि बूचड़खाने की आवश्यकता हो तो उसे शहर के बाहर तीन से चार किलोमीटर की दूरी पर बनाया जाए। हिसार जिले से भी एक रिपोर्ट प्राप्त हुई जिसमें कहा गया कि वहाँ हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों की एक समिति की रचना गोहत्या बन्द करवाने के उद्देश्य से की गई थी।

मार्च १८९० में स्वामी अलाराम लाहौर में आन्दोलन चला रहे थे जिसके पश्चात् उन्होंने अमृतसर का दौरा किया तथा स्वर्ण मन्दिर में प्रवचन दिया। उन्होंने कहा कि वे कुछ वर्षों से इस अभियान के लिए यात्राएँ कर रहे हैं तथा उन्होंने ३६० गोशालाएँ स्थापित करवाई हैं। इलाहाबाद की गोशाला में १५०० गायें हैं जिनमें एक आना प्रति सेर के हिसाब से दूध बेचा जा रहा है जब कि वहाँ का बाजार भाव दो

आना प्रति सेर है। कुछ स्थानों पर मुस्लिमों ने भी गोशालाओं के लिए खुलकर योगदान दिया था। उन्होंने सभी मुस्लिमों से अनुरोध किया कि कुरान एवं हदिस ने सभी को दयापूर्ण व्यवहार करने के निर्देश दिए हैं तथा कहा कि अन्य प्राणियों की अपेक्षा गाय अधिक दया की पात्र है। उन्होंने गाय के प्रति उपेक्षाभाव की ब्रिटिश शासन की तुलना हिन्दू शासन में गाय को मिलने वाले संरक्षण से की तथा कहा कि हिन्दुओं के शासन में गायों के लिए किसी शरणस्थली की आवश्यकता नहीं थी जब कि ब्रिटिश शासन में अब तक ३०० से अधिक शरण स्थलियाँ बनाई जा चुकी हैं। उन्होंने कहा कि गाय को कसाई के हाथों पड़ने देना उतना ही महापाप है जितना गाय की स्वयं हत्या करना। उन्होंने अपने श्रोताओं को उपदेश देते हुए प्रोत्साहित किया कि उनके पास जितना भी धन हो उसे अर्पित करें, जितना भी अधिक धन इकट्ठा कर सकतें हों करें और उसे गायों को खरीदने तथा उनकी हत्या होने से बचाने के लिए और गायों के लिए शरणस्थलियाँ निर्मित करने के लिए खर्च करें।

जुलाई १८९० में करनाल के एक समाचार पत्र ने दिल्ली के हिन्दुओं और मुस्लिमों के बीच पनपे एक संघर्ष की निन्दा करते हुए लिखा कि गायें दूध, घी के साथ कृषि के लिए भी महत्त्वपूर्ण हैं अतः यदि गायों की हत्या होती रही तो इससे जितना हिन्दुओं का नुकसान होगा, उतना ही, मुसलमानों का भी होगा। मुस्लिम धार्मिक दृष्टि से ईद के अवसर पर गोहत्या करने के लिए बाध्य नहीं है।

नवम्बर १८९० में फतेहपुर (राजस्थान) से एक रिपोर्ट आई कि राजा ने अपने शासन के अधिकार क्षेत्र के सभी थानेदारों को एक आदेश जारी किया है जिसके अनुसार मुसलमानों या हिन्दुओं को अधिकारियों को जानकारी दिए बिना गाय बेचने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। राजा के अधिकार क्षेत्र से बाहर गायों का निर्यात करना भी इस आदेश से निषिद्ध कर दिया गया है।

१८९१ के आरम्भ में लुधियाना में ३६ वीं सिख रेजीमेन्ट के कुछ सैनिकों ने स्थानीय बूचड़खाने में ले जाई जानेवाली गायों को रोका। इस समय के गोसंरक्षण आन्दोलन में सिपाहियों की भागीदारी की यह एक मात्र घटना थी।

१८९१-९२ में झेलम जिले के पिण्ड दादन खान गाँव की घटना उस समय हिन्दुओं और मुस्लिमों के बीच पैदा हुए तनाव से सम्बन्धित थी। उसे जिस प्रकार से निपटाया गया वह दृष्टान्त रूप में रखने लायक है। ७ अप्रैल १८९१ को पिण्ड दादन खान गाँव के हिन्दू चोहा सैदान शाह नाम से प्रख्यात मेले में एक कसाई को मवेशी हलाल करने के लिए दिए जानेवाले लाईसेन्स के विरोध में आन्दोलन करने के उद्देश्य

से एकत्रित हुए। नगरपालिका समिति के उपाध्यक्ष तथा सदस्य एवं अन्य प्रमुख हिन्दू इस आन्दोलन के नेता थे। इस बैठक में लगभग चार सौ लोग उपस्थित थे। इस बैठक में पंजाब के उपराज्यपाल एवं उपायुक्त को गोहत्या बन्द कराने के लिए तार भेजने का निर्णय लिया गया। साथ ही, यह भी निर्णय लिया गया कि इस बीच हिन्दू न तो मेले में जाएँगे और न उस स्थान के मन्दिर में ही जाएँगे।

अप्रैल के अन्तिम सप्ताह में पिण्ड दादनखान के हिन्दुओं ने विरोध प्रदर्शित करने के लिए मुस्लिम डॉक्टर से इलाज कराना तथा मुस्लिम कसाई से माँस खरीदना बन्द कर दिया। जून मास में हिन्दुओं ने साबुन के उत्पादक एक मुस्लिम से साबुन खरीदना बन्द कर दिया क्योंकि उनका मानना था कि वह इसमें गाय की चरबी का उपयोग करता था। मुसलमानों ने हिन्दू हलवाइयों को दूध बेचना बन्द कर दिया। दिसम्बर में, पिण्ड दादनखान के एक मुस्लिम कसाई ने हिन्दुओं के बहिष्कार के कारण से बहुत नुकसान होने के कारण माँस के लिए पशुओं की झटका पद्धति से हत्या बन्द करने का अनुरोध किया तथा हिन्दुओं को मुस्लिम कसाइयों से माँस खरीदने के लिए अनुरोध किया। इसी समय एक मोची तथा कुछ अन्य मुसलमानों ने झटका पद्धति से पशुओं की हत्या करने से रोकने के उद्देश्य से स्थानीय मजिस्ट्रेट के न्यायालय में मामला दायर कर दिया।

मार्च १८९२ की समाप्ति तक पिण्ड दादनखान के हिन्दुओं और मुसलमानों में इस बात को लेकर सहमति बन गई कि कसाइयों द्वारा अन्य माँस बेचने से गोमाँस का कोई सम्बन्ध नहीं है। १८९२ के अन्त तक यह मसला सौहार्दपूर्ण ढंग से निपट गया।

मई १८९१ में अमृतसर के एक वकील ने स्थानीय समाचार पत्र में गाय के संरक्षण के लिए एक कम्पनी की विवरणिका प्रकाशित की। इस विवरणिका में लिखा गया कि गायों के लिए सौ बीघा भूमि चारागाह के रूप में होने पर तथा दूध की बिक्री से होनेवाले लाभ के साथ गायों के बछड़ो-बछियों से और अधिक लाभ होगा तथा उस भूमि का सामान्य कृषि के लिए उपयोग करके तो लाभ प्राप्त किया ही जा सकेगा।

नवम्बर १८९१ तक गोहत्या विरोधी आन्दोलन इतना अधिक व्याप्त हो चुका था कि इससे स्कूली बच्चे भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। रावलपिण्डी के एक समाचार पत्र ने एक रिपोर्ट प्रकाशित की कि एक मिशन स्कूल के हिन्दू छात्रों ने अपने प्रधानाध्यापक से शिकायत की कि उनका एक साथी विद्यार्थी विद्यालय में गाय का माँस खुले आम लाता है। जब प्रधानाध्यपकने उनकी शिकायत पर कोई ध्यान नहीं

दिया तो वे छात्र स्कूल नहीं आए। प्रधानाध्यापकने छात्रों को चेतावनी दी कि उनके स्कूल न जाने पर उनका नाम स्कूल से काट दिया जाएगा। इस घटना का रावलपिण्डी के हिन्दुओं ने प्रखर विरोध किया।

गोहत्या में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संलग्न हिन्दुओं को भी नहीं बख्शा गया। रावलपिण्डी के एक समाचार पत्र ने अपने नवम्बर १८९२ के अंक में एक लेख प्रकाशित किया जिस में लिखा गया कि जो हिन्दू समाचार पत्र गोमाँस की बिक्री से सम्बन्धित विज्ञापन अपने समाचार पत्रों में प्रकाशित करते हैं वे कसाई के समान हैं तथा वे मनु द्वारा उल्लिखित कसाइयों के प्रकारों की आठवीं श्रेणी में आते है। १८९२ के अन्त तक गोहत्या विरोधी आन्दोलन का प्रभाव पेशावर तक व्याप्त हो गया।

१८९३ के मध्य भाग तक गोसंरक्षण आन्दोलन अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँच गया। अगस्त में दिल्ली के एक समाचार पत्र ने समाचार प्रकाशित किया कि आन्दोलन के जोर पकडने तथा गोरक्षिणी सभाओं की रचना के साथ हिन्दू मुस्लिम दंगों में वृद्धि हुई है। मुस्लिमों ने इस आन्दोलन को उनके धार्मिक अधिकारों से वंचित करने के रूप में लिया। ब्रिटिश शासक उसे हवा दे रहे थे। अतः मुस्लिमों द्वारा गोबलि दिए जाने की संख्या में वृद्धि हुई। अमृतसर के एक समाचार पत्र ने टिप्पणी की कि सरकार ने मुसलमानों को प्रोत्साहित किया है क्योंकि यूरोपीय लोग गोमाँस भक्षी है। लाहौर के एक समाचारपत्र ने लिखा कि गोसंरक्षण समितियोंने गायों के संरक्षण के स्थान पर हिन्दू और मुस्लिमों के बीच दुर्भावनाओं को और अधिक भडकाया है। अतः जब तक यूरोपीयों के भोजन में गोमाँस रहेगा तब तक गोहत्या बन्द किए जाने की बात निरर्थक होगी। समाचार पत्र के सम्पादक ने अनुरोध किया कि हिन्दू मुसलमानों को मित्रतापूर्ण भाव से समझाएँ कि मवेशी का नाश करने से देश की समृद्धि नष्ट हो जाएगी।

दिल्ली के जिला पुलिस अधीक्षक ने दिल्ली मण्डल के आयुक्त एवं अधीक्षक को २३ नवम्बर १८९३ को लिखित एक पत्र के साथ सोनीपत की गोरक्षिणी सभा के लिए प्रकाशित एक पुस्तिका भेजी। यह पुस्तिका नागरी लिपि में प्रकाशित थी तथा इसका शीर्षक था - गो पुकार प्रश्नावली (कविता में व्यक्त गाय का निवेदन)। यह मूल रूप से उड़िया के एक मुस्लिम कवि सादी द्वारा लिखी गई थी। इस पुस्तिका का आरम्भ इस ईश्वर वन्दना से होता है कि यद्यपि इसका लेखक जन्म से एक मुस्लिम है फिर भी उसे गाय को संरक्षित देखकर आनन्दानुभूति होगी क्योंकि भारत का सर्वनाश किया जा रहा है।

२. कश्मीर

कश्मीर राज्य में गोहत्या के विरोध में अत्यधिक सख्त कानून था। दिसम्बर १८८२ में रिपोर्ट प्राप्त हुई कि विगत दो वर्षों में गोहत्या करने के आरोप में कश्मीर राज्य में ८०० मुसलमानों को कारावास की सजा दी गई थी। जम्मू के पास के जंगल में गोहत्या करनेवाले सियालकोट छावनी के दो कसाइयों को जम्मू उच्च न्यायालय ने पाँच वर्ष के कारावास की सजा दी थी। इस अवधि में ऐसी कई रिपोर्ट प्राप्त हुई कि यूरोपीय सहित अन्य लोगों को गोहत्या के दोषी पाये जाने पर सलाखों के पीछे भेजा गया तथा मृत्युदण्ड भी दिया गया। जुलाई १८८६ में एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि सरकार के अनुरोध पर महाराजा ने ब्रिटिश सेना को अपने क्षेत्र में रहने की अनुमति दे दी थी परन्तु कुछ यूरोपीयों द्वारा एक गाय की हत्या किए जाने के परिणामस्वरूप महाराजा ने अपना आदेश रद्द कर दिया था। अक्टूबर १८८६ में रिपोर्ट प्राप्त हुई कि कश्मीर में सेना की छावनी स्थापित हो जाने के कारण वहाँ गोहत्या आरम्भ हो गई थी। यह भी रिपोर्ट प्राप्त हुई कि दो यूरोपीय सैनिकों द्वारा नीलगाय को गोली से मारने पर तथा उनका यह मामला वहाँ के निवासियों द्वारा विरोध स्वरूप वायसराय को भेजे जाने के बावजूद भी कश्मीर दरबार ने उन्हें फाँसी परं लटका दिया था। सन १८८८ में गोहत्या के अभियुक्त एक या दो ब्रिटिश नागरिक समेत कई लोगों को आजीवन कारावास की सजा दी गई थी। तत्कालीन ब्रिटिश वायसराय रिपन को यह कहते हुए सुना गया था कि कश्मीर में गोहत्या के अपराध के लिए पहले से ही आजीवन कारावास की सजा देने का प्रावधान था। अतः ब्रिटिश सरकार को इसमें हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। अगस्त १८८९ में एक ऐसी रिपोर्ट प्राप्त हुई थी कि स्व. महाराजा रणजीत सिंहजी की चौबरसी के अवसर पर कश्मीर की जेलों में गोहत्या के आरोप में सजा काट रहे कैदियों को मुक्त किया गया था।

३. उत्तरप्रदेश

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में नगरपालिका परिषद में मनोनीत हिन्दुओं ने गोहत्या नियन्त्रण विषयक विनियमों में परिवर्तन करने का प्रयास किया। इस प्रकार १८८६ में इलाहाबाद नगरपालिका परिषद के सदस्यों ने, जिनमें कई सदस्य स्थानीय कांग्रेस संगठन इलाहाबाद लोक परिषद से सम्बन्धित थे, नगरपालिका की सीमा में पशु हत्या निषेध विषयक अस्थायी उपनियम पारित कर दिया था। सन १८८७ में गोहत्या की वैधता विषयक विवाद इलाहाबाद उच्च न्यायालय में पहुँचा तथा इस ओर

समग्र भारत के लोगों का ध्यान गया। उसी वर्ष इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने निचली अदालत के निर्णय को दो बार उलट दिया था जो गोसंरक्षण का समर्थन कर रहे थे। इसी से इलाहाबाद और उत्तरप्रदेश के हिन्दू आन्दोलन हेतु हलचल करने लगे थे।

पहले मामले में न्यायालय ने दो मुस्लिम अभियुक्तों को मुक्त कर दिया था। उन्हें निचली अदालत ने गोहत्या का दोषी करार दिया था क्योंकि उन्होंने एक हिन्दू द्वारा टूटी हुई दीवाल के हिस्से से उन्हें दो गायों की हत्या करते हुए देखा गया था जिसकी उसने गवाही दी थी।

दूसरे मामले में दो मुसलमानों ने शाहजहाँपुर जिले के तिलहार में ईद के अवसर पर सार्वजनिक स्थल पर एक गाय की हत्या की थी। उन्हें भारतीय दण्डसंहिता की धारा २९५ के तहत सजा सुनाई गई थी। सत्र न्यायाधीश ने इस मामले को उच्च न्यायालय को निर्दिष्ट कर दिया। भारतीय दण्ड संहिता की धारा २९५ में व्यवस्था दी गई है कि कोई भी यदि किसी धार्मिक स्थान को नष्ट करता है, नुकसान पहुँचाता है या अपवित्र करता है, किसी धर्म के लोगों के पवित्र विषयों को अपमान की भावना के वशीभूत होकर कोई व्यक्ति दूषित करता है या यह सोचकर कि ऐसे कृत्य को उस धर्म के लोग अपने धर्म का अपमान मानते है, उन्हें नष्ट करता है, हानि पहुँचाता है या अपवित्र करता है तो वह कारावास की सजा का पात्र होगा। उत्तरपश्चिमी राज्यों के उच्च न्यायालय ने अपना निर्णय सुनाते हुए कहा कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा २९५ के अर्थ की परिधि में गाय को पदार्थ नहीं माना जा सकता और इस शब्दावली के दायरे में गायों जैसे सजीव प्राणी को समाहित नहीं किया जा सकता।

इससे इलाहाबाद के हिन्दुओं में उत्तेजना फैल गई। इस निर्णय के प्रति दुःख और क्रोध व्यक्त करने हेतु एक सभा का आयोजन किया गया तथा उसमें प्रस्ताव पारित किया गया कि गोहत्या के विषय में इस धारा को व्यापक बनाने के लिए सरकार के समक्ष एक याचिका दायर की जाए। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णयों ने विद्यमान कानूनों के अन्तर्गत कानूनी समीक्षा के माध्यम से गोहत्या निषेध की समस्त सम्भावनाओं पर रोक लगा दी।

इससे इलाहाबाद में गोरक्षिणी सभा की रचना करने का श्रीगणेश हुआ जिसे उत्तरप्रदेश एवं बिहार में गोसंरक्षण हेतु निर्णायक भूमिका निभानी थी। यह आन्दोलन अन्ततः उत्तरप्रदेश के शाहजहाँपुर, लखनऊ, कानपुर, गाजियाबाद, देहरादून, इलाहाबाद और बनारस जिलों तक व्याप्त हो गया। आर्य समाज की देहरादून, झाँसी,

अलीगढ़, बस्ती और बनारस की शाखाएँ भी अत्यन्त सक्रिय रूप से इसमें जुड़ गईं।

गंगा नदी के तट पर स्थित प्रसिद्ध हरिद्वार नगर में प्रतिवर्ष लाखों तीर्थयात्री एकत्रित होते थे। अतः यह नगर गोसंरक्षण आन्दोलन का एक अन्य महत्त्वपूर्ण केन्द्र बन गया। हरिद्वार में गोरक्षिणी सभा पहले से कार्यरत थी जो अपना एक मुखपत्र भी प्रकाशित करती थी। इसी सभा को व्याप्ति दी गई। हरिद्वार में १८८७ में स्थापित भारत धर्म महामण्डल नामक एक अन्य संस्था ने भी गोसंरक्षण का कार्य किया था।

श्रीमन स्वामी ने इसी समय इलाहाबाद गोरक्षिणी सभा की ओर से इस आन्दोलन को चलाना आरम्भ किया। १८८८ एवं १८८९ में श्रीमन स्वामी ने उत्तरप्रदेश, बिहार, बंगाल, मुम्बई और मद्रास क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर यात्राएँ तथा प्रवचन दिए एवं गोरक्षिणी सभाओं की स्थापना की और वे जहाँ भी गए वहाँ से गोसंरक्षण के लिए धन इकट्ठा किया। उन्होंने अपराध कानून में परिवर्तन करने की आवश्यकता की बात कही तथा अनुरोध किया कि नए विधि निर्माण के आधार पर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय को पलटा जाए। उन्होंने इस हेतु खूब धन इकट्ठा करवाया। भारत के विविध भागों से उन्हें प्रभावी लोगों का समर्थन प्राप्त हुआ। इन्डियन पेपर्स में प्रकाशित अंशदान देनेवालों की सूची दरभंगा, हंतवा और बेतिया के महाराजाओं की अध्यक्षता में छपी। बनारस के महाराजा ने भी अंशदान दिया था तथा डुमरांव के महाराजा ने इस आन्दोलन में रुचि ली थी। सितम्बर १८८८ में श्रीमन स्वामी ने चालीस से अधिक बैठकें आयोजित करने के उपरान्त कोलकता के टाउन हॉल में एक बैठक आयोजित की। भारतीय समाचार पत्रों ने लिखा कि समग्र भारत को गाय के प्रश्न पर सरोकार है तथा सरकार अधिक समय तक इस आन्दोलन को अनदेखा नहीं कर सकती।

उत्तरप्रदेश में कुछ लब्धप्रतिष्ठ कांग्रेसी गोहत्या विरोधी आन्दोलन के साथ जुडे हुए थे। इलाहाबाद में पण्डित मदन मोहन मालवीय आन्दोलन के प्रति सहानुभूतिशील थे तथा १८८९ में उन्होंने भारत धर्म महामण्डल एवं प्रयाग हिन्दूसभा में भाषण दिया था। ये दोनों गोसंरक्षण के लिए आन्दोलन कर रही थीं। पण्डित मदन मोहन मालवीय के घनिष्ठ सहयोगी लाला रामचरणदास इलाहाबाद के धनाढ्य साहूकार एवं व्यापारी थे जिन्होंने तीन कांग्रेस स्वागत समितियों में सेवा दी थी। वे स्वामी अलाराम की गोशाला निधि के १८८८ के आसपास के मुख्य स्थानीय दाता थे। अन्य एक कांग्रेसी व्यक्ति वकील थे जो स्थानीय गोरक्षिणी सभा के सदस्य थे तथा उन्होंने १८८९ की नागपुर सभा की बैठक में भाग लिया था। राजा रामपालसिंह के अखबार कालकंकर में एक

आलेख प्रकाशित हुआ था। राजा रामपालसिंह ने गोसंरक्षण बैठकों की अध्यक्षता भी की थी। सन १८९३ के दंगो के पश्चात लखनऊ के दो कांग्रेसी नेताओं गंगाप्रसाद वर्मा एवं पं. बिशन नारायण दरने आजमगढ़ दंगों की जाँच की थी। उन्होंने एक रिपोर्ट प्रकाशित की थी जिसमें वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि प्रशासन की घपलेबाजी के कारण मुसलमानों ने सामान्य से अधिक गोहत्याएँ की थी। दर ने 'इंग्लेण्ड से अपील' नामक शीर्षक वाली एक पुस्तिका आजमगढ़ के दंगों पर प्रकाशित की थी। इसके प्रकाशन से उत्तर पश्चिम सूबे के उपराज्यपाल चार्ल्स क्रोस्थ्वेट अत्यधिक नाराज हुए थे। भारत के वायसराय को दिनांक ८-५-१८९४ को लिखे एक पत्र में क्रोस्थ्वेट ने लिखा, 'मैंने भारत सरकार से इंग्लेण्ड से अपील... के लेखक बिशन नारायण दर एवं उसके प्रकाशक पर मुकद्दमा दायर करने के लिए कहा है। जहाँ तक इन सूबों का सवाल है, इस व्यक्ति पर मुकद्दमा चलाना हमारे लिए उपयोगी होगा क्योंकि इस व्यक्ति ने आजमगढ़ में हिन्दू भावनाओं को भड़काने में आग में घी का काम किया है।'

मार्च १८८८ में लखनऊ के एक वकील ने गोहत्या विषयक एक पुस्तिका प्रकाशित की थी जिसमें उन्होंने सुझाव दिया था कि भारत के मुसलमानों को गोहत्या करना बन्द कर देना चाहिए तथा हिन्दुओं के साथ अपने विवादों को निपटा लेना चाहिए। इस पुस्तिका में हिन्दुओं को सुझाव दिया गया था कि वे मुसलमानों का सहयोग प्राप्त करके सरकार से गोहत्या पर पाबन्दी लगवाएँ। लेखक ने यह भी संकेत दिया था कि साथ साथ कार्य करने से दोनों ही समुदायों का भला होगा।

१८८८ के बकर ईद के अवसर पर उत्तरप्रदेश के गाजीपुर के हिन्दुओं को बनारस आर्य समाज के एक सदस्य गोपालानन्द स्वामी ने सम्बोधित किया। इस बैठक के तुरन्त बाद वे बड़ी संख्या में एकत्रित हुए तथा उन्होंने मुस्लिमों को गोबलि देने से रोकने के प्रयास किए।

सन १८८९ के अन्तिम समय तक सामान्य जनता एवं किसानों में फैले इस आन्दोलन के प्रति उत्तरपश्चिमी प्रान्तों के राज्यपाल का ध्यान आकर्षित हुआ। उत्तरपश्चिमी सूबों की सरकार तथा अवध के राज्यपाल के मुख्य सचिव ने टिप्पणी की कि आन्दोलन अत्यधिक गहन एवं व्यापक रूप में फैल चुका था। सम्भवतः इसी कारण से इलाहाबाद का सेना रसद विभाग का अधिकारी परिवहन एवं सेना के सामान को ढोने के लिए कोई भी पशु नहीं खरीद पाया था।

सन १८९० में अलीगढ़ के हिन्दुओं ने गोबलि चढ़ाने के लिए मुसलमानों का बहिष्कार किया। अलीगढ़ से उत्तर प्रदेश के पड़ोसी जिलों एवं पंजाब के हिन्दुओं को

पत्र लिखकर मुस्लिमों का बहिष्कार करने के लिए अनुरोध किया गया था। मुसलमानों को मवेशी न बेचने के लिए हिन्दुओं में नोटिस परिचालित किए गए। इन नोटिसों को अत्यन्त व्यापक स्तर पर परिचालित किया गया तथा निर्देश दिया गया कि जिसे भी यह नोटिस प्राप्त हो वह उसे आगे चार लोगों को परिचालित करे। जो कोई इस नोटिस को प्राप्त करके आगे चार और लोगों को परिचालित नहीं करेगा उसे गोहत्या का पाप लगेगा। इसी समय कोलकता के कुछ समाचार पत्रों ने अंग्रेज कर्मचारियों को दोषी करार देते हुए लिखा कि वे मुसलमानों को हिन्दू धर्म का अपमान करने के लिए उत्तेजित कर रहे हैं और इस प्रकार वे दोनों समुदायों के बीच फूट डाल रहे हैं अन्यथा वे एकजूट होकर राजनीतिक रूप से ताकतवर बन जाएँगे।

जनवरी १८९३ के आरम्भ में उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले में दंगा हुआ। हिन्दुओं के एक समूह ने एक मुसलमान को राजमार्ग से सेना रसद के ठेकेदार के लिये खेप ले जाने वाली गाडी हांकने से रोका और मवेशी को छोड कर हांक दिया। इस सम्बन्ध में पुलिस द्वारा गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को मुक्त कराया गया तथा पुलिस की पिटाई की गई।

मई १८९३ तक उत्तरपश्चीमी सूबों में यह आन्दोलन आजमगढ़, बलिया और गोरखपुर जिलों में अत्यन्त प्रचण्ड रूप ले चुका था। आजमगढ़ जिले का समग्र दक्षिणी एवं पूर्वी भाग, गाजीपुर एवं बलिया जिलों का सीमावर्ती इलाका इससे पूर्णतः प्रभावित हो चुका था। आजमगढ़ जिले में गोरक्षिणी सभा संगठित करने के प्रयास किए गए। आजमगढ़ और जहानागंज की दो विशाल सभाओं में हजारों हिन्दू उपस्थित थे। बलिया के गोरक्षिणी नेताओं ने इन्हें संबोधित किया था। यही इस आन्दोलन के प्रारम्भ का दौर था। इन बैठकों में इस माँग को आगे प्रस्तुत करने का निर्णय लिया गया कि मुसलमान गोबलि चढ़ाना त्याग दें। इस बैठक में गोबलि देने पर अंकुश लगाने के लिए सीधी कार्रवाई करना निश्चित हुआ।

जून में बकर ईद के समय आजमगढ़ जिले में भीषण दंगे हुए। आजमगढ़ के कार्यकारी जिला मजिस्ट्रेट ने अपने सभी थानेदारों को ईद वाले दिन दंगा सम्भावित गाँवों की सूची भेजने के लिए निर्देश दिया। इसी सन्दर्भ में उसने उन सभी गाँवों के मुसलमानों को बलि चढाने की अपनी मंशा के लिए १५ जून तक अपना नाम दर्ज कराने का अनुरोध किया। ये आदेश मात्र अशान्त गाँवों के लिए थे और मात्र उन मुसलमानों पर लागू थे जो भूतकाल में बलि चढ़ाने की प्रथा को निभाते रहे थे। तथापि आदेश सभी गाँवों में पहुँचे तथा सामान्य प्रथा के सम्बन्ध में इन में कोई चेतावनी नहीं

दी गई थी। हिन्दुओं ने विरोध प्रदर्शित किया कि इस हेतु बड़ी संख्या में नाम दर्ज कराने वाले मुस्लिमों में से अनेकों में इस प्रकार की बलि चढाने के अधिकार की कोई प्रथा प्रचलित नहीं थी। अधिकारियों ने दावा प्रस्तुत किया कि इस नामांकन प्रक्रिया में किसी भी प्रकार की अनधिकृत अनुमति नहीं दी जाएगी। परन्तु उन्होंने बलि चढ़ाने के दावों को सत्यापित नहीं किया।

इसी के अनुसरण में बलिया, गाजीपुर एवं गोरखपुर के हिन्दू गायों की बलि चढ़ाने को रोकने के लिए बड़ी संख्या में अनेक स्थानों पर एकत्रित हुए। आजमगढ़ जिले में गैरकानूनी रूप से एकत्रित होने तथा दंगा करने के कुल मिलाकर ३५ मामले हुए। मऊ के बुनाई केन्द्र में अत्यन्त भीषण दंगा हुआ। यहाँ भी आसपास के गाँवों और जिलों के हिन्दू बहुत बड़ी संख्या में एकत्रित हुए। उनका स्थानीय मुसलमानों, मुख्यतः जुलाहों, अन्सारियों से सामना हुआ। बड़ी संख्या में पुलिस बन्दोबस्त होने पर भी परिस्थिति पर काबू नहीं पाया जा सका। इस दंगे में कई मुसलमान मारे गए। बलि चढ़ाए जाने के उद्देश्य से वहाँ लाई गई गायों को हिन्दू अपने साथ ले गए तथा उन्होंने कई लब्धप्रतिष्ठ मुसलमानों से इस अनुबन्ध पत्र पर हस्ताक्षर करवाए कि वे भविष्य में कभी गायों की बलि नहीं चढाएँगें।

यद्यपि सरकारी बयान में कहा गया कि लगभग एक दर्जन लोग मऊ में ईद के अवसर पर मारे गए। एक पर्यवेक्षक के अनुसार लगभग २५० लोग इन दंगों में मारे गए। आजमगढ़, बलिया और गाजीपुर जिलों में बड़ी संख्या में दण्डात्मक पुलिस बल लगाया गया तथा उस पुलिस बल के अनुरक्षण के लिए वहाँ की जनता पर कर लगाया गया।

जब हिन्दुओं को लगा कि सरकार स्थानीय कानूनों एवं प्रशासनिक विनियमों को लागू नहीं करेगी तो उन्होंने ईद पर चढ़ाई जानेवाली बलि में स्वंय हस्तक्षेप किया। उन्होंने अनुभव किया कि मुस्लिमों द्वारा अत्यधिक रूप में की जानेवाली अधिकारस्वरूप गोहत्या में सरकारी कर्मचारियों का उकसावा है। हिन्दू और सरकार के बीच असहमति के कुछ मुख्य बिन्दु निम्नानुसार थेः

१. सामान्य रूप से बलि दी जानेवाली गायों की संख्या।
२. हिन्दुओं ने मुद्दा उठाया कि आजमगढ़ जिले में मुस्लिमों से प्राप्त ४२६ नोटिस सामान्यतः बलि चढ़ाने की संख्या से कहीं अधिक थे।
३. आजमगढ़ नगर में बलि। हिन्दुओंने मुद्दा उठाया कि आजमगढ़ नगर पालिका उपनियम निजी घरों में पशु बलि चढ़ाने की अनुमति नहीं देते।

मजिस्ट्रेट ने फैसला सुनाया कि उपनियम ईद पर दी जाने वाली बलि पर लागू नहीं होते।

आजमगढ़ दंगों पर समाचार देते हुए एक समाचार पत्र के अनुसार मण्डल आयुक्त द्वारा आजमगढ़ के मजिस्ट्रेट को निर्देश दिए गए थे कि हिन्दू जनसंख्या वाले क्षेत्रों में केवल बकरियों एवं भेडों की ही बलि दी जाए तथा इस नियम का किसी भी प्रकार से उल्लंघन किए जाने पर या पशुओं को बूचड़खाने की ओर ले जाने पर कानून तोड़नेवालों को दण्डित किया जाए। मजिस्ट्रेट ने इन निर्देशों का पालन नहीं किया।

इसी बीच मऊ गाँव में भड़क उठे दंगे से एक बात साफ हो गई कि अंग्रेजों की उपस्थिति का हिन्दू मुस्लिमों के सम्बन्धों में किस प्रकार का प्रभाव था।

इस क्षेत्र में गोरक्षिणी आन्दोलन का इतना अधिक प्रभाव था कि गाजीपुर में गोहत्या के एक व्यक्तिगत मामले को रोकने के लिए हिन्दू बड़ी संख्या में एकत्रित हो गए थे। जुलाई १८९३ में नन्दगंज पुलिस चौकी के पास के एक छोटे से गाँव मऊपारा में विवाह के अवसर पर दावत के लिए एक मुस्लिम ग्रामवासी द्वारा एक गाय की हत्या को रोकने के लिए बहुत बड़ी संख्या में हिन्दू एकत्रित हो गए थे। सशस्त्र पुलिस के आने के पश्चात् ही भीड़ बिखरी थी। तथापि अगली सुबह अपने विरोध प्रदर्शन को जारी रखने के लिए वे पुनः उपस्थित हो गए और इस प्रकार उन्होंने दावत के लिए गाय की हत्या नहीं होने दी।

१८९४ में भी ब्रिटिश सरकार को अशान्ति की अपेक्षा थी। १८९४ के बकर ईद त्यौहार पर फैजाबाद से गोरखपुर, आजमगढ़ और मऊ तथा इलाहाबाद से बलिया और बनारस से गाजीपुर में सेना भेजी गई।

पूरे देश के समाचार पत्रों ने आजमगढ़ के दंगों पर टिप्पणियाँ की। कुछ समाचार पत्रों ने दंगों के सम्बन्ध में लिखा कि ये ब्रिटिश प्रशासन की 'फूट डालो और शासन करो' वाली नीति के परिणाम स्वरूप हुए है। मजिस्ट्रेट भी चूँकि यूरोपीय है तथा गोमाँस खाता है अतः उसने मुसलमानों को गोहत्या करने के लिए प्रोत्साहित ही किया। इस दृष्टिकोण का परिणाम अन्ततः झगड़े कराना और खून खराबा ही तो था। दंगों के पश्चात् आजमगढ़ में हिन्दुओं के खर्चे पर सेना तैनात करने के सरकार के निर्णय की तुलना औरंगजेब द्वारा लगाए गए जजिया कर से की गई। आजमगढ़ के दंगों के पश्चात् अनेक हिन्दुओं को गिरफ्तार किया गया तथा जेल भेजा गया। उत्तरपश्चिमी सूबों में इससे अत्यधिक अशान्ति फैली।

मुम्बई के एक समाचार पत्र ने लिखा कि हिन्दू मुस्लिम दंगे न तो हिन्दू सूबों

में होते हैं और न मुस्लिम सूबे हैदराबाद में होते हैं। ये ब्रिटिश शासन वाले क्षेत्रों में ही होते हैं। मध्यप्रदेश के एक समाचार पत्र ने अंग्रेजी के समाचार पत्रों पर दंगों से सम्बन्धित गलत समाचार प्रकाशित करने के आरोप लगाए जिसके परिणामस्वरूप स्थिति और अधिक बिगड़ी।

मऊ का वृत्तांतः मऊ में ब्रिटिश प्रशासन की घपलेबाजी

आजमगढ़, १८९३

आजमगढ़ जिले में स्थित मऊ एक पुराना वस्त्र उत्पादन केन्द्र था जो कम से कम अकबर के समय से विशिष्ट प्रकार के वस्त्रों के उत्पादन के लिए सुप्रसिद्ध रहा। उन्नीसवीं शताब्दी में, मऊ की जनसंख्या के एक बड़े क्षेत्र में मुस्लिम बुनकरों, हिन्दू कातनेवालों, विविध जातियों के व्यापारियों, व्यवसाइयों आदि का समावेश था। मऊ सूती वस्त्र उद्योग एवं व्यापार का महत्त्वपूर्ण केन्द्र बन गया। ब्रिटिश शासन से पूर्व भी गोहत्या के मसले को लेकर सम्भवतः टकराव हुए होंगे। जब अंग्रेजों के हाथ में इस क्षेत्र का प्रशासन आया, तब मऊ में गोहत्या पर प्रतिबन्ध था। परन्तु नए ब्रिटिश प्रशासन ने अनिश्चितता की स्थिति पैदा कर दी। पाँच ही वर्षों में, सन १८०६ में मऊ में भीषण हिन्दू मुस्लिम दंगे हुए। परिणामतः सन १८०८ में निझाम के न्यायालय ने एक आदेश प्रसारित करके घोषणा की, 'हिन्दुओं का ऐसी बलि के प्रति धार्मिक घृणाभाव होने के कारण मुस्लिमों द्वारा गायों, बछडों और बैलों की बलि दिए जाने की (मुस्लिम) नवाब वजीर की (पूर्व) सरकार द्वारा अनुमति नहीं दी गई।' इस आदेश पर आधारित एक आदेश में गवर्नर जनरल परिषद ने जारी किया, 'मऊ में सभी प्रकार की बलि विशेष सन्दर्भ में निषेधाज्ञा को मान्यता। स्थानीय हिन्दुओं का मानना था कि यह आदेश मात्र गाय की बलि पर ही लागू न होकर समस्त गोहत्या पर लागू होगा। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में स्थानीय सरकारी कर्मियों ने इस आदेश को उसी प्रकार से लागू किया था जिस प्रकार से हिन्दुओं ने इसकी व्याख्या की थी। परन्तु आंगे चलकर स्थानीय सरकारी कर्मचारी मुस्लिमों की इस बात से सहमति हो गई कि यह आदेश मात्र बलि देने से सम्बन्धित है, (हत्या से नहीं)

सन १८६० के दशक में पुनः तनाव की स्थिति पैदा हो गई। सन १८६३ में कुछ मुसलमानों ने बलि चढाने की अनुमति प्राप्त करने के लिए लिखा। आजमगढ़ के मजिस्ट्रेट ने घोषणा की कि मुस्लिमों को बन्द दरवाजे में गोहत्या करने की छूट है। हिन्दुओं में इस घोषणा से रोष व्याप्त हो गया और उन्होंने मजिस्ट्रेट के समक्ष याचिका

प्रस्तुत की और निजामात अदालत के १८०८ के निर्णय का हवाला प्रस्तुत किया।

मार्च १८६३ में मजिस्ट्रेट ने अपने आदेश को उलट दिया। इस अधिसूचना में उसने कहा कि 'यद्यपि प्रथमतया यह सम्भव नहीं है कि मवेशी हत्या को एक साथ प्रतिबन्धित किया जाए... वास्तव में नवाब वजीर के समय से इस शहर में गायो, बछड़ों और बैलों की हत्या पर प्रतिबन्ध लगा हुआ है... अतः तदनुसार सरकार का यह निषेधाज्ञा आदेश पुनः जारी किया गया है तथा कोई भी मुसलमान इस मऊ नगर में गायों, बछड़ों और बैलों की हत्या करने का प्रयास नहीं करेगा या उन्हें वास्तव में नहीं मारेगा।

इस निर्णय के विरोध में मुस्लिमों द्वारा प्रस्तुत की गई याचिका को एक मजिस्ट्रेट एवं जिला न्यायाधीश ने खारिज कर दिया। परन्तु १८६४ में एक संयुक्त मजिस्ट्रेट ने गोहत्या करने के अभियुक्त कुछ जुलाहों को इस आधार पर बरी कर दिया कि उन्होंने गोहत्या एक घर के अन्दर भोजन के लिए की थी। हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाने की उनकी कोई मंशा नहीं थी। इसके तुरन्त बाद हिन्दुओं पर गोहत्या के मसले को लेकर मुस्लिमों पर हमला करने के आरोप लगाकर कई मुकद्दमे दायर किए गए। इन सभी मामलों में मजिस्ट्रेट ने हिन्दुओं को इस आधार पर सजा सुनाई थी कि मुस्लिम भोजन के लिए गोहत्या करने के लिए स्वतन्त्र हैं। तथापि, अपील किए जाने पर मजिस्ट्रेट ने गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगे होने के आधार पर उन हिन्दुओं को बरी कर दिया। इसका अपवाद मात्र एक मामला था जिसमें न्यायाधीश ने कुछ हिन्दुओं को मुस्लिम मालिक से गाय जबर्दस्ती छुड़ाकर ले जाने के लिए कठोर कारावास का दण्ड दिया था, 'क्योंकि वास्तव में कोई गोहत्या नहीं की गई, तथा... इस बात का भी कोई प्रमाण नहीं है कि वह गाय हत्या के लिए ही लाई गई थी।' इस मसले को लेकर आत्यन्तिक तनाव की स्थिति बनी रही। मजिस्ट्रेट ने हिन्दुओं के खर्चे से दण्डात्मक पुलिस बल वहाँ लगा दिया था।

तत्पश्चात् सन १८६५ में मजिस्ट्रेट ने एक बूचड़खाने के निर्माण के लिए अनुमति दे दी जिसमें 'गायें भोजन के लिए कत्ल की जाएँगी तथा इससे हिन्दुओं का अपमान नहीं होगा। गोबलि निषेधाज्ञा प्रभावी रहेगी।' इससे स्थानीय हिन्दुओं में नाराजगी व्याप्त हो गई। हिन्दू समाज ने इस निर्णय को मानने से इन्कार कर दिया तथा उत्तरपश्चिमी सूबे के उपराज्यपाल, भारत के वायसरोय तथा भारत के राज्य सचिव के समक्ष याचिकाएँ प्रस्तुत कीं। उन्होंने तर्क दिया कि १८६५ में बूचड़खाने के खुलने का कारण कठिन समय में अनाज की ऊंची कीमतों का एक आपातकालीन

उपाय था। हिन्दू समाज ने इस निर्णय को एक वर्ष की मूल अनुमति से भी अधिक समय तक मात्र इसलिए स्वीकार कर लिया क्योंकि गोहत्या को छोड़कर उन्हें भोजन के लिए भैंसों और अन्य पशुओं को कत्ल करने पर कोई आपत्ति नहीं थी।

सन १८८५ में आजमगढ़ के तत्कालीन मजिस्ट्रेट ने मऊ के तीन मुसलमानों को सार्वजनिक रूप में गोहत्या का दोषी सिद्ध होने पर सजा सुनाते हुए अपनी राय व्यक्त करते हुए कहा कि १८०८ का सरकारी आदेश मूल रूप से गोबलि का निषेध करता है, भोजन के लिए गोहत्या का नहीं। इस पर हिन्दुओं ने उत्तर दिया कि १८०८ में सरकार की मंशा स्पष्ट रूप से वर्ष में एक या दो बार तथा पूरे वर्ष भर गोहत्या की अनुमति दे कर गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाने की नहीं थी। एक अन्य सरकारी तर्क के प्रतिभाव में हिन्दुओं ने मुद्दा उठाया कि मऊ में बड़ी जनसंख्या हिन्दुओं की है या मुस्लिमों की, या यह स्थान हिन्दुओं के लिए विशेष पवित्र है या नहीं है यह प्रश्न नहीं है। असली मुद्दा मुसलमानी शासकों द्वारा पुरानी प्रथा को अनुमति देने से सम्बन्धित है जो हिन्दू और मुस्लिमों के बीच उन्नीसवीं शताब्दी में शान्ति स्थापित करने का आधार रहा है। हिन्दुओं ने यह भी मुद्दा उठाया कि समग्र मऊ में शान्ति इस प्रश्न पर न्यायोचित एवं समान निर्णय देने पर निर्भर होगी।

सन १८८६ में मऊ में गाय की किसी भी प्रकार की हत्या के प्रति विरोध स्वरूप सरकार के समक्ष हिन्दुओं ने पुनः याचिका दायर कर दी। बनारस के जिला आयुक्त ने १८६५ के बलि एवं भोजन के लिए हत्या वाले निर्णय का समर्थन किया। सरकार ने मुस्लिमों को बेकार पड़े बूचड़खाने को किसी दूसरे स्थान पर ले जाने की अनुमति दे दी। इससे हिन्दू पुनः क्षुब्ध हुए। ब्रिटिश शासन के प्रारम्भ से ही जो विवाद शुरु हुआ था उसकी पराकाष्ठा स्वरूप ही १८९३ के दंगे थे।

४. मध्य भारत : मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र

१८८८ के अन्त तक यह आन्दोलन मध्य भारत तक व्याप्त हो गया। मध्यप्रदेश एवं महाराष्ट्र में कांग्रेस के समर्थक मराठा ब्राह्मण वकील गोसंरक्षण आन्दोलन के भी महत्त्वपूर्ण समर्थक थे। मध्य भारत की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सभा के रूप में गौरव प्राप्त करने वाली नागपुर की गोरक्षिणी सभा १८८७ में प्रारम्भ हुई थी, तथा इस समय तक अत्यन्त सक्रिय हो गई थी। कहा जाता है कि नागपुर में प्रतिवर्ष की जानेवाली गोहत्याओं की संख्या १८८७ में १६,००० से १८९२ में ५०० तक कम कराने में नागपुर की इस सभा की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। इस सभा का अपना निजी मुद्रणालय

एवं समाचारपत्र था। सभा की स्थापना का द्वितीय वार्षिक समारोह १८८९ में मनाया गया। इलाहाबाद केन्द्रीय गोसंरक्षण सभा के श्रीमन स्वामी इसके मुख्य अतिथि थे। नागपुर स्टेशन से मार्ग में उनके स्वागत में पुष्पवर्षा की गई थी। सभा ने नागपुर की गलियों में एक शोभायात्रा निकाली थी जिसमें स्थानीय क़साइयों से खरीदे गये ४५२ मवेशियों को अग्र भाग में रखा गया था। इस शोभायात्रा में हाथी, घोड़े एवं ऊँट भी थे तथा इसमें २०,००० लोगोंने भाग लिया था। श्रीमन स्वामी ने ४,००० श्रोताओं के समक्ष दो घण्टे से अधिक समय तक भाषण दिया था।

मुम्बई में १८८७ में गाय एवं भैंस संरक्षण सोसाइटी की स्थापना हुई। सितम्बर १८८७ में गोंडल के ठाकुर साहब ने गोहत्या के मुद्दे पर एक याचिका दायर की परन्तु मुम्बई सरकार ने इस हेतु पिछले आदेश में परिवर्तन करना नकार दिया। गोंडल की इस याचिका के लिए मुम्बई गोसंरक्षण समिति प्रेरणास्रोत मानी जाती है। लन्दन स्थित भारत के राज्य सचिव को लिखे गए एक पत्र में वायसराय डफरिन ने टिप्पणी की थी, 'आपके २१ सितम्बर के पत्र में पूछे गए प्रश्न के उत्तर में आपको सूचित किया जाता है कि हमें गोंडल और उसकी गायों के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं है... तथापि, इस प्रकार की निषेधाज्ञा भारत के कई राज्यों में लागू है। राजपूताना में मुसलमानों को भी गोहत्या की अनुमति नहीं है तथा आबू पर्वत के हमारे सिपाहियों को हिन्दू पूर्वाग्रहों के कारण से गोमाँस के बिना अपना भोजन करना होता है, अतः यदि गोंडल इस स्थिति में परिवर्तन करना चाहता है तो मेरा मानना है कि हमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।'

तत्पश्चात् वर्ष १८८८ में मुम्बई गोसंरक्षण सोसाइटी की एक शाखा पूना में खुली। दिसम्बर १८८८ में सोसाइटी ने वायसराय लैंस्डौन के मुम्बई आगमन के दिन एक विरोध प्रदर्शन किया जिस में निम्नलिखित नारों से युक्त बैनर प्रदर्शित किए गए : 'गाय भारत का धन है', 'गाय भारत के परिवार का अंग है', 'गाय के बिना भारतीयों को आनन्द नहीं मिलता', 'गाय भारत की पोषण करनेवाली माता है', 'ईश्वर गाय को आशीर्वाद दे'... आदि।

मुम्बई में गोरक्षा मण्डल को अनेक प्रभावशाली लोगों का समर्थन प्राप्त था। १८९३ में एक प्रतिष्ठित पारसी व्यवसायी मण्डली के अध्यक्ष थे। अन्य कई पारसियों तथा धनाढ्य खोजा मुस्लिमों का मण्डली को समर्थन प्राप्त था। ३५ शान्ति न्यायाधिपतियों समेत अन्य कई लब्धप्रतिष्ठ व्यक्ति इसकी प्रबन्ध समिति में थे। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक स्थापक के.टी.तेलंग ने गोसंरक्षण आन्दोलन का

खुलकर समर्थन किया था।

१८८८ के अन्तिम चरण में इस आन्दोलन के मध्यप्रदेश में अत्यन्त सक्रिय रूप से चलने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। यह आन्दोलन वराड सूबे तक व्याप्त हो चुका था। जुलाई १८८९ में श्रीमन स्वामी जन समर्थन प्राप्त करने तथा धन इकट्ठा करने के लिए इस आन्दोलन हेतु मुम्बई प्रेसीडेन्सी में प्रवास कर रहे थे। मुम्बई में के.टी.तेलंग ने आन्दोलन के समर्थन में एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसे मुम्बई के शासनाधिकारी ने समर्थन दिया।

सन १८९० के आरम्भ में कोटा से एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि वहाँ लोगों को रोटी के साथ यह आदेश भी वितरित किया जा रहा है कि वे अपने मवेशी किसी को भी बेचना बन्द कर दें। मार्च १८९२ में मध्यप्रदेश के गौंड लोगों के बीच में सन्थाल परगना में एक गाँव से दूसरे गाँव में पुनः इस हेतु लोटे परिचालित किए गए। ये भी गोसंरक्षण आन्दोलन से सम्बन्धित थे।

इस समय की सरकारी रिपोर्टों में ग्यारा पंच या ग्यारह पंचों के नाम से प्रख्यात संस्था के विषय में हवाला दिया गया था जो इन्दौर में थी तथा इसमें बनिया समुदाय के अग्रवाल, ओसवाल, माहेश्वरी, एवं सारोगी गोत्रों के लोग शामिल थे। ये पंच साहूकार थे तथा इन्दौर के सर्वाधिक प्रभावशाली व्यापारी थे। इन्होंने अनाथ एवं अशक्त गायों के लिए गोशाला स्थापित की। उन्होंने मेलों आदि से गायें खरीद कीं ताकि उन्हें कसाइयों के हाथों न बेचा जा सके। मध्य भारत के गवर्नल जनरल के एजेंट हैनवे ने १८९० में इन्दौर के दंगे के सन्दर्भ में इन्दौर के व्यापारियों के इस संगठन की शक्ति के विषय में लिखा कि 'इससे यह तथ्य खुलकर सामने आया है कि भारत के कुछ हिस्सों में कुछ समयपूर्व ही इस गोसरंक्षण आन्दोलन का व्यापक असर हुआ है तथा इससे यह सिद्ध होता है कि बनिया जैसा समुदाय कब तक अपनी धार्मिक भावनाओं के साथ इस हद तक किए जा रहे खिलवाड़ को सहता रहे। जो इन्दौर राज्य में कार्यरत थे, उन समर्थकों को उत्तेजित करके उन्होंने शक्तिशाली हिन्दू राज्य के मन्त्री का घेराव किया तथा उनके प्राधिकार को चुनौती दी और अन्ततः इन्दौर के महाराजा तथा उनके दरबार को एक आपत्तिजनक समझौता करने के लिए बाध्य कर दिया...।'

मध्य सूबों में इस समय व्याप्त आन्दोलन के सम्बन्ध में प्राप्त एक अन्य रिपोर्ट में बताया गया कि वहाँ गोसंरक्षण हेतु ४४ सोसाइटियाँ उस समय कार्यरत थीं। सर्वाधिक सक्रिय आन्दोलनकारियों में महाराजा के ब्राह्मण वकीलों का एक समूह और

कुछ मारवाड़ी लोग थे। आर्यसमाज के सदस्यों समेत विविध कार्यकर्ता मध्य सूबे के विविध भागों तथा बुन्देलखण्ड के राज्यों में घूम घूम कर आन्दोलन का प्रसार कर रहे थे।

अगस्त १८९० में मुम्बई प्रेसीडेन्सी के बेलगांव के हिन्दुओं ने मुहर्रम के दौरान मुसलमानों का बहिष्कार किया। मुहर्रम के त्योहार में हिन्दू परम्परागतरूप से भाग लेते थे। सितम्बर १८९० तक स्थानीय गोरक्षिणी सभाओं ने बेलगाम, जबलपुर, एवं मऊ में सेना रसद के ठेकेदारों को हत्या करने के लिए मवेशी ले जाने से रोक कर उनके समक्ष अवरोध खड़े कर दिये। इस समय तक यह आन्दोलन रीवा राज्य तक व्याप्त हो गया। रीवा राज्य के एक मुख्तार की अध्यक्षता में रीवा के ३६ ठाकुरों ने वहाँ एक सोसाइटी बनाई। इसके पश्यात् रीवा की महारानी, शहवाल (बघेलखण्ड एजेन्सी) के राजा तथा अन्यों द्वारा हस्ताक्षरित एक याचिका परिचालित की जिसमें सतना के बूचड़खानों को बन्द करने के लिए कहा गया था।

१८९० के पूरे वर्ष में मराठा प्रदेश में आन्दोलन विशेषरूप से सक्रिय रहा। इस आन्दोलन में हमेशा अत्यन्त सक्रिय आर्यसमाज के सदस्यों ने मुम्बई और मद्रास प्रेसीडेन्सी में भी यात्राएँ की। जून में मध्य प्रान्त की सरकार ने नागपुर गोरक्षिणी सभा के विषय में अपनी रिपोर्ट में उल्लेख किया कि गोरक्षिणी सभाओं की स्थापना होने के कारण कसाइयों को हत्या के लिए मवेशी प्राप्त करना बहुत कठिन हो गया है। इससे ब्रिटिश सेना एवं नागरिकों के लिए गोमाँस की उपलब्धता निश्चित रूप से प्रभावित हुई थी।

अगस्त १८९१ में मध्य प्रान्त में कामटी में सेना के रसद विभाग को सेना के लिए गोमाँस की आपूर्ति करने में कठिनाई होने लगी। स्पष्ट रूप से गोरक्षिणी सभा को सेना रसद विभाग में मवेशी भेजे जाने से रोकने में सफलता प्राप्त हुई। १८९१ में पूरे वर्ष मध्यप्रदेश क्षेत्र में आन्दोलन व्याप्त रहा। आर्यसमाज की बनारस एवं अजमेर की शाखाएँ अत्यधिक सक्रिय रहीं। १८९१ की समाप्ति तक लोगों ने पूरे देश में कांग्रेस से गोहत्या बन्द कराने के लिए सहायता देने की उम्मीद की। वराड क्षेत्र में गोसंरक्षण आन्दोलन में कांग्रेसी कार्यकर्ता भी सम्मिलित हो गए। दिसम्बर १८९१ के नागपुर के राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन के पश्चात् कांग्रेस के मण्डप में गोरक्षिणी सभा के सदस्यों ने एक बैठक की। कुछ कांग्रेस प्रतिनिधियों समेत १००० से अधिक लोगों ने इस बैठक में भाग लिया। कांग्रेस के प्रभावशाली प्रतिनिधियों ने इस बैठक को सम्बोधित किया तथा गोसंरक्षण आन्दोलन की ओर से धन एकत्रित किया।

सन १८९३ तक मध्य भारत में आन्दोलन ने ग्रामीण क्षेत्रों तक अपनी पहुँच बना ली। इसमें किसान बड़ी संख्या में शामिल हुए। १८९३ में मध्य प्रदेश क्षेत्र से ब्रिटिश सरकार को भेजी गई याचिकाओं पर अत्यधिक रूप से उन लोगों के हस्ताक्षर किए गए थे जो अपने आप को काश्तकार कहते थे।

अप्रैल में मुम्बई सभा ने अपनी वार्षिक बैठक में एक प्रस्ताव पारित किया कि भारत सरकार को आरक्षित जंगल क्षेत्र से पशुओं के चरने हेतु क्षेत्र विस्तार करने तथा अनियन्त्रित रूप से एवं बड़े पैमाने पर हो रही गोहत्याओं को बन्द करवाने के लिए एक याचिका प्रस्तुत की जाए।

१८९३ के अन्त तक मुम्बई सभा के एक प्रतिनिधि ने बड़ौदा राज्य के मन्त्री को उस जिले में फसलों को नुकसान पहुँचानेवाले कुछ अर्ध जंगली पशुओं को समाप्त करने से सम्बन्धित सरकार के आदेश को रद्द करने के लिए बाध्य कर दिया। मुम्बई प्रेसीडेन्सी में सेना रसद विभाग के अधिकारियों की कुछ शिकायतें प्राप्त हुईं जिनके अनुसार हिन्दुओं ने सेना के लिए हत्या करने के लिए मवेशी खरीदने में हस्तक्षेप किया था।

सन्दर्भ :

१. आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती अक्टूबर १८८३ में अपनी मृत्युपर्यन्त इस अवधि के आरम्भिक भाग में लोगों की चित्तवृत्ति में परिवर्तन लाने वाले सर्वाधिक प्रभावी व्यक्ति थे। उन्होंने इस विषय की अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में चर्चा की है।

२. आफताब ए पंजाब - समाचार पत्र (लाहौर) ने अपने ६ सितम्बर १८८६ के अंक में ईदवाले दिन गोहत्या के सम्बन्ध में हिन्दू और मुसलमानों के बीच हुए कुछ झगड़ों का हवाला देते हुए मुसलमानों को गोहत्या बन्द करने का सुझाव दिया क्यों कि इस्लाम भी गोहत्या के पक्ष में नहीं है। वासिर उल-मलिक (सियालकोट) ने अपने १२ अक्टूबर १८८६ के अंक में गोहत्या से जुड़े हिन्दू मुस्लिमो के कुछ झगड़ों का हवाला देते हुए मुसलमानों से गोहत्या बन्द करने का निवेदन किया। कोह-ए-नूर (लाहौर) ने अपने २७ नवम्बर १८८६ के अंक में हिन्दू मुसलमान दंगों के लिए गोहत्या का कारण बताया तथा कहा कि हिंदुओं ने मुस्लिमो को दोषी ठहराने की गलती की है क्यों कि गोमाँसभक्षी यूरोपीय लोग इसके लिए दोषी है तथा मुसलमान इसके लिए दोषी नहीं है, क्योंकि वे पशुहत्या में संलग्न नहीं है।

३. स्वामी अलाराम अमृतसर के आर्य समाज के एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सदस्य थे तथा उन्होंने पंजाब में गोहत्या के विरोध में एक बड़ा आन्दोलन चलाया था। वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से भी जुड़े हुए थे तता उन्होंने कांग्रेस के १८८८, १८९०, १८९१ एवं १८९२ के अधिवेशनो में

सम्बोधन किया था। वे आजीवन सेवा कार्यो से जुड़े रहे तथा उनके भोजन एवं कपड़ों का प्रबन्ध लोगों द्वारा किया गया।

४. बनारसीदास दिल्ली के प्रसिद्ध वक्ता थे तथा उन्होंने स्नान घाटों पर बड़ी संख्या में एकत्रित लोगों को अपनी बात भाषण में कही थी। वे कुछ वर्ष पूर्व गोहत्या के विरोध में एक याचिका दायर करने इंग्लैंड भी गए थे।

५. तथापि इस रिपोर्ट पर विवाद खड़ा हुआ तथा फरमान को अप्रामाणिक सिद्ध करने के प्रयास किए गए।

६. शहर के अंदर या सड़क के किनारे ३०० गज की सीमा में बूचड़खाने नहीं स्थापित किए जाएँ, काटे जाने के लिए लाए जाने वाले पशुओं को मुख्य सड़क पर न तो लाया जाए और न बाँधा जाए।

७. पंजाब पंच (लाहौर) ने अपने ३ मई १८८८ के अंक में लिखा कि धार्मिक वजह से हिन्दुओं द्वारा गोहत्या विरोधी आन्दोलन छेड़ना सर्वथा उचित है परन्तु गोहत्या करने के लिए अकेले मुसलमान ही दोषी नहीं है। यूरोपीय लोगों की आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति के लिए उन्हीं के इशारे पर गोहत्या की अनुमति दी गई है। आफताब-ए-पंजाब (लाहौर) ने अपने ३० मई १८८८ के अंक में ईसाइयों के लिए लिखा गया एक पत्र प्रकाशित करते हुए लेखक ने यह सिद्ध किया था कि गाय का माँस भक्षण करना ईसाइयों का कर्तव्य नहीं है और उन्हें हिन्दुओं के लिए इस प्रथा को बन्द करने के लिए आह्वान किया।

८. दक्षिण भारत के एक संन्यासी श्रीमन गोहत्या विरोधी आन्दोलन के एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आन्दोलनकारी थे। बिहार में एक कर्मचारी ने उन्हें इस आन्दोलन का मूल स्रोत बताया। श्रीमन स्वामी ने १८९१ एवं १८९२ में पंजाब में आन्दोलन चलाया तथा १८९२ में इलाहाबाद कांग्रेस अधिवेशन में भागीदारी की। जून १८९३ में वे गसंरक्षण के लिए निचले बंगाल के मुसलमानो और ईसाइयों का समर्थन प्राप्त करने हेतु वहाँ रहे।

४. बिहार में गोरक्षा आन्दोलन

पार्श्वभू – गोरक्षिणी सभा

अन्य क्षेत्रों की भाँति बिहार में भी गोरक्षिणी सभायें बड़ी संख्या में होने के कारण से यह आन्दोलन व्यापक रूप से प्रसृत हुआ। इन सभाओं में कुछ सभाएँ अत्यधिक ध्यान देकर एवं सावधानी पूर्वक संगठित हुई थीं। बिहार के प्रत्येक जिले में दूसरे जिलों के तथाकथित 'आगत आन्दोलनकारी' कार्यरत थे। उनमें से अधिकांश बनारस क्षेत्र से थे तथा कुछ इलाहाबाद, गोरखपुर, बलिया, हरिद्वार आदि से सम्बन्धित थे। विशेषरूप से वहाँ चलती फिरती सभाएँ थी जो कभी कभी सैंकड़ों या अधिक के समूह में थीं। आन्दोलनकारियों के इन बड़े समूहों ने गोहत्या के विरोध में आन्दोलन चलाया तथा आन्दोलन हेतु धन एकत्रित किया। समग्र बिहार के प्रत्येक जिले में आन्दोलन चलाने वाले तथा अत्यधिक प्रभावी वक्ताओं में प्रमुख थे श्रीमन स्वामी, अलाराम स्वामी, हंसस्वरूप स्वामी, गोपालानन्द स्वामी, पण्डित जगतनारायण, गोरखपुर के पवहारी बाबा, और बलिया के जगदेव बहादुर। बेतिया में साधुओं के दो संघ – नागाओं और पवहारीयों ने इस आन्दोलन को चलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। सारन में, इस आन्दोलन को व्यापक बनाने में पवहारी बाबा और उनके अनुयायियों की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका थी।

सन १८८८ बिहार में इस आन्दोलन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वर्ष है जिसमें बिहार के लगभग सभी जिलों में श्रीमन स्वामी, अलाराम स्वामी या पण्डित जगत नारायण में से किसी न किसी ने यात्राएँ कीं। इससे इस आन्दोलन में अत्यधिक बढ़ावा हुआ। सोनपुर मेला तथा अन्य मेलों में भी गोसंरक्षण विषयक भाषण दिए गए। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न जिला मुख्यालयों में नई सभाओं का गठन हुआ। मेले और बाजार आन्दोलन के मुख्य केन्द्र थे क्योंकि उनमें बड़ी संख्या में लोग इकट्ठे होते थे तथा उन्हें एक स्थान पर सम्बोधित किया जा सकता था। इन मेलों में यदि मवेशी की बिक्री होती या कसाई मवेशी खरीदते तो एकत्रित लोगों को तुरन्त हस्तक्षेप करने के

लिए कहा जाता था। सारन जिले के सोनपुर मेले में प्रतिवर्ष दो लाख से अधिक लोग आते थे। इस मेले में पेठ भी लगती थी जिसमें बड़ी संख्या में पशुओं का क्रय विक्रय होता था। नवम्बर १८८९ में सोनपुर के मेले में गोरक्षिणी सभा के आन्दोलनकारियों ने दीनापुर के सेना रसद विभाग को सैनिकों के भोजन के लिए गोमाँस के लिए मवेशी खरीद पाना असम्भव कर दिया। गोरक्षिणी सभाओं के पदाधिकारियों की सूची पर एक दृष्टिपात करने से पता चलता है कि इनमें सभासद, मुहर्रिर, तहसीलदार, पियादा आदि विविध पदों के नाम समाविष्ट थे। बिहार में इसमें समाज के विविध वर्गों एवं समस्त समाज के लोग जुडे हुए थे - राजे महाराजे और जमींदार, नगरपालिका के अध्यक्ष, नगर पालिकाओं के आयुक्त, धनाढ्य व्यापारी तथा मारवाड़ी व्यापारी, विद्यालयों के शिक्षक एवं सरकारी वकील आदि इस आन्दोलन में पर्याप्त संख्या में जुड़े थे। गया में एक उपजिलाधीश एवं एक मुन्सिफ इस सभा के निरन्तर उपाध्यक्ष थे। छपरा में कलक्टरी शिरस्तेदार वक्ताओं की आवभगत करते थे। मधुबनी सभा के ५० प्रतिशत से अधिक चन्दे में सरकारी कर्मचारियों का योगदान होता था। वकील, शिक्षा तथा डाक विभागों के कर्मचारी बहुत बड़ी संख्या में इस आन्दोलन में शामिल हुए थे।

आरम्भ में सभी सभाएँ छोटे बड़े स्वैच्छिक अंशदान पर आधारित होकर स्थापित स्थापित हुई थीं। सक्रिय रूप से कार्य करने पर तथा इसके कार्यकर्ताओं के व्यापक रूप से दूर दूर तक फैल जाने पर प्रत्येक हिन्दू या हिन्दू परिवार आगे उल्लिखित पद्धति में से किसी भी प्रकार से इसे अपना अंशदान देता था। अंशदान देने से इन्कार करना गोहत्या या गोमाँस खाने के समान माना जाता था। जमींदार लोग सभा को सीधे बड़ी मात्रा में राशि देते थे। वक्ता अपने श्रोताओं से दान एकत्रित करते थे।

मुसलमान भी प्रायः आन्दोलन के प्रति खुलेआम सद्भावना व्यक्त करते थे। दरभंगा की सभा द्वारा एक वक्ता के पद हेतु विज्ञापन दिए जाने पर उत्तर पश्चिम सूबे में स्थित आजमगढ़ के एक मुसलमान ने नौकरी के लिए आवेदन पत्र प्रस्तुत किया था। अलाराम स्वामी की कुछ बैठकों में मौलवियों समेत कुछ मुसलमानों ने भाग लिया था। बिहार में मुसलमानों ने भाग लिया था। बिहार में मुहर्रम के अवसर पर सामान्यतः हिन्दू मुस्लिम एकता देखने को मिलती थी दोनों समुदाय जुलूस में शामिल होते थे। हिन्दू विविध प्रकार की तैयारियों में मदद करते थे तथा जुलूस में भी सहायता करते थे। गोहत्या के मामले पर दोनों समुदायों के बीच तनाव पैदा होने पर हिन्दू मुहर्रम के त्योहार का बहिष्कार करते थे।

इस अवधि में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच समय समय पर तनाव की स्थिति पैदा हो जाया करती थी। प्रायः कहा जाता है कि बकरी के माँस की बजाय गाय का माँस सस्ती दर पर मिलने के कारण जब कोई गरीब मुसलमान गोमाँस खा लेता था तो वह गोसंरक्षण आन्दोलन से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हो जाता था। दूसरे, हिन्दू सामान्य रूप से अनुभव करते थे कि सरकार और उसके कुछ अधिकारी पूर्ण रूप से मुसलमानों का पक्ष लेते थे। इस कारण से वस्तुस्थिति यह थी कि बिहार में सभी देशी उपमण्डल अधिकारी मुसलमान थे।

दरभंगा

बिहार में गोरक्षिणी सभा की रचना का सर्वप्रथम प्रयास इसी अवधि में जनवरी १८८५ में दरभंगा में किया गया। इस प्रयास की मूल भावना के पीछे दो भाइयों का हाथ था जो दोनों ही नगरपालिका आयुक्त थे और जिन्होंने परिपत्र जारी करके गायों को संरक्षण देने में सहायता देने के लिए कहा। तथापि यह प्रयास १८८८ में एक उचित संगठन के रूप में उस समय तक अपना स्वरूप नहीं बना पाया जब तक पण्डित जगत नारायण ने एक गोरक्षिणी सभा के गठन में सहायता नहीं दी। सितम्बर १८८८ तक दरभंगा के महाराजा सभा के मुख्य संरक्षक बन गए थे। दो वर्ष में ही गोसंरक्षण हेतु किए गए अभियान के तहत दरभंगा में तेजपुर, मधुबनी, रोजेरा और लालसिंह सराय तथा मुजफ्फरपुर में लालगंज, हाजीपुर और सीतामढ़ी में सभाओं की रचना की गई। मधुबनी सभा की शाखा के रूप में सीतामढ़ी की सभा बनी जो परताबगंज में एक अन्य सभा खोलने के लिए कारणभूत थी। सभी शाखाओं ने अपनी अपनी गोशालाएँ खोली।

दरभंगा सभा की अपनी दो गोशालाएँ थीं जिनमें प्रत्येक में २००-३०० गायें थी। विशेष रूप से मधुबनी सभा द्वारा अभियान हेतु प्रतिनिधि भेजे जाते थे तथा सभा की सामान्य सूचनाएँ दी जाती थीं। दरभंगा में प्रत्येक मुहल्ले में रामायण एवं भागवत के पाठक थे। अनुमानतः ये पाठ, विशेष रूप से भागवत के पाठ, इस उद्देश्य से किये जाते थे कि इससे गायों के संरक्षण हेतु जनता की भावनाओं को संघटित किया जा सकता था। नागपुर सभा ने दरभंगा के महाराजा, जो दरभंगा सभा के अध्यक्ष थे, से निवेदन किया कि वे बिहार, उत्तरप्रदेश एवं मध्यप्रदेश की सभी सभाओं [illegible]
स्वीकार करें। महाराजा ने उदारतापूर्वक सभा को दान दिया। सभा की [illegible]
उनके निजी कार्यालय में आयोजित की जाती थीं। इसी परिसर में एक [illegible]
बनाया गया था।

मधुबनी गोरक्षिणी सभा

मधुबनी सभा कुछ विद्यालयीन छात्रों द्वारा १८८८ में आरम्भ की गई थी। ये छात्र मधुबनी में मेला देखने के लिए गए थे तथा वहाँ उनकी मुलाकात बनारस के कुछ पण्डितों से हुई जिन्होंने गोसंरक्षण के सम्बन्ध में उनसे बातें की। इन बातों का इन छात्रों पर बहुत गहरा असर हुआ। मधुबनी में लौटकर उन्होंने एक ग़ोरक्षिणी सभा आरम्भ करने का निर्णय किया। मधुबनी के एक सुप्रसिद्ध व्यक्ति ने इस कार्य में उनकी सहायता की। एक बैठक आयोजित करके दिसम्बर १८८८ में सभा का उद्घाटन किया गया।

१८९३ तक मधुबनी सभा बिहार की समस्त सभाओं में सर्वाधिक सक्रिय सभा थी। बिहार की सभी सभाओं के साथ यह सभा पत्राचार बनाए हुए थी तथा इस आन्दोलन के केन्द्र नागपुर सभा से भी सम्पर्क स्थापित किए हुए थी। मधुबनी सभा ने ही सीतामढ़ी से एक सभा आरम्भ कराई थी। दिसम्बर १८८८ से सितम्बर १८९३ के बीच सभा ने व्यावहारिक रूप से प्रतिमास एक बैठक आयोजित करके कुल ५० बैठकें आयोजित कीं। इन बैठकों में सभा के उद्देश्य, गतिविधियों, संगठन आदि सभी मुद्दों पर विचार किया जाता था। इन बैठकों में सब भाग लेते थे। इन नियमित बैठकों के अतिरिक्त, सभा विशेष अवसरों पर कार्यक्रम आयोजित करती रहती थी जिनमें समग्र बिहार एवं उत्तरप्रदेश से विद्वानों को आमन्त्रित करके उनके द्वारा भाषण कराए जाते थे। बिहार की प्रत्येक गोरक्षिणी सभा के प्रतिनिधि इन बैठकों में भाग लेते थे।

मधुबनी क्षेत्र के प्रभावशाली व्यक्तियों को सभा की अध्यक्षता सोंपी जाती थी। १८९३ में सभा का एक संयुक्त सचिव, जो सरकारी सहायता प्राप्त माध्यमिक वर्नाक्यूलर विद्यालय का शिक्षक था तथा गोसंरक्षण आदोलन का अत्यन्त सक्रिय समर्थक था, उसे अधिकाधिक दायित्व सौंपा गया। उसने सभा का लेखा तैयार किया, सभा का रिकोर्ड व्यवस्थित किया, बैठकों के कार्यवृत्त तैयार किए तथा प्रस्तावों के प्रारूप तैयार किए। उसने पत्राचार किया, यात्री व्याख्याताओं को मार्गदर्शन दिया, गोशाला का पर्यवेक्षण किया तथा कोषाध्यक्ष के कार्य का भी पर्यवेक्षण किया। उसने ये सभी कार्य बिना कोई पारिश्रमिक के किए। उसे सभा का 'मुख्य आधार' कहा जाता था। अधिकारियों को लगा कि 'उसे बता देना चाहिये कि वह एक साथ अध्यापक का तथा गोरक्षिणी सभा का कार्य नहीं कर सकता' अतः 'उसे तत्काल

इस अवधि में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच समय समय पर तनाव की स्थिति पैदा हो जाया करती थी। प्रायः कहा जाता है कि बकरी के माँस की बजाय गाय का माँस सस्ती दर पर मिलने के कारण जब कोई गरीब मुसलमान गोमाँस खा लेता था तो वह गोसंरक्षण आन्दोलन से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हो जाता था। दूसरे, हिन्दू सामान्य रूप से अनुभव करते थे कि सरकार और उसके कुछ अधिकारी पूर्ण रूप से मुसलमानों का पक्ष लेते थे। इस कारण से वस्तुस्थिति यह थी कि बिहार में सभी देशी उपमण्डल अधिकारी मुसलमान थे।

दरभंगा

बिहार में गोरक्षिणी सभा की रचना का सर्वप्रथम प्रयास इसी अवधि में जनवरी १८८५ में दरभंगा में किया गया। इस प्रयास की मूल भावना के पीछे दो भाइयों का हाथ था जो दोनों ही नगरपालिका आयुक्त थे और जिन्होंने परिपत्र जारी करके गायों को संरक्षण देने में सहायता देने के लिए कहा। तथापि यह प्रयास १८८८ में एक उचित संगठन के रूप में उस समय तक अपना स्वरूप नहीं बना पाया जब तक पण्डित जगत नारायण ने एक गोरक्षिणी सभा के गठन में सहायता नहीं दी। सितम्बर १८८८ तक दरभंगा के महाराजा सभा के मुख्य संरक्षक बन गए थे। दो वर्ष में ही गोसंरक्षण हेतु किए गए अभियान के तहत दरभंगा में तेजपुर, मधुबनी, रोजेरा और लालसिंह सराय तथा मुजफ्फरपुर में लालगंज, हाजीपुर और सीतामढ़ी में सभाओं की रचना की गई। मधुबनी सभा की शाखा के रूप में सीतामढ़ी की सभा बनी जो परताबगंज में एक अन्य सभा खोलने के लिए कारणभूत थी। सभी शाखाओं ने अपनी अपनी गोशालाएँ खोली।

दरभंगा सभा की अपनी दो गोशालाएँ थीं जिनमें प्रत्येक में २००-३०० गायें थी। विशेष रूप से मधुबनी सभा द्वारा अभियान हेतु प्रतिनिधि भेजे जाते थे तथा सभा की सामान्य सूचनाएँ दी जाती थीं। दरभंगा में प्रत्येक मुहल्ले में रामायण एवं भागवत के पाठक थे। अनुमानतः ये पाठ, विशेष रूप से भागवत के पाठ, इस उद्देश्य से किये जाते थे कि इससे गायों के संरक्षण हेतु जनता की भावनाओं को संघटित किया जा सकता था। नागपुर सभा ने दरभंगा के महाराजा, जो दरभंगा सभा के अध्यक्ष थे, से निवेदन किया कि वे बिहार, उत्तरप्रदेश एवं मध्यप्रदेश की सभी सभाओं का नेतृत्व स्वीकार करें। महाराजा ने उदारतापूर्वक सभा को दान दिया। सभा की बैठकें प्रायः उनके निजी कार्यालय में आयोजित की जाती थीं। इसी परिसर में एक वृद्ध मण्डप बनाया गया था।

मधुबनी गोरक्षिणी सभा

मधुबनी सभा कुछ विद्यालयीन छात्रों द्वारा १८८८ में आरम्भ की गई थी। ये छात्र मधुबनी में मेला देखने के लिए गए थे तथा वहाँ उनकी मुलाकात बनारस के कुछ पण्डितों से हुई जिन्होंने गोसंरक्षण के सम्बन्ध में उनसे बातें की। इन बातों का इन छात्रों पर बहुत गहरा असर हुआ। मधुबनी में लौटकर उन्होंने एक ग्रोरक्षिणी सभा आरम्भ करने का निर्णय किया। मधुबनी के एक सुप्रसिद्ध व्यक्ति ने इस कार्य में उनकी सहायता की। एक बैठक आयोजित करके दिसम्बर १८८८ में सभा का उद्घाटन किया गया।

१८९३ तक मधुबनी सभा बिहार की समस्त सभाओं में सर्वाधिक सक्रिय सभा थी। बिहार की सभी सभाओं के साथ यह सभा पत्राचार बनाए हुए थी तथा इस आन्दोलन के केन्द्र नागपुर सभा से भी सम्पर्क स्थापित किए हुए थी। मधुबनी सभा ने ही सीतामढ़ी से एक सभा आरम्भ कराई थी। दिसम्बर १८८८ से सितम्बर १८९३ के बीच सभा ने व्यावहारिक रूप से प्रतिमास एक बैठक आयोजित करके कुल ५० बैठकें आयोजित कीं। इन बैठकों में सभा के उद्देश्य, गतिविधियों, संगठन आदि सभी मुद्दों पर विचार किया जाता था। इन बैठकों में सब भाग लेते थे। इन नियमित बैठकों के अतिरिक्त, सभा विशेष अवसरों पर कार्यक्रम आयोजित करती रहती थी जिनमें समग्र बिहार एवं उत्तरप्रदेश से विद्वानों को आमन्त्रित करके उनके द्वारा भाषण कराए जाते थे। बिहार की प्रत्येक गोरक्षिणी सभा के प्रतिनिधि इन बैठकों में भाग लेते थे।

मधुबनी क्षेत्र के प्रभावशाली व्यक्तियों को सभा की अध्यक्षता सौंपी जाती थी। १८९३ में सभा का एक संयुक्त सचिव, जो सरकारी सहायता प्राप्त माध्यमिक वर्नाक्यूलर विद्यालय का शिक्षक था तथा गोसंरक्षण आदोलन का अत्यन्त सक्रिय समर्थक था, उसे अधिकाधिक दायित्व सौंपा गया। उसने सभा का लेखा तैयार किया, सभा का रिकोर्ड व्यवस्थित किया, बैठकों के कार्यवृत्त तैयार किए तथा प्रस्तावों के प्रारूप तैयार किए। उसने पत्राचार किया, यात्री व्याख्याताओं को मार्गदर्शन दिया, गोशाला का पर्यवेक्षण किया तथा कोषाध्यक्ष के कार्य का भी पर्यवेक्षण किया। उसने ये सभी कार्य बिना कोई पारिश्रमिक के किए। उसे सभा का 'मुख्य आधार' कहा जाता था। अधिकारियों को लगा कि 'उसे बता देना चाहिये कि वह एक साथ अध्यापक का तथा गोरक्षिणी सभा का कार्य नहीं कर सकता' अतः 'उसे तत्काल

दूसरे स्थान पर भेज दिया जाएगा।' उसे चेतावनी भी दी गई कि वह अपने वैध कार्य के प्रति समर्पित हो।

गया

गया में गोरक्षिणी सभा का संगठन सर्व प्रथम १८८७ में उस समय बना जब बंगाली मूल के एक जमींदारने उसका आरम्भ किया। अगले दो या अधिक वर्षों तक यह स्वैच्छिक अंशदान से चलती रही। कुछ समय के बाद कर्मचारियों ने इसके उद्देश्यों को 'वैध, मानवोचित एवं प्रशंसनीय' रूप में स्वीकार किया। इस जिले में १८८९ में श्रीमन स्वामी के प्रवास के कारण, जिन्हें सरकार ने अपने एक पत्र में अशान्ति निर्माण करने वाला कहा था, यहाँ के गोसंरक्षण आन्दोलन को अत्यधिक प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। उन्होंने गाय की पवित्रता एवं आर्थिक महत्त्व पर कई भाषण दिए। गया में उनके भाषणों का इतना व्यापक प्रभाव हुआ कि एक अत्यन्त प्रभावी मुस्लिम मौलवी ने भी इस आन्दोलन को अपना समर्थन दिया। श्रीमन स्वामी के इस प्रवास के कारण अक्टूबर १८८९ में टिकारी के राजा द्वारा दान किए गए एक विशाल भूखण्ड पर एक विशाल गोशाला खोली गई। सभा के प्रतिनिधियों ने गोशाला के सन्देश का व्यापक प्रचार प्रसार करने, गोसंरक्षण की महत्ता, कसाइयों या बिचौलियों को गाय को बेचने से होने वाले पाप को बताने के लिए लोगों के बीच जाना आरम्भ कर दिया। ये प्रतिनिधि गोशाला के लिए दान भी इकट्ठा करते थे।

सन १८८९ के आरम्भ में, गया में पधारे हुए जयपुर के महाराजा को गया गोसंरक्षिणी सभा की ओर से एक मानपत्र दिया गया। लगभग इसी समय गया में मैसूर के राजा के पधारने पर उन्हें भी मानपत्र अर्पित किया गया था।

सन १८८९ में टिकारी में काबर के ब्राह्मणों ने बकरईद के अवसर पर गोबलि देने से मुसलमानों को रोकने के प्रयास किए। १८९१ में गया में बकरईद के दिन कुछ मुसलमानों द्वारा बलि देने हेतु गाय को एक हिन्दू के घर के सामने से ले जाने के कारण भीषण दंगा हुआ। हिन्दुओं द्वारा उस गाय को खरीदकर वापस ले लेने के पश्चात् ही दंगा शान्त हुआ। सरकारी कर्मचारियों का मत था कि जो कुछ घटित हुआ, उसके लिए गोरक्षिणी सभा को सीधे उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता, 'यद्यपि इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसकी प्रेरणा ने इस विषय पर जनसमुदाय की भावनाओं को भड़काने का काम किया।' इस घटना के सन्दर्भ में जिला मजिस्ट्रेट ने बाद में रिपोर्ट किया कि विशेष रूप से राजपूताना राज्यों में और बनारस आदि में कई स्थानों के

'यात्राधाम एजेन्टों' ने दंगे के बाद उनका सम्पर्क किया तथा गोहत्या के विरुद्ध उन्हें संगठित किया।

मार्च १८९३ तक गोहत्या का विरोध उग्र बन गया। सरकारी रिपोर्टों के अनुसार इसका मुख्य कारण गोरक्षिणी सभा के उन प्रतिनिधियों द्वारा उग्र एवं भड़कानेवाली भाषा थी जो वे पेठ में मवेशी को कसाइयों को बेचने से रोकने के लिए प्रयोग करते थे। सरकार ने ऐसे विभिन्न स्थानों पर, जहाँ बार बार शान्ति भंग होने की घटनाएँ हुई थीं, अतिरिक्त पुलिस बल को उग्रता में नियंत्रण लाने के लिए तैनात किया।

सितम्बर १८९३ में गया के जिला पुलिस अधीक्षक ने लिखा कि मुझे विश्वास है कि उनमें से अनेकों (मुस्लिमों) को मवेशी को हत्या न करने के सामान्य अनुबन्ध में जुडने के लिए आपत्ति नहीं होगी।

सारन

सारन में १८८० में छपरा के एक उपन्यायाधीश ने सनातन धर्म प्रचारिणी सभा स्थापित की थी। इस सभा को १८८७ में छपरा में प्रथम गोरक्षिणी सभा की रचना करने के लिए पुनर्गठित किया गया। १८८८ के सोनपुर के मेले में महा नदी के तट पर एक जनसभा आयोजित की गई थी। हतवा के महाराजा ने इस सभा की अध्यक्षता की तथा गोहत्या विरोधी आन्दोलन के एक प्रभावशाली आन्दोलनकारी पण्डित जगत नारायण ने इस सभा में भाषण दिया। पण्डित जगत नारायण छपरा में प्रतिवर्ष आते थे तथा गोसंरक्षण आन्दोलन को संगठित करने में सहायता करते थे। विविध पदाधिकारियों की नियुक्तियाँ की गई थीं तथा वक्ताओं को अभियान छेड़ने हेतु भेजा गया था। १८९०-१८९१ में इसकी नियमित बैठकें की गईं। लेखा नियमित रूप से रखा गया तथा एक गोशाला निर्मित की गई जिसमें सभा को भेजी जानेवाली गायें रखी जाती थीं। यह काम १८९२ तक चलता रहा।

मई १८९३ में आन्दोलन में पुनः तेजी आई। गोहत्या के एक प्रख्यात आन्दोलनकर्ता बलिया के जगदेव बहादुर सेंकडों लोगों के समूह के साथ सारन जिले में आए तथा विविध स्थानों पर बैठकें आयोजित हुईं। इन बैठकों में लोगों को किसी भी कीमत पर कसाइयों के चंगुल से गायों को मुक्त करने के लिए कहा जाता था। जून में जिले में अन्य आन्दोलनकारी आए तथा उन्होंने भाषण दिए और गोशालाओं के लिए धन एकत्रित करने के प्रयास किए गए। जुलाई के आंरभ में मझौली की रानी ने इस विषय पर विभिन्न बैठकें आयोजित कीं। उन्होंने गोसंरक्षण के मुद्दे को अत्यन्त

ओजस्विता प्रदान की थी। रानी के प्रतिनिधि कसाइयों के चंगुल से गायों को मुक्त कराकर लाते थे तथा रानी उन्हें अपनी रियासत के अहीरों तथा अन्य लोगों को निःशुल्क दे देती थी। उन्होंने स्थानीय कसाइयों को वचन भी दिया था कि यदि वे मवेशी के क्रय विक्रय का व्यवसाय छोड़ देंगे तो वे उन्हें लगानमुक्त भूमि आवंटित कर देंगी।

हिन्दु और मुस्लिम समुदायों में तनाव बढ़ने लगा था। एक आन्दोलनकर्ता रामनाथसिंह ने हत्या के उद्देश्य से लाई गई एक भैंस को कसाई के चंगुल से छुड़ाया। स्थानीय पुलिस ने इस में सहायता की। रामनाथ सिंह को दोषी करार देते हुए मवेशी को छुड़ाने के आरोप में चार वर्ष की कारावास की सजा दी गई। २० अगस्त को जिले के दूरदराज के क्षेत्र में सभा की शाखा के उद्घाटन के उद्देश्य से महाराजगंज में एक बैठक की गई।

जिले में बसन्तपुर स्थान पर सब से बड़ा दंगा हुआ। बसन्तपुर चम्पारन जिले को छपरा से जोड़ने वाली मुख्य सड़क पर है। पटना जिले में दीनापुर स्थित सेना रसद विभाग के लिए चम्पारन में खरीदी गई मवेशी को ले जाने के लिए इसी सड़क का उपयोग किया जाता था। २६ अगस्त को बसन्तपुर की एक जनसभा में लोगों को मवेशी को मुक्त करने के लिए कहा गया तथा यदि पुलिस बीच में आए तो उसका भी सामना करने के लिए कहा गया। २९ अगस्त को हत्या करने के लिए कसाई बड़ी संख्या में मवेशी लेकर सारन जिले में प्रविष्ट हुए। हिन्दुओं के एक बड़े समूह ने उन्हें रोका तथा उनकी मवेशी को ले जाने का प्रयास किया। २ सितम्बर को मवेशी को पुलिस चौकी के पास के एक उद्यान तक लाया गया। ६ सितम्बर को बसन्तपुर पुलिस निरीक्षक को कहा गया कि गायों को आगे नहीं जाने दिया जाएगा तथा कसाइयों को उनका मूल्य दे दिया जाएगा। उसे यह भी बताया गया कि कुछ साधु मवेशी को मुक्त कराने के लिए अनशन पर उतर गए है। उसी शाम तक, मवेशी को पुलिस थाने के परिसर में ले जाया गया। तब तक दो हजार से अधिक लोगों की भीड़ ने उस पुलिस स्टेशन का घेराव कर दिया। पुलिसने गोलियाँ चलाईं जिनके कारण दो लोगों की मृत्यु हुई तथा कई घायल हो गए।

इस घटना की जाँच सम्पन्न करने वाले मजिस्ट्रेट के अनुसार इस घटना को.... 'वहाँ के प्राधिकारियों के विरुद्ध व्यापक एवं सुनिश्चित विद्रोह ही कहा जा सकता है। समग्र समुदाय की इस प्रकार की परिणाम के विषय में लापरवाही का उदाहरण अन्यत्र कहीं मुझे देखने को नहीं मिला है।' इस घटना से पूर्व लोगों को लगा

कि 'पश्चिम की हवा चल चुकी है, राम का जन्म हो गया है और अब राम राज आने को ही है।'

शाहाबाद

शाहाबाद में प्रथम सभा १८८८ में आरम्भ हुई। इसके पश्चात् सासाराम, नसरीगंज एवं भाबुआ में अन्य सभाएँ प्रारम्भ हुईं। प्रत्येक सभा ने वृद्ध और अनुत्पादक गायों के लिए गोशाला खोली। जिस सभा के पास अधिक संख्या में गायें आती थीं, और जिन्हें वह नहीं समा सकती थी उन्हें वह दूसरी गोशाला में भेज देती थी। सरकारी रिपोर्ट के अनुसार इस सभा ने अपने निहित एवं वैध उद्देश्यों की पूर्ति सीमा के अन्दर रहते हुए की है।

अप्रैल १८९० में बर्हामपुर पेठ में दंगा हो गया। बनारस आर्यसमाज के गोपालानन्द स्वामी के नेतृत्व में एक हिन्दू समूह ने कुछ कसाइयों द्वारा खरीदी गई मवेशी को उनसे छीन लिया। मई १८९१ में पुनः बर्हामपुर पेठ में एक बड़ा दंगा हो गया। बड़ी संख्या में लाठी धारी हिन्दुओं ने दीनापुर की सेना रसद विभाग के लिए कसाइयों द्वारा ली जा रही मवेशी पर धावा बोल दिया। भीड़ को बिखेरने के लिए पुलिस ने गोलियाँ चलाईं। लगभग १५० पशुओं को छीनकर भगा ले जाया गया। गोपालानन्द स्वामी को गिरफ्तार किया गया तथा उन्हें दो वर्ष के कारावास की सजा दी गई।

अगस्त १८९३ में लोगों को नई पद्धति से संगठित होते देखा गया। पतिया या पत्रशृंखला बनाकर तथा उसे क्रमशः आगे लिखवाकर समग्र शाहाबाद जिले में, विशेष रूप से सासाराम एवं भाबुआ में, परिचालित कराए गए। इनमें हिन्दुओं से अनुरोध किया गया था कि वे कसाइयों को मवेशी न बेचें तथा मुस्लिमों का बहिष्कार करें एवं उन्हें कानूनी एजेन्ट के रूप में भी नहीं रखें। अगस्त के अन्त में, कोठ में एक दंगा हो गया जिसमें एक कसाई ने एक पवित्र बैल की हत्या कर दी। यहाँ पतिया इतनी अधिक गति एवं गोपनीयता के साथ परिचालित किए गए कि २४ घण्टों में १००० से भी अधिक लोगों की भीड़ वहाँ इकट्ठी हो गई। दंगे के परिणामस्वरूप अतिरिक्त पुलिस बल बड़ी संख्या में कोठ एवं ४६ अन्य गाँवों में तैनात कर दिया गया।

चम्पारन

श्रीमन स्वामी ने १८८८ में बेतिया में एक गोरक्षिणी सभा की स्थापना की। यह बेतिया सभा इलाहाबाद सभा के मार्गदर्शन में चलाई गई थी। बेतिया के राजा ने

सभा को २००० रू. का चन्दा दिया था। बेतिया राज के कर्मचारियों ने भी सभा की मदद की। एक गोशाला चलाई जाती थी। बेतिया से ऐसी रिपोर्ट प्राप्त हुई कि समग्र कायस्थ समाज का इस आन्दोलन को समर्थन प्राप्त था।

मुजफ्फरपुर जिला

इस जिले में तीन सभाएँ थीं: सीतामढ़ी (मूल रूप से दरभंगा की मधुबनी सभा की एक शाखा), हाजीपुर और लालगंज। ये तीनों सभाएं गोशालाएं भी चलाती थीं तथा सभी हिन्दुओं से नियमित रूप से अंशदान प्राप्त किया जाता था। इस आन्दोलन को धनी जमींदारों एवं मारवाडियों का समर्थन प्राप्त था।

पटना

पटना में दो गोरक्षिणी सभाएं थी। इनमें एक बड़ी सभा की स्थापना १८८८ में हुई थी जिसे धनी मारवाड़ियों द्वारा चलाया जाता था। इसकी अपनी एक बड़ी गोशाला भी थी। दूसरी सभा को एक जमींदार द्वारा चलाया जाता था। इसकी कोई गोशाला नहीं थी।

कुछ ऐसी घटनाएँ हुई जिनसे हिन्दू मुस्लिमों के बीच तनाव बढ़ने लगा। १८९२ में फतुहा के निकट बकरईद के लिए बलि हेतु लाई जा रही एक गाय को उसके मालिक के घर से हिन्दुओं का एक समूह हाँककर ले गया। बाढ में उपमण्डल अधिकारी ने पाँच लोगों को दोषी करार दिया। अप्रैल १८९३ में मशौरडी गाँव के लोगों ने दीनापुर सेना रसद विभाग के लिए ले जाई जा रही मवेशी को रोक दिया तथा कसाइयों से छीन कर मवेशी को हाँककर ले गए। जून १८९३ में हिल्सा में बकरईद के अवसर पर भीषण दंगा हो गया।

अक्टूबर १८९३ तक पटना मण्डल के आयुक्त के अनुसार उसके मण्डल में कुल २३ सभाएँ कार्यरत थीं। गया में ८, दरभंगा और शाहाबाद में प्रत्येक में चार, मुजफ्फरपुर में ३, पटना में २ तथा सारन एवं चम्पारन में प्रत्येक में एक एक सभा कार्यरत थी। पटना मण्डल के आयुक्त की रिपोर्ट के अनुसार, सर्वाधिक शक्तिशाली सभाएँ जो अपने वैध उद्देश्यों की सीमा से बाहर जाकर काम करती थीं उनमें छपरा, दरभंगा, मधुबनी और सीतामढ़ी की सभायें थीं।

५. गोरक्षिणी सभाओं के कार्य और उनका निधिस्रोत (विशेष रूप से बिहार में)

गोरक्षिणी सभा एक विशाल संगठन था। प्रत्येक गाँव में एक या अधिक सदस्य या प्रतिनिधि होते थे। ये सदस्य अंशदान नकद तथा वस्तुओं के रूप में एकत्रित करते थे। ये अच्छे लोग थे। गाँवों के समूह पर एक सभापति होता था। एक समग्र जिला एक सरदार सभापति के अधीन होता था।

सभा के धनी लोगों द्वारा गोशाला एवं पशुओं को चरने के लिए सभा को भूमि दान में दी जाती थी। सदस्यों से नियमित मासिक अंशदान के अतिरिक्त कई प्रकार के एवं नवीन उपायों से दान एकत्रित किया जाता था। परिवार के प्रत्येक सदस्य के प्रत्येक दैनिक भोजन के हिसाब से एक चुटकी वजन या एक पैसा कीमत के खाद्यपदार्थ निकालकर अलग रख दिये जाते थे। सभा के प्रतिनिधि इन्हें एकत्रित करते थे तथा पूरे गाँव से एकत्रित किए गए ढेर की देखभाल करते थे। पर्याप्त मात्रा में इकट्ठा होने पर प्राप्त समस्त धान्य बेच दिया जाता था और यह राशि सभा को दे दी जाती थी। कुछ स्थानों पर, साहुकार, व्यापारी तथा अन्य लोग अपने लेखे के कूते हुए मूल्य का २० प्रतिशत 'प्रान्द्री' कर के रूप में गोरक्षिणी सभा को अपना-अपना अंशदान देते थे। आयकर भरनेवाले सरकारी कर्मचारी अपनी आय के प्रत्येक रुपए पर एक पाई के हिसाब से स्वैच्छिक अंशदान सभा को देते थे। सेठ साहुकारों के साथ पैसे का लेन देन करने वालों को उनकी सुविधा के अनुसार छोटी मोटी राशि दान करने के लिए कहा जाता था। दुकानों एवं अन्य स्थानों पर दान पेटियाँ रखी जाती थीं जिन में धन डालकर अंशदान करने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया जाता था। वकील अपने धनी मुवक्किलों को दान करने के लिए प्रोत्साहित करते थे। कुछ कस्बों में तो सभी लेन देन पर एक नियत शुल्क इस निधि हेतु अंशदान के रूप में लिया जाता था। अन्य स्थानों पर अनाज, कपास, तेल, लाख, कपड़े आदि की बिक्री पर नियत दर पर कर लगाया जाता था। कुछ अन्य स्थानों पर बाहर भेजे जाने वाले कपड़े पर शुल्क वसूल किया

जाता था तथा नगर के बाहर से आनेवाले अनाज की गाड़ी से कर लिया जाता था। ग्रामीण जिलों में बेचे जानेवाले समग्र अनाज का एक निश्चित हिस्सा निकालकर इस निधि के लिए रखा जाता था तथा प्रत्येक किसान से जोत पर शुल्क वसूला जाता था। गोशाला के लिए चारा आसपास के गाँवों के प्रत्येक किसान से निःशुल्क लिया जाता था। गोशालाएँ खाद बेचकर तथा बैलों की सेवाओं को शुल्क देकर अत्यल्प मात्रा में आय निर्माण कर लेती थीं। विवाह, दत्तक, आदि विविध समारोहों पर तथा मनोरंजनों एवं त्योहार तथा उत्सवों पर भी अंशदान लिया जाता था। इस प्रकार से एकत्रित निधि का उपयोग गोशालाओं के निर्माण करने, गायों की हत्या रोकने के लिए, कसाइयों से बचाने के लिए और बाजारों से गायों की खरीद, सभा के प्रतिनिधियों के खर्चों तथा सभा की ओर से अभियान करनेवाले लोगों के व्याख्यानों पर किया जाता था।

गोरक्षिणी सभाओं की ओर से वक्ता गोरक्षा आन्दोलन के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते थे तथा वहाँ भाषण देते थे एवं लोगों से अंशदान एकत्रित करते थे। इन व्याख्यानों में वे भूतकाल के हिन्दूराजाओं की शासनावधि के गुणगान करते थे तथा बताते थे कि उस समय किसी भी प्रकार की गोहत्या नहीं होती थी। वे हिन्दुओं से गोसंरक्षण का अनुरोध करनेवाली पुस्तिकाएँ, अधपन्ने एवं गोमाता के चित्र वितरित करते थे। मध्य भारत की सम्भवतः सर्वाधिक प्रभावशाली सभा - नागपुर गोरक्षिणी सभा - व्याख्याताओं का चयन कर उन्हें प्रशिक्षित करने के लिए कक्षाएँ भी चलाती थी। प्रायः हिन्दू वक्ताओं, पुस्तिकाओं और समाचार पत्रों द्वारा यह आग्रहपूर्वक कहा जाता था कि गोसंरक्षण हिन्दुओं का परम धर्म है और यदि इस धर्म की अवज्ञा की गई तो देश रोगों, बाढ़ों और अकालों से ग्रस्त हो जाएगा।

गोरक्षिणी सभा ने मेलों और बाजारों में अपने प्रतिनिधियों को इस उद्देश्य से भेजा था ताकि वे वहाँ बेची जानेवाली गायों को कसाइयों के हाथों न पड़ने दें तथा सभा के नियमों का भंग करने वाले हिन्दुओं को दण्ड दें। सरकारी वाड़ों में किसी भी गाय को भेजने की हिन्दुओं को मनाही की गई। सभी गायों को पास की गोरक्षिणी सभा या गोशालाओं में लाए जाने को कहा गया।

बड़ी संख्या में हिन्दूओं जिन में जाते थे ऐसे मेलों में विभिन्न स्थानों पर सभा के प्रतिनिधि अभियान चलाते थे। उदाहरण के लिए इलाहाबाद का माघ मेला उत्तर प्रदेश के बहुत बड़े एवं महत्त्वपूर्ण मेलों में से एक था। वहाँ ऐसे अभियान संघटित रूप में चलाए जाने की व्यापक सम्भावनाएँ थीं।

१८९३ के अन्त तक उत्तर प्रदेश क्षेत्र में सभा के नियमों को भंग करने वालों

पर सभा अपनी अदालतें चला कर फैसले सुनाती थी। दोषियों को बहिष्कृत किया जाता, जाति से निकाला जाता तथा दण्डित किया जाता था। कसाइयों को मांस की आपूर्ति हेतु गायें बेचने वाले किसी भी व्यक्ति पर मुकद्दमा चलाने के लिए विशेष अदालतें स्थापित की गई थीं। सरकार को लगा कि गोरक्षा सभा फौजदारी अदालतों के अधिकार क्षेत्र में दखल दे रही थीं। सभा ने उन सभी दोषियों पर अपनी अदालतों में मुकद्दमे चलाना प्रारम्भ किया तथा उन पर सरकारी न्यायालय में दोष सिद्ध हो या नहीं, उनसे दण्ड की राशि वसूली गई। इस दण्ड से प्राप्त राशि को सभा की गतिविधियों को चलाने के लिए उपयोग में लाया जाता था। जातिगत संगठनों के माध्यम से जुर्माने की रकम अदा करने के लिए दबाव डाले जाते थे। यदि अभियुक्त सभा के अधिकारों या फैसलों को स्वीकार नहीं करता था तो उसे जाति से बहिष्कृत तक किया जाता था।

गोरक्षिणी सभा ने निम्नलिखित बातों की अपराध के रूप में सूची बनाई थी जो हिन्दू और मुसलमान दोनों पर लागू होती थीः गाय को खुली छोड़ना, सरकारी बाड़े में गाय को ले जाना, सभा के लिए अंशदान न देना, बैल को बधिया करना, भैंस को बेचना, अपरिचित लोगों को मवेशी बेचना, कसाइयों को मवेशी बेचना या अन्य किसी को मवेशी बेचना जो उन्हें कसाइयों को बेचे, किसी गाय या बूढ़े बैल को किसी मेले में ले जाना - इन सभी दोषों के लिए दस गायों के मूल्य के बराबर दण्ड वसूल किया जाएगा तथा दोषी व्यक्ति को जाति से बहिष्कृत करने तथा गाँव से बाहर निकाले जाने के विषय में विचार किया जाएगा।

गोरखपुर गोरक्षिणी सभा जैसी कुछ सभाओं ने विवाहों में फिजूलखर्ची के लिए चेतावनी दी तथा बारातियों की अधिकतम संख्या एवं तिलक की रस्म पर खर्च किए जानेवाले धन की राशि भी एक सीमा तक ही रखना तय किया।

कुछ सभाओं ने दोषियों पर औपचारिक रूप से मुकद्दमा भी चलाया। उदाहरण के लिए, गऊ महारानी बनाम हाल्दी के सीताराम अहीर मुकद्दमें में सीताराम अहीर द्वारा सरकारी बाड़े में गाय को छोड़ने के लिए उस पर मुकद्दमा चलाया गया। बाड़े से गाय को नीलामी द्वारा एक कसाई को दस रूपए में बेचा गया। सीताराम अहीर को गाय को वापस खरीदने के लिए आदेश दिया गया और तत्पश्चात् उसे सभा के समक्ष मुकद्दमे के लिए खड़े होने को आदेश दिया गया। सीताराम को दोषी ठहराया गया तथा उस पर ४ रूपया ८ आना जुर्माना किया गया। जब उसने जुर्माना भरने के लिए मना किया तो उसे सरदार सभा (जिला सभा) के समक्ष प्रस्तुत किया गया तथा उसे २४ दिन के लिए

जाति से बहिष्कृत करने तथा विविध अन्य जुर्माने भरने का दण्ड दिया गया।

सरकारी बाड़े में गाय को छोड़ने का प्रयास करने के आरोपी पर गऊ महारानी बनाम शिवलोचन पर मुकद्दमा चलाया गया। शिवलोचन को १२ दिन के लिए जाति से बहिष्कृत करने के दण्ड के साथ अन्य दण्ड तथा आठ गायें जुर्माने के रूप में अदा करने को बताया गया। जुर्माना भरने से मुकरने पर उपर्युक्त जुर्माने का चार गुना भरना पड़ता था। जुर्माना न भरने के लिए उकसानेवाले व्यक्ति को आधे जुर्माने की राशि देनी पड़ती थी।

सभा के आदेशों के विरोध में लोगों को प्रेरित करने के आरोप में गऊ महारानी बनाम राम भवन मामले में राम भवन को दण्ड के रूप में गोशाला की निधि में १० रूपये भरने तथा १५ दिन के लिए जाति से बहिष्कृत करने की सजा दी गई।

बिहार में सभाओं के संगठन, उनके कार्यकलापों, उनके निधि हेतु रूपए इकट्ठे करने की पद्धतियाँ आदि अन्य क्षेत्रों की सभाओं से थोड़ी भिन्न थीं। प्रत्येक सभा द्वारा अलग अभियान चलाए जाते तथा विभिन्न सभाएँ विभिन्न आन्दोलन चलाती हुई दिखतीं। प्रत्येक स्थानीय सभा के अपने प्रतिनिधि और वक्ता होते थे जो अभियान भी चलाते थे तथा दानस्वरूप निधि भी लोगों से एकत्रित करते थे। बाहर के आन्दोलनकारियों को स्थानीय जमींदारों, राजाओं और रानियों द्वारा मदद दी जाती एवं उनके निवास की व्यवस्था की जाती थी। कभी कभी सरकारी कर्मचारियों या स्थानीय धर्मशालाओं द्वारा भी बाहर के आन्दोलनकारियों की आवभगत की जाती तथा उनके आवास का प्रबन्ध किया जाता था। ऐसे भी अवसर आये जब बाहर के आन्दोलनकारियों को स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा आन्दोलन करने से रोका गया तथा गिरफ्तार भी किया गया। कभी कभी सभा ऐसे वक्ताओं को भी इस कार्य में लगाती जिन्हें उनके आन्दोलन के कार्य के लिए भुगतान किया जाता था।

आय और व्यय

सामान्यतः सभाओं में व्यय से अधिक आय होती थी। व्यय में कर्मचारियों के वेतन, स्थानीय एवं बाहर के वक्ताओं पर किए गए खर्च, गोशाला आदि चलाने के खर्च समाविष्ट थे। इन सभाओं की अच्छी खासी राशि मवेशी मुक्ति के मामलों के आरोपी व्यक्तियों की पैरवी में तथा इस विषय को समाचारपत्रों में प्रकाशित करने में खर्च की जाती थी। कभी कभी महत्त्वपूर्ण प्रभावी सभाओं - जैसे इलाहाबाद या नागपुर की सभाओं - को भी राशि भेजी जाती थी।

बिहार में, सभाओं के पदाधिकारी एवं अन्य प्रतिनिधि अंशदान एकत्रित करते थे तथा सभा को चलाने के लिए उत्तरदायी थे। कुछ सभाओं के आय एवं व्यय पर्याप्त बड़े थे। उदाहरण के लिए दरभंगा सभा की १८९१ में आय रू. ४०५८ थी तथा व्यय रू. २३४३ था। शाहाबाद की चार सभाओं में प्रत्येक की वार्षिक आय ३००० रू. थी। पटना सभा की वार्षिक आय बहुत अधिक थी क्योंकि इसकी बहुत बड़ी गोशाला थी। सीतामढ़ी सभा का खर्च ९०० रू. था तथा इसके पास जमाशेष राशि १७०० रू. थीं। इस जमाशेष राशि को कदाचित स्थानीय साहुकारों के पास निवेशित किया गया था। कुछ सभाएँ, विशेष रूप से मधुबनी सभा, १८९३ के आसपास बिहार में सर्वाधिक सक्रिय सभाओं में एक थी और जब आन्दोलन चरमोत्कर्ष पर था उस समय अत्यन्त सफलतापूर्वक चलने के लिए यह सुविख्यात थी।

साहित्य

सभा के प्रतिनिधि और वक्ता पुस्तिकाओं और चित्रों का वितरण करते थे। 'गोमाता में समस्त देवताओं का निवास चित्र' अत्यन्त लोकप्रिय हुआ। संन्यासी भी यदा कदा ऐसी पुस्तिकाओं एवं चित्रों को प्रचारित करते थे।

जैसा कि बिहार के शाहाबाद जिले में देखा गया, हाथोंहाथ परिचालित की जानेवाली चिट्ठियाँ आन्दोलन के संचार के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण साधन सिद्ध हुईं। ऐसे पत्र इस सन्देश के साथ प्राप्तकर्ता को प्राप्त होते थे कि वे स्वयं वैसे तैयार करके उन्हें आगे कई गाँवों में भेजें। कसाइयों को हिन्दुओं द्वारा गायें न बेचे जाने के अनुरोधवाली पुस्तिकाएँ भी इस आन्दोलन का हिस्सा थी। कुछ चिट्ठियों से हिन्दुओं को मुहर्रम के जुलूस में भाग लेने की मनाही की गई या मुस्लिमों को इस त्योहार की अवधि में आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति न करने को कहा गया।

इस प्रकार के साहित्य को मुद्रित करनेवाले कई मुद्रणालयों पर अवैध गतिविधियों के लिए साहित्य छापने हेतु बन्द कराए जाने का खतरा मँडरा रहा था क्योंकि इन पुस्तिकाओं में कुछ को अवैध तथा उत्तेजक सिद्ध करने के प्रयास किए जा रहे थे। बड़ी संख्या में परिचालित पुस्तिकाएँ बनारस या नागपुर में मुद्रित की गई थीं।

बिहार में मधुबनी सभा ने बड़ी मात्रा में साहित्य निर्माण किया था। एक समाचार पत्र ने 'गोहत्या विरोधी आन्दोलन के सम्बन्ध में मुस्लिमों की राय' को उद्धृत करते हुए गोसेवकों को उत्तेजक कहा तथा मुस्लिमों को सूअर हत्या के विरोध में आन्दोलन छेड़ने का परामर्श दिया गया।

गोहत्या सम्बन्धी नाटक भी व्यापकरूप से परिचालित किए जा रहे थे। 'भारत डिमडिमा नाटक' शीर्षक वाला एक नाटक रेलवे स्टेशन के पुस्तक बिक्री केन्द्रों पर बेचा जाता था। इसमें भारत की दयनीय आर्थिक स्थिति को गोहत्या के साथ जोड़ा गया था।

नगरीय क्षेत्रों में, गोसंरक्षण के समर्थन में आर्थिक सन्दर्भयुक्त चर्चायें शिक्षित एवं अंग्रेजी रंग में रँगे लोगों के बीच होती थीं। गाय सहस्राब्दियों से कामधेनु के रूप में समृद्धि का प्रतीक थी। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में अंग्रेजी रंगढंग के शिक्षित भारतीय लोगों को यह ज्ञात होना आरम्भ हुआ कि अन्य देशों की मवेशी की तुलना में भारतीय गाय रुग्ण थी तथा कम दूध देती थी। यह स्पष्ट था कि भारत की कृषि सम्बन्धित एवं भौतिक समृद्धि गाय के कल्याण के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई थी। अनेक शिक्षित हिन्दुओं ने यह समझा और गोसंरक्षण आन्दोलन को अपना समर्थन दिया। गोरक्षिणी सभाएँ भारत के पशुधन के विकास एवं उनकी देखभाल के लिए आवश्यक है, यह भी उन्होंने समझ लिया। गोहत्या भारत की गरीबी से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई थी। इस दृष्टिकोण के समर्थन में अनेक तर्क दिए गए। पंजाब में एक पुस्तिका में तर्क दिया गया कि सरकारी जंगलों में मवेशी के चरने की मनाही, चारे की बढ़ती कीमतें तथा भोजन के लिए पशु हत्या से भारत में मवेशी के अस्तित्त्व के लिए खतरा पैदा हो गया है। मवेशी के अभाव में न तो हिन्दू अपने खेत जोत सकेंगे और न मुसलमान। माताएँ अपने बच्चों को दूध नहीं पिला सकेंगी। सभी भारतीयों को, चाहे उनका धर्म कोई भी क्यों न हो, यह समझने के लिए अनुरोध किया गया कि यदि पशुधन का संरक्षण नहीं किया गया तो बहुत कम समय में भारत के लोग विनाश के कगार पर पहुँच जाएँगे। भारत की औसत आय पहले से ही खतरे के निशान तक गिर चुकी है। हजारों भारतीय भुखमरी से पीड़ित हैं। एक अन्य लेखक ने चेतावनी देते हुए लिखा कि चूँकि दूध एवं अनाज की आपूर्ति क्षीण हो गई है, अतः भारत के लोग शीघ्र ही घास, धूल, एवं पेड़ों की पत्तियाँ खाकर जीवित रहने को बाध्य हो जाएँगे।

६. गाय की पवित्रता विषयक कुछ आरम्भिक ब्रिटिश दृष्टिकोण

गवर्नर जनरल वारेन हैस्टिंग्स एवं डबल्यू पॉमर के बीच जोधपुर एवं राजस्थान के अन्य शासकों के साथ राजनीतिक सम्बन्धों पर पत्राचार, १७८०

वारेन हैस्टिंग्स द्वारा डब्ल्यू पॉमर को (२४-५-१७८०) : (गोड्डार्ड एवं पॉफम की उपलब्धियों आदि पर से) आपके द्वारा भेजी गई रिपोर्ट से अवगत होने पर मैं जयपुर के राजा से सम्बन्धित अपनी राय व्यक्त करूँगा। वकील ने कुछ भी नहीं भेजा है और न लगता है कि अब कोई सूचना भेजेगा ही। अब वह किसी काम का नहीं रहा...। यदि आपको जयपुर में सरकार की स्थिर एवं नियत प्रणाली में अब भी कोई विश्वास है तो राजा के साथ हमारा विनियोजन नजफ के साथ झगड़े में हमें नहीं उलझाएगा, तथा ऐसी सन्धि की प्रत्याशा को बढ़ावा मिलेगा। यह सम्भव हो इसके लिए हम अपने सूत्रों से आवश्यक कड़ियाँ जोड़ने में चौकसी से लगे हुए है।

परन्तु मेरा सर्वाधिक विश्वास जोधपुर के राजा पर है। यदि वे इच्छुक हैं तो इस बिन्दु पर मेहनत करने के लिए उनके साथ बात आगे बढ़ाई जाए। किसी भी प्रकार से भेंट करना उपयोगी सिद्ध होगा। यदि इससे तत्काल या बड़ा लाभ नहीं भी होता है तो भी इससे हमारा राजनीतिक ज्ञान बढ़ेगा और हमारे भावी साधन और अधिक व्यापक बनेंगे।

मैं आपके इन निजी निर्देशों को बोर्ड के समक्ष रखूँगा। यदि किसी सदस्य ने वास्तविक रूप से आपत्ति नहीं उठाई तो उन पर आपके द्वारा अभियोग चलाने हेतु अनुमति लेने की आवश्यकता होगी। उनका एक अनुरोध यह है कि उनके देश में किसी भी गाय की हत्या नहीं होनी चाहिए। मुझे खेद है कि इस सुझाव के भेजे जाने से पूर्व इसकी गहनता की जांच नहीं की गई है।

डब्ल्यू पॉमर द्वारा वारेन हैस्टिंग्स के प्रति (१०-६-१७८०)

जयपुर के राजा या फिर उनके मातहतों के व्यवहार से मेरे मन में उनकी साख कम हुई है। जब से मैंने उनकी प्रार्थना के सम्बन्ध में आपको लिखा था तव से न तो

उनकी ओर से कोई वकील आया है न किसी प्रकार का सन्धि प्रस्ताव ही आया है यद्यपि उनके कार्य खेदजनक स्थिति में दिखाई देते हैं। मुझे सन्देह है कि राजा और उसके नौकरों ने नजफ के प्रति विश्वासघात किया है। ऐसी विषम परिस्थिति में उन्हें नजरंदाज करना आपको भारी पडेगा। उनके द्वारा इस दिशा में आगे बढ़ने पर उनके गूढ़ प्रभाव का विपरीत असर हुए बिना नहीं रहेगा। ऐसा सोचने के लिए भी मेरे पास पर्याप्त मात्रा में कारण है, जिन्हें राजपूत राजकुमारों के पक्ष में आपकी योजना को निष्प्रभावी करने में लगाया जाएगा।

मुझे आशंका है कि अब जयपुर के राजा को कोई भी बाढ़ बढ़ावा देना ठीक नहीं होगा। कैप्टन पॉफम ने गायों की हत्या की मनाही कर दी होगी परन्तु अब अन्य माँस की उपलब्धता में कठिनाई होने के कारण हमारे अफसरों के द्वारा तो नहीं परन्तु हमारी सेना के द्वारा आदेश का कभी कभी उल्लंघन भी हुआ है। राणाने मुझे बताया कि निषेध को सख्ती से लागू करने की आवश्यकता नहीं है परन्तु उन्हें इसके उद्देश्य की सिद्धि हेतु इसकी आवश्यकता इसलिए अधिक दिखी क्योंकि वे धार्मिक आज्ञा के पालन करने के स्थान पर अपनी जाति के लोगों के बीच अपनी साख बढ़ाना चाहते हैं। तथापि, मैंने इस अपराध या और किसी धार्मिक प्रथा को स्थानीय लोगों या मेरे अपने लोगों को रोकने के लिए पूरे प्रयास किए हैं। मुझे आपके कार्याधिकारों को निभाने में सफलता प्राप्त करने की पूरी आशा है जब कि वे (जनरल कूप) देश में सत्ता सँभाले रहेंगे। मुझे ज्ञात है कि जोधपुर के राजा को लिखा गया है परन्तु उन्होंने यह अपने फारसी दुभाषिये के नियत सरकारी माध्यम से नहीं भेजा है। उनके पास हमारे कैम्प का एक समाचार लेखक है जिसने ये खुफिया समाचार मुझे दिए हैं।

(२) गवर्नर जनरल के सचिव जे.एडम और दिल्ली के रेजीडेंट सी.टी मैट्‌काफ के बीच पत्राचार

१. सी.टी.मैट्‌काफ द्वारा जे एडम को (१८-१-१८१८)

मुझे यहाँ उल्लेख करने का अवसर प्राप्त हुआ है कि राजपूत राज्यों के साथ किए जानेवाले समझौतों में वे अपने क्षेत्रों में सींगों वाले पशुओं की हत्या के विरोध को सन्धि में शामिल करने के लिए कटिबद्ध है। यद्यपि मैंने समान रूप से यह घोषणा कर दी है कि एक सन्धि में ऐसे अनुबन्ध शामिल नहीं किए जा सकते। मैंने उन्हें भरोसा दिलाया है कि इस मुद्दे पर उनकी धार्मिक भावनांओं के प्रति पूरा ध्यान दिया जाएगा। (अनुच्छेद १४-१६ में इस पर विस्तृत रूप से जानकारी समाहित है।)

२. जे.एडम द्वारा सी.टी. मैट्काफ को (२-२-१८१८)

सींगधारी पशुओं की हत्या को प्रतिबन्धित करने हेतु सन्धि में ब्रिटिश सरकार को बाध्य करने वाली किसी धारा को शामिल करने के लिए राजपूत राज्यों की किसी भी माँग को समाविष्ट करने से इन्कार कर देने तथा इस मामले पर उनकी धार्मिक भावानाओं के प्रति ध्यान रखने के लिए आपके द्वारा दिए गए आश्वासन को गवर्नर जनरल ने पूरी तरह से अनुमोदित कर दिया है। मुख्य सेनाध्यक्ष के आदेशों के तहत यथासम्भव प्रतिबन्ध लगाने की दिशा में तदनुसार उपाय किए जाएँ और यदि इस प्रथा को राजपूताने के क्षेत्राधिकार में पड़ाव डाल कर रह रहीं या ब्रिटिश सेना के किन्हीं मण्डलों में इन्हें पूरी तरह से प्रतिबन्धित न भी कर पाएँ तो भी प्रयास जारी रहें।

(३) वायसराय लॉर्ड डफरिन द्वारा भारत के राज्य सचिव को (सार) (३१-१०-१८८७)

आपके २१ सितम्बर के पत्र में पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में आपको सूचित किया जाता है कि हमें गोंडल या उनकी गायों के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं है। प्रस्तावित फरमान अकेला है तथा यूरोपीय यात्रिकों के कारण से है। तथापि, इस प्रकार के निषेध कई देशी राज्यों में प्रवर्तमान है। राजपूताना में मुसलमान भी गोहत्या नहीं करते। आबू पर्वत पर हमारे सैनिकों को भी हिन्दुओं के इस पूर्वाग्रह से मतभेद होते हुए भी गोमाँस के बिना चलाना पड़ा। अतः गोंडल में इस प्रस्तावित निषेध को कानूनन लागू किया जाता है तो हमारा मानना है कि हमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

७. ब्रिटिश अवबोधन एवं अनुक्रियाएँ

ब्रिटिश महारानी विक्टोरिया द्वारा वायसराय लॉर्ड लैंस्डौन को लिखे गए एक पत्र में इस आन्दोलन के सम्बन्ध में प्रभावकारी ढंग से अवबोधन प्रस्तुत किया गया है। यह पत्र ८ दिसम्बर १८९३ का है जब यह आन्दोलन चरमोत्कर्ष पर था। पत्र में कहा गया है, 'गोहत्या आन्दोलन पर वायसराय के भाषण की महारानी विक्टोरिया प्रशंसा करती हैं। वे संपूर्ण निष्पक्षता की आवश्यकता में विश्वास करती हैं तथा उनका सोचना है कि मुसलमानों को हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक संरक्षण देने की आवश्यकता है क्योंकि वे निश्चित रूप से अधिक सन्निष्ठ हैं। यद्यपि मुसलमानों की गोहत्या तो इस आन्दोलन के लिए बहाना है, वास्तव में हम लोगों के विरोध में यह किया गया है जो अपनी सेना आदि के लिए मुसलमानों की अपेक्षा कहीं अधिक गोहत्या करते है।'

ब्रिटिश महारानी एवं उनकी सरकार को इस अवधि में भारत में चलाए जा रहे आन्दोलनों के सम्बन्ध में भारत के ब्रिटिश प्रशासन द्वारा उन्हें भेजी गई विस्तृत रिपोर्टों से पूर्ण जानकारी थी। उत्तर भारत के विविध भागों में चलाए जा रहे आन्दोलन की जानकारी प्राप्त करनेवाले ब्रिटिश अधिकारियों को इस आन्दोलन के ब्रिटिश शासन विरोधी अर्थात् राजनैतिक होने की अनुभूति हुई।

ब्रिटिश वायसराय लैंस्डौन ने २८ दिसम्बर १८९३ के अपने कार्यवृत्त में लिखा कि, 'मुझे सन्देह है कि सैन्य विद्रोह से लेकर प्रत्येक आन्दोलन में भारत सरकार के विरुद्ध विष की गाँठ होती है। इस आन्दोलन से भारत के उन सभी सरकार विरोधी लोगों के सम्बन्ध में जानकारी मिल गई है जिनके विषय में अन्य किसी भी स्रोत से मिलना सम्भव नहीं था। भारत में कांग्रेस आन्दोलन में जिस अशान्ति और असन्तोष को अभिव्यक्ति दी गई थी वह अन्य राजीनीतिक संगठन में भी कभी उभरेगी। मुझे भय है कि अब यह भावना निश्चित रूप से अधिक खतरनाक रूप ले चुकी है। शिक्षित हिन्दुओं और अज्ञान लोगों का एक हो जाना संयुक्त रूप में उभरकर आएगा।' अन्यत्र लैंस्डोनने कहा कि गोसंरक्षण आन्दोलन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को विवादास्पद सोसाइटी से असली राजनीतिक शक्ति के रूप में रूपान्तरित कर रहा था। स्पष्ट रूप

से, गोसंरक्षण आन्दोलन ने ब्रिटिश प्रशासन की नींद छीन ली थी। तथापि, वे इसे किस प्रकार से लेंगे इस विषय में वे अनिश्चित थे। लैंस्डोन ने अन्यत्र लिखा कि 'यह आन्दोलन प्रथम दृष्टया पूर्णतः वैध एवं दुर्भाव रहित था अतः इसमें तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता जब तक इसके कार्य कानूनी उद्देश्यों की प्राप्ति में प्रकट रूप से प्रतिबन्धित रूप नहीं ले लेते। बंगाल के उपराज्यपाल ए.पी.मैकडोनेल ने पटना के आयुक्त को सितम्बर १८९३ में लिखा कि हमें यथाशीघ्र इसे बन्द करा देना होगा। हमें किसी भी प्रकार से हिन्दुओं की धर्मान्धता को सरकार के आड़े नहीं आने देना चाहिए।

पंजाब के उपराज्यपाल डेनिश फिट्ज पैट्रिक ने १८९४ में अपनी एक टिप्पणी में लिखा कि गोहत्या का प्रश्न अन्य सभी प्रश्नों से जुड़ा हुआ है जो कम से कम २० वर्षों में हमसे सीधे जुड़े हुए हैं, तथा ये भारत में हमारे लिए आगे भयंकर खतरा सिद्ध होंगे। यदि यह व्यापक हुआ - और यह हो ही सकता है - तो हमारी देशी सेना और पुलिस के विषय में विश्वास पूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता। यदि यह हुआ तो ब्रिटिश शासन से देश का एक बड़ा भूभाग कुछ समय में हमारे हाथ से निकल जाएगा।

पंजाब

प्रशासन के विविध स्तरों के ब्रिटिश अधिकारियों ने पंजाब के गोसंरक्षण आन्दोलन का पर्यवेक्षण किया तथा अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कीं। पंजाब के उपराज्यपाल जे.बी.लियाल ने १८८७ में अपने विवरण में लिखा, 'मैंने भिन्न भिन्न कई स्रोतों से सूचनाएँ एकत्रित कीं। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि पंजाब में हिन्दुओं में (सिखों समेत) हाल ही में यह धारणा दृढ बन गई है कि हम उनसे दूर हो रहे हैं तथा मुसलमानों का पक्ष ले रहे है.... गोहत्या के मामलों में हमारे अधिकारियों के अनुसार मुसलमानों कि स्थिति स्वाभाविक रूप से अधिक औचित्यपूर्ण लग रही है। पंजाब में, यह स्मरण रखना अत्यन्त आवश्यक है कि जब हमने इस प्रान्त को अपने शासन में लिया तब हिन्दुओं का हमें साथ मिला था।'

सन १८८८ में एक अन्य सरकारी अधिकारी ह्यूपर ने लिखा, 'पंजाब में पशुहत्या से सम्बन्धित भावनाएँ राजनीतिक रूप से अत्यन्त खतरनाक तत्त्वों के साथ जुड़ी हुई हैं। उसने सुझाव दिया कि मुस्लिमों ने ब्रिटिश शासन के विरोध की मंशा से हिन्दुओं को ब्रिटिश शासन के प्रति उत्तेजित करने के लिए ऐसा किया हो क्योंकि लोग जानते हैं कि ब्रिटिश सरकार गोहत्या को चालू रखने के लिए जिम्मेदार है। गोहत्या के मसले ने हिन्दू और सिख दोनों को ब्रिटिश शासन का विरोध करने हेतु संगठित कर

७. ब्रिटिश अवबोधन एवं अनुक्रियाएँ

ब्रिटिश महारानी विक्टोरिया द्वारा वायसराय लॉर्ड लैंस्डौन को लिखे गए एक पत्र में इस आन्दोलन के सम्बन्ध में प्रभावकारी ढंग से अवबोधन प्रस्तुत किया गया है। यह पत्र ८ दिसम्बर १८९३ का है जब यह आन्दोलन चरमोत्कर्ष पर था। पत्र में कहा गया है, 'गोहत्या आन्दोलन पर वायसराय के भाषण की महारानी विक्टोरिया प्रशंसा करती हैं। वे संपूर्ण निष्पक्षता की आवश्यकता में विश्वास करती हैं तथा उनका सोचना है कि मुसलमानों को हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक संरक्षण देने की आवश्यकता है क्योंकि वे निश्चित रूप से अधिक सन्निष्ठ हैं। यद्यपि मुसलमानों की गोहत्या तो इस आन्दोलन के लिए बहाना है, वास्तव में हम लोगों के विरोध में यह किया गया है जो अपनी सेना आदि के लिए मुसलमानों की अपेक्षा कहीं अधिक गोहत्या करते है।'

ब्रिटिश महारानी एवं उनकी सरकार को इस अवधि में भारत में चलाए जा रहे आन्दोलनों के सम्बन्ध में भारत के ब्रिटिश प्रशासन द्वारा उन्हें भेजी गई विस्तृत रिपोर्टों से पूर्ण जानकारी थी। उत्तर भारत के विविध भागों में चलाए जा रहे आन्दोलन की जानकारी प्राप्त करनेवाले ब्रिटिश अधिकारियों को इस आन्दोलन के ब्रिटिश शासन विरोधी अर्थात् राजनैतिक होने की अनुभूति हुई।

ब्रिटिश वायसराय लैंस्डौन ने २८ दिसम्बर १८९३ के अपने कार्यवृत्त में लिखा कि, 'मुझे सन्देह है कि सैन्य विद्रोह से लेकर प्रत्येक आन्दोलन में भारत सरकार के विरुद्ध विष की गाँठ होती है। इस आन्दोलन से भारत के उन सभी सरकार विरोधी लोगों के सम्बन्ध में जानकारी मिल गई है जिनके विषय में अन्य किसी भी स्रोत से मिलना सम्भव नहीं था। भारत में कांग्रेस आन्दोलन में जिस अशान्ति और असन्तोष को अभिव्यक्ति दी गई थी वह अन्य राजीनीतिक संगठन में भी कभी उभरेगी। मुझे भय है कि अब यह भावना निश्चित रूप से अधिक खतरनाक रूप ले चुकी है। शिक्षित हिन्दुओं और अज्ञान लोगों का एक हो जाना संयुक्त रूप में उभरकर आएगा।' अन्यत्र लैंस्डोनने कहा कि गोसंरक्षण आन्दोलन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को विवादास्पद सोसाइटी से असली राजनीतिक शक्ति के रूप में रूपान्तरित कर रहा था। स्पष्ट रूप

से, गोसंरक्षण आन्दोलन ने ब्रिटिश प्रशासन की नींद छीन ली थी। तथापि, वे इसे किस प्रकार से लेंगे इस विषय में वे अनिश्चित थे। लैंस्डोन ने अन्यत्र लिखा कि 'यह आन्दोलन प्रथम दृष्टया पूर्णतः वैध एवं दुर्भाव रहित था अतः इसमें तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता जब तक इसके कार्य कानूनी उद्देश्यों की प्राप्ति में प्रकट रूप से प्रतिबन्धित रूप नहीं ले लेते। बंगाल के उपराज्यपाल ए.पी.मैकडोनेल ने पटना के आयुक्त को सितम्बर १८९३ में लिखा कि हमें यथाशीघ्र इसे बन्द करा देना होगा। हमें किसी भी प्रकार से हिन्दुओं की धर्मान्धिता को सरकार के आड़े नहीं आने देना चाहिए।

पंजाब के उपराज्यपाल डेनिश फिट्ज पैट्रिक ने १८९४ में अपनी एक टिप्पणी में लिखा कि गोहत्या का प्रश्न अन्य सभी प्रश्नों से जुड़ा हुआ है जो कम से कम २० वर्षों में हमसे सीधे जुड़े हुए हैं, तथा ये भारत में हमारे लिए आगे भयंकर खतरा सिद्ध होंगे। यदि यह व्यापक हुआ - और यह हो ही सकता है - तो हमारी देशी सेना और पुलिस के विषय में विश्वास पूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता। यदि यह हुआ तो ब्रिटिश शासन से देश का एक बड़ा भूभाग कुछ समय में हमारे हाथ से निकल जाएगा।

पंजाब

प्रशासन के विविध स्तरों के ब्रिटिश अधिकारियों ने पंजाब के गोसंरक्षण आन्दोलन का पर्यवेक्षण किया तथा अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कीं। पंजाब के उपराज्यपाल जे.बी.लियाल ने १८८७ में अपने विवरण में लिखा, 'मैंने भिन्न भिन्न कई स्रोतों से सूचनाएँ एकत्रित कीं। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि पंजाब में हिन्दुओं में (सिखों समेत) हाल ही में यह धारणा दृढ बन गई है कि हम उनसे दूर हो रहे हैं तथा मुसलमानों का पक्ष ले रहे है.... गोहत्या के मामलों में हमारे अधिकारियों के अनुसार मुसलमानों कि स्थिति स्वाभाविक रूप से अधिक औचित्यपूर्ण लग रही है। पंजाब में, यह स्मरण रखना अत्यन्त आवश्यक है कि जब हमने इस प्रान्त को अपने शासन में लिया तब हिन्दुओं का हमें साथ मिला था।'

सन १८८८ में एक अन्य सरकारी अधिकारी ह्यूपर ने लिखा, 'पंजाब में पशुहत्या से सम्बन्धित भावनाएँ राजनीतिक रूप से अत्यन्त खतरनाक तत्त्वों के साथ जुड़ी हुई हैं। उसने सुझाव दिया कि मुस्लिमों ने ब्रिटिश शासन के विरोध की मंशा से हिन्दुओं को ब्रिटिश शासन के प्रति उत्तेजित करने के लिए ऐसा किया हो क्योंकि लोग जानते हैं कि ब्रिटिश सरकार गोहत्या को चालू रखने के लिए जिम्मेदार है। गोहत्या के मसले ने हिन्दू और सिख दोनों को ब्रिटिश शासन का विरोध करने हेतु संगठित कर

दिया है। १८९३ के अन्त में ब्रिटिश प्रशासन के स्थानीय अधिकारियों ने अपने क्षेत्र में व्याप्त आन्दोलन के सम्बन्ध में रिपोर्ट भेजी। कुछ अधिकारियों ने आन्दोलन की अत्यन्त सुस्पष्ट विस्तृत रिपोर्ट भेजी तथा गोरक्षिणी सभाओं की गतिविधियों एवं गोशालाओं के विषय में रिपोर्टो में लिखा। गुड़गाँव के उपायुक्त जे. आर. ड्रमण्ड ने १३ दिसम्बर १८९३ की अपनी टिप्पणी में निम्नलिखित बिन्दुओं को उठायाः 'गोहत्या के विरोध में यहाँ एक आन्दोलन हुआ था जो कुछ वर्षों तक कम अधिक तीव्रता से चलता रहा। विगत दो वर्षों में यह आन्दोलन और अधिक व्यापक एवं प्रचण्ड हो गया था। कई स्थानों पर गोरक्षिणी सभाएँ एवं गोशालाएँ कार्य कर रही थीं। इस आन्दोलन को व्यापक रूप देने में सरकारी कर्मचारियों की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही। तत्पश्चात् गोरक्षिणी सभाओं को समर्थन देने वाले सरकारी कर्मचारियों के विरुद्ध कार्रवाई की गई। सभाओं ने अपनी गतिविधियाँ केवल अशक्त पशुओं को आश्रय देने तक सीमित कर दीं थीं। तथापि कई अवसरों पर गोरक्षिणी सभाओं एवं गोशालाओं ने कसाइयों और सरकार के विरुद्ध विद्रोह की स्थिति पैदा की। हिन्दू सर्वत्र गायों की बिक्री एवं हत्या के प्रति चिन्तित हो गए। मुस्लिम समुदाय के कुछ वर्ग इस से प्रसन्न नहीं थे, कुछ मुसलमान आन्दोलन के प्रति सहानुभूति रखते थे।' ड्रमण्ड ने लिखा कि 'स्थानीय रूप से अत्यन्त प्रभावशाली दरवेश समूह के लोगों और अनेक मुस्लिम राजपूतों ने आन्दोलन के प्रति सहानुभूति दिखाई।'

इससे पूर्व, मियां लोगों के सन्दर्भ में ड्रमण्ड ने लिखा था कि हाल ही में कुछ समय तक अधिकांश मियाँ गाय या बैल के माँस या चमड़े निकालने को लज्जाजनक मानते थे। उसने इन्हें नाम मात्र के मुसलमान कहा तथा वहाँ के स्थानीय मुसलमान जाट तथा अहीर के समान ही माना।

ठगी एवं डकैती विभाग के कार्यकारी महा अधीक्षक मैक क्रैकन ने पंजाब के गोहत्या विरोधी आन्दोलन पर टिप्पणी करते हुए लिखा कि हिन्दुओं में एक ऐसी धारणा बन गई है कि जब रुसी भारत पर विजय प्राप्त करेंगे तब वे पशु हत्या बन्द करा देंगे। कूका इसी उद्देश्य के लिए खालसा राज (सिख राज) लाना चाहते है। इस को अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए।

.....देशी सेना के गोहत्या विरोधी आन्दोलन में भाग लेने के कहीं से कोई भी समाचार प्राप्त नहीं हुए। एक प्रयास के विषय में अवश्य जानकारी मिली जिसके अनुसार १८९१ में लुधियाना के बूचड़खाने के लिए ले जाई जा रहीं गायों को ३६ सिख रेजीमेन्ट के कुछ सिपाहियों ने रोकने के प्रयास किए। एक अस्पष्ट एवं अपुष्ट

रिपोर्ट यह भी प्राप्त हुई कि आर्य समाज के कुछ सदस्य सिपाहियों के बीच गोहत्या का प्रश्न उठाने तथा उन्हें उत्तेजित करने के उद्देश्य से सेना में भरती हो रहे थे। ऐसी धारणा बनाना कुछ तार्किक सा लगता था कि कूका सिख रेजीमेंट में भर्ती हुई होंगे। यदि पंजाब में गोहत्या विरोधी आन्दोलन प्रचण्ड गति पकडता हैं तो सिखों और कूकाओं दोनों पर अत्यन्त पैनी दृष्टि रखना हितकर होगा।

उत्तर प्रदेश

प्रशासन की दृष्टि से कुछ सभाओं के प्रयासों से राज्य को विनाश के कगार पर पहुँचाने का भीषण खतरा था। उत्तरपश्चिमी सूबे के उपराज्यपाल चार्ल्स क्रोस्थ्वेट के अनुसार 'गोरक्षिणी सभा अत्यन्त उग्र संगठन है जो देश के कुछ जिलों में वस्तुतः सरकार बनाने की फिराक में है। अतः प्रशासन को धमकियां एवं सजाएँ देकर इसके नियन्त्रण को पुनः अपने अधिकार में कर लेना चाहिए।'

क्रोस्थ्वेट ने एक के बाद एक दरबार लगाए जिनमें वह हिन्दु नेताओं से मिला। आजमगढ़ के दरबार में उसने उस जिले के जमींदारों पर अपने कर्तव्यों के समुचित निर्वाह करने में असफल सिद्ध होने के आरोप लगाए। उनमें से कोई भी सरकारी अधिकारियों को बताने के लिए आगे नहीं आया कि वहाँ क्या कुछ हो रहा था। उनमें से किसी ने भी दंगों में भाग लेने से लोगों को रोकने के लिए हाथ नहीं उठाया। उनमें से किसीने भी उपद्रवियों को ढूंढ निकालने एवं आन्दोलन के नेताओं के दोष सिद्ध कराने में मजिस्ट्रेट की मदद नहीं की। उसने उन्हें गोरक्षिणी सभाओं को बढ़ावा देने तथा समर्थन देने के लिए परिणाम भुगतने के लिए तैयार रहने की चेतावनी दी। तथा कहा कि 'अतिरिक्त (दाण्डिक) बलों का खर्चा उन जमींदारों से वसूला जाएगा जो इस के पीछे रहे है। आपके द्वारा एकमति एवं सद्भाव प्रस्थापित करने के लिए किए जाने वाले प्रयासों पर आगे निर्भर करेगा कि मैं आपको अल्प या दीर्घावधि में इस बोज से मुक्त करूँगा।' सरकार ने तालुकादारों को उनके हथियार रखने के लाइसेंसों को रद्द करके दण्डित किया।

भारत सरकार के उत्तरपश्चिमी सूबे के मुख्य सचिव ने भारत सरकार के गृह विभाग के सचिव को अपने दिनांक १८ सितम्बर १८९३ के पत्र में लिखा कि इन सूबों में हाल ही में घटित घटनाओं के सम्बन्ध में उनकी उपराज्यपाल को इन घटनाओं के घटने तक की गोपनीयता के सिवाय अन्य कोई चिन्ता की बात नहीं लगती। चिन्ता की बात यह अवश्य है कि इनती बड़ी संख्या में लोगों ने अवैध उद्देश्य की प्राप्ति के

लिए एक आन्दोलन इतनी गोपनीयता के साथ आयोजित किया तथा चलाया। विभिन्न कारणों से जानकारी देने के जिस कानून से जमींदार बंधे हुए हैं, वह अब अप्रभावी हो गया है। निस्संदेह, कुछ बड़े जमींदार तथा कुछ कम महत्त्व के जमींदार जो इन अशान्त जिलों या इलाकों में स्वयं नहीं रहते, उत्तरदायी है। ये कदाचित दंगों के लिए उत्तरदायी नहीं है, परन्तु उस अवैध तंत्र को खड़े होने देने के लिए उत्तरदायी हैं जिसने इस अनिष्टकर आन्दोलन को आगे बढाया। उन्हें तथा उनके एजेंटों को क्या कुछ पक रहा था उसकी जानकारी अवश्य होनी चाहिए थी। वे उस पत्र के परिचालित होने से भी अनभिज्ञ नहीं थे जिसके अनुसार अवैधरूप से एकत्रित होने की मनाही थी तो भी सब कुछ होने दिया गया।

अतः चार्ल्स क्रोस्थ्वैट के अधीन कार्यरत उत्तरपश्चिमी सूबे की सरकार ने जोर देकर कहा कि गोहत्या विरोधी आन्दोलन को जनशान्ति के प्रति अत्यन्त खतरनाक एवं राजद्रोह के रूप में लिया जाना चाहिए। उत्तरपश्चिमी सूबे की सरकार ने आन्दोलन पर लागू होने वाले कानूनों में परिवर्तन करने का परामर्श दिया। क्रोस्थ्वैट ने सुझाव दिया कि अनधिकृत मवेशीबाड़ों एवं अवैध सोसाइटियों को प्रतिबिंधित करना, प्रेस द्वारा झूठी एवं भयप्रद कहानियों के विद्वेषपूर्ण एवं भड़कानेवाले प्रकाशनों पर रोक लगाना, अतिरिक्त दण्डात्मक पुलिस तैनात करने का खर्चा अनुपस्थित जमींदारों से वसूलने तथा पीडितों को दोषियों से हर्जाना दिलाने का अधिकार देना, पटवारियों - विशेष रूप से नियुक्त गाँव के मुखियों - द्वारा आन्दोलन के सम्बन्ध में सरकार को सूचना भेजने के लिए बाध्य करना आदि कार्य किए जाएँ।

प्रशासन ने आजमगढ़ तथा अन्य स्थानों पर विशेष समाधान समितियों की रचना की। इन समितियों में समान संख्या में हिन्दू मुस्लिम लब्धप्रतिष्ठ व्यक्तियों को रखा गया था। उनके द्वारा प्रत्येक कस्बे या गाँव में अलग अलग मामलों को लिया जाए तथा प्रचलित प्रथा के सम्बन्ध में सर्वसम्मति से व्याख्या करके एक निर्णय पर पहुँचा जाए ऐसा तय हुआ। इस प्रथा पर दृढ़ रहने के लिए स्थानीय मुसलमानों और हिन्दुओं को सन्तुष्ट करने का दायित्व भी उनका होगा।

गोसंरक्षण आन्दोलन ने भारतीय समाज पर गहन प्रभाव डाला। भारत सरकार के सचिव लियाल के अनुसार 'बंगाल में हिन्दुओं के पुनरुत्थान में हाल के वर्षों में व्यापक परिवर्तन आया है तथा यूरोपीय लोगों की ऐंठ अधिक समय तक अब नहीं चलने वाली'।

ठगी एवं डकैती विभाग के कार्यकारी महा अधीक्षक डी. ए. मैकक्रेकन ने ९

अगस्त १८९३ की अपनी आन्दोलन विषयक रिपोर्ट में निष्कर्ष निकालते हुए लिखा कि 'गोसंरक्षण आन्दोलन का पहला खतरा यह है कि इससे सभी वर्णों के हिन्दू, अन्य प्रश्नों पर आपस में मतभेद होने पर भी एकजुट हो जाएँगे।' यह आन्दोलन ऊपर से मुस्लिम विरोधी भले ही दिखता हो परन्तु, वास्तव में, यह ब्रिटिश सरकार के विरोध में था। उन्होंने कहा कि 'इस विषय में ब्रिटिश सैनिकों और यूरोपीयों के लिए गोमाँस की आपूर्ति के विरोध में प्रवचन एवं सेना रसद विभाग के लिए लाई जाने वाली मवेशी को छुड़ा कर ले जाने के प्रयास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथ्य है। यद्यपि मुम्बई प्रेसीडेन्सी एवं केन्द्रीय सूबों में आन्दोलन का विशेष प्रभाव है, फिर भी वहाँ या बंगाल में आन्दोलन के भड़क उठने से किसी गम्भीर खतरे की सम्भावना नहीं है। उत्तरपश्चिमी सूबों और पंजाब में इस आन्दोलन के व्यापक रूप से फैलने से वास्तविक रूप में खतरे की स्थिति पैदा हो गई है तथा हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अशान्ति का वातावरण पनपा है। साथ ही सरकार के अधिकारियों के साथ भी टकराव की स्थिति उत्पन्न हुई है। हिन्दू संगठन इसके लिए सरकारी अधिकारियों को दोष दे रहे है, जो मुसलमानों का पक्ष लेकर हिन्दू और मुस्लिमों के बीच अशान्ति के बीज बो रही है तथा फूट डालो और शासन करो की राजनीति खेल रहा है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि दूसरी नई शक्ति का उदय हो चुका है तथा आन्तरिक व्यवस्था को बनाये रखने के लिए देश में सेना की आवश्यकता पर विचार करते हुए इस शक्ति को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और प्रबावी शक्ति के रूप में समझा जाना चाहिए।'

बिहार

पटना मण्डल के आयुक्त ने २७ अक्टूबर १८९३ को गोसंरक्षण आन्दोलन विषयक अपनी रिपोर्ट बंगाल सरकार के मुख्य सचिव को भेजी। इस रिपोर्ट पर बंगाल के राज्यपाल का उत्तर मुख्य सचिव के ८ नवम्बर १८९३ के पत्र द्वारा भेजा गया।

राज्यपाल के मतानुसार, 'बिहार में यह आन्दोलन अनायास ही नहीं आरम्भ हुआ बल्कि बाहर के सूबों के उन आन्दोलनकारियों द्वारा आरम्भ किया गया है जो मेलों और बाजारों में भाषणबाजी करते रहे है। उन्होंने कस्बों और गाँवों में परिषदों की रचना की। यद्यपि ये परिषदें आरम्भ में 'विशुद्ध धार्मिक उद्देश्यों' को लेकर चल रहीं थीं तो भी इनमें से अधिकांश ने अपने उद्देश्यों को बदल दिया है। कई 'बाहरी' और 'स्थानीय' आन्दोलनकारियों ने किसी भी स्थिति में पशु हत्या पर रोक लगाने का उग्र निश्चय किया था। इन आन्दोलनकारियों ने 'सांसारिक एवं आध्यात्मिक आतंकवाद

द्वारा इस निषेध को अधिक प्रभावी' बनाने का प्रयास किया।

सरकार का यह भी मानना है कि उसके स्थानीय अधिकारी इस आन्दोलन के विषय में आरम्भ से ही पूर्ण रूप से अवगत थे परन्तु उन्होंने इन आन्दोलनकारियों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए कोई सक्रियता नहीं दिखाई। उन्होंने इस आन्दोलन के अवैध कार्यों को बन्द करने या उन्हें प्रतिबन्धित करने के कोई प्रभावी उपाय नहीं किये। उन्होंने आन्दोलनकारियों के बहुत बड़े समूहों को बिना किसी रोकटोक के खुली छूट दे दी। उन्होंने उत्तेजक स्वरूप की पुस्तिकाओं की प्रतियाँ भी उनसे प्राप्त नहीं की। सरकारी कर्मचारियों ने कोई प्रयास नहीं किये और आन्दोलनकारी मवेशियों को बलपूर्वक छीन कर ले गये।

राज्यपाल द्वारा प्रस्तुत अन्तिम पर्यवेक्षण यह था कि आन्दोलन को बढ़ावा देने वाले अत्यन्त प्रभावशाली स्थानीय घटक स्थानीय कचहरियों, विद्यालयों, एवं डाकघरों में कार्यरत सरकारी कर्मचारी थे। वास्तव में आन्दोलनकारियों ने सरकारी तन्त्र का उपयोग अपने आन्दोलन के प्रचार प्रसार एवं अपने उद्देश्यों को पूर्ण करने में जिला प्रशासन द्वारा कोई प्रश्न न उठाते हुए किया। इस आन्दोलन को पदों पर आसीन भद्र एवं सम्माननीय लोगों का समर्थन प्राप्त था, इसके अत्यधिक विवादास्पद मोड़ लेने पर भी इसमें हस्तक्षेप नहीं किया गया।

नागाओं एवं पोवारियों जैसे घुमक्कड साधुओं ने सरकार के समक्ष भीषण और विषम समस्याएँ पैदा कर दीं। उनकी गतिविधियां रहस्यमय दिखाई देती थीं। पटना मण्डल के आयुक्त ने अक्टूबर १८९३ में कहा कि ऐसा माना जा रहा है कि ये लोग किसी अज्ञात सत्ता द्वारा अभिप्रेरित एवं नियन्त्रित होकर कार्य कर रहे हैं। जहाँ भी दंगे भड़के, वहाँ उनके कार्यों में एकरूपता देखी गई। इससे एक सिद्धान्त का सत्याभास होता है कि वे किन्हीं आयोजकों द्वारा नियन्त्रित होकर कार्य सिद्ध कर रहे थे। इस प्रकार, बसन्तपुर के दो दंगों तथा बलिया के दंगों के सम्भावित कारण समान थे और वे थे - गोरखपुर के वैकुण्ठपुर के महान पवहारी बाबा के अनुयायियों, तथा कुछ साधुओं द्वारा इस सम्बन्ध में की गई घोषणाएँ कि वे तब तक न तो खाएँगे और न पानी ही पिएँगे जब तक मवेशी को मुक्त नहीं करा दिया जाता। सभी सरकारी अधिकारियों का यह मत था कि साधुओं तथा अन्य वक्ताओं एवं प्रवचनकर्ताओं का एक स्थान से दूसरे स्थान तक आना जाना बन्द करा देना चाहिए।

ब्रिटिश शासन के समक्ष एक अन्य समस्या भारत के जाति या धर्म व्यवस्था विषयक थी जिसके कारण बड़ी संख्या में लोग निर्देशों का पूर्ण रूप से पालन करते

थे। ब्रिटिश राज्य के लिए कोई भी समुदाय या समूह जो अपने निर्धारित नियमों और कानूनों के अनुसार कार्य करता था उसे राजद्रोही एवं क्रान्तिकारी माना जाता था। पटना मण्डल के आयुक्त की रिपोर्ट में गोरक्षिणी सभा के विषय में इस प्रकार कहा गया है - उनका अंशदान धार्मिक भय दिखाकर कर के रूप में एकत्रित किया जाता था जो व्यक्तिगत स्वैच्छिकता से पूर्ण रूप से असंगत थी। इसमें इस प्रकार का स्वैच्छिक आचरण करनेवाले बन्धुओं को दण्डित करने के लिए पंचायत बुलाने की शक्ति तथा उनके दोष सिद्ध होने पर जुर्माना वसूल करने या जाति से निष्काषित करने में देखी गई थी।'

चम्पारन में बेतिया में पदस्थ एक घाघ अधिकारी गिबन ने सितम्बर १८९३ की अपनी रिपोर्ट में अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है कि, 'आन्दोलन के नेता विशुद्ध धार्मिक उद्देश्यों से कार्य न करके राजनीतिक उद्देश्यों से कार्यरत थे। उनका अन्तिम उद्देश्य एवं लक्ष्य लोगों को राजद्रोह के लिए भड़काना तथा ब्रिटिश शक्ति को जड़मूल से उखाड़कर फैंकना था।' उसे यह भी लगा कि 'यह ब्रिटिश शासन के लिए भयंकर खतरा था' क्योंकि उसे यह भी 'विश्वास था कि मुस्लिम और हिन्दू आम सहमति से तथा पूर्व निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में कार्य प्रवृत्त थे।' उसने 'स्थानीय मुद्राबाजार में ब्रिटिश सरकार के प्रति भयंकर समस्या पैदा होती हुई' भी अनुभव की। उसने लिखा, 'प्रत्येक साहुकार अपनी बकाया राशि की उगाही में लगा हुआ है तथा वह किसी भी शर्त पर मुद्रा व्यापार करना नहीं चाहता। बाजार में अशान्ति का साम्राज्य व्याप्त है।' उसने आगे लिखा है.... 'आन्दोलन के असली नेता ब्रिटिश शासन के विरोध में गहन घृणाभाव से पूर्णतः सराबोर हैं तथा इस शासन से येन केन प्रकारेण किसी भी कीमत पर मुक्ति प्राप्त करने को दृढ़ निश्चित है।'

गोरक्षिणी सभाएँ किस प्रकार संगठित थीं तथा वे किस प्रकार कार्य करतीं थीं। उसका वर्णन भी गिबन ने किया है। उसने संकेत दिया कि उपनियम अत्यन्त सावधानीपूर्वक तैयार किये जाते थे... 'किसी का भी नामोल्लेख नहीं किया जाता था। ऐसा कोई उल्लेख नहीं किया जाता था कि समिति किस-किस मिलकर बनी है। सभी पक्ष अपनी पहचान गुप्त रखने के प्रति जागरूक थे।' आन्दोलन के संगठित होने की गोपनीयता एवं व्यापक रूप में बड़े पैमाने पर हिन्दुओं की उसमें प्रतिभागिता के सम्बन्ध ने गिब्बन ने बार बार आग्रहपूर्वक लिखा है... 'सरकार गुप्तचरों के नाम जानना चाहती है तथा उनके आश्रयदाताओं के विषय में भी जानने की इच्छुक है। इसके विषय में आपको जानकारी देना सम्भव ही नहीं होगा। वे हमारे पास कल्पित

नाम लेकर आते... कौन उन्हें संचालित कर रहा है ? प्रत्येक हिन्दू।' बैकुण्ठपुर के पोवारजी को इन क्षेत्रों में आन्दोलन का मुख्य प्रवर्तक बताया जाता था। पूरा का पूरा बेतिया उन्हें किसी भी समय भोजन कराने के लिए गौरव का अनुभव करेगा। जब कभी उपद्रव होता तो उसका समाचार अत्यन्त तीव्रता से देश के सभी भागों में पहुँचा दिया जाता था।

गिबन ने आन्दोलन को व्याप्ति देने में सहायक बनने वाले विविध सामाजिक दबावों एवं बहिष्कारों के सम्बन्ध में भी कहा था। उसने सभा की बढ़ती हुई शक्ति का हवाला देते हुए लिखा, 'उनका प्रथम प्रयास मुसलमानों द्वारा ईद के अवसर पर गोहत्या को बन्द कराना होता था। उनका इस समय का प्रयास हमारी सेनाओं के लिए गोमाँस की आपूर्ति बन्द कराना है। यह अत्यन्त महत्वाकांक्षी प्रयास है।'

अन्त में, गिबन ने इस आन्दोलन को नियन्त्रित करने के उपाय सुझाए थे। 'मुख्य षडयन्त्रकारियों को पकड़ लें, जब आपको अपनी पुलिस को गोली चलाने का आदेश देना पड़े तब खाली कारतूस न चलाकर गोली का उपयोग करें, निशाना पैरों की ओर नीचा लगाने के लिए कहें तथा हवा में पहली बार गोली चलाने वाले पहले सिपाही को फाँसी पर लटका दें... भिक्षावृत्ति वाले बड़ी संख्या के समुदायों के सदस्यों को मठों या बस्तियों में रहने को कहें तथा उन्हें एक साथ बड़ी संख्या में देश में इधर उधर कहीं भी घूमने फिरने की अनुमति न दें।'

सरकारी कर्मचारियों की बड़ी संख्या में प्रतिभागिता चिन्ता का मुख्य कारण था। दरभंगा के जिलाधीश एवं मजिस्ट्रेट एच.सी.विलियम्स ने अक्टूबर १८९३ की अपनी रिपोर्ट में निर्देशित किया कि, 'सरकारी कर्मचारियों की प्रतिभागिता तुरन्त बन्द करा देनी होगी। कोई भी सरकारी कर्मचारी इन सोसाइटियों (गोसंरक्षण सभाओं) में सचिव या अन्य किसी भी रूप में कार्यरत हुआ पाया जाय तो उसे तुरन्त निकाल दिया जाय। अन्य अधिकारियों का भी विचार इसी प्रकार का था। सरकारी अधिकारियों की प्रायः यह शिकायत रहती थी कि आन्दोलन के समर्थक अधीनस्थ कर्मचारी इस विषय में कोई भी जानकारी नहीं देते थे। कोई हिन्दू का विश्वास नहीं किया जा सकता क्योंकि वह अन्ततः अपने धर्म के प्रति ही निष्ठावान रहेगा, ब्रिटिशों के प्रति नहीं।' सारन जिले में बसन्तपुर के आसपास के क्षेत्र में एक पुलिस थाने को आन्दोलनकारियों द्वारा निशाना बनाए जाने की जाँच करने वाले अधिकारियों ने इस तथ्य का खुलासा किया कि, 'एक भी हिन्दूने हमें इस सम्बन्ध में कोई भी जानकारी

नहीं दी कि भूतकाल में वहाँ क्या कुछ घटित हुआ था तथा भविष्य में क्या कुछ घटित होने के आसार है।'

दरभंगा के जिलाधीश एवं मजिस्ट्रेट ने कुछ अन्य पर्यवेक्षण भी प्रस्तुत किए। उसने कहा कि इतने विशाल राजनीतिक आन्दोलन को बेरोकटोक आगे बढ़ने देने के लिए स्वयं सरकार उत्तरदायी है। गोरक्षिणी सभाओं या उनके आन्दोलनकारियों को नियन्त्रित नहीं किया गया। पुलिसने कभी भी सभायें करने या उन्हें रोके जाने के आदेश नहीं दिए। पुलिस की जैसे यह धारणा ही बन गई थी कि उचतर प्राधिकारियों ने वस्तुतः मौन रूप से आन्दोलन को अनुमोदन दिया था। इस आन्दोलन को हिन्दू समुदाय के ऐसे नेताओं का खुले आम समर्थन प्राप्त था जो उन सभी विभिन्न सरकारी परिषदों में सदस्य थे, जैसे बनारस, डुमराऊ, दरभंगा के सभी महाराजा, राजा रामपाल सिंह, तथा अवध एवं उत्तरपश्चिमी सूबों के अन्य राजा। इन नेताओं में से कुछ के समाचार पत्रों और मुद्रणालयों का उपयोग गोरक्षिणी सभाओं की गतिविधियों के उद्देश्य से हुआ। गोरक्षिणी सभाओं के मूलभूत सिद्धान्त अत्यन्त सुस्पष्ट एवं सामान्य थे परन्तु अन्ततः वे राजनीतिक बन गईं थीं। इन सभाओं के संस्थापकों ने कभी कल्पना भी नहीं की होगी कि इन सभाओं की गतिविधियों के अन्तिम परिणाम पूरे जिले में अशान्ति फैलाने, दंगे भड़काने में होंगे तथा वहाँ शान्ति स्थापित करने के लिए सशस्त्र सेनाओं की आवश्यकता कभी पड़ेगी। यदि सरकार ने दो या तीन वर्ष पूर्व गोरक्षिणी सभाओं को अनुचित करार दिया होता तो 'आजमगढ़ के उत्तर पश्चिम सूबों के जिलों में तथा बलिया में आज जो गृह युद्ध की स्थिति पैदा हो गई है और बिहार के सामान्य रूप से अशान्ति व्याप्त जिलों में यह सब कुछ घटित हो रहा हैं वह नहीं होता।' विलियम्स ने आन्दोलन से निपटने के लिए कुछ अन्य उपाय भी सुझाए, 'सभा के सभी एजेन्टों एवं उपदेशकों तथा अन्य प्रवासी उपदेशकों को जिलों में एक स्थान से दूसरे स्थान तक घूमने पर रोक लगा दें, जमींदारों एवं अन्य व्यक्तियों को लोगों को उनके गाँव में होने वाले किसी भी उपद्रव के लिए उत्तरदायी ठहराएँ, जहाँ भी दंगे हों, वहाँ के सभी लोगों के हथियार वापस ले लें, प्रेस पर सेंसरशिप लागू करें तथा सरसरी तौर पर उन मुद्रणालयों को बन्द करा दें जो अत्यधिक अपभाषण, उत्तेजक सामग्री या पत्रक छापते हैं...।'

सभी अधिकारियों द्वारा सामान्य रूप से सुझाया गया एक अन्य उपाय यह था कि 'हिन्दु और मुसलमान दोनों को चेतावनी दी जाए कि कोई भी उपद्रव होगा तो इलाके में कानून एवं व्यवस्था हेतु लगाए गए अतिरिक्त पुलिस बल का खर्चा उनसे

वसूल किया जाएगा।' गोरक्षिणी सभाओं को भी चेतावनी दी जाए कि 'वे अपने वैध उद्देश्यों की सीमा में रहकर ही कार्य करें।'

१८९३ की समाप्ति तक इन उपायों का असर यह हुआ कि सरकारी कर्मचारी सभा से दूरी बनाए रखने लगे। तथा अन्य विशिष्ट नागरिक पर भी इसका असर हुआ जिस के परिणामस्वरूप कुछ सभाएँ निष्क्रिय हो गई। गया के पुलिस उपअधीक्षक के अनुसार सितम्बर १८९३ तक गया के प्रमुख हिन्दू सभा के साथ अपना सम्बन्ध बताने से मुकरने लगे थे। बंगाल सरकार के मुख्य सचिव को पटना मण्डल के आयुक्त ने लिखा कि अक्टूबर १८९३ के अन्त तक यहाँ, इस समय, गया जिले में कहीं भी छोटा या सक्रिय आन्दोलन नहीं हुआ। १८९३ के पश्चात् आन्दोलन क्षीण होता हुआ दिखा। ब्रिटिश अधिकारियों को इससे मिलने वाली राहत की साँस की सटीक अभिव्यक्ति गिबन द्वारा लिखित रिपोर्ट में हुई है। 'हम अंग्रेज बड़े सौभाग्यशाली है, ईश्वर का धन्यवाद कि हमें उनसे निजात मिली।'

गिबन ने जब उपर्युक्त आत्म बधाई टिप्पणी में उस समय उच्च पदों पर आसीन अनेक अंग्रेज अधिकारी सम्मिलित होंगे, इतना ही नहीं तो भारत में अंग्रेजी राज्य को पूर्ण अवधि में उनका यही मत था। लाहौर के उपायुक्त ए.ई.हर्री ने भी इसी प्रकार की बात की है। पशु हत्या विरोधी आन्दोलन के सापेक्ष रूप से शिथिल पड़ने की अवधि में उसने अपने पर्यवेक्षण में संतोष व्यक्त किया है कि 'यद्यपि, आन्दोलन पंजाब में निस्संदेह रूप से व्याप्त हो रहा है, फिर भी मैं नहीं कहूंगा कि यह खतरनाक सिद्ध हो रहा है।

तत्पश्चात् हर्रीने लिखा है कि, 'मेरा मानना है कि गोसंरक्षण सोसाइटियों पर अत्यन्त सावधानीपूर्वक नजर रखने की आवश्यकता है। वे मुसलमानों के प्रति पूर्ण रूप से विद्वेष का भाव रखती हैं। यदि वे कभी मुसलमानों के बहाने हमारे शासन के प्रति अवज्ञा या असन्तोष की भावना को भडकाने में लिप्त पाई गईं तो भारत की शान्ति पर उनके इन उत्कट प्रभावों का पूरा असर पड़ेगा। मेरा विचार है कि यदि कोई भी दो आन्दोलन समकालिक पाए जाय तो उनकी गिरफ्तारियों के लिए पूरा मौका मिलेगा।' उसने फिर कहा, 'मैं नहीं सोचता कि वे फिर भी ऐसा कुछ करेंगे।'

अठारहवीं शताब्दी के मध्य से १९४७ तक ब्रिटिशों ने अपने शासन में जो कदम उठाए उनमें यह समाहित था कि दो को एक साथ किसी कार्य में न मिलने दिया जाए। उनको विश्वास था कि यदि वे साथ साथ समकालिक रूप से काम करेंगे तो सफल हो जाएँगे। एक प्रकार से ऐसी सफलता को प्राप्त करनेवाले को भाग्यशाली भी

कहा जा सकता है। बेतिया राज्य के गिबन ने पटना के आयुक्त को लिखे अपने पत्र में यही लिखा है। फिर भी अंग्रेजों का - या पश्चिम यूरोपीयों का - यह भाग्य, विशेष रूप से सन १५०० से, बहुत लम्बी (Pratice) लिये था। यह बहुत प्रयास से प्राप्त हुआ था। पहले तो यूरोप अपने पडौसियों के साथ घातक एवं भीषण युद्धों में उलझा रहा। बाद में इसाई धर्मयुद्ध हुए। उसके बाद १४९२ से यूरोप विश्व की खोज में निकला। यह करते हुए यूरोप ने पूरे विश्व को केवल युद्धभूमि के रूप में ही देखा। प्लेटो के नियमों (६२६) में इन विशेषताओं को निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया गया है, 'आम व्यक्ति यह नहीं समझता कि वे अन्य राष्ट्रों से कभी न खत्म होने वाले आजीवन युद्ध में लगे हुए हैं... अधिकांश व्यक्ति जिसे शान्ति कहते है, वह यथार्थतः मात्र कल्पना ही होती है। एक तथ्य यह भी है कि सभी राष्ट्र स्वभावतः एक दूसरे से अघोषित युद्ध छेड़े हुए हैं... यदि हम युद्ध नही जीतते तो हमारे पास कुछ नहीं होगा या होगा भी तो शान्ति के क्षणों में उसका नगण्यतम उपयोग ही होगा क्योंकि विजितों की समग्र सम्पत्ति विजेताओं के कब्जे में आ जाती है।'

भारत पर ब्रिटिशों के आधिपत्य जमाने और शासन करने की अवधि में भारत के लोगों ने उनके शासन और कृत्यों का प्रतिरोध करने में कोई कसर नहीं छोडी। गोहत्या का विरोध तो इसका केवल एक उदाहरण है। परन्तु प्रतिरोध भारतीय लोगों की चारित्रिक विशेषताओं के अनुरूप ही किया गया जो न अधिक घातक ही हुआ और न अधिक भीषण। यह इस आस्था पर टिका हुआ था कि समस्त प्राणी एक समान हैं तथा सभी पवित्र हैं। उनके लिए जीवित रहना जीविका प्राप्त करने का संघर्ष नहीं था। निरन्तर इसी कारण से भारत के लोग ठीक तरह से समझ नहीं पाए कि ब्रिटिशों के साथ कैसा व्यवहार किया जाय। परिणाम यह हुआ कि राष्ट्रव्यापी आन्दोलन क्षीण हो गया तथा ब्रिटिशों का भाग्य चमकता रहा।

८. पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के सम्बन्ध में ब्रिटिश खुफिया विभाग की टिप्पणी

१८८२ के आरम्भ में, कोलकता के आर्य समाज द्वारा पंजाब में गोसंरक्षण हेतु आन्दोलन आरम्भ करने के समाचार प्राप्त हुए। इस आन्दोलन को बनारस के महाराजा का समर्थन प्राप्त था। लाहौर में पशुहत्या विरोधी याचिका दायर करने के प्रयास के फलस्वरूप इस आन्दोलन का आरम्भ हुआ। ठीक इसी समय आर्य समाज के नेता पण्डित दयानन्द सरस्वती के अधीन कोलकता में एक समिति समग्र देश में हिन्दुओं का समर्थन प्राप्त करने के उद्देश्य से गठित की गई तथा कोलकता समिति द्वारा तैयार किए गए स्मरण-पत्र पर पंजाब के विविध भागों में हस्ताक्षर प्राप्त करने के प्रयास किए गए। उत्तर पश्चिमी सूबों में तथा पंजाब में आर्य समाज ने बड़े बड़े केन्द्रों पर प्राधिकृत कार्यकर्ताओं को पशुहत्या विरोधी स्मरणपत्र की प्रतियों को वितरित करने तथा उन पर हस्ताक्षर प्राप्त करने के उद्देश्य से भेजा।

अत्यधिक प्रभावी आधुनिक सम्प्रदाय आर्य समाज की स्थापना एक काठियावाडी ब्राह्मण पण्डित दयानन्द सरस्वती ने की थी। उन्होंने वेदों के बाद के पवित्र ग्रन्थों को अविश्वसनीय समझकर स्वयं नई पद्धति से रचना की और प्रवर्तमान रूढिवादी हिन्दू व्यवस्था को खण्डित किया। उनका व्यापक विरोध हुआ। उनकी मृत्यु भी अजमेर में अक्टूबर १८८३ में विष देने के परिणामस्वरूप हुई थी। आर्य (यथार्थतः सत्य) या वैदिक धर्म आधुनिक हिन्दू धर्म पर प्राकृतिक विज्ञान की निर्णायक क्रिया के परिणामस्वरूप मूलभूतरूप से उद्भूत धर्म है। आर्य समाज के मतानुसार चारों वेदों में भ्रमातीत रहस्योद्घाटन मात्र हुआ है। आर्यों की आस्था वेदों में ईश्वर के गूढ़ रहस्योद्घाटन के प्रति एवं प्रकृति में ईश्वर के रहस्योद्घाटन के प्रति है। इस धर्म का प्रथम व्यावहारिक तत्त्व वेदों की व्याख्या प्राकृतिक विज्ञान द्वारा सिद्ध किए गए परिणामों के अनुरूप करने में निहित है। उनके द्वारा किए गए वेदों के निर्वचनों में आर्य समाज ने संस्कृत के अन्य विद्वानों के साथ इस मुद्दे पर व्यापक चर्चा की। स्वामी

दयानन्द के दर्शन के अनुसार ईश्वर, आत्मा और पदार्थ इन तीनों की सत्ता है। आर्य समाज ने प्रार्थना एवं अर्चना की प्रभावोत्पादकता में वृद्धि की। परन्तु इसने उन धार्मिक क्रियाओं को अत्यन्त सीमित कर दिया जिसके लिए परम सत्ता की भक्ति की जाती थी। इसने पवित्र नदियों में स्नान करने की एवं तीर्थ स्थानों पर जाने की एवं कंठी, माला, छापा, तिलक, भिखारियों को भीख देना तथा हिन्दू धर्म के सभी हजारों विधि-विधानों-कर्मकाण्डों को हतोत्साहित किया। इसने मृतक के लिये किए जानेवाले धार्मिक कृत्यों की व्यर्थता की बात की। आर्य धर्म के अनुसार मूर्तिपूजा तथा इसके समस्त विधि विधानों की वेदों में कोई बात नहीं की गई है तथा सच्चे धर्म में इनका कोई स्थान नहीं है। आर्यसमाजी अपने धर्म पर नवीनता एवं विलक्षणता के आरोपों का खण्डन करते हैं तथा इस धर्म को उस पुरातन विस्मृत धर्म का अभ्युदय मानते हैं जो मुख्यतः ब्राह्मणों के कारण नष्ट हो गया था। प्रवर्तमान आर्य सिद्धान्त यह है कि असली ब्राह्मण वह है जो हृदय से विशुद्ध रूप से ब्राह्मण है। वेदों में वर्ण व्यवस्था की बात नहीं की गई है अतः ईश्वर के समक्ष सभी वर्ण एक समान हैं। यद्यपि आर्यों में एक प्रथा रही है कि वे अन्य जाति के लोगों के साथ न तो खाना खाते हैं और न उनमें विवाह ही करते हैं। यह आन्दोलन शिक्षित लोगों में अत्यधिक रूप से व्याप्त है तथा इसकी सर्वाधिक आक्रमक एक विशेषता है ईसाई या मुस्लिम धर्मान्तरित लोगों को पुनः हिन्दूधर्म में शामिल करना जो अपने पुराने धर्म को पुनः अपनाना चाहते है। आर्यसमाज बालविवाह को स्वीकृति नहीं देता तथा विधवाओं के पुनः विवाह को प्रोत्साहित करता है। इसकी व्यस्त कार्यप्रवृत्तियों में स्त्री शिक्षा के साथ अनाथालयों तथा सभी प्रकार की लोकोपकारी संस्थाओं की स्थापना करना तथा उन्हें चलाना रहा है। आर्यधर्म सिद्धान्त १० सुविस्तृत व्यापक प्रतिज्ञाप्तियों की शृंखला में सूत्रबद्ध है। आर्यसमाज के आधारभूत सिद्धान्तों में विश्वास रखनेवाला कोई भी व्यक्ति इसका सदस्य बनने की पात्रता रखता है। इस सम्प्रदाय के सदस्यों की संख्या बढ़े या न बढ़े यह विवाद का विषय है परन्तु इसकी शक्ति का संख्या के आधार पर आकलन नहीं किया जा सकता। आर्यसमाजियों का अपनी संख्या शक्ति का इस अनुपात के आधार पर प्रभाव है कि वे समग्र रूप से अधिकांशतः अंग्रेजी शिक्षित वर्गों से भर्ती होते हैं तथा उनके सिद्धान्त वकीलों, सरकारी नौकरों तथा उन अन्य लोगों में अधिक प्रचलित होते हैं जो बौद्धिक वर्ग से सम्बन्धित होते हैं। यह आरोप लगाया जाता है कि आर्य समाज के प्रातः कालीन भजनों में विदेशियों के शासन से मुक्ति हेतु कहा जाता है परन्तु यह प्रमाणित नहीं किया जा सका है। परन्तु पंजाब सरकार द्वारा अक्टूबर १८८९ में

रिपोर्ट भेजी गई है कि दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित निम्नलिखित प्रार्थना समाज के सदस्यों द्वारा नियमित रूप से गाई जाती है। 'हम ब्रह्मा की सन्तान है तथा परम सत्ता हमारा राजा है। हम उसके विनम्र सेवक है। उसकी कृपादृष्टि हम पर बनी रहे जिससे हम उसके द्वारा रची गई दुनिया में उसकी विजय पताका फहराएँ तथा उसके सच्चे न्याय को समग्र रूप में प्रसारित, करें।' परम्परावादी हिन्दुओं से अत्यन्त मतभेद रखते हुए भी गोसंरक्षण के एक मुद्दे पर ये एक हैं। हाल ही में समाज के शाकाहारी एवं माँसाहारी सदस्यों के बीच में फूट पड़ चुकी है। पहले आर्यसमाजी लोग अपने आपको राजनीति से पूर्ण रूप से दूर रखते थे परन्तु अब वे मुक्त रूप से राजनीति में भाग ले रहे हैं।

तथापि, १८८२ से पूर्व, सितम्बर १८८१ में मुल्तान के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच एक मन्दिर और कुएँ के स्वामित्व को लेकर विवाद उठा था। मामलें में जब गतिरोध आया। गोमाँस की बिक्री के विरोध में एक आन्दोलन हुआ जिसके परिणाम स्वरूप भीषण दंगे हुए।

१८८२ में दिल्ली में कुछ घबराहट फैलने के परिणामस्वरूप पंजाब सरकार ने स्थानीय प्राधिकारियों को अर्ध सरकारी रूप से आदेश दे दिए थे कि वे समाज के प्रभावशाली लोगों के दबाव से आन्दोलन को ठण्डे बस्ते में बन्द कर दें। साथ ही, मुसलमानों को भी आश्वासन दिया था कि उनके हित भी पूर्ण रूप से सुरक्षित हैं तथा उनकी ओर से किसी भी प्रकार के प्रतिनिधित्व की आवश्यकता नहीं है। इस हेतु एक अर्ध सरकारी पत्र सभी आयुक्तों के प्रति जारी किया गया। होशियारपुर जिले को आन्दोलन से प्रभावित हुआ बताया गया। १८८२ की समाप्ति में लाहौर और दिल्ली समान रूप से प्रभावित हो गए। तत्पश्चात् अप्रैल १८८३ तक शान्ति बनी रही। परन्तु अमृतसर और लाहौर के हिन्दू पशुहत्या के विरोध में पुनः सक्रिय हुए। मुसलमानों के विरोध में अमृतसर में दुर्भावना पैदा हुई तथा आर्यसमाज एवं सिंह सभा द्वारा पुनः स्मरणपत्र परिचालित किए गए। जून, १८८३ में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना अम्बाला जिले में जगाधरी में व्याप्त हो गई तथा आगामी महीनों में लाहौर में आन्दोलन सक्रिय अशान्ति फैली। अगस्त में फिरोजपुर के हिन्दू में मुसलमानों के खिलाफ उत्तेजना व्याप्त हो गई। एक बैठक आयोजित की गई जिसमें निर्णय लिया गया कि पत्र द्वारा सम्पर्क नहीं किया जाए। अक्टूबर १८८३ में दिल्ली में भयंकर अशान्ति फैली तथा दिल्ली की शान्ति कुछ दिनों तक खतरे में पड़ गई। इस घटना का परिणाम यह हुआ कि मुसलमानों की ओर से एक याचिका दायर करके सरकार से पशुहत्या के

सम्बन्ध में व्याप्त कुछ कमियों को दूर करने की प्रार्थना की गई।

अप्रैल १८८४ में अमृतसर में आन्दोलन पुनः सक्रिय हुआ। इसके परिणाम स्वरूप हिन्दुओं के बीच एक ओर तथा दूसरी ओर अंग्रेजों और मुसलमानों में दुर्भावनाएँ प्रदर्शित की गईं। शिमला आर्यसमाज ने १८८४ में आन्दोलन में सक्रिय हिस्सा लिया था। पूर्ण वर्षभर समग्र पंजाब में, विशेष रूप से बड़े कस्बों में गोहत्या के खिलाफ प्रदर्शन होते हुए सुने गए परन्तु एक कूका के उदाहरण को छोड़कर किसी भी प्रकार की हिंसा का मामला रिपोर्ट नहीं किया गया। एक कूका ने अवश्य घोषणा की कि गोहत्या की अनुमति देनेवाले सरकारी नौकर की हत्या कर दी जाएगी। अन्य जिलों से प्राप्त रिपोर्टों से यह पता चला कि इस अवधि में कूकाओं की चित्तवृत्ति बड़े पैमाने पर अस्थिर हुई थी।

कूका सम्प्रदाय की स्थापना १५ वर्ष पूर्व रावलपिण्डी जिले के हजरू के साहूकार बालक सिंह द्वारा हुई थी जिसका उद्देश्य मुख्य रूप से सिखों के ऊपर ब्राह्मणों की शक्ति को उखाड़ फैंकना था। बालक सिंह की मृत्यु के उपरान्त इस सम्प्रदाय के धर्म सिद्धान्तों को लुधियाना जिले में भैनी के उनके शिष्य बढ़ई रामसिंह ने अत्यन्त प्रवर्धित शक्ति से आगे बढ़ाया। इस सम्प्रदाय की आस्था विशुद्धतः स्वप्नवत् है। कूकाओं - शब्दशः 'चिल्लाने वालों' (उनकी यह शैली थी क्योंकि किसी भी अन्य सिख से पूर्णतः भिन्न रूप में, ये अपनी धार्मिक विधियों के दौरान उन्माद की स्थिति में पहुँच जाते हैं) के मन मस्तिष्क में नैतिकता की भावना अत्यन्त बलवान है। उनमें सिख धर्म को मूल रूप में पूर्णतः विशुद्ध रखने की अभिलाषा है। दरबार साहिब या अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर को छोड़कर उनके मन में किसी भी मकबरे, मन्दिर या समाधि स्थल के लिए कोई सम्मान की भावना नहीं है। दरबार साहिब या स्वर्ण मन्दिर को वे ग्रन्थ का अमानतदार मानकर राजधानी एवं सिख धर्म के केन्द्र के रूप में उसका सम्मान करते है। वे गुरु गोविन्दसिंह के प्रति आस्थावान हैं। एकमात्र धार्मिक गुरु के रूप में उनकी आस्था है तथा उनके रामसिंह के रूप में अवतार लेने के प्रति वे उनके सांसारिक प्रभुत्व हेतु खालसा राज की स्थापना चाहते हैं। वे रामसिंह की मृत्यु को सामान्यतः स्वीकार नहीं करते तथा उनके पुनः अवतार लेने की प्रत्याशा करते हैं। वे माँस एवं किसी भी प्रकार की मदिरा का सेवन नहीं करते। अर्थात् गुरु गोविन्दसिंह के सम्प्रदाय के अति नैतिकवादी सिख हैं तथा उनमें अधिकांश सिखों की तुलना में मुसलमानों, कसाइयों, गोहत्या एवं तम्बाकू के प्रति अधिक घृणाभाव है। वे सामान्यतः स्वयं को नामधारी (ईश्वर के नाम को धारण करने वाले) कहते हैं तथा

इनमें से कई लोग सम्प्रदाय से सम्बन्ध होने के तथ्य को छिपाते हैं। स्व. रामसिंह के भाई बाबा बुध सिंह ने इस समय अपने अनुयायियों को त्वरित गति से ब्रिटिश शक्ति को उखाड़ फैंकने में विश्वास करने के लिए कहा। अतः इस सम्प्रदाय ने १८६३ से सरकार का ध्यान आकृष्ट करना शुरु कर दिया था। बड़ी संख्या में लोगों को एकत्रित न होने देने के लिए प्रयास किए गए परन्तु धार्मिक मेलों में इधर उधर छोटे मोटे ऊधम हुए। १८६६ में मकबरों एवं हिन्दू देवी देवताओं की मूर्तियों को नष्ट करने के कुछ मामले प्रकाश में आए। १८६९ में फिरोजपुर में कूकाओं का छोटा सा विद्रोह हुआ था जहाँ नकद राशि एवं अनाज इकट्ठा करके उसका एक ढेर लगाकर सिख राज घोषित किया गया। १८७० में अमृतसर में एवं अन्यत्र कुछ मुसलमान कसाइयों की हत्या की गई थी। कूका हत्यारों को ढूँढ निकाला गया था। इस विद्रोह के सम्बन्ध में अपनी २६ फरवरी १८७२ की रिपोर्ट में पंजाब के उपराज्यपाल सर आर.एच.डेविस ने टिप्पणी की कि 'राज्य के सतलज क्षेत्र के मुसलमानों के एक मुख्य कस्बे को इस हेतु चुना गया क्योंकि हमला सिख पूर्वाग्रहों के कारण किया गया।' १७९४ में पशु हत्या के विरोध में ठीक इसी प्रकार बदला लेने की भावना से बेदी साहिब सिंह द्वारा किया गया। पुनः १७९८ में भी वही किया गया जिसमें ७००० सिखों को रायकोट के अफगानों के विरोध में बदला लेने की भावना से अमृतसर में धार्मिक प्रवचन देकर उत्तेजित किया गया। घेराबन्दी लुधियाना तक की गई। पटियाला का सैन्य दल शीघ्र कोटला पहुँच गया। बेदी साहिब सिंह धार्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे तथा सिख सिपाही भी उनके विरोध में लड़ना नहीं चाहते थे।'

करनाल से एक विशिष्ट प्रकार की रिपोर्ट प्राप्त हुई कि हिन्दुओं में ऐसी धारणा बनी है कि यदि रूसी लोग भारत पर विजय प्राप्त कर लेते हैं तो वे गोहत्या बन्द करा देंगे। कहा जाता है कि कश्मीर के महाराजा इस आन्दोलन में अत्यन्त रुचि दिखा रहे थे। इस समय जो कुछ जानकारी प्राप्त हुई उसके अनुसार आन्दोलन के केन्द्र कोलकता, मुम्बई और बनारस थे, तथा समग्र भारत की आर्यसमाज की शाखाएँ हिन्दू समाज में उत्तेजना फैला रहीं थीं। पंजाब के सभी बड़े कस्बों में कार्यरत इस समाज की शाखाओं ने इस समय अपने आपको गोरक्षा सभा में ढालना आरम्भ किया तथा उग्र भाषा का उपयोग करना शुरू किया।

पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के साथ जोड़कर एक आन्दोलन चीनी उत्पादन के सम्बन्ध में भी चलाया गया जिसमें लोगों को बताया गया कि हमारे चीनी उत्पादक यूरोपीय पद्धति का उपयोग कर रहे हैं जिसमें शुद्धीकरण की प्रक्रिया में पशुओं की

हड्डियों का उपयोग किया जा रहा है। १८८१ में लाहौर और अमृतसर से इसके विषय में प्रथम बार सूचना प्राप्त हुई। १८८४ में पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के पुनर्जीवित होने तक इसके विषय में और अधिक कुछ सुना गया। उस वर्ष नवम्बर में, यह बहावलपुर में पुनर्जीवित हुआ तथा बड़ी तेजी से लाहौर, अमृतसर, पेशावर, लुधियाना, मुल्तान, गुरदासपुर, गुजरात, जलन्धर में व्याप्त हो गया। १८८५ की वसन्त ऋतु में दिल्ली में इसके फैलने के सम्बन्ध में सुना गया परन्तु जल्दी ही यह मन्द पड़ गया।

१८८५ के आरम्भ में, मोन्टगोमेरी जिले में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना बढ़ी थी तथा बहावलपुर राज्य परिषद द्वारा मुसलमानों को शहर में पशुहत्या करने की अनुमति दिये जाने के परिणाम स्वरूप हिन्दुओं में रोष व्याप्त हो गया था। जुलाई १८८५ में लुधियाना से एक उद्वेजक रिपोर्ट आई जिसके तहत कुछ हिन्दुओं ने कहा था कि यदि इंग्लैंड का रुस के साथ युद्ध होता है तो हिन्दुओं को इस अवसर का लाभ उठाकर देश के सारे कसाइयों को मौत के घाट उतार देना चाहिए। सितम्बर १८८५ में नवाब के महल में रोज गायों या बैलों की हत्या किए जाने के समाचार से बहावलपुर के हिन्दू अत्यधिक दुखी हो गए थे। उसी महीने में होशियारपुर एवं लुधियाना जिलों से इसी प्रकार की उत्तेजना फैलने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। वर्ष समाप्त होते होते दिल्ली के मुसलमान पुनः सचेत हो गए थे तथा सरकार को इसकी अनुमति देने के लिए पुनः याद दिलाने की तैयारी कर रहे थे कि उनकी अपनी रिहायशों की सीमा में गायों की बलि दी जाने की अनुमति दी जाए क्योंकि इस अधिकार का वे लम्बे अरसे से उपयोग करते आ रहे थे। अमृतसर के आर्यसमाज के एक सदस्य स्वामी अलाराम गोसंरक्षण आन्दोलन की ओर से प्रवचन देने तथा निधि एकत्रित करने में अत्यन्त सक्रिय थे।

१८८६ में आरम्भिक महीनों में शान्ति बनी रही परन्तु उस वर्ष के जून माह में अमृतसर में कुछ निहंगों ने पवित्र शहर में गोमाँस निषिद्ध करने के विचार पर चर्चा करना आरम्भ कर दिया। इसी वर्ष जुलाई में हिसार में सेना के रसद विभाग के लिए खरीदी गई मवेशी को कसाइयों के चंगुल से छुड़ाने के लिए बनियों के एक संगठन की रचना की गई। कपूरथला राज्य में कुछ हिन्दू ने स्वयं इस आन्दोलन में रूचि दिखाई थी।

सितम्बर के प्रारम्भ में, करनाल के हिन्दुओं ने ईद के त्यौहार शुरू होने के अवसर पर गोमाँस के प्रश्न पर आन्दोलन करना प्रारम्भ किया तथा शान्ति भंग करने

के प्रयास किए। इसी महीने हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना बढ़ने से दिल्ली में भीषण दंगा हुआ जिस पर काबू पाने के लिए सेना की सहायता प्राप्त करना आवश्यक समझा गया। यह दंगा दुर्भावना के कारण से हुआ था जिसके मूल में मुसलमानों द्वारा बकरईद के अवसर पर लगभग १५० पशुओं की बलि चढ़ाने का काम था। लुधियाना में इसी त्योहार पर इस प्रकार के साक्ष्य प्राप्त किये आर्य समाज के सदस्यों ने गायों की बलि रोकने के प्रयास किए थे। हिन्दुओं ने बूचड़खाने से लाए गए कुछ वैध माँस को जब्त किया तथा मुसलमानों ने बदला लेने के लिए हिन्दुओं पर आक्रमण किया। कुछ घण्टों के लिए शहर में शान्ति भंग हो गई। अम्बाला में पुलिस उपायुक्त ने त्वरित कार्रवाई करने तथा उसके सरगना को गिरफ्तार करने के कारण दंगा नहीं भड़का था। अक्टूबर १८८६ में अमृतसर में एक शरारतपूर्ण अफवाह फैल गई कि दो यूरोपीय सैनिकों द्वारा एक नील गाय की गोली मारकर हत्या करने पर कश्मीर के दरबार ने उन्हें फाँसी पर लटकाने की सजा सुनाई है तथा रेजीडेंटों द्वारा विरोध करने पर उनको भी अपमानित किया गया है। इस आन्दोलन का सर्वाधिक सक्रिय केन्द्र अमृतसर रहा तथा वर्ष की समाप्ति होते होते एक ऐसे परिपत्र के निकलने को लेकर अफवाहों का बाजार गरम रहा जिसमें पशु हत्या पर रोक लगाने के लिए हिन्दुओं को सरकार को ३ लाख रूपये प्रतिवर्ष देने के लिए कहा गया है। दिसम्बर में मोन्टगोमैरी जिले में चिचावतनी में दंगे भड़के।

जनवरी १८८७ में अम्बाला में सिंह सभा में मुसलमानों से समस्त मवेशी ले लेने की सम्भावनाओं पर चर्चा होने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। जून १८८७ में अमृतसर के आर्य समाज ने महारानी की जयन्ती के अवसर पर गोहत्या बन्द कराने का आदेश जारी करने के लिए हिन्दुओं का एक आवेदन पत्र सरकार को दिया जिसे सरकार ने जारी करने से मना कर दिया। अगस्त १८८७ में दिल्ली के हिन्दुओं ने ईद के दौरान गोहत्या रोकने के लिए एक सुदृढ़ प्रयास किया। उसी माह यह घोषित किया गया कि गोसंरक्षण के प्रभावी उपायों हेतु कोलकता में देशभर के आर्यसमाजियों की बैठक आयोजित होगी। सितम्बर १८८७ में जलन्धर से रिपोर्ट मिली की कूका लोग महाराज दिलीप सिंह के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं जो पशु हत्या पर सम्भवतः प्रतिबन्ध लगा देंगे। उन्होंने यह भी कहा कि यदि अंग्रेज पशु हत्या बन्द करा देते हैं। तो वे संतुष्ट होंगे तथा वे अन्य किसी सरकार के विषय में नहीं सोचेंगे। इसी समय गुरुदासपुर से रिपोर्ट मिली कि कूका व्यग्र एवं असंतृष्ट थे तथा गोहत्या के मुद्दे पर कुछ कर गुजरने की सोच रहे है। रोहतक जिले के झज्झर में सरकार को एक स्मरण पत्र

दिए जाने की बात सुनी गई। दिसम्बर १८८७ में अमृतसर में एक कूका निम्नलिखित पंक्तियों को गा गाकर घूमते हुए सुना गया 'लन्दन से गन्दे है आए, और इन्होंने सभी जगह बूचड़खाने खुलवाएँ। उन्होंने हमारे गुरु की हत्या की और हमें अब अपने जीवन का बलिदान करना होगा।'

१८८७-८८ की शीत ऋतु में भारत सरकार में ठगी एवं डकैती विभाग की केन्द्रीय विशेष शाखा की स्थापना तथा स्थानीय सरकारों के मुख्यालयों में इसकी शाखाओं के होने के उपरान्त दूसरे सूबों से भी इस विषय पर सूचनाएँ प्राप्त हुईं।

१८८८ के आरम्भ में लाहौर और अमृतसर के आर्यसमाजी अपने एक प्रतिनिधि को वहाँ की संसद के समक्ष गोहत्या बन्द कराने के लिये एक याचिका प्रस्तुत करने हेतु लोगों से अंशदान एकत्रित करते हुए रिपोर्ट किए गए। अप्रैल में फिरोजपुर के उपायुक्त को चिढ़ाने के उद्देश्य से एक धमकी भरा पत्र लिखा गया था जिसमें कहा गया था कि यदि फिरोजपुर शहर में गोहत्या की उसने अनुमति दी तो उसे जीवन से हाथ धोना पड़ेगा। मई में एक अफवाह के विषय में सूचना प्राप्त हुई जिसके अनुसार कूका लोग गोहत्या को येन केन प्रकारेण बन्द कराने के लिए कटिबद्ध हैं ताकि जब महाराजा दलीप सिंह आएँ तो वहाँ जो कुछ घटित हो रहा है उसे देखकर प्रसन्न हो जाएँ। अगस्त १८८८ में पंजाब में घूम घूमकर लोगों को यह शपथ दिलाते हुए देखा गया कि जब तक गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगवा पाने में सफल नहीं हो जाते तब तक दूध, घी और मक्खन का उपयोग न करें।

मुम्बई के पारसियों ने गोहत्या विषयक एक स्मरणपत्र स्थानीय सरकार के समक्ष प्रस्तुत किया। इस स्मरण पत्र पर कोलकता के एक देशी समाचार पत्र ने संकेत दिया कि गोभक्षकों की अपेक्षा गोपूजकों की संख्या का अनुपात एक चार था अतः वायसराय को इस तथ्य को ध्यान में रखकर विचार करने के लिए कहा गया।

१८८८ की शुरूआत में उत्तर पश्चिमी राज्यों में उच्च न्यायालय के निर्णय के परिणाम स्वरूप इलाहाबाद के हिन्दू अत्यन्त क्षुब्ध थे। न्यायालय ने निर्णय दिया कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा २९५ के अर्थ की परिधि में गाय को एक वस्तु नहीं माना जा सकता। अतः इस शब्दावली में गाय जैसे सजीव पशु को समाहित नहीं किया जा सकता। लगता है कि शाहजहाँपुर जिले के तिल्हर के दो मुसलमानों ने एक सार्वजनिक स्थान पर ईद के अवसर पर एक गाय की हत्या की थी जिन्हें भारतीय दण्डसंहिता की धारा २९५ के तहत दोषी करार दिया गया। सत्र न्यायाधीश ने इस मामले को उच्च न्यायालय में भेज दिया जहाँ उपर्युक्त निर्णय सुनाया गया। इस निर्णय

पर दुःख और क्षोभ व्यक्त करने के उद्देश्य से हिन्दुओं ने इलाहाबाद में एक बैठक का आयोजन किया तथा इस बैठक में प्रस्ताव पारित करके सरकार को एक स्मरण पत्र देकर भारतीय दण्ड संहिता की धारा २९५ के प्रावधानों को गोहत्या के सम्बन्ध में और व्यापक बनाते हुए इसमें सुधार करने को कहा गया।

देसिका चारी नामक एक पूर्व अभियुक्त जो श्रीमन स्वामी के नाम से एक हिन्दू संन्यासी के रूप में जाना जाता था, उसने गोसंरक्षण सोसाइटी, इलाहाबाद की ओर से देश में घूम घूमकर प्रचार करना आरम्भ किया। वह कहा करता था कि उसने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय के परिणामस्वरूप गोसंरक्षण आन्दोलन को अपनाया है। फौजदारी कानून में संशोधन करने के लिये एक विधेयक लाये जाने हेतु दबाव डाला जा सके इसलिये इसे आरम्भ किया गया। श्रीमन स्वामी ने उत्तर पश्चिमी सूबों, अवध और बंगाल के कई जिलों में भाषण दिए तथा जहाँ वे गए वहाँ उन्होंने गोरक्षा सभाएँ स्थापित कीं और गो स्मारक निधि हेतु धन एकत्रित किया। अवध के तीन जिलों में उपायुक्तों को श्रीमन स्वामी के बैठकों की अध्यक्षता किये जाने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। दरभंगा, हतवा एवं बेतिया के महाराजाओं की अध्यक्षता में अंशदान की एक सूची स्थानीय देशी समाचार पत्र में भी प्रकाशित की गई। बनारस के महाराजा द्वारा अंशदान दिये जाने की भी रिपोर्ट प्राप्त हुई तथा डुमराउ के महाराजा के द्वारा इस आन्दोलन में स्पष्ट रूप से रुचि प्रदर्शित किये जाने की भी सूचना मिली। सितम्बर १८८८ में श्रीमन स्वामी ने समग्र देश में ४०-५० सभाएँ आयोजित करने के बाद कोलकता के टाउन हॉल में एक बैठक आयोजित की। हिन्दू समाचार पत्रों को इस प्रकार की रिपोर्ट छापने के लिए कहा गया कि अब समग्र भारत की गाय के प्रश्न पर रुचि थी। वायसरॉय और संसद को स्मरणपत्र भेजे जाएँ कि अब और अधिक समय तक सरकार इस आन्दोलन को अनदेखा नहीं कर सकती। इस पर मुसलमानों का समर्थन प्राप्त करने की चेष्टा की गई परन्तु यह प्रभावी रूप से प्राप्त नहीं हुआ। उत्तर पश्चिमी सूबे के गाजीपुर में बकरईद के अवसर पर बनारस आर्य समाज के एक सदस्य गोपालानन्द स्वामी के उत्तेजक भाषण को सुनकर बहुत बड़ी संख्या में एकत्रित हिन्दू भड़क उठे तथा मुसलमानों द्वारा दी जाने वाली पशु बलि को रोकने के प्रयास किए गए। मुख्य नेता को गिरफ्तार किए जाने पर ही दंगा शान्त हुआ। पशु हत्या विरोधी आन्दोलन उत्तर पश्चिमी सूबों के शाहजहाँपुर, लखनऊ, कानपुर, गाजीपुर, देहरादून, इलाहाबाद और बनारस जिलों में व्याप्त हो गया। देहरादून, झाँसी, अलीगढ़, बस्ती तथा बनारस में आर्यसमाजी आन्दोलन को आगे बढाने में अत्यन्त सक्रिय हो गए।

अप्रैल १८८८ में बंगाल में शाहाबाद जिले में बरहामपुर पशु मेले में एक मुसलमान द्वारा सेना रसद विभाग के ठेकेदार को बेची गई कुछ मवेशी को हिन्दूओं की एक भीड़ द्वारा जबर्दस्ती छीनकर हाँककर ले जाया गया तथा शोर मचाया गया कि मवेशी को बूचड़खाने में काटने के लिए ले जाया जा रहा था। इसी महीने बंगाल सरकार ने रिपोर्ट दी कि ऐसे संकेत मिले थे कि पशु हत्या विरोधी आन्दोलन को उपद्रव का स्वरूप दिया जा रहा था। बंगाली आन्दोलनकारियों द्वारा बड़ी चालाकी से यह किया जा रहा था। जुलाई में गया के प्राधिकारियों ने रिपोर्ट दी कि पशु हत्या विरोधी कटु भावना निर्माण होने के कारण वहाँ उपद्रव प्रत्याशित था। अगस्त १८८८ में शाहाबाद जिले के आरा के कसाइयों ने प्राधिकारियों को शिकायत दी कि अमृतसर के सिखों द्वारा गोहत्या विरोधी आन्दोलन चलाए जाने के कारण उन्हें हत्या के लिए पशु नहीं मिल सके थे। ढाका और सासन जिलों में भी दुर्भावना फैलाने की रिपोर्ट मिली। अब आन्दोलन मध्य भारत में नीमच तक एवं मध्य सूबों में फैल गया। नागपुर में स्थानीय गोरक्षा सभा ने अत्यन्त प्रगति की थी।

मुम्बई में १८८७ में आरम्भ गायों और भैंसों के संरक्षण हेतु एक सोसाइटी की रचना की बात प्रथम बार सुनी गई। यह भी समाचार प्राप्त हुए कि सितम्बर १८८७ में गोण्डल के ठाकुर ने यूरोप से लौटने पर अपने राज्य में गोहत्या विषयक एक स्मरणपत्र भेजा परन्तु मुम्बई सरकार ने इस विषय पर पिछले आदेशों में परिवर्तन करने के लिए मना कर दिया। कहा जाता है कि उसका स्मरण पत्र इस सोसाइटी द्वारा तुरन्त तैयार किया गया था। विलक्षण बात तो यह थी कि ठाकुर को स्वयं गोमाँस खाने में कोई आपत्ति नहीं थी। इस समय एक स्थानीय समाचार पत्र को मुम्बई के एक मुसलमान ने लिखा कि सरकार को भेजे गए गोहत्या विरोधी किसी भी कथित स्मरण पत्र पर उसके धर्म के किसी भी व्यक्ति ने हस्ताक्षर नहीं किए थे। उसने यद्यपि यह भी कहा कि विशेष प्रयास कर के उसके धर्म वालों को ऐसा करने के लिए राजी किया गया था। लेखक ने आन्दोलन के इस उपक्रम के लिए पण्डित दयानन्द सरस्वती और आर्य समाज पर आरोप लगाए। एक वर्ष के अन्दर, मुम्बई सोसाइटी की एक शाखा पूना में शुरु हुई। १२ दिसम्बर १८८८ के डेली पोस्ट (बैंग्लौर) समाचार पत्र के अनुसार गोसंरक्षण हेतु मुम्बई सोसाइटी ने लॉर्ड लैंस्डोन के मुम्बई आगमन के दिन प्रदर्शन किए तथा इन नारों से युक्त प्रदर्शित किए। 'गाय भारत का पशु धन है', 'गाय भारत के परिवार का अंग है', 'गाय नहीं तो भारत की खुशहाली नहीं', 'गाय भारत की धात्री है', 'ईश्वर गाय की रक्षा करे'... आदि।

इस आन्दोलन के सम्बन्ध में मद्रास के एक समाचार पत्र में एक लेखक ने लेख लिखकर लोगों का ध्यान धार्मिक रूप से पवित्र बैल के प्रश्न पर कानून की अस्पष्ट स्थिति की ओर आकर्षित किया तथा मुद्दा उठाया कि इस सम्बन्ध में दो न्यायिक अदालतों ने नाटकीय रूप से परस्पर विरोधी निर्णय सुनाए थे। उत्तर पश्चिमी सूबे के उच्च न्यायालय के निर्णय में इस प्राणी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा की अर्थ परिधि में समुचित रूप से नहीं माना गया जब कि पंजाब के मुख्य न्यायालय ने फैसला दिया कि सभी मामलों में जहाँ एक व्यक्ति वस्तु का स्वामी है उसे अपनी वस्तु के अपनी इच्छा से दूसरे व्यक्ति को अन्तरित किए बिना उसके स्वामित्व से वंचित नहीं किया जा सकता, अतः वस्तु पर उस का अधिकार समाप्त नहीं किया जा सकता।

१८८८ में सितम्बर और अक्टूबर में दरभंगा के महाराजा इस आन्दोलन में सक्रिय रूप से जुड़ गए। कहा गया कि उनके तत्त्वावधान में आरम्भ की गई स्थानीय गोसंरक्षण समिति बदले की भावना से प्रेरित होकर बनाई गई थी क्योंकि मुसलमानों ने एक समूह के रूप में १८८६ की राष्ट्रीय कांग्रेस में भाग लेने के लिए मना कर दिया था। इस आम धारणा का कारण था उत्तर पश्चिमी उच्च न्यायालय के जस्टिस महमूद द्वारा सुनाया गया वह फैसला जिस में ब्राह्मणी बैल भारतीय दण्ड संहिता की अर्थ परिधि में संपत्ति के रूप में समाहित नहीं किया जा सकता। सितम्बर १८८८ में बकरईद के अवसर पर धुबड़ी में गोहत्या दंगा हुआ जिसमें हिन्दुओं ने आक्रमण किया था। बंकीपुर से एक मुसलमान मजिस्ट्रेट ने कोलकता के एक दैनिक समाचार पत्र को आन्दोलन के खतरनाक मोड़ लेने की ओर संकेत करते हुए सरकार की सूचना के लिए लिखा कि मुसलमानों के फिराजी वहाबी एवं अन्य वर्ग इस मामले से अत्यन्त गम्भीरता से आहत हुए हैं परन्तु उनकी न्याय में आस्था है तथा सरकार की नीति की निष्पक्षता में विश्वास है।

नवम्बर १८८८ में प्राप्त रिपोर्ट के अनुसार बनारस के महाराजा ने सरकार की चापलूसी करने के उद्देश्य से स्थानीय पशु गृह के अनुरक्षण हेतु अंशदान देना बन्द कर दिया था।

वर्ष समाप्त होते होते श्री गारनेट कैम्प नामक युरेशियन व्यक्ति ने गाय के प्रश्न से सम्बन्धित एक विचित्र पुस्तिका का परिचालन कई देशी रियासतों में किया। लेखक ने बलपूर्वक कहा कि पशु हत्या के लिए सरकारी कर्मचारियों द्वारा दबाव डाला गया है। और भी कई झूठे निवेदन उसमें किये गये थे। इस समयावधि में मध्य प्रान्त में अन्य किसी भी स्थान की अपेक्षा आन्दोलन अधिक सक्रिय हो गया। हौशंगाबाद जिले में

हिन्दुओं द्वारा मुसलमानों को गोहत्या बन्द करने के लिए बाध्य करने के प्रयास हुए। इस आन्दोलन के वराड तक व्याप्त होने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। पुलिस महा निरीक्षक की रिपोर्ट के अनुसार इसके कारण हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना व्याप्त हो गई। मुस्लिमों ने शिकायत की कि यह आन्दोलन कुछ हद तक उनके विरोध में हो रहा था। लाहौर के एक हिन्दू स्थानीय समाचार पत्र ने इस समय टिप्पणी की कि गाय के प्रश्न पर हिन्दू रूसियों के पक्ष में हो जाएंगे और यदि रुसी विजेता हुए तो वे गोहत्या बन्द करा देंगे।

१८८९ के प्रारम्भिक समय में बंगाल में श्रीमन स्वामी की गतिविधियों के परिणाम स्वरूप इस आन्दोलन में पुनः तेजी आती हुई बताई गई क्योंकि श्रीमन स्वामी जिलों में दौरे करके भाषण दे रहे थे। नवम्बर १८८८ में श्रीमन स्वामी नेपाल गए। दिसम्बर में कोलकता लौटने पर उन्होंने बताया कि नेपाल के एक दरबार ने उन्हें आन्दोलन के लिए १०,००० रू. का अंशदान दिया तथा आगे भी देने का वायदा किया था। तथापि नेपाल के रेजीडेन्ट ने सूचना दी कि श्रीमन स्वामी को न तो महाराजा की ओर से कोई धनराशि दी गई और न किसी सरदार ने ही उन्हें कोई धन राशि दी। उन्होंने ब्रिटिश सरकार को उखाड़ फैंकने के लिए ३ लाख रू. की माँग की। उनकी इस प्रार्थना के कारण उन्हें काठमाण्डू स्थित निवास में अस्थायी परिरोध में रखा गया था। मार्च १८८९ में जयपुर के महाराजा की गया की धार्मिक यात्रा के समय गया गोसंरक्षण सोसाइटी की सदस्यता ग्रहण करने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। फरीदकोट के राजा भी कथित रूप से इस आन्दोलन में जुड़ गए थे। अप्रैल में उत्तर पश्चिमी सूबों तथा राजपूताना में आर्य समाज अत्यन्त सक्रिय हो गया था। गोसंरक्षण सोसाइटी की एक शाखा निजाम के अधिकार क्षेत्र नांदेड के अपचलनगर में स्थापित हुई थी जहां सिखों की धर्मस्थली है एवं जहाँ पाँच मुख्य मंदिरों में से एक है।

मई में अवध के तालुकदार तथा सुप्रसिद्ध कांग्रेसी राजा रामपाल सिंह का नाम प्रथम बार आन्दोलन के साथ जुडा। दरभंगा के महाराजा इस आन्दोलन में सक्रिय रूप से मदद कर रहे थे। राजपूताना से प्राप्त एक रिपोर्ट में बताया गया कि स्थानीय मुखिया मुख्य रूप से आर्यसमाज के एजैन्ट थे। परन्तु यह बात स्पष्ट रूप से गलत थी। हरोइटी एवं टोंक के राजनीतिक एजैन्ट ने टिप्पणी की कि धनाढ्य जैन समुदाय सदैव ऐसे आन्दोलनों का समर्थन करता रहा है। प्रसंगवश उसने उल्लेख किया कि बनारस के महाराजा एवं राजा शिव प्रसाद आन्दोलन के मुख्य संरक्षक थे।

जुलाई में श्रीमन स्वामी द्वारा मुम्बई एवं मद्रास प्रेसीडेन्सी में आन्दोलन के प्रति

सहानुभूति प्राप्त करने एवं इसके सहायतार्थ धन एकत्रित करने हेतु की गई यात्राओं की रिपोर्ट प्राप्त हुई। मुम्बई में माननीय के टी. तेलंग ने आन्दोलन के पक्ष में सहानुभूति प्रदर्शित करने हेतु एक प्रस्ताव रखा जिसे मुम्बई के शासनाधिकारी ने अपना समर्थन दिया। मद्रास में श्रीमन स्वामी की एक बैठक में एक बैरिस्टर श्री अर्डले नॉर्टन ने टिप्पणी की कि 'इस आन्दोलन का राष्ट्रीय दृष्टि से अत्यन्त महत्त्व था अतः इसे कांग्रेस के कार्यक्रम में समाहित किया जाना चाहिए। अन्य बैठक में श्री नॉर्टन ने घोषित किया कि आन्दोलन में राजनीति का पुट आ गया और यदि आया न हो तो आना चाहिए। श्रीमन स्वामी के भाषणों में व्यंग्य का पुट आ गया था तथा अंग्रेजों का उपहास किया जा रहा था और हिन्दू श्रोताओं द्वारा करतल ध्वनि से उसका स्वागत किया जाता था। अक्टूबर के मध्य तक वे मद्रास तथा उसके पड़ोसी राज्यों में यात्राएं करते रहे एवं भाषण देते रहे। जब उनकी पहचान एक पूर्व अभियुक्त देसिकाचारी के रूप में होने लगी, जिसे १८६९ में मिथ्या शपथ एवं झूठे आरोप लगाने के लिए ६ वर्ष के सश्रम कारावास की सजा दी गई थी, तब वे तुरन्त इलाहाबाद चले गए। पायोनीयर समाचार पत्र के २३ दिसम्बर १८८९ के अंक में श्रीमन स्वामी की कलई खोल दी गई थी परन्तु अभियुक्त देसिकाचारी के रूप में अपनी पहचान को स्वीकार न करने के समाचार छापने के लिए निवेदन करने के स्थान पर पायोनीयर पर मानहानि का मुकद्दमा दायर करने की धमकी दी गई। तो भी उन्होंने अपने चरित्र को निष्कलंक सिद्ध करने के लिए अब तक कोई कदम नहीं उठाया है।'

अक्टूबर १८८९ में उत्तर पश्चिमी सूबों एवं अवध के सरकार के मुख्य सचिव ने पिछली ईद के त्यौहार के दौरान घटित घटनाओं के कारण शान्तिभंग होने का हवाला देते हुए सार्थकरूप से टिप्पणी की थी कि गोहत्या विरोधी आन्दोलन निस्सन्देह रूप से अत्यन्त व्यापक एवं गहन रूप से परिव्याप्त हो रहा है तथा सर ए. कॉल्विन ने आशंका व्यक्त की थी कि समय बीतने के साथ इससे और अधिक समस्याएँ पैदा होंगी क्योंकि यह अधिक अशिक्षित एवं उत्तेजनशील वर्गों में फैल रहा था।

मुहर्रम के समय रोहतक में हिन्दुओं द्वारा मुस्लिमों ,पर आक्रमण करने के परिणामस्वरूप अशान्ति फैल गई तथा दंगाइयों को तितर-बितर करने के लिए पुलिस को छर्रेवाली गोलियाँ चलानी पडीं। नवम्बर १८८४ में बंगाल में सोनपुर पेठ (पशुमेला) में गोसंरक्षण सोसाइटी के एक कार्यकर्ता के भाषण करने से अशान्ति फैल गई क्योंकि कुछ मुसलमान किसान कृषि हेतु बैल खरीदना चाहते थे परन्तु दीनापुर के सेना रसद विभाग के लिए वे बैल हत्या हेतु खरीद लिए गए। सेना रसद विभाग का

एक अधिकारी परिवहन एवं तोपखाने की रसद के लिए कोई भी पशु खरीद नहीं सका था। दिसम्बर १८८९ में कूकाओं ने यह कहना आरम्भ कर दिया था कि महाराजा दलीप सिंह शीघ्र ही खालसा राज की पुनः स्थापना करेंगे और गोहत्या बन्द करा देंगे।

पंजाब में १८८९ के वर्ष में यद्यपि कोई भी सक्रिय आन्दोलन नहीं हुआ तो भी एक देशी भाषा के समाचार पत्रों में पशु हत्या के समाचार न छपे हों ऐसा भी सप्ताह कदाचित ही बीता होगा। प्रकाशित लेखों का लहजा स्पष्ट रूप से सामाजिक एवं धार्मिक विद्वेषयुक्त था। मध्य सूबे आन्दोलन के अत्यधिक सक्रिय केन्द्र थे। राजपूताना में भी आन्दोलन को पूर्ण रूप से समर्थन मिला था। अजमेर आर्यसमाज के एक एजैन्ट को देशी सरदारों के यहाँ कार्य हेतु प्रतिनियुक्त किया गया था। जोधपुर के महाराजा से ५००० रूपयों का अंशदान प्राप्त करने की भी रिपोर्ट मिली। आर्यसमाज का धर्मप्रचार कार्य उत्तर पश्चिमी सूबों में भी सक्रिय रूप से चल रहा था।

१८९० में कोटा के एक राजनीतिक एजैन्ट द्वारा भेजी गई रिपोर्ट से पता चला कि लोगों को कुछ रहस्यमय पट्टियों का वितरण इस निषेधाज्ञा के साथ किया गया कि किसी भी व्यक्ति को अपनी मवेशी न बेचें। सैन्य विद्रोह से पूर्व भी इसी प्रकार की पट्टियाँ इसी तरह के प्रचण्ड उद्देश्य के लिए वितरित की गई थीं। यद्यपि यह पता नहीं चला कि पट्टियाँ भेजने के मकसद को सही रूप में समझा भी गया था या नहीं।

इन्दौर शहर में उत्तेजना फैलने के सम्बन्ध में मध्य भारत के गवर्नर जनरल के एजेंट ने जनवरी १८९० में रिपोर्ट भेजी कि ग्यारह पंच नामक इन्दौर की एक संस्था अग्रवाल, ओसवाल, माहेश्वरी एवं सराओगी गौत्र मिलकर बनी है। ये पंच साहूकार एवं व्यापारी लोग हैं तथा इन्दौर शहर में व्यापार करते हैं। इन्होंने स्वामीहीन एवं अशक्त गायों के लिए एक बाड़ा खोला है तथा पेठों से मुसलमानों को गाएँ खरीदने से रोकने के लिए एक संगठन बनाया है। इसके कुछ समय पूर्व, सेरोंज के मुसलमानी जिले से कसाइयों द्वारा सेना रसद विभाग के लिए खरीदी गई मवेशी इन्दौर में छुड़ाकर हाँककर ले जाने की शिकायत मऊ छावनी प्राधिकारियों द्वारा की गई।

मार्च एवं अप्रैल में, आर्यसमाजी लोग सिन्ध, पंजाब एवं राजपूताना में सक्रिय रूप से कार्यरत बताए गए। उनमें से एक स्वामी अलाराम जो एक सक्रिय कांग्रेसी आदोलनकारी भी थे, ने लाहौर में गर्व दर्शाते हुए कहा कि हिन्दुस्तान में ३६० गोशालाएँ स्थापित करने के पीछे उनकी प्रेरणा रही थी। मध्य प्रान्तों के आन्दोलनों पर प्राप्त एक रिपोर्ट में बताया गया था कि वहाँ ४४ सोसाइटियाँ कार्यरत थीं, और उनके समर्थकों ने कानून के दायरे में रहकर शान्तिपूर्ण ढंग से आन्दोलन चलाया था।

सक्रिय प्रचारकों में मराठा ब्राह्मण वकीलों के समूह एवं मारवाड़ी लोग थे ऐसा कहा जाता था। वर्धमान गोसंरक्षण सोसाइटी के एक धर्म प्रचारक ने बुन्देलखण्ड के छोटे राज्यों में यात्राएँ की थीं परन्तु उन्हें कोई खास सफलता प्राप्त नहीं हुई थी। आर्यसमाज के दो प्रचारकों ने इन्दौर, देवास एवं अन्य स्थानों की यात्राएँ की थीं परन्तु वे गोसंरक्षण आन्दोलन के सम्बन्ध में लोगों में अधिक रुचि जागृत करने में असफल रहे थे।

अप्रैल में, बंगाल के नदिया जिले में कुश्तिया के मुसलमानों और हिन्दुओं के बीच गोहत्या को लेकर संघर्ष की स्थिति पैदा हो गई थी। एक अन्य दंगा १७ अप्रैल को शाहाबाद जिले के बरहामपुर पशु मेले में उस समय भड़का जब कुछ कसाइयों के द्वारा खरीदी गई मवेशी को बनारस आर्यसमाज के गोपालानन्द स्वामी के द्वारा बहकाए जाने पर एक बड़ी संख्या में हिन्दू उनसे छीनकर ले गए। जून में वराड के एक वकील श्री जोशी, जिन्हें विगत वर्ष राष्ट्रीय कांग्रेस की ओर से भाषण देने के लिए इंग्लैंड भेजा गया था, वे जब मुम्बई वापस आये तब उन्होंने सुझाव दिया कि कांग्रेस को गोसंरक्षण आन्दोलन को सुस्पष्ट रूप से इस समझ के साथ समर्थन देना चाहिए कि अंशदान के रूप में एकत्रित राशि में से आधी रकम कांग्रेस समिति को सौंप दी जाएगी। ऐसी रिपोर्ट प्राप्त हुई कि इसके तुरन्त बाद अलाराम ने कांग्रेस से पशु हत्या रोकने एवं आयकर उन्मूलन के उपायों के बहाने विद्यायी परिषद के सुधार के लिए संसद में एक याचिका प्रस्तुत करने का अनुरोध किया। बंगाल से प्राप्त रिपोर्टों में इस प्रकार का उल्लेख किया गया था कि कोलकता पाँजरापोल सोसाइटी पशु हत्या के विरोध में संसद में प्रस्तुत किए जाने हेतु एक स्मरण पत्र तैयार करे। मध्य भारत की एक एजेंसी ने रिपोर्ट दी कि नीमच की गोसंरक्षण सोसाइटी में ग्वालियर क्षेत्र के पड़ौसी गाँवों के ठाकुरों को प्रेरित करके शामिल करने के प्रयास किए गए परन्तु ग्वालियर प्राधिकारियों द्वारा आन्दोलन की इस वृद्धि को बढ़ने नहीं दिया गया।

अगस्त १८९० में बेलगाम के हिन्दुओं ने मुहर्रम के अवसर पर मुसलमानों का बहिष्कार किया तथा दोनों समुदायों के बीच विद्वेष की भावना अत्यधिक बढ़ गई। बंगाल में राजसहाय जिले से हिन्दू मुस्लिमों के बीच मनोमालिन्य बढ़ा तथा दरभंगा में ईद के अवसर पर अशान्ति फैल गई जिस में आक्रमणकारी हिन्दू थे। पटना एवं दीनापुर में भी दुर्भावना सुस्पष्ट रूप से व्याप्त हो गई। उत्तर पश्चिमी सूबों में ईद के अवसर पर किसी प्रकार की अशान्ति नहीं फैली परन्तु अलीगढ़ के हिन्दुओं ने मुसलमानों द्वारा गोवलि देने पर उनका बहिष्कार किया। इस मुद्दे का प्रमुख प्रवर्तक

बद्री प्रसाद नामक एक वकील था। इलाहाबाद में भी थोड़ी बहुत उत्तेजना व्याप्त हुई परन्तु इसे पूर्ण रूप से दबा दिया गया। पंजाब में ईद शान्ति से बीता परन्तु अम्बाला जिले के जगाधरी के हिन्दुओं ने मुसलमानों द्वारा गोबलि चढाए जाने पर उनका बहिष्कार किया। उस समय प्रवर्तित पशुहत्या नियमन कानूनों को पंजाब सरकार द्वारा हाल ही में प्रवर्तित करने के सन्दर्भ को मुसलमानों द्वारा उन्हें दिए गए धार्मिक अधिकारों में हस्तक्षेप मानने के कारण अमृतसर से कुछ संघर्ष की स्थिति पैदा होने की अवश्य रिपोर्ट प्राप्त हुई थी। गुरदासपुर जिले से भी इसी प्रकार की संघर्ष की स्थिति पैदा हुई थी परन्तु वहाँ के मजिस्ट्रेट द्वारा इस मामले को पूर्ण रूप से ठीक करार देकर स्थिति को काबू में कर दिया गया था।

अलीगढ़ एवं जगाधरी में इन महीनों में दुर्भावना बहुत कम फैली। रिपोर्ट प्राप्त हुई कि इसके बाद अलीगढ़ के हिन्दुओं ने उत्तर पश्चिमी सूबों एवं पंजाब के पड़ोसी जिलों में इन मामलों को तूल दिया और वहाँ मुसलमानों का बहिष्कार कराया। इसी समय कोलकता के कुछ हिन्दू अखबारों ने यह भी आरोप लगाया कि सरकारी अधिकारी हिन्दूधर्म का अपमान करने के लिए मुसलमानों को भड़का रहे थे और इस प्रकार दोनों समुदायों में झगड़े के बीज बो रहे थे ताकि वे भविष्य में एकजूट होकर राजनीतिक दृष्टि से मजबूत न बन जाएँ।

सितम्बर में मुम्बई एवं मध्य भारत से प्राप्त रिपोर्टों में बताया गया था कि स्थानीय गोसंरक्षण सोसाइटियों ने बेलगाम जिले में तथा जबलपुर और मऊ में सेना रसद विभाग के ठेकेदारों की मुसीबतें बढ़ा दी थीं। देवास की अवर शाखा के अध्यक्ष ने मऊ के सेना रसद विभाग को मवेशी भेजने पर रोक लगा देने की अपनी सहमति दे दी थी। परन्तु वहाँ के एजेन्ट द्वारा गवर्नर जनरल को शिकायत दी गई थी कि इसकी अनुमति नहीं दी जानी थी। इस समय तक आन्दोलन का प्रसार रीवा राज्य तक हो चुका था तथा एक मुख्तार की अध्यक्षता में रीवा राज्य के ३६ ठाकुरों ने मिलकर एक सोसाइटी गठित की थी। इसके पश्चात् रीवा की महारानी, सोहावल के राजा (बुन्देलखण्ड एजेन्सी) तथा कई अन्य द्वारा हस्ताक्षरित एक याचिका सतना के बूचड़खाने को बन्द कराने के लिए परिचालित की गई थी। रीवा की राजद्रोही चन्देली महारानी के मातहत इस सोसाइटी में अत्यन्त सक्रिय रूप से भाग लेने लगे थे। यूरोपीय पद्धति से तैयार की गई चीनी के उपयोग के विरोध में एक आन्दोलन, जो बंगाल में पुनर्जीवित हो चुका था, अब तक उत्तर पश्चिमी सूबों एवं पंजाब में भी अपने पैर पसार चुका था। १८८७ में हरिद्वार में आरम्भ की गई भारत धर्म महामण्डल

नामक धार्मिक सोसाइटी की बैठक में हिन्दू पुनर्जागरण एवं गोसंरक्षण को प्रोत्साहित करने से इस आन्दोलन में और अधिक उबाल आया। शीघ्र ही यह आन्दोलन अजमेर तक अपने पैर पसार चुका था। इसी अवधि में उत्तर पश्चिमी सूबों और अवध के कुछ प्रभावशाली मुसलमानों ने सर्वत्र अपने धर्म के अनुयायियों को पशु बलि देने को समर्थन न देने के लिए कहा। हिन्दू मुसलमानों के बीच व्याप्त चिरकालिक बैरभाव को दूर करने का यह एक प्रमुख कारण सिद्ध हुआ। इसे संयुक्त सूबों में भरपूर समर्थन प्राप्त हुआ परन्तु बंगाल में नहीं क्योंकि वहाँ पहले से व्याप्त इस प्रथा में किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप का पूर्ण रूप से विरोध किया गया।

अक्टूबर में गोहत्या के प्रश्न को लेकर हिन्दू और मुसलमान दोनों समुदायों में दुर्भावना फैलने लगी। उत्तर पश्चिमी सूबे के गोरखपुर जिले में बाँसगाँव में थोड़ी सी अशान्ति पैदा हुई। दरभंगा में दोनों समुदायों के बीच तनाव की स्थिति अक्टूबर तक बनी रही तथा अलीगढ़ में तनाव की स्थिति १८९० की समाप्ति तक रही। एक अन्य स्थान पर आन्दोलन के मुखिया पण्डित बद्री प्रसाद के विरोध में पैदा हुए तनाव को दूर करके पुनः सामंजस्य की स्थिति लाने के सभी प्रयास असफल सिद्ध हुए। वर्ष समाप्त होते होते कानपुर की आर्यसमाज की एक बैठक में सोसाइटी की अजमेर शाखा से आए एक प्रतिनिधि ने इस प्रकार से प्रचार किया कि कश्मीर के महाराजा ने इस आन्दोलन को यथेष्ट रूप में सहायता देना स्वीकार किया था। एक अर्धपागल साधु को अमृतसर के आसपास लोगों को यह कहते हुए सुना गया कि अंग्रेज गायों के साथ दुर्व्यवहार करते है अतः वह उन्हें मार देगा। ऐसी भी शंका व्यक्त की गई कि कुख्यात देशद्रोही एवं वकील बाबा नारायण सिंह द्वारा उसे प्रेरित किया गया था।

१८९० में पंजाब में पूर्ण रूप से शान्ति व्याप्त होने के बावजूद भी देखा गया कि कोई न कोई अत्यन्त क्षीण शक्ति सूबे के किसी न किसी भाग में भीषण कट्टर आन्दोलन का रूप ले लेती थी। पूरे वर्ष आन्दोलन का मुख्य केन्द्र देश के मध्य सूबे रहे तथा देश के विविध भागों में आर्यसमाजी और उनके एजेन्ट आन्दोलन को पूर्व की भाँति पुनः आगे बढ़ाने के लिए सक्रिय रहे। आर्य समाज के कई धर्म प्रचारकों ने मुम्बई से मद्रास तक की यात्राएँ उन्होंने हिन्दू समाजों के तत्त्वावधान में आयोजित बैठकों में भाग लिया तथा उनके अध्यक्षों से अनुरोध किया कि सरकार को भारत में बड़े पैमाने पर हो रही अन्धाधुन्ध हत्याओं पर रोक लगाने के लिए कानून पारित करना चाहिए।

१८९१ के आरम्भ में हिन्दुओं का ध्यान सामान्य सहमति बनाने की ओर बंट जाने के कारण आन्दोलन ठण्डा पड़ गया परन्तु उत्तर पश्चिमी सूबों एवं राजपूताना में

आर्यसमाजी लोग गोसंरक्षण आन्दोलन को आगे बढ़ाने में सक्रिय रहे। इस समय एक असाधारण घटना घटित हुई जिसमें लुधियाना में सेना की ३६वीं सिख बटालियन के सैनिकों ने स्थानीय बूचड़खाने की ओर ले जायी जा रही गायों को रोका। विदेशी नमक और चीनी के हड्डी के चूरे से शुद्ध किए जाने की अफवाह के परिणामस्वरूप नदिया के हिन्दुओं द्वारा इन वस्तुओं का त्याग कर देने के सम्बन्ध में भी रिपोर्ट प्राप्त हुई।

८ मई १८९१ को शाहाबाद जिले में बरहामपुर पशु मेले में पुनः एक दंगा भड़क गया। लाठीधारी हिन्दुओं की भीड़ ने दीनापुर के सेना रसद विभाग हेतु मवेशी ले जा रहे कसाइयों पर धावा बोल दिया। दंगाइयों को तितर बितर करने के लिए पुलिस को गोलियाँ चलानी पडीं। कुल मिलाकर १५० मवेशियों को मुक्त करके हाँककर ले जाया गया। जून में नागपुर सोसाइटी के सम्बन्ध में भेजी गई एक रिपोर्ट में मध्य सूबों की सरकार ने उल्लेख किया कि पूरे देश में कार्यरत गोरक्षा सभाओं द्वारा भविष्य में अशान्ति फैलाने के एक सम्भावित स्रोत के रूप में अपने प्रभाव क्षेत्र में कसाइयों को हत्या हेतु मवेशी प्राप्त करने से रोक दिया गया था। यह आन्दोलन मध्य सूबों में सामान्यतः मराठा राज्यों में जोर पकडते हुए देखा गया था।

१८ जुलाई १८९१ को गया में ईद के अवसर पर शहर के दुष्ट प्रकृति के लोगों के उकसावे से निचली जाति के मुसलमानों और हिन्दुओं के बीच एक दंगा भड़क गया। इसी मामले में जिला मजिस्ट्रेट ने बाद में रिपोर्ट दी कि, 'मुझे ज्ञात हुआ है कि गया वासी गोसंरक्षण समर्थकों ने, जिनके समर्थक पूरे भारत में है, दंगे के तुरन्त बाद गोहत्या के विषय में होहल्ला मचाने के लिए निर्देश जारी किए। राजपूताना राज्यों एवं बनारस में उनके समर्थकों की विपुल संख्या है अतः यहाँ गोविषयक मामले को राजनीतिक रंग दिया गया। सावधानी पूर्वक इसका समाधान करने की आवश्यकता हुई। इसी समय दिल्ली में भी उत्तेजना व्याप्त होने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। बनारस के कुछ प्रभावी पण्डितों द्वारा संगठित होकर पशु हत्या निषेध विषयक एक नया आन्दोलन व्याप्त होने की भी सूचना मिली। जोधपुर के महाराजा ने एक स्थानीय पशु शाला के लिए बड़ी मात्रा में अंशदान दिया। इस समय तक यूरोपीय पद्धति से साफ की गई चीनी का उपयोग करने के विरोध में व्याप्त आन्दोलन मध्य सूबों में फैल चुका था।

अगस्त में ऐसी शिकायतें प्राप्त हुई थीं कि कामटी के सेना रसद विभाग को सेनाओं के लिए गोमाँस उपलब्ध कराने में कठिनाई महसूस हो रही थी। तत्पश्चात् गया में दंगा भड़कने से यह आन्दोलन पुनरुज्जीवित हुआ। इस पूरी अवधि में श्रीमन

स्वामी द्वारा एकत्रित गोनिधि के उपयोग के सम्बन्ध में, व्यर्थ जाँच किए जाने के कारण वे पंजाब में रहे तथा वहाँ सम्मतिवय अधिनियम के विरोध में हो रहे आन्दोलन में जुड़ गए। इस अवधि में सरकार ने हिन्दुओं द्वारा किए गए गोहत्या विषयक निवेदनों पर कोई ध्यान नहीं दिया क्योंकि सैन्य विद्रोह की अवधि में हिन्दुओं ने ब्रिटिश लोगों, महिलाओं एवं बच्चों की हत्याएँ की थीं। १८९१ के दिसम्बर महीने में गोसंरक्षण आन्दोलन के कुछ दृष्टान्त मिले तथा राष्ट्रीय कांग्रेस की उस समय की बैठकों में इसकी चर्चा हुई।

१८९१ के दौरान ऐसा लगा कि सम्मतिवय अधिनियम के सम्बन्ध में यह आन्दोलन काफी हद तक निष्प्रभावी हुआ था अतः इसे आम समर्थन कम मिला था। पूरा वर्ष मध्य सूबे आन्दोलन के मुख्य केन्द्र रहे तथा उत्तर पश्चिमी सूबों में बनारस तथा अजमेर में आर्यसमाजियों ने इसे सक्रिय रूप में चलाए रखा।

१८९२ के आरम्भ में मध्य सूबे में कामटी के लोग भारत में पशु हत्या पर पूर्णत रोक लगाने के लिए राष्ट्रीय कांग्रेस से आशा करने लगे थे। नागपुर में दिसम्बर १८९१ में कांग्रेस के अधिवेशन की पूर्णाहुति के पश्चात् उसी पण्डाल में गोरक्षा समिति की बैठक आयोजित हुई जिस में कांग्रेस के कुछ प्रतिनिधियों एवं प्रतिभागियों समेत १००० से १५०० की संख्या में लोगों ने भागीदारी की। दो प्रख्यात कांग्रेसी प्रतिनिधियों ने भी इस सभा को संबोधित किया। आन्दोलन की ओर से अंशदान के रूप में निधि एकत्रित की गई। मार्च १८९२ में संथाल परगना एवं मध्य सूबों के गोड़ समुदाय के लोगों में एक गाँव से दूसरे गाँव में लोटों का रहस्यमय ढंग से परिचालन हुआ जो गोहत्या विरोधी आन्दोलन से सम्बन्धित दिखा। मध्य सूबे में खैरागढ़ के जागीरदार के इस आन्दोलन से जुड़ने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। कांग्रेस के समर्थक इस समय बनारस में इस आन्दोलन को अपना समर्थन दे रहे थे। मई में बंगाल में गया उत्तर पश्चिमी सूबे में जौनपुर तथा पंजाब में होशियारपुर में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच तनाव बढ़ने की रिपोर्ट मिली थी। मध्य सूबे के लोग गोरक्षा सभा की माँगों से इस समय तक उकता चुके थे। श्रीमन स्वामी इस आन्दोलन में पुनः आए तथा जून १८९२ के आरम्भ में उन्होंने लाहौर में हिन्दुओं की एक बैठक की अध्यक्षता की जिसमें हरिद्वार मेले में धर्मयात्रियों के छितराव के विरोध में आन्दोलन छेडने की आवाज उठाई।

जून में कानपुर में अग्रवाल एवं रक्श़ समाजों एवं कायस्थ एवं खत्री सभाओं ने पंजाव की देशी रियासत पटियाला में गोरक्षा सभा के सहायतार्थ मिलजुलकर अंशदान

एकत्रित किया। मऊ ले जा रही कुछ मवेशी को एक पुलिस अधिकारी ने इस आधार पर जब्त किया कि उन्हें उनका मालिक हत्या करने हेतु ले जा रहा था। पशु हत्या के कट्टर विरोधी इन्दौर के जैन लोग इससे अत्यन्त उत्तेजित हुए तथा कुछ वर्ष पूर्व घटित इसी प्रकार की समस्या की पुनरावृत्ति की आशंका से एक मन्त्री ने मवेशी को बेच दिया। गवर्नर जनरल के एजेन्ट ने दरबार को कहा कि उन्हें हर्जाना चुकाना होगा। अक्टूबर में सिख राज्य जिन्द में गोहत्या का एक मामला प्रकाश में आया तथा राज्य के कर्मचारियों द्वारा इसकी जाँच करते समय मुसलमानों के साथ अत्यन्त बर्बरतापूर्वक व्यवहार किया गया। सात अपराधियों को सजा देने से पूर्व बेरहमी से पीटा गया। उनमें से एक को सजा स्वरूप कोडों से पीटा गया था। तथापि इस मामले से सूबे में कोई भी उत्तेजना नहीं फैली। पंजाब सरकार ने इस मामले को भारत सरकार के पास भेज दिया। पर्याप्त विचार विमर्श करने के उपरान्त गवर्नर जनरल ने पंजाब सरकार को निर्देश दिया कि बिना किसी अनावश्यक प्रचार के जिन्द दरबार को सूचित कर दिया जाए कि उनके अधिकारियों द्वारा की गई जाँचों में लोगों को पीड़ित किए जाने एवं निर्दयता पूर्वक व्यवहार किए जाने के विषय में भारत सरकार को ज्ञात हो चुका है। इन अधिकारियों द्वारा किए गए व्यवहार की बात पुरानी हो चुकी है। अतः परिषद का मत है कि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच सद्भावना बनाने के लिए अभियुक्त के प्रति दोष सिद्ध करते समय दयापूर्वक व्यवहार किया जाए।

निम्नलिखित कुछ उदाहरण यहाँ इसके दृष्टान्त स्वरूप दिए जा रहे हैं कि देशी रियासतें गोहत्याओं के मामलों को किस प्रकार निपटाती थीं।

१८६३ में राजपूताना में मेहता अजीत सिंह ने अपने एक प्रजाजन को हाथी से कुचलवा कर अधमरा कर दिया था और उसके बाद उसे जिन्दा दफना दिया था। ब्रिटिश सरकार ने हस्तक्षेप किया तथा मेहता को बहारवटिया घोषित किया।

१८८८ में कश्मीर में एक या दो ब्रिटिश नागरिक समेत कुछ अभियुक्तों को आजीवन कारावास की सजा दी गई थी। लॉर्ड रिपन ने आदेश दिया था कि कश्मीर में यदि पशु हत्या के लिए आजीवन कारावास की सजा के दण्ड का पहले से प्रावधान रहा है तो ब्रिटिश सरकार को, दखल देने के लिए कहे जाने तक, हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है।

दिसम्बर १८८२ में दिल्ली में कश्मीर का एक मौलवी सरकार का इस ओर ध्यान दिलाना चाहता था कि विगत दो वर्षों में कश्मीर में पशु हत्या के अपराध में ८०० मुसलमानों को जेल की सजा सुनाई गई थी।

समग्रतया १८९२ के वर्ष को अत्पल्य संख्या में आन्दोलन होने वाले वर्ष के रूप में लिया जा सकता है। आन्दोलन के सामान्य रूप से निधि की कमी से प्रभावित होने की रिपोर्ट भी मिली।

जनवरी १८९३ में नागपुर सोसाइटी के वार्षिक प्रदर्शन में सुझाव दिया गया कि नागपुर और मुम्बई सोसाइटियों के संयुक्त स्मरण पत्र के माध्यम से सरकार को गोहत्या पर पाबन्दी लगाने के लिए अपने दृष्टिकोण से अवगत कराया जाए और यदि इस का कोई परिणाम नहीं निकले तो सभा को अपने मुख्य सदस्यों को इंग्लैण्ड में इस विषय पर आन्दोलन करने के लिए भेजा जाए। इस माह के पहले उत्तर पश्चिमी सूबे के आजमगढ़ जिले में एक दंगा भड़क गया था। हिन्दुओं की एक भीड़ने सेनारसद विभाग के ठेकेदार को एक आम मार्ग से पशुओं की आपूर्ति देने के लिए ले जा रहे मुसलमान पर धावा बोला तथा मवेशी को भगाकर ले गए। पुलिस द्वारा गिरफ्तार किए गए लोगों को बाद में बलपूर्वक मुक्त करा लिया गया और पुलिस के साथ भी बदसलूकी की गई।

फरवरी, १८९३ में श्रीमन स्वामी की गतिविधियों को छोड इस दिशा में अधिक कुछ नहीं हुआ। श्रीमन स्वामी ने इलाहाबाद में भारतीय कांग्रेस के परवर्ती अधिवेशन में भाग लिया था तथा बंगाल में भाषण देने हेतु यात्राएँ करनी आरम्भ की थीं। उत्तर पश्चिमी प्रान्त के गोसंरक्षण आन्दोलन के एक घटक ने टिप्पणी की कि, 'यद्यपि उनके हिन्दू मुखिया अपने अपने राज्यों में पशुहत्या नहीं करने देंगे अतः उन्हें गोसंरक्षण आन्दोलन में अब अपने प्रदेश के बाहर पशुओं को न ले जाने देना, गोरक्षा सभाओं को अनुदान देना, तथा गोहत्या को बन्द कराने के लिए महामाहिम महारानी साम्राज्ञी से अपील करना आदि शेष रहा था।'

मार्च में उत्तर पश्चिमी सूबे में बलिया जिले में यह आन्दोलन अधिक सक्रिय रूप से चलता हुआ रिपोर्ट किया गया। आन्दोलन के एक घटक ने इस समय ब्रिटिश शासन के विरोध में अत्यधिक कटु निन्दा करते हुए शिकायत की कि उत्तर पश्चिमी प्रान्तों के उपराज्यपाल ने आजमगढ़ जिले में मऊ के मुसलमानों को पशु हत्या करने की अनुमति दे दी, जबकि मुसलमानों के शासन के दौरान इस प्रकार की अनुमति नहीं दी गई थी। बंगाल के गया जिले के एक भूस्वामी को उसके जिले से गुजरने वाली यूरोपीय सेना के लिए गोमाँस की आपूर्ति करने का अनुरोध किया गया था।

अप्रैल में कुछ महीनों तक शान्ति रहने के पश्चात् मुम्बई प्रेसीडेन्सी, उत्तर पश्चिमी प्रान्तों तथा मध्य प्रांतों में गतिविधियाँ पुनः आरम्भ हो गई। मुम्बई सोसाइटी

ने अप्रैल में अपना अधिवेशन आयोजित किया तथा इसमें एक प्रस्ताव पारित किया कि सरकार को स्मरण पत्र दिया जाए कि यह संरक्षित वनों से पशुओं के चरने हेतु चारागाह की जमीन में विस्तार करें तथा गायों की बड़े पैमाने पर हो रही अन्धाधुन्ध हत्या पर रोक लगाए। उत्तर पश्चिमी प्रान्तों के उपराज्यपाल ने गोपनीय रूप से लिखा कि गोहत्या के विरोध में यह आन्दोलन स्पष्ट रूप से पूर्वी जिलों में जोर पकडता जा रहा था। वहाँ पहले भी कुछ विद्रोह हुए थे। इनमें से एक विशेष रूप से गोरखपुर में हुआ था जहाँ बड़ी संख्या में हिन्दुओं ने पशु मेले में मुसलमान कसाइयों पर धावा बोल दिया था तथा उनसे ३०० पशु वे छीनकर ले गए थे। श्रीमन स्वामी के बंगाल के दौरे से भी पशुहत्या के सम्बन्ध में गया और पटना जिलों में अफरातफरी की स्थिति पैदा होने से भीषण दंगे हो गए थे। मध्य सूबों में गाँवों में पंचायत प्रणाली को इस मकसद से लाने के प्रयास किए जा रहे थे ताकि कसाइयों को मवेशी बेचनेवाले हिन्दुओं को दण्डित किया जा सके।

मई में रिपोर्ट प्राप्त हुई कि बंगाल में गया जिले में पशु हत्या आन्दोलन के कारण कदाचित ही कोई दिन दंगा होने की या शान्ति भंग होने की धमकी के बिना गुजरता हो। बंगाल सरकार को इन अशान्त क्षेत्रों में दण्डात्मक पुलिस तैनात कर देने की आवश्यकता निर्माण हुई थी। उत्तर पश्चिमी सूबों में इस आन्दोलन के आजमगढ़, बलिया एवं गोरखपुर जिलों में अत्यधिक रूप से फैलने की रिपोर्ट मिली। मध्य सूबों में यह आन्दोलन पहले की ही भांति सक्रिय था। नागपुर की मुख्य सभा मुम्बई की अपनी भगिनी सभा से अत्यधिक समर्थन एवं ऊर्जा प्राप्त कर रही थी।

बंगाल में विशेष बन्दोबस्त करने के कारण बकरईद का त्योहार शान्तिपूर्ण ढंग से बीता। लेकिन २६ जून को उत्तर पश्चिमी सूबे में आजमगढ़ में भीषण दंगे हुए। बलिया, गाजीपुर एवं गोरखपुर जिलों से बड़ी संख्या में हिन्दू एकत्रित हुए तथा ईद के त्योहार पर गायों के बलिदान को रोकने के लिए उन्होंने मसुलमानों पर आक्रमण किया। सर्वाधिक भीषण दंगे मऊ में हुए जहाँ विपुल संख्या में पुलिस बन्दोवस्त होते हुए भी दंगाइयों ने कई मुसलमानों की हत्या की। इन सभी मामलों में आक्रमणकारी हिन्दू थे। बलिया जिले में भी थोड़ी सी अशान्ति फैली। बरेली में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अत्यधिक दुर्भावना बढ़ी परन्तु वहाँ ईद शान्तिपूर्वक बीती। उनके मुख्यालयों में सेना की तैनाती से अशान्तिग्रस्त जिलों में निस्सन्देह रूप से शान्ति वनी रही लेकिन दोनों समुदायों के बीच फैली दुर्भावना में तीक्ष्णता आई। इसी वीच हुए दंगों में दोषी लोगों पर मुकद्दमे चलाए जाने पर बाद में भी तनाव की स्थिति में वृद्धि हुई।

बंगाल के आन्दोलन को बेतिया, दरभंगा एवं हटवा के राजाओं तथा उत्तर पश्चिमी सूबे में बनारस के महाराजा का गुप्त समर्थन प्राप्त होने की रिपोर्ट की गई। सूबों एवं बराड में आन्दोलन के नेता ऐसे मराठा ब्राह्मण वकील थे जिन्हें कांग्रेस का प्रमुख रूप से समर्थन प्राप्त था। पश्चिमी भारत में सोसाइटी अपने आन्दोलन को शान्तिपूर्ण ढंग से चला रही थी। साथ ही शक्तिशाली भी वह उतनी ही थी जितनी हाल ही में दिखाई दी। द मुम्बई सोसाइटी के एक प्रतिनिधि ने बड़ौदा राज्य के मन्त्री को कुछ अर्ध जंगली पशुओं को समाप्त करने के लिए जारी किए गए आदेश को निरस्त करने के लिये बाध्य कर दिया। ये अर्ध जंगली पशु जिले की फसलों को नुकसान पहुँचाते थे। मुम्बई प्रेसीडेन्सी में सेना के लिए हत्या करने के लिए मवेशी की खरीद में हिन्दुओं के हस्तक्षेप की शिकायतें बार बार सेना रसद विभाग द्वारा की जाती रहीं।

गोरक्षिणी सभा संगठन

इस टिप्पणी के पूर्ववर्ती भाग में उल्लिखित किया है कि आर्य समाजियों द्वारा मूल रूप से गोसंरक्षण के लिए चलाए गए आन्दोलन के साथ बाद में धीरे धीरे पूरे देश की धर्म सभाएँ या सनातन हिन्दू धार्मिक सोसाइटियाँ तथा अन्य हिन्दू संगठन जुड़ने लगे। इनके नेता अधिकांश रूप से ब्राह्मण सरकारी कर्मचारी, स्कूल शिक्षक, या वकील तथा तथाकथित राष्ट्रभक्त सोसाइटियों के सदस्य थे। परन्तु इस आन्दोलन के मुख्य समर्थक एवं पोषक वे बड़े हिन्दू व्यापारी एवं साहूकार लोग थे जो कट्टर हिन्दू थे। इनमें कई अत्यन्त प्रभावी हिन्दू राजा महाराजा थे। इन कुलीन लोगों का सभा को सहयोग, निष्ठा एवं समर्थन प्राप्त था। सभा के नीति नियम मुख्य रूप से पशुओं को ऐसे हाथों में पड़ने से किसी भी हालत में रोकने के लिए बनाए गए थे जो या तो उन्हें बलि चढ़ाते थे या भोजन के लिए उनकी हत्या करते थे। इन नियमों को लागू करने के लिए जातिगत दण्ड व्यवस्था के प्रावधान किए गए थे। उत्तर पश्चिमी सूबे के एक जिला मजिस्ट्रेट ने आन्दोलन के सम्बन्ध में ठीक ही लिखा था कि समग्र हिन्दू जनता जातिगत कठोर नियमों द्वारा आबद्ध है और जब एक बार किसी भी स्थान पर संघ बना लिया जाता है तो इसकी पकड़ इतनी मजबूत होती है कि प्रत्येक पुरुष, महिला एवं बच्चे को खुलेआम या गुप्त रूप से इसकी निधि में अंशदान करना होता है अन्यथा उसे हिन्दू के रूप में बने रहने का अधिकार नहीं होगा।

गोरक्षिणी सभाओं द्वारा निधि में वृद्धि करने हेतु प्रवर्तित कुछ सिद्धान्त निम्नानुसार थे।

परिवार के कुल सदस्यों द्वारा प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति प्रतिभोजन एक चुटकी अन्न या एक पैसा अलग निकालकर रख दिया जाता था। इस चुटकी अन्न को एकत्रित करके बने ढेर को प्रत्येक गाँव से इकट्ठा करने तथा उसकी रखवाली करने हेतु सभा द्वारा एक या अधिक अधिकारी की नियुक्ति की जाती थी। जब पर्याप्त मात्रा में अनाज इकट्ठा हो जाता था तो उसे बेचकर प्राप्त धन को सभा में जमा कर दिया जाता था। कुछ स्थानों पर सेठ-साहूकार-बनिए-व्यापारी तथा अन्य लोग अपने लेखा के आकलन की २० प्रतिशत राशि कर के रूप में सभा को अंशदान के रूप में देते है। आयकर देने वाले सरकारी कर्मचारी अपनी आय की प्रति रूपया एक पाई के हिसाब से राशि स्वैच्छिक रूप से इस निधि में देते थे। सेठ-साहूकारों और व्याज पर रुपए उधार देनेवालों को उनकी सुविधा एवं सहूलियत के अनुसार अंशदान देने हेतु आमन्त्रित किया जाता हैं। साहूकारों, व्यापारियों, शराब के ठेकों एवं सार्वजनिक स्थानों पर, दान की पेटियाँ रख दी जाती हैं जहाँ लोग अपना अंशदान इनमें डाल सकें। वकील लोग भी अपने मालदार मुवक्किलों से अंशदान दिलवाते हैं।

कुछ कस्बों में निर्धारित शुल्क लिया जाता है तथा इस निधि के लिए सभी लेन देन पर भी शुल्क लिया जाता है। अन्य मामलों में अनाज, कपास, तेल, लाख, कपड़ा आदि की बिक्री पर नियत दर पर शुल्क लगाया जाता है। और अन्य मामलों में कस्बे से बाहर ले जाने वाले कपड़े तथा कस्बे में आने वाली अनाज से भरी प्रत्येक बैलगाड़ी पर शुल्क लगाया जाता है। ग्रामीण जिलों में, बेचे गए अनाज के एक निश्चित अनुपात का अनाज इस निधि हेतु एक ओर रख दिया जाता है तथा प्रत्येक किसान से उसकी जोत के हिसाब से शुल्क लिया जाता है। विवाह, गोद लेने आदि के अवसरों, मनोरंजनों तथा त्यौहारों पर मनाए जाने वाले उत्सवों, मेलों, ठेलों आदि से भी निधि हेतु अंशदान प्राप्त किया जाता है। गोसंरक्षण समितियाँ आन्दोलन के प्रचार प्रसारार्थ तथा अंशदान एकत्रित करने हेतु ऐसे वेतनभोगी लोगों को भी रखती है जो यात्रा करके भाषण दे सकें तथा अंशदान एकत्रित करके ला सकें। इनमें से एक नागपुर सोसाइटी ने व्याख्याताओं के रूप में चयनित उम्मीदवारों को निर्देश देने के लिए कक्षाओं का आयोजन किया था। ये लोग हिन्दू राष्ट्र के अतीत गौरव को अपने व्याख्यानों में विस्तारपूर्वक महिमामण्डित करते हैं और सिद्ध करके बताते हैं कि उस समय किसी भी तरह की पशुहत्या की अनुमति नहीं थी। वे पुस्तिकाओं, चौपन्नों और गाय के चित्रों का वितरण करते हैं, गाय के शरीर के प्रत्येक अंग में विविध देवी-देवताओं के निवास की बात करते हैं तथा हिन्दुओं से गाय के संरक्षण की अपील

करते हैं। कुछ कार्टूनों में कसाई द्वारा गाय की हत्या होते हुए दिखाया जाता है तथा उसके आस पास विभिन्न जातियों के हिन्दू गाय को बचाने के लिए चिल्लाते हुए दिखाए जाते हैं। कुछ में गाय को किसी जलधारा के किनारे संगीत की ध्वनि में शान्त भाव से पानी पीते हुए पूर्व स्थिति में दिखाया जाता है तो दूसरी ओर उसे कसाई के हाथों मारी जाती हुई स्थिति में दिखाया जाता है। अन्यों में गाय की भूतकाल में पूजा होती हुई दिखाई जाती है तथा इस समय कसाई के छुरे के नीचे उसे दिखाया जाता है। इन गायों के चित्रों में से एक चित्र का वर्णन विस्तार में इस प्रकार हैः एक गाय के आंचल से दूध पीता एक बछड़ा है तथा एक महिला उसके पास कटोरा लेकर बैठी हुई अपनी बारी आने की प्रतीक्षा कर रही है। उस पर लिखा हुआ है गाय के पीछे उसकी पूँछ के ऊपर भगवान श्रीकृष्ण का वास है जहाँ लिखा हुआ है। धर्मराज 'गाय के समक्ष एक व्यक्ति हाथ में नंगी तलवार उसके सिर के ऊपर उठाये हुए खड़ा है' उस पर लिखा हुआ है 'कलियुग' (बुराइयों का युग जैसे वर्तमान समय)। कोई भी हिन्दू इसका अर्थ इस प्रकार समझाएगाः 'किसी भी हिन्दू ने गाय के बच्चे को पहले भरपेट दूध पी लेने देना चाहिए। पश्चात् बचे हुए दूध को ही दुहना चाहिए। धर्मराज के राज सतयुग में कोई भी हिन्दू गाय की हत्या नहीं करता था। परन्तु कलियुग गायों की हत्या करने तथा पशु विध्वंस करने में प्रवृत्त है। कोई भी व्यक्ति गाय का दूध उसी तरह पीता है, जैसे कि वह एक बच्चे के रूप में अपनी माँ का दूध पीता है। अतः गाय सभी की माता है और इसी लिए उसे गोमाता कहा जाता है। इसीलिए गोहत्या को मातृहत्या कहा जाता है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि गाय में सभी देवताओं का वास होता है। अतः गोहत्या प्रत्येक हिन्दुओं के लिए अपमान का विषय है।' जिस अधिकारी ने इस चित्र को प्राप्त किया उसने बताया कि इस प्रतीकात्मक शिक्षा का सीधे सादे देहाती लोगों के दिमाग पर तुरन्त प्रभाव होता है। हिन्दुओं के लिए प्रत्येक बात प्रतीकात्मक रूप सत्ता के सम्बन्ध में दर्शाई गई है। मैंने सभी जगह मुसलमानों को उत्तेजित रूप में पाया क्योंकि उन्होंने सुना था कि गाय की बलि चढ़ाते हुए चित्र में उनकी तस्वीर बताई गई है। इसे वे अपना अपमान मानते है। इस चित्र में चित्रित बुराई की बात सुस्पष्ट है।

मेलों एवं बाजारों में कसाइयों को मात देने के लिए तथा सभा के नियम तोड़ने वाले हिन्दुओं को ढूंढने और उन्हें सभा के समक्ष लाने के लिए भी प्रतिनिधियों की नियुक्तियाँ की जाती थीं। हिन्दुओं को सामान्यरूप से सरकारी बाड़े में अपने पशुओं को छोड़ने की मनाही थी। उत्तर पश्चिमी सूबे में पहले इस बात पर विश्वास करने के

कारण थे कि गोरक्षा सभा हमारी फौजदारी अदालतों की सीमा में हस्तक्षेप करके अपराधियों पर मामले चलाती है। उन्हें हमारी अदालतों द्वारा चाहे दोषी सिद्ध किया गया हो या नहीं, सभा उन पर अपनी अदालत में मुकद्दमे चलाकर सभा के लिए जुर्माना वसूल करती है। जुर्माना भरने के लिए मना करने पर तथा सभा के निर्णय को न मानने पर सभा उन्हें जाति से बहिष्कृत करा देती एक अन्य प्रस्ताव हिन्दुओं के लिए ग्रामीण न्यायिक अदालतें स्थापित करने का भी था।

इस आन्दोलन की एक सबसे खराब विशेषता यह भी थी कि हमारे हिन्दू मातहत इसके विषय में कोई जानकारी नहीं देते।

आन्दोलन के खतरे

इस आन्दोलन का आरम्भिक एवं मुख्य खतरा यह है कि वह गोसंरक्षण के प्रश्न पर जहाँ सभी हिन्दू हैं उन्हें सम्मिलित रूप से एक मोर्चे पर लाकर खड़ा कर देता है चाहे उनकी जाति, गोत्र, वर्ण, आदि विषयक प्रश्न कुछ भी क्यों न हों। इस प्रकार से वे संगठित हो जाते हैं। एक देशी अधिकारी ने स्पष्ट किया कि, हिन्दुओं के लिए यह प्रश्न सभी प्रश्नों से परे है। यह प्रश्न सदैव असन्तुष्टों के लिये युद्ध का नारा रहा है। आर्थिक आधार पर इसे देखा जाए तो इस आन्दोलन के निस्सन्देहरूप से धार्मिक तत्त्वों को मुख्य रूप से समाहित कर लिया है। इसीसे इसे सफलता प्राप्त हुई है। कदाचित सम्भावना भी की जा सकती है कि इससे विदेशी सरकार को कुछ घबराहट होगी। यह भी हिन्दू पुनर्जागरण का एक अंग हो तो जिस का राष्ट्रीय कांग्रेस एक अन्य प्रदर्शक है। इन दोनों के मूल में एक ही प्रत्याशा भारतीय राष्ट्र निर्माण की हो सकती है। वर्तमान शासकों को पद, प्रतिष्ठा और धनलाभ के स्थान से हटाना भी एक उद्देश्य हो सकता है। यद्यपि यह स्थानच्युत सत्ता को गवर्नर के रूप में भारत की रक्षा हेतु नियुक्त किया जा सकता है। लोगों को गोसंरक्षण आन्दोलन की बैठकों में दिए जाने वाले उत्तेजक एव राजद्रोह पूर्ण भाषणों की बात तो बार बार ध्यान में आती है। यह आन्दोलन प्रकट रूप से मुसलमानों के विरोध में किया जा रहा है। तथापि जैसा कि सर सी.क्रोस्थ्वेट ने हाल ही में कहा है कि यह ब्रिटिश सरकार के प्रति राजद्रोह का एक रूप है और इस सम्बन्ध में ब्रिटिश सैनिकों एवं यूरोपीय लोगों के लिए गोमाँस की आपूर्ति के लिए बड़ी संख्या में की जा रही पशु हत्या की बातें करना तथा सेना रसद विभाग के लिए लाई जा रही मवेशी को जोर जबर्दस्ती से छुडा कर भगा ले जाना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं विचारणीय बातें है। यद्यपि इस आन्दोलन की मजबूत पकड

मुम्बई प्रेसीडेन्सी एवं मध्य प्रान्त के सूबों में है। वहाँ तथा बंगाल में भी आन्दोलन के कारण किसी भयंकर खतरे निर्माण होने के कोई आसार नहीं है। उत्तर पश्चिमी प्रान्तों एवं पंजाब में इसके फैलने से कोई वास्तविक खतरा निर्माण हो सकता है क्योंकि वहाँ हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच भयंकर दंगों के कारण अशान्ति व्याप्त रही तथा दंगाइयों की झड़पें सरकार के प्राधिकारियों के साथ भी हुई। १८७२ का कूकाओं का विद्रोह भी इस सम्प्रदाय के लोगों के द्वारा गोहत्या के सम्बन्ध में व्याप्त घृणा के कारण हुआ। उत्तर पश्चिमी प्रान्तों के पूर्वी जिलों में हाल ही हुए दंगे बंगाल में पड़ोसी जिलों में आन्दोलन के फैलने के कारण बने। प्रायः यह मुद्दा उठाया जाता है कि मुसलमानों के शासन के दौरान हिन्दुओं ने इस प्रश्न को उठाने के लिए कोई प्रयास नहीं किए थे। इससे पूर्व यह भी कहा जाता है कि हिन्दू विद्यमान राजनीतिक प्रचार के कारण से उत्तेजित हुए थे, तथा इससे पूर्व गोहत्या के मुद्दे को लेकर एक दूसरे के सामने इतने अधिक उग्र रूप में नहीं आते थे जिस प्रकार अब आते हैं। देशी समाचार पत्रों का मुस्लिम तबका नई शिक्षा पर इस हेतु आरोप लगाता है तथा कभी-कभी सरकार पर भी आरोप लगाता है कि वह कठोरता एवं तटस्थतापूर्वक पेश नहीं आती। हिन्दुओं की ओर झुक जाती है। दूसरी ओर हिन्दू घटक सरकारी अधिकारियों पर दोषारोपण करते है कि वे 'फूट डालो और शासन करो' की फूटनीति के वश होकर हिन्दुओं की कीमत पर मुसलमानों का पक्ष लेकर दोनों समुदायों के बीच वैमनस्य की भावना पैदा करने तथा झगड़े पैदा करने के बीज वपित कर देते है।

हिन्दुओं के बीच से कुछ ऐसे संकेत भी मिल रहे हैं तथा उनके बीच कुछ अफवाहें भी घर कर गई हैं जिनके अनुसार उनका मानना है कि रूसी सेनाएँ भारत पर विजय प्राप्त कर लेती हैं तो वे यहाँ गोहत्या बन्द करा देंगी। खालसा लोग इसी प्रकार के उद्देश्य के लिए खालसा राज की स्थापना करना चाहते हैं। इन्हें इस सम्बन्ध में उपेक्षित नहीं करना चाहिए।

उत्तर पश्चिमी प्रान्तों में व्याप्त आन्दोलन के खतरों के सम्बन्ध में सर ए.कोल्विन एवं सर सी.क्रोस्थ्वेट के विचारों की ओर पहले ही ध्यान दिलाया जा चुका है। पंजाब सरकार के मुख्य सचिव तथा उपराज्यपाल के उनके अपने प्रान्त में व्याप्त खतरों से सम्बन्धित विचारों से अवगत कराना शेष है। दलीप सिंह के षड़यन्त्र के सम्बन्ध में १८८७ में लिखित एक रिपोर्ट में सर जे.वी.लियाल ने लिखा है कि 'मुझे कई जगहों से जानकारी मिली थी कि पंजाब के हिन्दुओं (सिखों समेत) में पहले एक विचार द्रढ बन गया था कि हम मुसलमानों का पक्ष लेकर उनके साथ अन्याय कर रहे

हैं। कुछ का मानना है कि हम मुसलमानों से अधिक डरे हुए हैं, जब कि कुछ अन्य लोगों का कहना है कि हम आर्य समाज एवं अन्य शिक्षित हिन्दुओं की नापसन्द से प्रभावित हो गए हैं। मेरा विचार है, जिसमें मैं कुछ औचित्य भी महसूस करता हूँ, तथा कुछ हद तक इस भावना की वजह भी समझता हूँ कि हमें ऐसे पूरे प्रयास करने चाहिए जिससे ऐसी धारणाओं का उपशमन हो। गोहत्या के मामलों में पुनः हमारे अधिकारियों में मुसलमानों के पक्ष में स्वाभाविक रूप से अधिक हमदर्दी निर्माण हो जाती है। हिन्दू एवं मुस्लिमों के बीच भड़के अन्य दंगों के सम्बन्ध में हिन्दुओं का कहना है कि जहाँ शायद ही कुछ न्याय करने की बात होती है, वहाँ मुसलमानों की अपेक्षा हममें अधिक उग्रता या कट्टरपन उन्हें नजर आता है। भारत में समग्र रूप से देखा जाए तो राजनीतिक दृष्टि से मुसलमानों की अपेक्षा हिन्दुओं से अधिक मेलजोल बढ़ाने में भलाई दिखती है। पंजाब में इन दोनों के बीच पूर्ण रूप से तटस्थता बनाए रखने की अत्यन्त आवश्यकता है। हमें याद रखना चाहिए कि जब हमने भारत को अपने अधीन किया था तब हिन्दुओं का हमें सहयोग मिला था।' अन्यत्र वे लिखते है, 'मैं हिन्दुओं को गोहत्या के प्रश्न पर किसी भी शिकायत का अवसर न देने के लिए मुसलमानों को रोकने की सावधानी बरतूँगा।' १८८८ की पंजाब के देशी भाषाओं के समाचार पत्रों पर भेजी गई समीक्षा में इस आन्दोलन की गहरी जड़ों के संकेत करते हुए श्री ट्यूपर ने अपनी रिपोर्ट में लिखा, 'पंजाब में पशु हत्या से सम्बन्धित सोच का राजनीतिक दृष्टि से अत्यन्त खतरनाक तत्त्वों से गहरा नाता है। मुसलमानों के लिए यह धार्मिक विद्वेष का सुखद समाधान होने के कारण अच्छी बात है और हिन्दू प्रभुत्व से उनकी मुक्ति का भी संकेत है। राजद्रोही मुसलमान कपटपूर्वक इसे इस प्रकार लेते हैं कि ऐसा करने से हम उनके विरोधियों की दृष्टि में राजनीतिक उद्देश्य से अपनी रोटी सेंकने के लिए उन्हें भड़काकर अपना स्वार्थ सिद्ध करने की कोशिश कर रहे हैं। वे ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध हिन्दुओं के रोष को और अधिक बढ़ा रहे हैं, लेकिन वे यह नहीं बताते कि धैर्यपूर्वक व्यवहार करने के कारण इस प्रथा पर अंकुश लगेगा। दोनों ही ब्रिटिश शासन पर, एक दूसरे के प्रभुत्व को स्वीकार करने के आरोप लगाते हैं परन्तु दोनों के लिए विदेशी शासन के प्रति एक हद तक विद्वेषभाव तो है ही। दुर्भाग्यवश सिखों और हिन्दुओं के मामले में यह विद्वेषभाव गोहत्या के प्रश्न पर अप्रत्याशित रूप से इतना कटु है कि इससे मुसलमानों को, हमें या हम दोनों को खतरनाक कट्टरपन का निशाना बनाया जा सकता है। हालाँकि यह सब देशी भाषाओं के समाचार पत्रों में अभी तक कहीं भी नजर नहीं आता तो भी गोहत्या के सन्दर्भ में इस प्रकार की

टिप्पणियाँ अवश्य की गई हैं जिनसे उनका इस प्रकार का स्वर अवश्य आता हुआ दिखाई देता है।

इसमें श्री हेन्वे के उन विचारों को भी समाहित करने पर तस्वीर और साफ होगी जब उन्होंने मध्यवर्ती भारत के गवर्नर जनरल के एजेन्ट को लिखा। १८९० में इन्दौर में भड़के दंगों का हवाला देते हुए उन्होंने लिखा कि ज्ञात तथ्य अत्यन्त प्रभावी एवं महत्त्वपूर्ण हैं। भारत के विभिन्न भागों में कुछ समय पूर्व व्याप्त गोसंरक्षण आन्दोलन के खतरनाक प्रकृति के सम्बन्ध में इनसे ज्ञात होता है तथा उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि बनिया समुदाय के लोगों की भीड़ के लिए यह सब कुछ करना क्यों न सहज होता जब कि उनकी धार्मिक भावनाओं के साथ कट्टरता या धार्मिक पाखण्ड के रूप में खिलवाड़ किया गया तथा उन्हें अब गैर कानूनी कदम उन लोगों के प्रति उठाने के लिए उत्तेजित किया गया तथा भड़काया गया जिन्हें इन्दौर राज्य अनुमति देता है तथा शक्तिशाली हिन्दू राज्य के मन्त्री को भीड़ द्वारा चुनौती दी जाती है और अन्ततः इन्दौर के महाराजा एवं उनके दरबार को बाध्य करने के लिए एक विवादास्पद सन्धि करने के लिए विवश किया जाता है। इससे दरबार के लोगों के हिन्दुओं के प्रति झुकाव से वास्तव में उनके मन में उनके प्रति कोई सद्भावना नहीं पैदा होती जिन्होंने महाराजा के मातहतों की धार्मिक कट्टरता के वशीभूत होकर अवज्ञा की।

इस बात को भी विस्मरित नहीं किया जाना चाहिए कि राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष श्री ह्यूमने एक बार स्पष्ट रूप में ऐसे संकेत दिए थे कि इसकी यथार्थतः चाबी भौतिक ताकतों के पास है। देशी सेना के सम्बन्ध में गोहत्या आन्दोलन से जुड़े होने की बात एक घटना को छोडकर कहीं भी नहीं मिलती। इस एक घटना में १८९१ में ३६ वीं सिख बटालियन के कुछ सिपाहियों ने लुधियाना के बूचड़खाने की ओर ले जाई जा रही गायों को अवश्य रोका था। साथ ही अत्यन्त अनिश्चित एवं अपुष्ट रिपोर्ट यह भी मिली कि आर्य समाज के लोग सिपाहियों को गोहत्या के प्रश्न पर भड़काने के उद्देश्य से सेना में भर्ती भी हो रहे हैं। तथापि दलीप सिंह के षड़यन्त्र में विश्वास करने के लिए कुछ कारण अवश्य था सिख रेजीमेन्टों में कूकाओं के एजेन्ट भर्ती हो गए थे। वे गोहत्या के प्रश्न को लेकर उत्तेजना फैला रहे थे। इससे पंजाब में भयंकर विषम स्थिति पैदा हुई। अतः सिखों एवं कूकाओं दोनों पर अत्यन्त चौकसी के साथ नजर रखना आवश्यक है। १८८९ में कर्नल हैण्डरसन ने राष्ट्रीय कांग्रेस तथा इस आन्दोलन के सम्बन्ध में ठीक ही कहा था कि इसमें कोई सन्देह नहीं कि अब एक नई शक्ति का उदय हो गया है। देश में आन्तरिक रूप में व्यवस्था बनाए रखने के लिए देश की सेना

की आवश्यकताओं पर विचार करना होगा। इस शक्ति को इस हेतु महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावी घटक के रूप में लिया जाना चाहिए।

डी.एफ.मैकक्रैकन
स्था. कार्यकारी महाअधीक्षक
ठगी एवं डकैती विभाग
९ अगस्त १८९२

सन्दर्भ :

१. स्रोत : ब्रिटिश लाइब्रेरी, वारेन हैस्टिंग्स का मूल पत्राचार, एडीडी एम एस २९११५, मुम्बई मामलों से सम्बन्धित पत्र, १७७८-१७८१.

२. स्रोत : ब्रिटिश लाइब्रेरी, वारेन हेस्टिंग्स का मूल पत्राचार, एडीडी एम एस २९१४५, खण्ड १४, अप्रेल सितम्बर, १७८०

३. आईओएल : एमएसएस ई.यू.आर. एफ/३०/८बी : वायसरॉय डफरिन द्वारा भारत के राज्य सचिव को शिमला ३१-१०-१८८७ सार।

विभाग २

पंजाब का आंदोलन

८. पंजाब के आन्दोलन पर ब्रिटिश विवरण

९. विशिष्ट अधिकारियों का पत्राचार

८. पंजाब के आन्दोलन पर ब्रिटिश विवरण

१८८२

१. जनवरी १८८२ में पता चला था कि रावलपिण्डी के पी.एन.एस. रेलवे के लेखा परीक्षा कार्यालय में कार्यरत मंगलसेन नामक लेखाकार ने कोलकता जाने के लिए छुट्टी ली थी जहाँ उसने पशु हत्या निषेध से सम्बन्धित ब्रह्म समाज एवं आर्यसमाजों के प्रख्यात सदस्यों के साथ विचारविमर्श किया। तत्पश्चात् वह इस मुद्दे पर बनारस के महाराजा के साथ विचारविमर्श करने हेतु बनारस गया।

२. इसी वर्ष मई महीने में लाहौर से रिपोर्ट प्राप्त हुई कि लाहौर के हिन्दू बनारस के महाराजा के द्वारा कथित रूप से उत्तेजित होकर सरकार के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत करने की तैयारी कर रहे हैं कि गोहत्या को तत्काल बन्द कर दिया जाए। हस्ताक्षरार्थ पत्रक वितरित किए गए थे तथा मुसलमानों को भी इसमें जुड़ने के लिए कहा गया था।

३. इसी महीने कोटा के उपायुक्त के कार्यालय में कार्यरत एक लिपिक को मुम्बई से आर्य समाज के नेता पण्डित दयानन्द सरस्वती का एक सन्देश प्राप्त हुआ था जिसमें पशुहत्या निषेध हेतु सरकार को दी जाने वाली याचिका पर हस्ताक्षर प्राप्त करने के लिए कहा गया था।

४. इसके तुरन्त बाद जून १८८२ में लुधियाना से रिपोर्ट प्राप्त हुई कि पण्डित दयानन्द सरस्वती की अध्यक्षता में कोलकता में मुख्य रूप से बंगालियों की एक समिति बनाई गई है जो गोहत्या बन्द कराने के लिए पहले भारत सरकार को तथा बाद में गृह सरकार के समक्ष स्मरण पत्र प्रस्तुत करेगी। आन्दोलन पर होने वाले छह सात लाख रू. के खर्च हेतु कोलकता में अंशदान एकत्रित किया जाएगा तथा पूरे देश के हिन्दुओं का सहयोग आमन्त्रित किया जाएगा। भारत में अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सफलता प्राप्त न होने पर समिति अपने दो प्रतिनिधियों को ईंग्लैण्ड भेजने हेतु विचार कर रही थी। लुधियाना, दिल्ली एवं गुजराँवाला में हस्ताक्षर प्राप्त करने का अभियान

जोरों पर चलने की भी रिपोर्ट प्राप्त हुई। कोलकता समिति की ओर से एक पत्र प्राप्त होने पर लाहौर के महालेखाकार के कार्यालय में कार्यरत निहालसिंह छुट्टी लेकर लुधियाना आया और वहाँ एक ठेकेदार शिव सरनदास के घर में आयोजित बैठक में उसने भाग लिया जिसमें निम्नलिखित सदस्य भी उपस्थित थे : उपायुक्त के कार्यालय के उमरप्रसाद, पैन्शनभोगी नायब तहसीलदार पोहलोमल, होशियारपुर जिले का भूतपूर्व शिरस्तेदार नौबतराय जिसे जेल की सजा हुई थी और नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया था, लुधियाना के शासकीय विद्यालय का सहायक शिक्षक दुनीचन्द, पैन्शनभोगी पुलिस सार्जेन्ट तेहलसिंह, तथा नगरपालिका का एक सदस्य मनसाराम ठठेरा। हस्ताक्षर प्राप्त करने हेतु एक प्रपत्र तैयार किया गया। धनपतराय नामक ब्राह्मण ने इसे शहर में हस्ताक्षरार्थ परिचालित किया था। सभी प्रतियों पर हस्ताक्षर हो गए तो निहालचन्द ने उन्हें पण्डित दयानन्द सरस्वती के पास भिजवा दिया।

५. जुलाई १८८२ में सम्भवतः जम्मू से प्रकाशित संस्कृत भाषा का परिपत्र रावलपिण्डी जिले के कथुआ पुलिस थाने के कालार नामक स्थान के दयानन्द सरस्वती के शिष्य कर्मसिंह नामक ब्राह्मण के कब्जे से प्राप्त हुआ जो बिना भरे हुए प्रपत्र की आश्ममुद्रित प्रतियाँ निकालकर याचिका हेतु दिल्ली में हस्ताक्षरार्थ वितरित कर रहा था। उसने दिल्ली के एक हिन्दू विद्यालय शिक्षक की मध्यस्थता से हिन्दू और मुस्लिम दोनों समुदायों के कई स्कूली छात्रों के हस्ताक्षर प्राप्त किए थे।

६. आर्यसमाज की मेरठ, गुड़गाँव, फिरोजपुर, मुल्तान, लाहौर, सियालकोट एवं रावलपिण्डी में कार्यरत शाखा भी इस अवधि में पशु हत्या विरोधी स्मरण पत्र की प्रतियाँ समस्त बड़े केन्द्रो पर वितरित करने तथा उन पर हस्ताक्षर कराने के लिये अपने अधिकृत एजेन्टों को भेज रही थी।

७. करनाल जिले के पानीपत के ताराचन्द एवं शिव दयाल नामक साहूकार आन्दोलन के सामान्य फण्ड के लिए निधि एकत्रित करते हुए देखे गए तथा गुडगाँव जिले के रेवाड़ी के एक भूतपूर्व मानद मजिस्ट्रेट एवं आर्यसमाज के सदस्य राव जुधिष्ठिर सिंह इस परिपत्र हेतु अंशदान देते हुए देखे गए।

८. दिल्ली में हस्ताक्षर प्राप्त कर रहे एक एजेन्ट के पास पण्डित दयानन्द स्वामी द्वारा गाय की प्रशंसा में लिखित गोकरुणानिधि पुस्तिका की प्रतियाँ भी थीं जिन्हें मुम्वई से दिया गया था तथा मुम्बई से लाहौर तक की यात्रा में गोहत्या के विरोध में निर्देशन हेतु लोगों में वितरित करने हेतु कहा गया था। उन्होंने जयपुर, अलवर में तथा आर्य समाज की उन स्थान पर कार्यरत शाखाओं में हस्ताक्षर कराने हेतु स्मरण पत्र

की कुछ प्रतियाँ वितरित कीं और उन्हें मुम्बई अग्रेषित किया। दिल्ली के उपायुक्त ने उपराज्यपाल को एक अर्धसरकारी पत्र जुलाई, १८८२ के अन्त में लिखा। वे एवं उपायुक्त दोनों कुछ प्रमुख लोगों पर प्रभाव डालकर आन्दोलन को ठण्डे बस्ते में ले जाना चाहते थे। वे मुसलमानों को भी विश्वास दिलाना चाहते थे कि उनके हित पूर्णतः सुरक्षित हैं अतः उन्हें अपनी ओर से कोई भी प्रतिनिधित्व प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं थी। इसी अवधि में इसी उद्देश्य से इसी आशय से युक्त एक अर्ध सरकारी पत्र लाहौर, अमृतसर, अम्बाला, मुल्तान, जलन्धर एवं हिसार के आयुक्तों को भेजा गया।

९. अगस्त १८८२ के आरम्भ में यह स्मरण पत्र अम्बाला जिले में परिचालित होता हुआ पाया गया। शिमला से गंगाराम नामक एक बनिए ने इसकी एक प्रति इसी उद्देश्य से जगाधरी के रामजीदास नामक खत्री को भेजी थी।

१०. गुड़गाँव से एक रीपोर्ट मिली कि बनारस का एक प्रतिनिधि बनारसी गिरि नामक एक संन्यासी फकीर इसी उद्देश्य से मध्यवर्ती भारत के हिन्दू राज्यों एवं राजपूताना में यात्राएँ कर रहा है।

११. इसी अवधि में गोपाल सहाय, रामचन्द, भान उर्फ झाझरिया, बाला, चौधरी, माला, हलवाई, शंकरिया, ननगा, काली, मोहन, कुछ आढतिए - ये सभी गुडगाँव जिले के रेवाड़ी के निवासी थे तथा उसी समय हस्ताक्षर प्राप्त करने में सक्रिय रूप से सन्नद्ध थे - तथा पण्डित दयानन्द सरस्वती के दो ब्राह्मण प्रतिनिधियों ने हिसार में अंशदान प्राप्त करना तथा गोहत्या विरोधी याचिका पर हस्ताक्षर प्राप्त करना आरम्भ किया। हस्ताक्षर होने पर उन्होंने पण्डित प्रभुदयाल को अलवर लौटाने के लिए कहा क्योंकि वे वहाँ अधिक समय तक रूक नहीं सकते थे। हिसार के समस्त हिन्दुओंने इस दस्तावेज पर हस्ताक्षर किए थे। उनकी कार्यवाही को आयुक्त के द्वारा शान्तिपूर्ण ढंग से रोका भी गया था। एक व्यक्ति बीकानेर से हिसार भी आया था जिसने बताया था कि उसने स्मरण पत्र पर जयपुर, जोधपुर एवं बीकानेर से ३,५०,००० हस्ताक्षर प्राप्त किए थे।

१२. लगभग इसी समय सिरसा, रोहतक, लाहौर, गुजराँवाला एवं सियालकोट में हस्ताक्षर लेने की प्रक्रिया जारी थी। एक बंगाली ने अम्बाला जिले के लाड़वा को इस हेतु लिखा था तथा वहाँ के साहुकारों से हस्ताक्षर प्राप्त किए थे। उसने बताया था कि उसने स्मरण पत्र पर तीन लाख लोगों के हस्ताक्षर प्राप्त किए थे।

१३. इसके तुरन्त बाद सितम्बर १८८२ के प्रथम सप्ताह में मेरठ के हिन्दू और

जोरों पर चलने की भी रिपोर्ट प्राप्त हुई। कोलकता समिति की ओर से एक पत्र प्राप्त होने पर लाहौर के महालेखाकार के कार्यालय में कार्यरत निहालसिंह छुट्टी लेकर लुधियाना आया और वहाँ एक ठेकेदार शिव सरनदास के घर में आयोजित बैठक में उसने भाग लिया जिसमें निम्नलिखित सदस्य भी उपस्थित थे : उपायुक्त के कार्यालय के उमरप्रसाद, पैन्शनभोगी नायब तहसीलदार पोहलोमल, होशियारपुर जिले का भूतपूर्व शिरस्तेदार नौबतराय जिसे जेल की सजा हुई थी और नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया था, लुधियाना के शासकीय विद्यालय का सहायक शिक्षक दुनीचन्द, पैन्शनभोगी पुलिस सार्जेन्ट तेहलसिंह, तथा नगरपालिका का एक सदस्य मनसाराम ठठेरा। हस्ताक्षर प्राप्त करने हेतु एक प्रपत्र तैयार किया गया। धनपतराय नामक ब्राह्मण ने इसे शहर में हस्ताक्षरार्थ परिचालित किया था। सभी प्रतियों पर हस्ताक्षर हो गए तो निहालचन्द ने उन्हें पण्डित दयानन्द सरस्वती के पास भिजवा दिया।

५. जुलाई १८८२ में सम्भवतः जम्मू से प्रकाशित संस्कृत भाषा का परिपत्र रावलपिण्डी जिले के कथुआ पुलिस थाने के कालार नामक स्थान के दयानन्द सरस्वती के शिष्य कर्मसिंह नामक ब्राह्मण के कब्जे से प्राप्त हुआ जो बिना भरे हुए प्रपत्र की आश्ममुद्रित प्रतियाँ निकालकर याचिका हेतु दिल्ली में हस्ताक्षरार्थ वितरित कर रहा था। उसने दिल्ली के एक हिन्दू विद्यालय शिक्षक की मध्यस्थता से हिन्दू और मुस्लिम दोनों समुदायों के कई स्कूली छात्रों के हस्ताक्षर प्राप्त किए थे।

६. आर्यसमाज की मेरठ, गुड़गाँव, फिरोजपुर, मुल्तान, लाहौर, सियालकोट एवं रावलपिण्डी में कार्यरत शाखा भी इस अवधि में पशु हत्या विरोधी स्मरण पत्र की प्रतियाँ समस्त बड़े केन्द्रो पर वितरित करने तथा उन पर हस्ताक्षर कराने के लिये अपने अधिकृत एजेन्टों को भेज रही थी।

७. करनाल जिले के पानीपत के ताराचन्द एवं शिव दयाल नामक साहूकार आन्दोलन के सामान्य फण्ड के लिए निधि एकत्रित करते हुए देखे गए तथा गुडगाँव जिले के रेवाड़ी के एक भूतपूर्व मानद मजिस्ट्रेट एवं आर्यसमाज के सदस्य राव जुधिष्ठिर सिंह इस परिपत्र हेतु अंशदान देते हुए देखे गए।

८. दिल्ली में हस्ताक्षर प्राप्त कर रहे एक एजेन्ट के पास पण्डित दयानन्द स्वामी द्वारा गाय की प्रशंसा में लिखित गोकरुणानिधि पुस्तिका की प्रतियाँ भी थीं जिन्हें मुम्बई से दिया गया था तथा मुम्बई से लाहौर तक की यात्रा में गोहत्या के विरोध में निर्देशन हेतु लोगों में वितरित करने हेतु कहा गया था। उन्होंने जयपुर, अलवर में तथा आर्य समाज की उन स्थान पर कार्यरत शाखाओं में हस्ताक्षर कराने हेतु स्मरण पत्र

की कुछ प्रतियाँ वितरित कीं और उन्हें मुम्बई अग्रेषित किया। दिल्ली के उपायुक्त ने उपराज्यपाल को एक अर्धसरकारी पत्र जुलाई, १८८२ के अन्त में लिखा। वे एवं उपायुक्त दोनों कुछ प्रमुख लोगों पर प्रभाव डालकर आन्दोलन को ठण्डे बस्ते में ले जाना चाहते थे। वे मुसलमानों को भी विश्वास दिलाना चाहते थे कि उनके हित पूर्णतः सुरक्षित हैं अतः उन्हें अपनी ओर से कोई भी प्रतिनिधित्व प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं थी। इसी अवधि में इसी उद्देश्य से इसी आशय से युक्त एक अर्ध सरकारी पत्र लाहौर, अमृतसर, अम्बाला, मुल्तान, जलन्धर एवं हिसार के आयुक्तों को भेजा गया।

९. अगस्त १८८२ के आरम्भ में यह स्मरण पत्र अम्बाला जिले में परिचालित होता हुआ पाया गया। शिमला से गंगाराम नामक एक बनिए ने इसकी एक प्रति इसी उद्देश्य से जगाधरी के रामजीदास नामक खत्री को भेजी थी।

१०. गुड़गाँव से एक रीपोर्ट मिली कि बनारस का एक प्रतिनिधि बनारसी गिरि नामक एक संन्यासी फकीर इसी उद्देश्य से मध्यवर्ती भारत के हिन्दू राज्यों एवं राजपूताना में यात्राएँ कर रहा है।

११. इसी अवधि में गोपाल सहाय, रामचन्द, भान उर्फ झाझरिया, बाला, चौधरी, माला, हलवाई, शंकरिया, ननगा, काली, मोहन, कुछ आढतिए - ये सभी गुडगाँव जिले के रेवाड़ी के निवासी थे तथा उसी समय हस्ताक्षर प्राप्त करने में सक्रिय रूप से सन्नद्ध थे - तथा पण्डित दयानन्द सरस्वती के दो ब्राह्मण प्रतिनिधियों ने हिसार में अंशदान प्राप्त करना तथा गोहत्या विरोधी याचिका पर हस्ताक्षर प्राप्त करना आरम्भ किया। हस्ताक्षर होने पर उन्होंने पण्डित प्रभुदयाल को अलवर लौटाने के लिए कहा क्योंकि वे वहाँ अधिक समय तक रूक नहीं सकते थे। हिसार के समस्त हिन्दुओंने इस दस्तावेज पर हस्ताक्षर किए थे। उनकी कार्यवाही को आयुक्त के द्वारा शान्तिपूर्ण ढंग से रोका भी गया था। एक व्यक्ति बीकानेर से हिसार भी आया था जिसने बताया था कि उसने स्मरण पत्र पर जयपुर, जोधपुर एवं बीकानेर से ३,५०,००० हस्ताक्षर प्राप्त किए थे।

१२. लगभग इसी समय सिरसा, रोहतक, लाहौर, गुजराँवाला एवं सियालकोट में हस्ताक्षर लेने की प्रक्रिया जारी थी। एक बंगाली ने अम्बाला जिले के लाड़वा को इस हेतु लिखा था तथा वहाँ के साहुकारों से हस्ताक्षर प्राप्त किए थे। उसने बताया था कि उसने स्मरण पत्र पर तीन लाख लोगों के हस्ताक्षर प्राप्त किए थे।

१३. इसके तुरन्त बाद सितम्बर १८८२ के प्रथम सप्ताह में मेरठ के हिन्दू और

मुस्लिमों में इस प्रश्न पर उत्तेजना फैलने की रिपोर्ट प्राप्त हुई थी, परन्तु हुआ कुछ भी नहीं था।

१४. इसके पश्चात् देखा गया कि साहुकार आशाराम, नगरपालिका का सदस्य खुशीराम और अम्बाला शहर का निवासी एक वकील मुरलीधर इस आन्दोलन के प्रमुख प्रचारक थे। यह भी देखा गया कि हस्ताक्षर प्राप्त किए गए थे परन्तु इस आन्दोलन को उपायुक्त द्वारा दबाने के प्रयत्न किए गए थे। ५० नामों से अधिक नाम प्राप्त नहीं हुए थे।

१५. दिल्ली के प्रख्यात वकील मदनगोपाल इसी समय पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के सम्बन्ध में कुछ आवश्यक कदम उठाने के लिए पटना गए थे।

१६. उस समय तक होशियारपुर जिला आन्दोलन से प्रभावित हुआ बताया गया।

१७. सितम्बर १८८२ के अन्त में लाहौर शहर में इस आशय की एक सूचना भेजी गई कि हिन्दू मुसलमानों एवं यूरोपीयों को अपनी गाएँ न बेचें, तथा आगे की सूचनाएँ गोसभा से प्राप्त की जाएँ।

१८. दिसम्बर १८८२ में नसिरुद्दीन नामक एक कश्मीरी मौलवी दिल्ली में देखा गया जो सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता था कि पशुहत्या के अपराध में विगत दो वर्षों में कश्मीर में ८०० मुसलमानों को जेल की सजा दी गई थी। सियालकोट छावनी के मौला बख्श एवं रहीम बख्श नामक दो कसाई जो जम्मू के पास के जंगल में पशु हत्या करते थे, उन्हें जनवरी १८८३ में जम्मू उच्च न्यायालय द्वारा पाँच वर्षों की कैद की सजा दी गई थी तथा इस वास्तविक स्थिति से पंजाब सरकार को अवगत करा दिया गया था।

१८८३

१९. अप्रैल १८८३ तक आन्दोलन में उस समय तक शान्ति व्याप्त रही जब अमृतसर और लाहौर के हिन्दुओं ने अपने अपने शहर में पशु हत्या पर रोक लगाने हेतु आन्दोलन करने शुरु किए। १ अप्रैल १८८३ को फैली इस झूठी अफवाह के कारण शालीमार के चिराधन मेले में हिन्दुओं ने जाना बन्द कर दिया कि वहाँ गोमाँस विक्री के लिए लटकाया जाता है तथा मुसलमानों द्वारा इस मेले में एक गाय की हत्या की गई है। मई १८८३ में पशु हत्या के विरोध में अमृतसर में स्मरण पत्र पुनः परिचालित किए गए तथा कुछ मुसलमानों पर भी इस पर हस्ताक्षर करने के लिए

दबाव डाला गया। आर्य समाज एवं सिंह सभा द्वारा ये स्मरण पत्र हस्ताक्षरार्थ जारी किए जाने की रिपोर्ट मिली। इस आन्दोलन को जिन लोगों का समर्थन प्राप्त हुआ बताया गया वे थे वकील बाबा नारायणसिंह, आर्य समाज के सचिव मुरलीधर, उपायुक्त के कार्यालय में सरिश्तदार लाला मूलराज, नगरपालिका के सदस्य लक्ष्मणदास एवं भाई गणेशसिंह तथा कुछ अन्य रईस जिनके नाम का उल्लेख नहीं किया गया। आयुक्त को अर्धसरकारी पत्र भेजकर इस आन्दोलन को समाप्त करने के लिए अपने व्यक्तिगत प्रभाव का उपयोग करने के लिए कहा गया।

२०. जून १८८३ के समाप्त होते होते अम्बाला जिले में जगाधरी कस्बे के एक कुए में गाय की कुछ हड्डियाँ पाई गई जिसके कारण कस्बे के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच गहन दुर्भावना व्याप्त हो गई। जाँच किए जाने पर अन्ततः पता चला कि उस जगह के एक बनिया की यह करामात थी।

२१. जुलाई १८८३ में लाहौर में आन्दोलन पुनः सक्रिय हो गया। सुझाव दिया गया कि स्मरण पत्र देने के अतिरिक्त कसाइयों के खिलाफ बार बार शिकायतें की जाएँ। छोटा लाल एण्ड कम्पनी के अध्यक्ष दुर्गाप्रसाद ने आन्दोलन के लिए धनराशि जुटा देने का वचन दिया।

२२. कपूरथला में सिखों द्वारा झटका माँस की एक दुकान खोले जाने पर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच थोड़ी सी अशान्ति व्याप्त हुई। कुछ कुँओं को मुसलमानों द्वारा दूषित किया गया परन्तु अन्ततः मसला सौहार्दपूर्वक हल कर लिया गया।

२३. अगस्त १८८३ में एक हिन्दू द्वारा एक मुस्लिम महिला को गोमाँस पकाते हुए देखकर उसे अपमानित करने के परिणामस्वरूप फिरोजपुर में थोड़ी सी उत्तेजना व्याप्त हुई। इस मसले पर समझौता हो गया परन्तु हिन्दुओं ने एक बैठक आयोजित करके मुसलमानों के साथ यथासम्भव कोई भी सम्बन्ध नहीं रखने का निर्णय लिया।

२४. सितम्बर १८८३ में रावलपिण्डी छावनी क्षेत्र के कुछ हिन्दुओं ने शिकायत की कि उनके इलाके के कुछ मुस्लिम नानबाई सदरबाजार में गोमाँस बेचते हैं। छावनी मजिस्ट्रेट द्वारा इस मसले को शान्तिपूर्ण ढंग से हल कर दिया गया।

२५. अक्टूबर १८८३ में दिल्ली में ईद के त्यौहार के अवसर पर याकूब नामक एक मौलवी द्वारा मस्जिद में ऊपर कमरे में गोबलि हेतु दो गायों के बाँधे जाने के परिणाम स्वरूप अशान्ति फैल गई। हिन्दुओं एवं मुसलमानों की भीड़ जमा हो गई तथा पुलिस द्वारा उन दोनों गायों को कोतवाली में ले जाने पर दंगाई बिखर गए। कुछ दिनों

के पश्चात् मुसलमानों ने उन गायों को पुलिस से छुड़ाने के लिए प्रदर्शन आयोजित किया तथा अदालतों के पास बड़ी संख्या में भीड़ जमा हो गई और अदालत के बन्द होने के समय तक वहीं रही। जहाँ गाएँ बाँधकर रखी गई थीं उस कोतवाली के सामने भी भीड़ जमा हो गई परन्तु कोई शरारत नहीं हुई। इस अशान्ति के कारक मौलवी याकूब को शान्ति बनाए रखने के लिए बाध्य किया गया।

भोपाल में ईद के दौरान गोहत्या को लेकर अशान्ति व्याप्त होने की रिपोर्ट भी मिली।

२६. नवम्बर १८८३ में दिल्ली में इस अफवाह के फैलने से दुर्भावना व्याप्त हुई कि आगरा में हिन्दुओं ने मुसलमानों को वस्तुएँ बिक्री करने से मना कर दिया। बाजार पर पुलिस का पहरा हो गया। दिल्ली के कुछ हिन्दुओं ने अपने सभी मुसलमान नौकरों को नौकरी से हटा दिया था।

२७. दिसम्बर १८८३ में मौलवी याकूब की याचिका मुख्य अदालत द्वारा स्वीकार की गई। इसने दिल्ली के मजिस्ट्रेट के निर्णय को पलट दिया। मौलवी याकूब लाहौर से वापस आया। उसने १९ दिसम्बर को दोनों गायों की हत्या की परन्तु कोई भी दंगा नहीं भड़का। दिसम्बर के अन्त में रिपोर्ट प्राप्त हुई कि दिल्ली के मुसलमान एक स्मरण पत्र तैयार करके सरकार को देंगे कि उन्हें उनके घरों में गाय को बलि चढ़ाने हेतु मारने की अनुमति दी जाए।

१८८४

२८. २३ जनवरी १८८४ को मोण्टगोमेरी जिले के हडप्पा में गोहत्या के मामले में थोड़ी सी अशान्ति व्याप्त हो गई।

२९. जनवरी एवं फरवरी १८८४ में दिल्ली के मुख्य मौलवियों एवं मुल्लाओं ने कई बैठकें आयोजित कीं जिनमें वकील अजीजुद्दीन एवं वली अहमद एण्ड कं. नामक फर्म के मुहम्मद इब्राहम ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसमें एक प्रस्ताव पारित किया गया कि मुसलमानों के दोनों धड़े वहाबी एवं सुन्नी परस्पर रागद्वेष भुलाकर साथ साथ काम करें और सरकार के समक्ष एक याचिका दायर करें जिसमें निवेदन किया जाए कि गोहत्या से सम्बन्धित कानूनी व्यवस्थाओं में सुधार करके नगर में उन्हें अपने घरों में गोबलि देने की अनुमति मिलनी चाहिए। शाही परिवार के मिर्जा सुलेमान शाह तथा लाहौर के नवाब ने याचिका के उन अनुच्छेदों पर भी अपने हस्ताक्षर किए जहाँ दण्डनायकगण एवं पुलिस को भी उन्मार्जित किया गया था। इस स्मरण पत्र को

इंग्लैण्ड भेजना तय हुआ।

३०. २० मार्च १८८४ को बनारस के पण्डित जोति प्रसाद को अम्बाला जिले के जगाधरी विद्यालय के मुख्य अध्यापक के घर रुका हुआ देखा गया। वहाँ उन्होंने गुप्त बैठकें कीं तथा पशु हत्या पर आन्दोलन छेड़ने हेतु एक हिन्दू व्यक्ति को इंग्लैण्ड भेजने के उद्देश्य से धन भी एकत्रित किया।

३१. कुछ प्रमुख हिन्दू नेताओं द्वारा उपराज्यपाल के समक्ष मेले में गोमाँस की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगाने की अपील को माननीय लैफ्टेनन्ट गवर्नर द्वारा खारिज किए जाने के परिणामस्वरूप अमृतसर की सिंह सभा ने हिन्दुओं को २९ मार्च १८८४ के शालीमार के चिराघन मेले में न जाने की सलाह दी।

३२. चौथी एवं बीसवीं अप्रैल १८८४ को दिल्ली में दीवान किशनलाल के घर में सराओगी और विश्नोई मारवाड़ियों की बैठकें सम्पन्न हुईं जिसमें शुधन चन्द नामक व्यक्ति को पशु हत्या बन्द कराने की प्रार्थना वाली एक याचिका को इंग्लैण्ड में प्रस्तुत करने के लिए भेजना निश्चित हुआ।

३३. अप्रैल १८८४ में हजारा जिले के सराय सलेह के कुछ हिन्दुओं ने अपने गाँव के मुसलमानों द्वारा होनेवाली गोहत्या बन्द करने हेतु याचिका दायर की परन्तु इससे वहाँ अशान्ति नहीं फैली।

३४. अप्रैल १८८४ के अन्त में दिल्ली के कुछ मुसलमानों द्वारा एक मुद्रित स्मरणपत्र आयुक्त के अवलोकन एवं वापसी हेतु अग्रेषित किया जिसमें ईद के अवसर पर नगर के अन्दर गोहत्या करने की अनुमति देने की प्रार्थना की गई थी।

३५. दिल्ली तथा पंजाब में अमृतसर ही इस अवधि में ऐसे स्थान थे जहाँ आन्दोलन अपनी चरम स्थिति तक पहुँचा। जहाँ तक पता लगाया जा सका इस आन्दोलन के नेता तथाकथित देशभक्त सोसाइटियों के ऐसे सदस्य थे जिनमें से अनेकों को हिन्दू धर्म लब्धप्रतिष्ठ होना सदैव प्रिय था। 'शिक्षित' गौरव की अभिव्यक्ति हेतु इस आन्दोलन से जुड़ गए।

३६.निम्नलिखित समाचार पत्रों ने पशु हत्या को बन्द करने हेतु अपना समर्थन दियाः उत्तर पश्चिमी सूबों में आर्य दर्पण, तथा पंजाब में अखबार-ए-आम, मित्र विलास, देश उपकारक, रिफॉर्मर, कपूरथला अखबार, रिजनरेटर ऑफ आर्यावर्त, आर्यमित्र, एवं गोरक्षा अखबार।

३७. इस अवधि में प्राप्त रिपोर्टों से यह दीखता होता था कि कूकाओं का दिमाग फिरा हुआ था जो कि खतरे के संकेत के रूप में था। उसे गोहत्या आन्दोलन

के १८७२ में घटित कूका विद्रोह के साथ जोड़कर देखना भी आवश्यक था।

३८. उपायुक्त के कार्यालय के सरिश्तदार लाला मूलराज एवं सहायक सर्जन साहिब दत्त के अप्रैल १८८४ के अन्त में अमृतसर से स्थानान्तरण की भी वहाँ स्थानीय लोगों के बीच खूब चर्चा हुई। वहाँ के मुसलमानों ने उनके स्थानान्तरण कराए जाने की बात का गौरव स्वयं अपने ऊपर लेकर खूब वाहवाही लूटी।

३९. इसी समय रिपोर्ट मिली कि शिमला का आर्यसमाज गोहत्या बन्द कराने के लिए कठोर कदम उठाने जा रहा था। उसके कुछ सदस्यों ने गोरक्षा सभा की रचना की। इसके प्रमुख सदस्यों में धर्मादा अस्पताल में अस्पताल सहायक के रूप में कार्यरत ठाकुरदास, उपतहसीलदार शिवनारायण, कोष विभाग में कार्यरत लिपिक परमानन्द, अम्बाला के बनिया समुदाय का एक व्यक्ति एवं ढुलाई ठेकेदार मिर्चीलाल, लोकनिर्माण विभाग में ओवरसियर के पद पर कार्यरत हरनाम सिंह, पहले चिकित्सा विभाग में कार्यरत तथा अब मुरादाबाद के एक व्यापारी बसन्त राय शामिल थे। सभा की एक बैठक दिनांक २० अप्रैल १८८४ को रात को मिर्ची लाल के घर में आयोजित की गई। उसमें १ मुसलमान, १० दुकानदारों, १० स्कूली छात्रों तथा ४० अन्य, जिनमें मुख्यतः सरकारी विभागों के कार्मिक थे, ने भाग लिया। इस बैठक में ठाकुरदास ने एक लम्बा भाषण दिया तथा भारी भरकम भाषा का उपयोग करते हुए पशु हत्या बन्द कराने के लिए किए जा रहे प्रयासों के प्रति श्रोताओं की सहानुभूति प्राप्त की। एक प्रस्ताव पारित किया गया कि भारत के समस्त हिन्दू सरगनाओं से इस लोकहित के कार्य में सहायता प्राप्त की जाए। जम्मू के दीवान गोविन्द सहाय ने गोपनीय रूप से धन एवं अन्य प्रकार की मदद देने का वचन दिया। मिर्चीलाल इस मामले पर अपने सम्प्रदाय के लोगों की भावनाओं को उत्तेजित करते हुए शिमला और अम्बाला में देखे गए। अम्बाला छावनी से सभा को १५० रू. का अंशदान प्राप्त हुआ। लाला चरण दासने ५० रूपये तथा मुखसिंहने २५ रू. दिए। रिपोर्ट मिली कि जिन्द मोतामिद के सी.आई.ई. सरदार जगतसिंह भी यथासम्भव सहायता देने को सहमत हुए परन्तु उन्होंने अपना नाम गुप्त रखने के लिए कहा। शिमला में ११ मई १८८४ की रात को आयोजित एक अन्य बैठक में ठाकुरदास ने गोहत्या विषय पर बड़ा ही संवेदनशील भावप्रवण भाषण दिया और कहा कि समस्त हिन्दू पदाधिकारियों ने गोसंरक्षण हेतु सहायता करनी चाहिए। बैठक में अन्ततः एक प्रस्ताव पारित किया कि गोहत्या बन्द कराने के लिए शिमला के समस्त हिन्दुओं के हस्ताक्षर करवाकर एक याचिका सरकार के समक्ष प्रस्तुत की जाए। साथ ही बंजर जमीन खरीदी जाए जिसमें

एक गोशाला बनाइ जाए जहाँ गाएँ उचित संरक्षण में रह सकें।

४०. १७ मई १८८४ को अमृतसर के आर्यमित्र में एक अनुच्छेद में अम्बाला छावनी में आर्यसमाज की शाखा खोलने का समाचार प्रकाशित किया गया जिसे आर्य समाज के प्रमुख सदस्य श्री स्वामी ईश्वरानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित किया गया था। यही सज्जन पंजाब के विविध भागों में यात्राएँ करते रहे तथा ये जहाँ भी गए वहाँ विभिन्न कस्बों में इन्होंने आर्य समाज की शाखाएँ खोलीं। अम्बाला से वे लुधियाना, अमृतसर, रावलपिण्डी, मधियाना, झाँग, और कसौली गए। वहाँ से वे शिमला आए। रावलपिण्डी में उन्होंने माँस भक्षण की आदत के विरोध में भाषण दिया। उन्होंने ३० लोगों को शपथ दिलाई कि वे कभी भी माँस भक्षण नहीं करेंगे। इस समय तक औपचारिक रूप से किसी को आर्यसमाज का अध्यक्ष नहीं बनाया गया था लेकिन कहा जाता था कि स्वामी दयानन्द ने अपनी मृत्यु के समय समाज के कामकाज को आगे चलाने के लिए निम्नलिखित लोगों की समिति को नामित किया था - अध्यक्ष : उदयपुर के महाराणा, सदस्य : लाला मूलराज, एम.ए., अतिरिक्त सहायक आयुक्त, गुरुदासपुर, और लाला सेनदास, अनुवादक लोक अनुदेश निदेशक का कार्यालय, पंजाब।

४१. कसौली के आर्यसमाज की स्थापना १८८२ में हुई। इसमें पंचमसिंह, नन्दकिशोर, भगतराम, मेहरचन्द, तथा कुछ अन्य लोग शामिल थे। कार्यपालक अभियन्ता के कार्यालय में लिपिक के पद पर कार्यरत पंचमसिंह इस शाख़ा के मुखिया थे। वे धार्मिक मामलों में सक्रिय रूप से भाग लेते थे। कार्यपालक अभियन्ता के कार्यालय में कार्यरत मोतीबाबू गोहत्या विरोधी आन्दोलन के प्रमुख आन्दोलनकारी थे।

४२. मई १८८४ के अन्त में रिपोर्ट प्राप्त हुई कि पशु हत्या के सन्दर्भ में दिल्ली में आन्दोलन फिर भी सक्रिय रूप से गतिमान था। यह भी पता चला कि सहारनपुर का एक कैथ शुधनचन्द जो जम्मू सेवा में था (अन्य रिपोर्टों के अनुसार डाक सेवा में कार्यरत था) तथा एक अज्ञात व्यक्ति कश्मीरी पण्डित - ये दोनों व्यक्ति दो माह पूर्व शिमला गए जहाँ उन्होंने बैठकें आयोजित कीं तथा गोहत्या विषयक स्मरण पत्र पर लगभग २०० हस्ताक्षर प्राप्त किए। शिमला से वे दिल्ली की ओर गए तथा गिरधारीलाल एवं उसके पुत्र बिहारीलाल - इन दो वकीलों को अपने साथ लिया। उन्होंने इस आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। कहा जाता था कि साप्ताहिक रूप से बैठकें गिरधारीलाल के घर में आयोजित की जाती थीं। निम्नलिखित व्यक्तियों से निर्मित एक

समिति के माध्यम से अंशदान एकत्रित किया जाता था : पूरनचन्द तोपखानावाला और पियारीलाल मूँगावाला। ये सभी अक्टूबर १८८३ में दिल्ली में ईद के दौरान अशान्ति फैलाने में विशिष्ट रूप से जुड़े हुए थे। गिरधारीलाल ने समिति की कार्यवाही का ज्ञापन बनारस के बाबू शिवप्रसाद, सी.एस.आई. को बनारस के महाराजा को सूचना देने के लिए भेजा। बनारस के समस्त कागजात तथा गोहत्या विषय पर सम्पन्न समस्त पत्राचार कश्मीर के महाराजा के समक्ष प्रस्तुत किया। ऐसी रिपोर्ट भी मिली कि शुधनचन्द ने अन्य बड़े कस्बों में भी समितियाँ स्थापित कीं। ये समितियाँ बनारस की केन्द्रीय समिति से सम्पर्क बनाए रखती थीं।

४३. इसी समय करनाल एवं पानीपत में समितियों की बैठकें साप्ताहिक रूप से आयोजित की जाने लगीं। इस हेतु निधि भी एकत्रित की जाने लगी कि सरकार को एक याचिका प्रस्तुत करके गोहत्या पर प्रतिबन्ध लाने के लिए एक विधेयक पारित कराने की माँग की जाएगी। आन्दोलनकर्ताओं में मुख्य रूप से शामिल थे : पानिपत में ताराचन्द एवं मक्खनलाल - बनिया, करनाल में त्रिलोकचन्द और इश्कलाल - बनिया, किशन सहाय - गुजराती ब्राह्मण, और रामनारायण - वकील। इन्दरी में पुलिस उपनिरीक्षक के पद पर कार्यरत सन्तराम भी यदा कदा बैठकों में भाग लेते थे।

४४. मई १८८४ के मध्य में जगाधरी का मुस्लिम समुदाय कस्बे में बूचड़खाना खुलवाने की अनुमति प्राप्त करने हेतु वकीलों को रखने के उद्देश्य से लोगों से अंशदान प्राप्त कर रहे थे। उन्हें तहसीलदार, शहजादा वला गौहर तथा नायब तहसीलदार सईद मुहम्मद का समर्थन प्राप्त था। हिन्दुओं ने उनके इस कार्य को किसी भी हालत में रोकने का दृढ़ निश्चय किया। इससे अत्यल्प समय में ही जगाधरी के रामजीदास बनिया, उर्फ रोशनशाह (जो हिन्दू होने पर भी मुसलमानों के पक्षधर थे तथा तहसीलदार के सहयोगी थे) एवं खेड़ा के पटवारी शिवबा, जगाधरी के साहूकार लाला बंसीलाल के गाँव के निवासी के बीच एक विवाद खड़ा हुआ। उस ने कहा कि यदि साहूकार को सभा पर इतना घमण्ड था तो वह कस्बे में एक बूचड़खाना खुलवाकर ही रहेगा। इसकी खबर लगते ही अशान्ति की आशंका से मुस्लिमों की भीड़ राजमीदास की मदद करने के लिए एकत्रित हो गई तथा सभा के वहाँ से प्रस्थान करने से ही वहाँ कोई दंगा नहीं हुआ।

४५. नगीनामल एवं सौदागर बनिया, मीरू पटवारी, एवं नगरपालिका के एक सदस्य सैनदास मछीवाड़ी कस्बें में गोहत्या पर रोक लगाने के लिए आन्दोलन करते देखे गए, परन्तु लुधियाना जिले में इस विषय पर अन्य कोई संगठित आन्दोलन नहीं

देखा गया।

४६. १२ मई १८८४ को गुरुमुखी लिपि में लिखित एक कागज ग्रन्थ पर फैंका गया जिसके सम्बन्ध में अमृतसर के मन्दिर में सूचित किया गया। इसके लेखक ने गोहत्या रोकने के लिए सिखों को हिन्दुओं के साथ संगठित करने के प्रयास किए।

४७. होशियारपुर से रिपोर्ट किया गया कि नेता लोग और हिन्दू ब्रिटिशों का निवास था ऐसी छावनियों और अन्य ऐसे इलाकों को छोडकर बाकी सभी स्थानों पर गोहत्या के विरोध में सार्वजनिक रूप से विरोध प्रदर्शित कर रहे थे। वे सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए स्मरण पत्र भी तैयार कर रहे थे। बड़े बूढ़े लोग याचिका प्रस्तुत करने से किसी भी परिणाम की आशा रखने के पक्ष में नहीं थे परन्तु नई पीढ़ी के नवयुवक अत्यधिक आवेश में थे। बताया जाता है कि वे कह भी रहे थे कि तब तक वे संसद में अपनी इस मंशा को व्यक्त करते रहेंगे जब तक सफलता प्राप्त नहीं हो जाती। यह भी कहा जाता था कि गोरक्षा अखबार सभी हिन्दुओं को प्रेषित किया जाता था। उनमें से यदि कोई उसे लेने से मना कर भी देता था तो उसे हिन्दू न होने का ताना मारकर उसका उपहास किया जाता था।

४८. गोहत्या के विषय में मुलतान के हिन्दुओं की अब अमृतसर और लाहौर के हिन्दुओं के प्रति सहानुभूति हो गई है।

४९. शिमला के अस्पताल में अस्पताल सहायक के पद पर कार्यरत ठाकुरदास इस समय गोहत्या विषय पर महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावी व्यक्तियों को भेजने के लिए गोपनीय पत्र तैयार करता हुआ बताया गया। लोकनिर्माण विभाग, इम्पीरियल सर्कल के प्रथम मण्डल में कार्यरत लिपिक जगतसिंह उनकी प्रतिलिपियाँ तैयार करता हुआ रिपोर्ट किया गया।

५०. रावलपिण्डी में कुछ समय पूर्व अत्यन्त जोर पकडता जा रहा आन्दोलन अब मन्द हो चुका था। तथापि पुलिस उपनिरीक्षक मोहनलाल को यह कहते हुए सुना गया कि यदि मुसलमान नगर में पशु हत्या करने से बाज नहीं आते हैं तो हिंदुओं को सूअरों की हत्या करके उनसे बदला लेना चाहिए।

५१. २४ मई १८८४ को दिल्ली में वकील गिरधारीलाल के घर में गोहत्या के मसले पर विचार विमर्श करने हेतु एक निजी बैठक आयोजित की गई। इसमें वकील लाला मदनगोपाल द्वारा एक भाषण दिया गया। इसमें लगभग ७० लोगों ने भाग लिया जिनमें निम्नलिखित को भाग लेते हुए देखा गया : लालाराम किशनदास, मानद मजिस्ट्रेट, रावल, दरीबा छात्रभोज का बाबू, तोपखानेवाला, तथा जिला पुलिस

कार्यालय में कार्यरत अंग्रेजी लिपिक बलदेव सहाय। परवर्ती बैठक में ५००० रूपये का अंशदान गोरक्षा के सभा के लिए एकत्रित किया गया। घर घर जाकर अंशदान एकत्रित करने का सुझाव भी दिया गया। लाला मदनगोपाल, वकील के भाषण में निम्नलिखित प्रस्ताव समाहित थे : (१) मुसलमानों द्वारा सेना रसद विभाग एवं बूचड़खाने के लिए पशुओं की खरीद पर रोक लगाने हेतु उपाय किए जाने चाहिए जो हिन्दुओं के वेश में रोहतक और हिसार जिलों से पशु खरीदते हुए देखे गए है। (२) बलि दिए जाने हेतु पशुओं को शहर के मार्गों से जमुना घाट से रेलवे पुल तक ले जाने तथा जहाँ हिन्दू पवित्र स्नान करते हैं और पूजा करते हैं, ऐसे स्थलों से पशुओं को ले जाने से रोकने के लिए उपाय किए जाने चाहिए। (३) गायों को ब्राह्मणों को दान स्वरूप नहीं दिया जाना चाहिए क्योंकि वे उन्हें मुसलमानों के हाथों बेच देते हैं तथा वहां उन्हें काट दिया जाता है। दिल्ली से प्राप्त एक अन्य रिपोर्ट में कहा गया कि यह आन्दोलन गाँवों में अपना शिकंजा कसता जा रहा था।

५२. मई १८८४ के अन्त में कलनौर नगरपालिका का एक सदस्य तथा जो इससे पूर्व थोड़े समय के लिए गुरुदासपुर पुलिस में सिपाही के पद पर कार्य कर चुका था, वह व्यक्ति सोहनलाल कलनौर बाजार में गोहत्या बन्द करने के लिए हिन्दुओं को उत्तेजित करने के लिए भाषण देता हुआ रिपोर्ट किया गया। वह लोगों को एकजुट होने एवं आर्यसमाज की निधि में अंशदान देने के लिए भी कह रहा था ताकि जब तक गोहत्या बन्द नहीं कर दी जाती तब तक सरकार के ध्यान पर इस विषय को बार बार लाया जाता रहे। उसने बूढ़ी मवेशी को रखने के लिए जमीन का एक टुकडा खरीदकर उस पर पशुशाला बनाने एवं उसकी देखभाल करने हेतु किसी योग्य व्यक्ति को नियुक्त करने का भी सुझाव दिया था। इस पर होनेवाले समस्त खर्च की प्रतिपूर्ति हेतु अंशदान प्राप्त करने के लिए भी कहा था। उसने कहा कि जब मौलवी सैय्यद अहमद गुरदासपुर आए थे, तब उन्होंने हिन्दु मुस्लिम के बीच एकता देखकर आनन्द व्यक्त किया था परन्तु अतिरिक्त सहायक आयुक्त सरदार पर्वसिंहने मौलवी को लिखा था कि इस सम्बन्ध में प्रथम चरण होगा दोनों समुदायों द्वारा संयुक्त रूप से कार्रवाई के तहत सरकार के समक्ष पशु हत्या पर रोक लगाने के लिए एक याचिका प्रस्तुत करना। ऐसा नहीं होता तब तक दोनों समुदायों के बीच दूरी बढ़ती रहेगी। सोहनलाल ने कहा कि उसने आर्य समाज के अध्यक्ष की अनुमति से इस भलाई के कार्य में जुड़ने के लिए सरकारी सेवा से त्यागपत्र दे दिया है।

५३. जून १८८४ के आरम्भ में आर्यसमाज के प्रमुख लोगों के सहयोगी

अलाराम नामक एक साधु को अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर के पास गोहत्या के विरोध में भाषण देते हुए तथा हिन्दुओं को गायों को कसाइयों के हाथ में जाने से रोकने के लिए उपाय स्वरूप कदम उठाने का परामर्श देते हुए देखा गया। ४ जून को पड़नेवाली निमानी एकादशी के त्यौहार से पूर्व अमृतसर के मानद मजिस्ट्रेट नगर मल के निवास पर हिन्दुओं की एक बैठक हुई जिसमें प्रस्ताव पारित किया गया कि त्योहार के लिए मिट्टी के पात्र मुसलमानों से न खरीदे जाएँ। परंपरा से सभी हिन्दू इस त्योहार पर कुम्हारों से ये पात्र बड़ी संख्या में खरीदते थे तथा विधि विधानों में उनका उपयोग करने के पश्चात् ब्राह्मणों को दान कर देते थे जो उन्हें बेचकर अच्छी खासी मात्रा में धन प्राप्त कर लेते थे। हिन्दुओं द्वारा लिए गए इस निर्णय के परिणाम स्वरूप कुम्हारों में अत्यन्त असंतोष का भाव व्याप्त हो गया क्योंकि उनके द्वारा उस हेतु बनाये गए पात्रों का बड़ा भाग नहीं बिक सका और उन्हें लगभग ४,००० रूपये का नुकसान उठाना पड़ा। हिन्दू गुज्जरों से दूध न लेने की उपयुक्तता पर विचार विमर्श कर रहे थे और वकील बाबा नारायणसिंह हिन्दुओं को दूध की आपूर्ति करने हेतु बहुत बड़ी संख्या में गायें खरीदकर लाए थे। उन्होंने उन्हें मुसलमान कसाइयों से माँस न खरीदने को भी प्रेरित किया तथा स्वर्ण मन्दिर में मुसलमान मालियों को फूलों एवं सब्जियों की बिक्री बन्द करने को कहा। इस सम्बन्ध में प्राप्त एक अन्य रिपोर्ट यह थी कि इन सबके पीछे उद्देश्य विशुद्ध रूप से मीमांसात्मक थे। उद्देश्य कुछ भी हों परिणाम यह हुआ कि अमृतसर में बहुत से हिन्दुओं ने मुसलमान कसाइयों से माँस खरीदना बन्द कर दिया जिसके कारण उनके द्वारा नुकसान होने की शिकायतें की गईं।

५४. ७ जून १८८४ को अमृतसर जिले के वैरोवल के एक ब्राह्मण काँशीराम को अमृतसर के मुसलमानों एवं ईसाइयों को अपमानजनक नोटिस भेजने के आरोप में भारतीय दण्डसंहिता की धारा २९२ के तहत दोषी करार दिया गया और एक वर्ष के लिए कारावास की सजा सुनाई गई। अमृतसर जिले में जहाँगीर नामक गाँव के हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों पानी खींचते थे ऐसे कुएँ में से हड्डियों का पता चलने के कारण गाँव के हिन्दुओं ने पानी खींचना बन्द कर दिया। इससे पूर्व इस गाँव में कोई दुर्भावना नहीं फैली थी।

५५. ९ जून १८८४ को जलन्धर छावनी क्षेत्र के ठेकेदार नानकचन्द के निवास पर गोरक्षा सभा की एक बैठक हुई जिसमें निम्नलिखित लोग उपस्थित रहे : बाबा सरमुखसिंह, सचिव, सिंह सभा; जमैतसिंह, जलंधर बन्दोबस्त के अधीक्षक; सुरमुख सिंह, कूका, याचिका लेखक; सण्डे खान, कपूरथला से अखबार-ए-गोरक्षा के

सम्पादक बाबू विशम्भरदास, बाबू बिशनदास, बाबू मुश्ताकराय और लाला शिवदयाल, कपड़ा व्यापारी। सण्डेखान द्वारा प्रस्ताव रखे जाने पर ३० रूपये का अंशदान गोहत्या बन्द कराने के सम्बन्ध में सरकार के समक्ष याचिका प्रस्तुत करने हेतु एकत्रित किया गया। इस व्यक्ति ने यह भी सुझाव दिया कि बूढ़ी एवं अशक्त मवेशी के रखरखाव के लिए एक पशुशाला भी स्थापित की जाए। गोरक्षा सभा एवं सिंहसभा द्वारा बाद में शिमला में एक पशुशाला बनाई भी थी जो अब टूट चुकी बताई गई।

५६. १० जून १८८४ को गणेशदास, ब्राह्मण एवं रामजीदास खत्री जो ब्रह्म समाज के सदस्य भी थे, ने लाहौर में खुलेआम सम्बोधन करते हुए पशु हत्या प्रथा की निन्दा की तथा हिन्दुओं को अन्य जाति के लोगों के साथ भोजन करने हेतु मना किया। उनके भाषण के पश्च भाग को अपमानजनक पाया गया तथा उन्हें झाड़ू लगाने वाले लोगों के साथ भोजन करने की सलाह दी गई।

५७. जून १८८४ के मध्य में फिरोजपुर जिले में बाघपूरन स्थान से पुलिस द्वारा लहना सिंह उर्फ कर्मसिंह नामक सन्दिग्ध व्यक्ति को गिरफ्तार किया गया। कहा माना जाता है कि कूकाओं द्वारा १८७१ में कसाइयों की हत्या हुई थी उन हत्यारों में वह एक था। वह उस समय तक फरार था। इसके तुरन्त बाद उसने भयभीत होकर उस ओर भागने का प्रयास किया जिस ओर पुलिस के हथियार रखे हुए थे, परन्तु वह पुनः पकड़ा गया। पकडे जाने पर वह अत्यन्त उत्तेजित हुआ और उसने ऊंची आवाज में घोषणा की कि इससे पूर्व उसने उन लोगों का खून करके गोहत्या करने का बदला लिया था। वहाँ उपस्थित सिखों की हथियार न लेने के लिए भर्त्सना की। उसने घोषणा की कि उन्हें कोई हानि पहुँचाने की उसकी कोई मंशा नहीं थी बल्कि वह गोहत्या की अनुमति देनेवाले सरकारी कर्मचारियों के खून का प्यासा था।

५८. २१ जून १८८४ को गुरदासपुर में एक चर्चा चलती हुई रिपोर्ट की गई कि हिन्दुस्तान में गोहत्या बन्द कर दी गई थी तथा अशक्त पशुओं के चरने हेतु चारागाह खरीदे गए थे। पंजाब के हिन्दुओं से धन की मदद मिलने की प्रत्याशा थी।

५९. लगभग इसी समय गुजराँवाला से रिपोर्ट मिली कि हफीजाबाद की सिंह सभा की बैठक में गाय के प्रश्न पर विचार विमर्श हुआ था और एक हिन्दू ने कहा कि मुसलमानों ने एक फतवा जारी करके गोहत्या को अवैध करार दिया था।

६०. मोन्टगोमैरी से रिपोर्ट प्राप्त हुई कि दो हिन्दुओं द्वारा एक जंगली सूअर को मारकर खाने के परिणाम स्वरूप हुजरा में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच कलह की स्थिति पैदा हो गई। इन दोनों को उनके धर्म के लोगों ने एक सभा बुलाकर प्रताड़ित

किया और अन्त में यह मसला हल हो गया कि मुसलमानों ने गायों की हत्या नहीं करनी चाहिए तथा हिन्दुओं ने सूअरों को अवैध रूप से नहीं मारना चाहिए।

६१. २१ जून १८८४ सप्ताह के अन्तिम दिन दिल्ली में विद्यालय शिक्षक बाबू केदारनाथ के निवास में एक बैठक हुई तथा गोरक्षा सभा की निधि हेतु अंशदान लिया गया। बनारसीदास गुसाई जिसने कुछ वर्ष पूर्व इंग्लैण्ड जाकर गोहत्या बन्द कराने के लिए एक याचिका प्रस्तुत करके अत्यन्त प्रसिद्धि पाई थी। (स्पष्टतया यही व्यक्ति अगस्त १८८२ में मध्य भारत के हिन्दू राज्यों एवं राजपूताना में यात्राएँ करता हुआ देखा गया) उसे पुनः एक स्थान से दूसरे स्थान पर इस विषय पर आन्दोलन करने के उद्देश्य से जाते हुए देखा गया। वह दो या तीन दिन दिल्ली में भी रहा जहाँ उसे अत्यन्त प्रसिद्धि प्राप्त हुई। उसे स्नान घाट पर लोगों की बड़ी भारी संख्या की उपस्थिति को सम्बोधित करता हुआ भी देखा गया। जम्मू के महाराजा से भेंट करने वह जम्मू जा रहा था। उसकी यह यात्रा सम्भवतः दिल्ली या अन्यत्र आयोजित गोरक्षा बैठक से सम्बन्धित थी। बनारस के महाराजा के वकील लक्ष्मणदास दिल्ली से शिमला के रास्ते वायसराय के साथ गोहत्या मसले पर साक्षात्कार के लिए जाते हुए रिपोर्ट किए गए। हिन्दू आन्दोलन का विरोध करने हेतु दिल्ली के मुसलमान सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने हेतु एक प्रति स्मारक पत्र तैयार करने में लगे हुए थे। उस पत्र में वे प्रार्थना कर रहे थे कि मात्र बूचड़खाने में ही पशु हत्या नहीं तो मुस्लिम त्योहारों के अवसर पर नगर में निजी मकानों में भी पशु हत्या करने की अनुमति दी जाए। अजीजउद्दीन, वकील तथा मौलवी मुहम्मह याकूब (जो अक्टूबर १८८३ में ईद के अवसर पर अशान्ति निर्माण होने का कारण था) इस आन्दोलन के नेता बताए गए तथा वली मुहम्मद एंड.कं. फर्म के मुहम्मद इब्राहिम के निवास पर बैठकें आयोजित की गईं।

६२. जून १८८४ की समाप्ति पर करनाल से एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि उस जिले के हिन्दू इस बात से अत्यन्त प्रभावित हुए थे कि जब रूसी सेनाएँ भारत पर जीत प्राप्त कर लेंगी वे गोहत्या बन्द करा देंगी।

६३. इस प्रश्न को लेकर अम्बाला में व्याप्त आन्दोलन अब धीमा पड़ता हुआ बताया गया। मिर्चीलाल, बनिया ने सूचना दी कि शिमला के उपायुक्त के आदेशों के तहत उसने गोरक्षिणी सभा को बन्द कर दिया था। परन्तु ऐसी सूचना प्राप्त हुई कि इस सभा को गोपनीय रूप से चलाने के प्रयास हो रहे थे तथा इसके कुछ समय पूर्व लाला चरनदास, मिर्चीलाल एवं थान सिंह द्वारा की गई एक निजी बैठक में इस विषय को न

छोड़ने एवं मूलरूप से अभिप्रेरित उद्देश्यों के लिए निधि एकत्रित करने के निर्णय भी लिए गए।

६४. इसी समयावधि में मुल्तान में कुछ हिन्दुओं को कहते हुए सुना गया कि १८८१ में घटित दंगों के बावजूद भी गोमाँस नगर में लाया जाता था। प्रख्यात हिन्दू नेता इस विषय पर आन्दोलन छेडें और मुक्त रूप से धन खर्च करें तो कुछ न कुछ किया जा सकेगा। २० जून १८८४ को मियां अब्दुल हकीम की दरगाह पर आयोजित धार्मिक मेले के दौरान हिन्दुओं को मेले से इसलिए जाना पड़ा क्योंकि मेले के पास एक गाय की हत्या की गई थी, परन्तु कुछ उत्तेजना के पश्चात वे शान्त हो गए। नानबाइयों को दोषी पाया गया तथा उन्हें चेतावनी दी गई।

६५. जुलाई १८८४ में रोहतक के पूर्व पोस्ट मास्टर शुधनचंद गो प्रश्न को लेकर आन्दोलन में अपनी मुख्य भूमिका अदा करते हुए दिखाई दिए तथा रोहतक के कैथों को यह सूचित करते हुए सुना गया कि यदि वे थोडा अधिक समय वहाँ रहते तो गोहत्या पूर्ण रूप से बन्द करवा देते। (इससे लगता है कि यह वही व्यक्ति था जिसका उल्लेख ऊपर बनारस की केन्द्रीय समिति के साथ सम्पर्क करके समितियों की स्थापना करने के सम्बन्ध में बताया गया है।)

६६. ८ जुलाई १८८४ को अमृतसर के एक मुस्लिम महमदू ने कोतवाली में रिपोर्ट की कि वह अपने घर में गोमाँस पकाने वाला था। बजीरा नामक एक हिन्दू ने वहाँ जाकर सब बन्द करा दिया। बाद में जाँच करने पर पता चला कि वह गोमाँस को कोतवाली लाना चाहता था परन्तु बाद में उसने यह सोच कर लौटा दिया के उसके सह धर्मी लोग उसे ऐसा करने के लिए समर्थन नहीं देंगे। उसे चेतावनी दी गई।

६७. १२ जुलाई १८८४ के सप्ताह की समाप्ति पर गोसंरक्षण सोसाइटी की एक बैठक दिल्ली में वकील गिरधारीलाल के आवास पर की गई तथा बनिया सदस्यों द्वारा लगभग ७०० रूपयों का अंशदान दिया गया।

६८. १९ जुलाई १८८४ के सप्ताह की समाप्ति पर मुल्तान के हिन्दुओं ने मुसलमानों द्वारा नगर में बछिया की पूँछ काट दिए जाने के कृत्य को धार्मिक रंग देकर उत्तेजना फैलाने के प्रयास किए। नगर के विभिन्न भागों में एकत्रित भीड़ तितर-बितर हो गई तथा उस मुसलमान को भारतीय दण्ड संहिता की धारा ४२८ के तहत कैद की सजा दी गई। इसी सप्ताह में हजारा जिले के मोनन के पाँच हिन्दुओं ने शिकायत की कि उनके गाँव के समीप नदी के किनारे दो लोगों ने उनके एक बैल की हत्या करके उनकी धार्मिक भावना को दुःख पहुँचाया था।

६९. लाहौर से प्रकाशित फारसी अखबार ने अपने २२ जुलाई के अंक में एक लेख प्रकाशित किया जिसमें यूरोपीय लोगों के द्वारा गोमाँस भक्षण को हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच व्याप्त दुर्भावना का मुख्य कारण बताया गया। उसमें लिखा गया कि हिन्दुओं को सरकार से पशु हत्या पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए आवश्यक कदम उठाने हेतु निवेदन करना चाहिए।

७०. २४ जुलाई के आसपास लुधियाना जिले में एक अफवाह फैली रही कि अमृतसर के कूका महन्त भगवानसिंह ने गिल (सियालकोट) के सुभाष जमैतसिंह, लालूवाला (पटियाला) के सरमुखसिंह, कहुटा (फिरोजपुर) के समन्दसिंह, मुथड़ा (जलन्धर) के वजीरसिंह एवं भैनी के बुधसिंह को इस चेतावनी के साथ पत्र प्रेषित किए थे कि मुसलमानों ने गुरुद्वारा के पास बूचड़खाना खोलने की ठान ली थी अतः कूका अमृतसर की ओर बढ़ने की तैयारी रखें।

७१. अमृतसर के वकील बाबा नारायणसिंह ने २६ जुलाई को नोटिस जारी किया कि उन्होंने गायों के लिए एक प्रतिष्ठान शुरु किया था अतः किसी को कोई भी गाय भटकती हुई दिखे तो उसे वहाँ भिजवा दे।

७२. करनाल जिले में एक अफवाह लगातार फैली रही कि यदि रूसी सेना भारत पर जीत हाँसिल कर लेगी तो वह यहाँ गोहत्या बन्द करा देगी।

७३. ५ अगस्त के आसपास दिल्ली नगर के ८००० मुसलमानों ने कथित रूप में एक याचिका पंजाब सरकार के पास भेजी। इस याचिका का मुख्य मुद्दा नगर के मुसलमानों के अपने घर में एवं नगर में गोहत्या करने के अधिकार के सम्बन्ध में था। इसी समय दिल्ली के हिन्दुओं ने एक स्मरण पत्र सरकार को प्रस्तुत करते हुए निवेदन किया कि गोहत्या को बन्द किया जाए। उन्होंने सरकार को याचिका प्रस्तुत करने के खर्च की अदायगी हेतु लगभग ३००० रूपए भी एकत्रित किए।

७४. इससे पूर्व अगस्त में रोहतक के पोस्ट मास्टर शुधनसिंह, जिनका स्थानान्तरण मुरी के लिए किया गया था, ने रावलपिण्डी की धरमशाला में एक गुप्त बैठक आयोजित की। उन्होंने गोहत्या विषयक एक स्मरण पत्र वायसराय को प्रस्तुत करने के लिए तैयार किया था जिसे सरदार निखिलसिंह एवं कुल्दाना के ठेकेदार बहादुरसिंह का समर्थन प्राप्त हुआ रिपोर्ट किया गया। जम्मू के महाराजा इस आन्दोलन में अत्यधिक रुचि लेते हुए रिपोर्ट किए गए।

७५. दिल्ली के मुसलमानों ने बकरईद के त्योहार के अवसर पर अपने घर में गोहत्या करने हेतु जो याचिका दी थी उसे रद्द किया गया ऐसा पता चला। अतः दरउ-

ल-सल्तनत ने १३ अगस्त के अंक में इस हेतु एक लेख प्रकाशित किया जिसमें मुसलमानों को उनके इस विशेष अधिकार से क्यों वंचित नहीं किया जाना चाहिये इसके कारण बताए गये।

७६. १६ अगस्त के सप्ताह की समाप्ति के दौरान पता चला कि मुरी की गोसंरक्षण सोसाइटी के निम्नलिखित व्यक्ति सदस्य थे : सुख दयाल, फिनिक्स कैरिंग कं. में लिपिक; हेम राज, मुरी तहसील में लेखाकार; तथा बनी बाबू, रावलपिण्डी डाकघर में लिपिक। सितम्बर माह में दिल्ली में एक अफवाह फैलती हुई रिपोर्ट की गई कि मुसलमान अपने घरों में पशु हत्या करने की अनुमति हेतु दूसरी याचिका सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने की तैयारी कर रहे थे।

७७. अगस्त माह के आरम्भ में गुरदासपुर जिले के नरोत कस्बे में एक कसाई एक कपड़े में कुछ भैंसों के सींग बाँधकर ले आया। इस पर हिन्दुओं ने घोषणा की कि कस्बे में गोमाँस लाया गया था। अतः कस्बे के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच कुछ समय के लिए अत्यन्त दुर्भावना व्याप्त रही। बाद में लोगों के विरुद्ध झूठे आरोप लगाकर इसे और अधिक व्याप्त करने के प्रयत्न किए गए। जिन प्रमुख हिन्दुओं ने इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी वे थे नंदलाल, साहूकार; संदाल राजपूत; गंगाराम, अमीरचंद चौधरी, और गंगा, व्यापारी।

७८. अक्टूबर १८८४ में अपने अंक में फारसी अखबार के सम्पादक ने अपना लेख प्रकाशित किया जिसमें लिखा कि यद्यपि पशु हत्या मुसलमान कसाइयों द्वारा की जाती है, तो भी, यह उन प्राधिकारियों के आदेश पर किया जाता है जो चाहते हैं कि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच फूट बनी रहे।

७९. महीने के आरम्भ में अमृतसर जिले के दुर्गा गाँव के लम्बरदार मुसलमान द्वारा गाय की बलि दिए जाने के परिणाम स्वरूप गाँव में दुर्भावना व्याप्त होने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। तथापि, वास्तविक रूप से कोई दंगा नहीं भड़का।

८०. इसी समय पता लगा कि जगाधरी गाँव के लोहार तथा अन्य मुसलमान बूचड़खाने को नगर के बाहर से नगर के अन्दर लाने के लिए निधि एकत्रित कर रहे थे।

८१. मेरठ के कुछ यात्रियों ने बताया कि मेरठ के मुसलमानों द्वारा गाय की हत्या बूचड़खाने में करने के बजाय एक मस्जिद में करने के प्रयास किए जाने के परिणामस्वरूप वहाँ दंगा भड़क उठा था। ऐसी भी अफवाह फैली कि ईद के अवसर पर मुसलमानों द्वारा गोहत्या करने का प्रतिशोध लेने हेतु हिन्दू व्यापारी समुदाय ने

संयुक्त रूप से निर्णय लेकर मुसलमान कर्मियों को अपनी नौकरी से हटा दिया था।

८२. नवम्बर-दिसम्बर १८८४ में पूरे समय अलाराम साधु अमृतसर स्वर्णमन्दिर के आसपास प्राय : दिखाई दिए तथा लोगों को गोहत्या रोकने के लिए बाबा नारायणसिंह के साथ जुड़ने हेतु प्रेरित करते रहे।

८३. २३ नवम्बर को जलन्धर में सदर बाजार में स्थित रामजीलाल के निवास पर हिन्दुओं की एक बैठक आयोजित की गई जिसमें यह प्रस्ताव पारित किया गया कि गोमाँस की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगवाने के लिए सरकार को एक याचिका प्रस्तुत की जाए।

८४. दिसम्बर १८८४ में स्थानीय चिकित्सक ठाकुरदास ने लाहौर में भाषण देते हुए भोजन में मांसाहार करने की भर्त्सना की तथा कहा कि गोमाँस भक्षण शरीर के लिए अत्यन्त नुकसानदेह है। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी कहा कि इतने उपयोगी पशुओं को मारकर खाना अत्यन्त निन्दनीय कार्य है। इसी माह में ब्राह्मणों आदि की बैठक रेवाड़ी में आयोजित की गई जिसकी अध्यक्षता एक संन्यासी आत्माराम ने की। इसमें निर्णय लिया गया कि थके माँदे एवं बीमार पशुओं के संरक्षण एवं चारे की व्यवस्था की जानी चाहिए।

१८८५

८५. जनवरी १८८५ में अमृतसर से रिपोर्ट प्राप्त हुई कि अमृतसर के वकील बाबा नारायणसिंह, जो खुलेआम औपचारिक भाषण देते रहे थे, ने हाल ही में बन्द दरवाजे की एक बैठक की। उस बैठक में मात्र आर्यसमाज के सदस्यों को ही भाग लेने की अनुमति दी गई।

८६. इसी महीने रिपोर्ट मिली कि मोन्टगोमेरी जिले के डोगराय गाँव में मुसलमानों द्वारा एक गाय की हत्या की गई। इसके लिए उन्हें अदालत द्वारा सजा दी गई। इससे वहाँ स्थानीय लोगों में हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच दुर्भावना व्याप्त हो गई जो बढ़ती ही गई। उपायुक्त ने टिप्पणी करते हुए कहा कि मोन्टगोमेरी जिले के सभी हिन्दू पशु हत्या बन्द कराने हेतु कटिबद्ध थे। वे पशु हत्या करने वालों का बहिष्कार कर रहे थे। इस सम्बन्ध में वे सरकारी नियमों का भी पूरा पालन कर रहे थे।

८७. खैरपुर के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच पशु हत्या के विवाद पर बहावलपुर रियासत की परिषद ने मुसलमानों के पक्ष में अपना निर्णय दिया और

उन्हें नगर के अन्दर पशु हत्या करने की अनुमति दी। इस निर्णय से हिन्दू अत्यन्त क्षुब्ध थे।

८८. मई के लगभग मध्य में लुधियाना नगर के हिन्दू उन कसाइयों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई करने हेतु वकीलों आदि की फीस चुकाने के लिए अंशदान एकत्रित करते हुए सुने गए जो गलियों में गोमाँस खुलेआम बेचने हेतु कटिबद्ध थे। कहा गया कि यदि लुधियाना में उनके मामले में पक्ष में निर्णय नहीं मिला तो न्याय प्राप्त करने हेतु वे लाहौर में प्राधिकारियों के समक्ष इस मामले को प्रस्तुत करेंगे। इसी महीनें में, बाकौट के हिन्दुओं ने शिकायत की कि मजीद नामक दुष्ट प्रकृति के व्यक्ति ने धरमशाला के पास एक गाय की हत्या की थी। तथापि स्थल पर पुलिस बन्दोबस्त होने के कारण कोई दंगा नहीं भड़का।

८९. दिल्ली के वकील मदनगोपाल के निवास पर मई में गोरक्षा समिति की एक बैठक आयोजित की गई जिसकी अध्यक्षता वकील महाराजा लाल ने की। पारित प्रस्तावों को प्रकाशनार्थ लाहौर भेजा गया।

९०. जुलाई के प्रथम सप्ताह के आसपास लुधियाना नगर के कुछ हिन्दू इस प्रकार की टिप्पणियाँ करते हुए सुने गए कि यदि इंग्लैण्ड का रूस के साथ युद्ध छिड़ा तो हिन्दू इस अवसर का लाभ उठाकर देश के सारे कसाइयों का सामूहिक कत्ल कर देंगे।

९१. अगस्त के आरम्भ से रिपोर्ट प्राप्त हुई कि अमृतसर में आर्यसमाज के सदस्यों ने गोहत्या बन्द कराने के लिए वायसराय को स्मरण पत्र प्रस्तुत करने हेतु अंशदान एकत्रित किया था।

९२. १७ अगस्त को जलन्धर में कुछ हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई क्योंकि हिन्दुओं ने निलामी के लिये रखी हुई गायों को मुसलमान ने खरीद किया। हिन्दू चाहते थे कि नीलामी द्वारा बेची जानेवाली गायों की खरीद के लिए कसाइयों को कानूनी आदेश निकालकर बोली लगाने से प्रतिबन्धित किया जाए जब आज्ञप्ति देनेवाले हिन्दू मामले को छावनी के मजिस्ट्रेट द्वारा अशान्ति फैलने से पूर्व ही हल कर दिया गया। इसी महीने २२ वीं तारीख के आसपास पानीपत के कस्बे में पशु हत्या करने के सम्बन्ध में करनाल के उपायुक्त के समक्ष एक अनामी याचिका प्रस्तुत की गई परन्तु पुलिस जाँच से ज्ञात हुआ कि शिकायत के लिए कोई अवसर ही नहीं था।

९३. नवाब के पीर मियां गुलाम फरीद द्वारा किए गए उल्लेख के अनुसार ९

सितम्वर १८८५ से नवाब के आदेश पर उसके बहावलपुर महल में प्रतिदिन दो गायों या बैलों की हत्या की जाती थी। गायों की इस हत्या से शहर के हिन्दू अत्यन्त क्षुब्ध थे। सितम्बर १८८५ के दौरान वे इस हेतु मार्गदर्शन प्राप्त करते हुए रिपोर्ट किए गए। उन्होंने बताया कि विगत वर्ष में नवाब ने ४५ गायों की बलि चढ़ाने के आदेश दिए थे परन्तु जब हिन्दुओं में खलबली पैदा हो गई तब नवाब ने अपने आदेश को वापस ले लिया।

९४. होशियारपुर कस्बे में ईद के दिन एक निजी प्रांगण में मौलवी मियाँ मुहम्मद तथा अन्य पाँच लोगों द्वारा चार पशुओं का वध किए जाने के परिणाम स्वरूप अत्यन्त उत्तेजना व्याप्त हो गई। अपराधियों पर जिला मजिस्ट्रेट की अदालत में पशु हत्या विनियमन हेतु पंजाब सरकार के दिनांक १९ सितम्बर १८८१ के परिपत्र सं. १२-४५८१ के तहत मुकद्दमा चलाया गया तथा चार मुख्य अभियुक्तों को प्रत्येक को ५० रूपये दण्ड स्वरूप भरने की तथा दण्ड न भरने पर डेढ़ महीने के कारावास की सजा दी गई। अन्य दो अभियुक्तों को बरी कर दिया गया।

९५. इसी समय गोहत्या का एक गम्भीर मामला रेहान से रिपोर्ट किया गया। बताया गया कि २० सितम्बर को पैन्शनभोगी पुलिस उपनिरीक्षक बाज मुहम्मद एवं उसके पुत्र मोहम्मद हुसैन ने अपने घर में एक गाय की बलि दी थी। यह समाचार सुनते ही बड़ी भारी संख्या में हिन्दू उस स्थान पर एकत्रित हो गए। परन्तु वहाँ पुलिस होने के कारण शान्ति भंग नहीं हुई। एक कुए एवं दो मन्दिरों के आसपास पशुओं की हड्डियाँ पड़ी हुई पाने पर हिन्दू अत्यन्त उत्तेजित हो गए थे। उन्होंने कुछ कसाइयों के घरों को आग लगाने का भी प्रयास किया। उन्होंने घोषणा की कि वे मोहर्रम के दिन अशान्ति फैलाएँगे । जिला मजिस्ट्रेट ने बाज मुहम्मद पर २५० रूपये का जुर्माना लगाया तथा उसके पुत्र मुहम्मद हुसैन को एक वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी। इस प्रकार हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच यह आन्दोलन मन्द पड़ गया।

९६. दिल्ली में सूचना मिली कि समग्र भारत के मुसलमान सरकार को एक स्मरण पत्र देकर धार्मिक उद्देश्य से अपने घर के अंदर गोबलि देने की अनुमति प्राप्त करने के लिए कार्रवाई कर रहे हैं तथा माँग कर रहे हैं कि जो विशेष अधिकार उन्हें पहले प्राप्त थे दिए जाएँ।

९७. अम्बाला नगर में मुसलमानों और हिन्दुओं के बीच झगड़ा हो गया जिसके परिणाम स्वरूप हिन्दुओं ने प्राधिकारियों से शिकायत की कि ईद के दिन कुछ मुसलमान एक ठेला भरकर गोमाँस मण्डी से होकर मन्दिर वाले रास्ते से उस स्थान

पर लाए थे जहाँ से स्थानीय मेले के अवसर पर शोभायात्रा का प्रारम्भ होने वाला था। उपायुक्त ने निर्देश दिया कि नगर में गोमाँस उस दिशा से नहीं लाया जाना चाहिए था।

९८. गोहत्या आन्दोलन में विगत वर्षों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले दिल्ली के शुधनचन्द ने सामरियल में गोमाँस एवं ८ सूअर के गोश्त की बिक्री के विरोध में इतना प्रभावशाली भाषण दिया कि उस कस्बे के निवासियों ने भविष्य में वह बेचना बन्द कर दिया।

९९. ईद के दिन कुछ मुसलमान धोबियों द्वारा एक गाय की हत्या करके उसके माँस को गाँव में लाए जाने के परिणामस्वरूप चीचावतनी के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच कलह शुरू हो गया। गोहत्या के हाल ही के मामलों के कारण से होशियारपुर में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अत्यधिक संघर्ष की स्थिति निर्माण हो गई तथा उनके बीच दुर्भावना व्याप्त होने की रिपोर्ट मिली। बेतुकी एवं ऊटपटाँग अफवाहें भी फैलीं कि भीषण दंगे भड़केंगे। अतः लोगों ने अपने आभूषण एवं धन जमीन में छिपा दिए।

१००. दिल्ली के मुसलमानों द्वारा सरकार के समक्ष उन्हें उनके घरों के अन्दर, बगावत के समय से पहले की तरह, पशुहत्या करने की अनुमति दी जाए, इस उद्देश्य से एक स्मरण पत्र सरकार के समक्ष प्रस्तुत किया। इस पर होनेवाले वकील आदि के खर्च हेतु ११,००० रूपयों का अंशदान एकत्रित करने की भी रिपोर्ट प्राप्त हुई। ऐसी भी अफवाह फैली कि पंजाब के मुसलमानों ने कसाइयों को प्रेरित किया था कि जब तक उनकी बात न मानी जाए वे गोहत्या न करें तथा अपनी दुकान बन्द रखें।

१०१. बन्नू जिले के इसाखेल स्थान पर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच इस बात को लेकर दुर्भावना व्याप्त रही। हिन्दुओं ने आरोप लगाया कि दशहरा के त्योहार के दौरान गलियों में गोमाँस फैंका गया था। फिर भी कोई वास्तविक दंगा नहीं हुआ। १४ अक्टूबर को उमरखान नहर में पानी छोड़ने के समय कुछ बैलों की हत्या की गई तथा उनका माँस वितरित किया गया। इसाखेल के हिन्दुओं ने यह समझा कि नहर के पानी में खून बहाया गया था। अतः कुछ समय के लिए पानी की धारा को कस्बे के बाजार की ओर जाने से रोक दिया गया। तथापि, मामला ठण्डा हो गया तथा खास एहतियाती कदम उठाने की आवश्यकता नहीं हुई। झाँग जिले में चिनियोट में भी हिन्दुओं द्वारा उपयोग किए जा रहे एक कुए में मुहर्रम के कुछ दिनों बाद माँस के दो टुकड़े पाए गए। ये माँस के टुकड़े सम्भवतः गोमाँस के टुकड़े थे। इससे कुछ उत्तेजना व्याप्त हुई। तथापि किसी भी प्रकार की अशान्ति व्याप्त हुए बिना मामला ठण्डा

पड़ गया।

१०२. १८ अक्टूबर को वकील बावा नारायणसिंह की अध्यक्षता में आयोजित अमृतसर की आर्यसमाज की एक सभा में लगभग २००० लोगों ने भाग लिया। इसमें एक प्रस्ताव पारित किया गया कि गोहत्या को रोकने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए।

१०३. दिल्ली के एक प्रसिद्ध पंजाबी व्यापारी हाजी कुतबुद्दीन को मुसलमान दोस्तों को इस हेतु उत्तेजित करते हुए अत्यन्त सक्रिय हुआ देखा गया कि नगर में कुर्बानी देने के लिए अनुमति प्राप्त करने हेतु उन्हें सरकार को एक स्मरण पत्र प्रस्तुत करना चाहिए। दिल्ली की अन्जुमन-ए-इस्लामिया ने लगातार बैठकें आयोजित कीं जिनमें नगर की चौहद्दी में गोहत्या करने विषयक चर्चा ही मुख्य विषय रहा। पूर्व शाही परिवार के मिर्जा सुलेमान शाह के आवास पर निजी बैठकें भी हुईं।

१०४. दो मुसलमानों द्वारा एक बूढ़ी गाय को उसका चमड़ा प्राप्त करने के लिए मार देने के परिणामस्वरूप चुनियाँ के हिन्दुओं एवं मुस्लिमों में कुछ दुर्भावना व्याप्त रही। फिर भी, शान्ति भंग नहीं हुई।

१०५. अटारी पुलिस थाना के कालाँ कलाँ से कुछ मुस्लिमों द्वारा गायों की खुलेआम हत्या करने तथा गोमाँस की बिक्री के लिए एक दुकान शुरू करने से सम्बन्धित रिपोर्ट प्राप्त हुई। देपालपुर पुलिस थाना के दयाराम गाँव से एक मुसलमान द्वारा एक गोहत्या करने का मामला भी रिपोर्ट किया गया।

१०६. २५ नवम्बर को पकमपट्टन कस्बे में बाकरी जनजाति के लोगों द्वारा एक गाय की हत्या की गई। इससे वहाँ के हिन्दू और मुसलमान दोनों उत्तेजित हो गए और पुलिस रिपोर्ट की गई। इस मामले में रिपोर्ट प्राप्त हुई कि एक हिन्दू दुकानदार ने बाकरी बुनकरों द्वारा बुने गए वस्त्रों को खरीदने से मना कर दिया था तथा उनसे सम्बन्धित सभी लोगों को सामान बेचना भी बन्द कर दिया था।

१०७. दिसम्बर के लगभग मध्य में भाई फेरू पुलिस थाना के बुधियाना के एक मुसलमान ने हत्या करने के लिए एक गाय खरीदी। हिन्दुओं ने जब सुना कि कुछ गोमाँस गाँव में बिक्री के लिए लाया जा रहा था तो वे अत्यन्त उत्तेजित होकर इकट्ठे हुए। उन्होंने उस मुसलमान के घर पर निगरानी रखी तथा उसे पकड़कर पुलिस के हवाले कर दिया।

१०८. लगभग इसी समय पर ऐसी रिपोर्ट मिली कि सियालकोट जिले में धरमकोट पुलिस थाना के वडाला के कुछ मुसलमान हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं

की कद्र करने के लिए गोहत्या बन्द करना प्रस्तावित कर रहे थे। तथापि उनके कुछ लोग इस परिवर्तन का विरोध कर रहे थे।

१०९. दिसम्बर में हरियाणा और होशियारपुर के हिन्दुओं और मुस्लिमों में दुर्भावना में कमी नहीं हुई। हिन्दुओं का मुख्य उद्देश्य मुसलमानों द्वारा गोहत्या बन्द कराना तथा गोमाँस की बिक्री पर रोक लगाना था।

११०. अमृतसर में मजीठा के हिन्दुओं ने मुसलमान नगर में गोमाँस लाते थे तथा बेचते थे इस सन्देह से ग्रस्त होकर माँस की बिक्री हेतु अपनी अलग दुकानें खोली।

१११. सेना अभ्यास हेतु लगाए गए कैम्प के सिपाहियों के उपयोग के लिए मवेशी एकत्रित करने के आदेश से हिन्दुओं में उन कर्मचारियों और अन्यों के प्रति दुर्भावना व्याप्त हो गई जिनके माध्यम से मवेशी की खरीद की जानी थी।

११२. दिसम्बर १८८५ में अमृतसर के साधु अलाराम ने हिन्दू आर्यसमाज में शामिल हों इस हेतु लगातार भाषण दिए तथा गोसंरक्षण हेतु निधि एकत्रित की।

१८८६

११३. जनवरी १८८६ में रिपोर्ट मिली कि कटुनांगल पुलिस थाना के हमजा के मुसलमान पशुओं की हत्या हमजा में करते थे तथा गुप्तरूप से गोमाँस मजीठा में बेचते थे। इसी कारण से मजीठा के हिन्दू धीवरों से माँस खरीदते थे। हिन्दुओं और मुस्लिमों में एक समझौता भी हुआ परन्तु हिन्दुओं को भय था कि मुसलमान उन्हें परेशान करने के लिए कुछ भी करेंगे।

११४. यह भी रिपोर्ट मिली कि सोनीपत के कुछ बनियों ने अपने कस्बे में गोहत्या बन्द करा दी थी तथा राजगीर इस प्रकार के आदेश को रद्द कराने के लिए आन्दोलन कर रहे थे। पानीपत और करनाल के हिन्दू मुसलमानों की कार्यवाही का मुँहतोड़ जवाब देने के लिए संगठित हो रहे थे।

११५. २ फरवरी को संन्यासी बाबा अलाराम ने लाहौर में दब्बी बाजार में भाषण दिया। उन्होंने कहा कि सींगधारी पशुओं की हत्या रोकने के लिए, उन्हें खरीदने के लिए तथा प्रत्येक गाँव में उन्हें रखने हेतु पशुशाला की स्थापना करने के लिए अंशदान इकट्ठा किया जाए।

११६. १९ फरवरी को अम्बाला के बनिया समुदाय के आठ लोग नगर में गोहत्या पर रोक लगाने के लिए अनाज बाजार में एक मन्दिर में एकत्रित हुए। पानीपत

और सोनीपत कस्बों में पशु हत्या के खिलाफ आन्दोलन पहले की तरह चलाए जा रहे थे।

११७. इसके तुरन्त बाद यह रिपोर्ट मिली कि दिल्ली के मुसलमान नगर की चौहद्दी में कुर्बानी हेतु गोहत्या की अनुमति के लिए सरकार के समक्ष एक स्मरण पत्र प्रस्तुत करने में अत्यन्त रुचि दिखा रहे थे। उनका मानना था कि उनकी याचिका पर सरकार उन्हें अनुमति दे देगी।

११८. मार्च १८८६ में नौरंगाबाद पुलिस थाना के कोहार गाँव में कुछ मुसल्लियों द्वारा गोमाँस एवं चमड़े के लिए एक बीमार गाय की हत्या करने से वहाँ हिन्दुओं और मुसलमानों में कुछ दुर्भावना व्याप्त हो गई। इस मामले की रिपोर्ट उपायुक्त को भेजी गई और हिन्दुओं को चेतावनी दी गई।

११९. इसी महीने, कथुनांगल पुलिस थाना के हमजा गाँव के कुछ मोची बूढ़े और अशक्त पशुओं को उनके माँस और चमड़े के लिए बहुत कम कीमत पर खरीदने के आदी पाये गये। आसपास के गाँवों के हिन्दुओं ने इस कारण से उन्हें मवेशी बेचना तथा उनके कुँओं से पीने हेतु पानी लेना बन्द कर दिया था।

१२०. इसी वर्ष अप्रैल में मुजफ्फरगढ़ में कार्यरत एक रेलवे कर्मचारी बाबू चक्रवर्ती ने पुलिस में शिकायत की कि एक कसाई ने उनके घर के दरवाजे के पास एक गाय की हत्या की थी तथा मुजफ्फरगढ़ के प्रमुख हिन्दुओं ने कुछ समय तक उस कस्बे के भेड़ बकरी का माँस बेचने वाले कसाइयों से माँस खरीदना बन्द कर दिया क्योंकि उनका मानना था कि रेलवे स्टेशन के पास गाय की हत्या में उनका हाथ था।

१२१. बागी के लम्बरदार ठाकुरसिंह तथा शेरसिंह ने गाँव में ईसाई मिशनरियों को कुछ भूमि दी। आर्य समाज के साधु अलाराम को उस गाँव में ठाकुरसिंह एवं शेरसिंह को यह बात समझाने के लिए भेजा गया कि ईसाई लोगों के वहाँ बसने से आगे गोहत्याएँ होंगी। उन्हें जमीन न देने हेतु धार्मिक तर्क देकर भी समझाया गया।

१२२. इसके तुरन्त बाद बजीर भूलार पुलिस थाना क्षेत्र के फेसमन गाँव के ज्वालासिंह ने कहना शुरू किया कि यद्यपि रामसिंह गुरु को प्यारे हो गए थे तथापि एक कलकी अवतार शीघ्र ही होगा क्योंकि गोहत्या बढ़ती ही जा रही है।

१२३. खैर ख्वाह-ए-कश्मीर (लाहौर) ने अपने १३ मई १८८६ के अंक में लिखा कि बहावलपुर में आम सड़कों पर गोमाँस खुलेआम बेचा जा रहा था। उसने दरबार से अनुरोध किया कि इस बुराई पर रोक लगाए।

१२४. लाहौर जिले के खालरा के पुलिस उपनिरीक्षक हाकिमसिंह ने कहा कि

कश्मीर में गोहत्या की अनुमति दे दी गई इसमे यदि सचाई थी तो भीषण अशान्ति फैलेगी।

१२५. जून १८८६ में अकाल बंगा में कुछ निहंग दिन में दो बार बैठकें आयोजित करके गो प्रश्न पर चर्चा करते हुए रिपोर्ट किए गए। साथ ही वे इस विषय पर परामर्श करते थे कि अमृतसर शहर में गोमाँस लाने पर रोक लगाने के लिए उपायुक्त एवं उपराज्यपाल को याचिकाएँ प्रस्तुत करना कितना औचित्यपूर्ण होगा।

१२६. जुलाई में इससे पूर्व वैरागी फकीर की सलाह मानकर हिसार के बनिया लोगों ने सेना रसद विभाग के लिए मवेशी खरीदने के लिए कस्बे के कसाइयों द्वारा पशुओं की खरीद हेतु लगाई जानेवाली बोली से बढ़कर बोली लगाकर उन्हें मवेशी न खरीदने देने की ठोस योजना बनाई तथा इसके लिए ३,००० रुपयों का अंशदान भी एकत्रित किया गया। इसी महीने लुधियाना के हिन्दुओं ने पशुओं के चरने के लिए चारागाह हेतु भूमि खरीदने के उद्देश्य से निधि एकत्रित करने के लिए एक अभियान छेड़ा।

१२७. लगभग इसी समय दिल्ली में अफवाह फैली कि कश्मीर के महाराजा ने सरकार के अत्यावश्यक अनुरोध पर अपने अधिकार क्षेत्रवाले राज्य में ब्रिटिश सेनाओं को डेरा डालने के लिए स्थान आवंटित कर दिया था परन्तु बाद में, कुछ यूरोपीयों द्वारा एक गाय की हत्या होने के कारण उन्होंने अपने आदेश को निरस्त कर दिया। यह भी अफवाह फैली कि कुछ अधिकारियों के छुट्टी पर आने पर उनके द्वारा अपने कुत्तों को तीन गायों को फाड खाने के लिए छोड़ने के कारण कश्मीर में उत्तेजना बनी हुई थी।

१२८. जुलाई समाप्त होते होते दिल्ली के मौलवी मुहम्मद याकूब और मुहम्मद शाह ने आगामी इदुलजुहा के त्योहार पर नगर में गायों की कुर्बानी देने के लिए अनुमति देने हेतु आन्दोलन छेड़ने के उद्देश्य से अंशदान इकट्ठा करना आरम्भ कर दिया था।

१२९. ऐसी सूचना मिली कि कपूरथला के हिन्दुओंने गायों के चरने हेतु एक चारागाह के लिए कुछ भूमि खरीद ली थी तथा बूढे. और बेकार पशुओं को कसाइयों के हाथ पड़ने से बचाने हेतु प्रत्येक पर १० रू. तक खर्च हेतु देने की भी व्यवस्था की थी।

१३०. अगस्त १८८६ में समराला में अफवाह पहुँची कि चार कूका रूसी अधिकार क्षेत्र के रास्ते काबुल गये। वहाँ काबुल के कुछ लोगों ने उनके सामने गोमाँस

प्रदर्शित किया। तब उनके साथ हुए झगड़े में उनकी मृत्यु हो गई थी। १४ अगस्त को रिपोर्ट मिली कि मुजफ्फरगढ़ जिले में सिनानवान के हिन्दू गाँव के समीप एक गाय की हत्या के आरोपी दो मुसलमानों पर मुकद्दमा चलाने के लिए कटिबद्ध थे।

१३१. दासूया में कुछ प्रमुख हिन्दू दुर्बल एवं थकेमाँदे पशुओं को कसाइयों की दृष्टि से बचाने उन्हें खरीदने के लिए धन एकत्रित कर रहे थे। कसाई उन्हें चमड़ा उतारने के लिए भूखे रखकर मार डालते थे। सभी हिन्दुओं को अंशदान देने हेतु अनुरोध किया गया था।

१३२. मध्य अगस्त में जगाधरी के पण्डित दीनदयाल ने गोहत्या पर रोक लगाने के सम्बन्ध में लोगों की राय लेने हेतु एक बैठक आयोजित की।

१३३. सितम्बर १८८६ के आरम्भ में करनाल के हिन्दुओं ने ईद का त्योहार नजदीक होने के कारण गोमाँस का प्रश्न पुनः निर्माण हुआ तब उसके विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ कर दिया था। उन्हें आशंका थी कि पशुओं की हत्या करके उनका माँस खुली टोकरियों में भरकर कस्बे में लाएँगे जिससे अशान्ति फैलेगी। तथापि उनकी इस आशंका के प्रति पढ़े लिखे हिन्दुओं को विश्वास नहीं था।

१३४. आफताब-ए-पंजाब (लाहौर) ने अपने ६ सितम्बर १८८६ के अंक में ईद के दिन पशु हत्या से सम्बन्धित हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच हुए संघर्ष का हवाला देते हुए ब्यौरा प्रस्तुत किया। साथ ही हिन्दुओं की भावनाओं की कद्र करने हेतु उन्हें पशु हत्या न करने की सलाह दी। उसने तर्क दिया कि उनका धर्म भी विशेषतः इन निरीह पशुओं का कत्ल करने की अनुमति नहीं देता।

१३५. सितम्बर १८८६ में दिल्ली में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच विद्वेष की भावना फैली तथा भीषण दंगा हुआ जिसमें सेना की मदद लेना आवश्यक समझा गया। हालाँकि इस दंगे का कारण दो समुदायों के लोगों का एक शोभायात्रा के अवसर पर टकराव था। इसके कारण दुर्भावना फैली जिसका मुख्य कारण यह था कि मुसलमानों ने बकरईद के अवसर पर लगभग ४५० पशुओं की हत्या की थी।

१३६. लुधियाना में ईद के अवसर पर गोबलि देने से रोकने हेतु भरसक प्रयास करने के उद्देश्य से प्रमुख हिन्दुओं ने तथा विशेष रूप से आर्य समाज के सदस्यों ने पहले से ही संयुक्त प्रबन्ध किए थे। एक अफवाह भी फैली कि कुछ मुसलमानों ने एक सार्वजनिक कुए के पास रखे माँस को जब्त करने के लिए हिन्दू गए परन्तु वह माँस बूचड़खाने से वैध रूप से लाया गया था। मुसलमानों ने इसका बदला कुछ गलियों में हिंदुओं को निशाना बनाकर लिया। कुछ घण्टों के लिए नगर के कुछ

लोगों में अशान्ति का साम्राज्य छा गया।

१३७. अखबार-ए-आम (लाहौर) ने अपने १५ सितम्बर १८८६ के अंक में लुधियाना में भड़के दंगों का लेखा जोखा प्रकाशित किया। उसने लिखा कि मुसलमानों ने गाय को सजाकर निकाला और फिर उसकी हत्या कर दी तथा बिना किसी कारण से उन हिन्दुओं को निशाना बनाना शुरू कर दिया जो अस्थिपंजर को सहायक आयुक्त के पास ले जाना चाहते थे।

१३८. मुसलमानों का त्योहार ईद तथा हिन्दुओं का एक कम महत्त्वपूर्ण त्योहार बावन द्वादशी संयोगवशात् एक ही दिन पडे। अम्बाला में उस समय एक साथ अचानक दंगा भड़क गया जब मुसलमान एक तालाब के पास से ठेलें में लादकर गोमाँस ले जा रहे थे जहाँ कुछ हिन्दू एकत्रित हुए थे। ठेले के साथ जा रहे मुसलमानों को पुलिस ने तुरन्त गिरफ्तार कर लिया परन्तु हिन्दुओं द्वारा वहाँ से जाने के लिए मना करने पर उपायुक्त के आदेश पर लगभग ५० हिन्दुओं को गिरफ्तार करना आवश्यक हुआ। अदालत में हिन्दुओं का मुकद्दमा अम्बाला के वकील मुरलीधर द्वारा लड़ा गया। इस मुकद्दमे के चलने से हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना और अधिक फैली। 'कोह-ए-नूर' (लाहौर) ने अपने २८ सितम्बर १८८६ के अंक में अम्बाला के ईद के दंगों पर एक रिपोर्ट तोड़ मरोड़कर प्रस्तुत की। उसने लिखा कि बकरियों को खुलेआम कत्ल करने हेतु लाया गया तथा गोमाँस भी पकाने हेतु लाया गया। इसी समय के आसपास एक ऐसी भी अफवाह फैली कि शिमला के हिन्दू सरकार के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत करके अपनी इस माँग को प्रस्तुत करने वाले हैं कि धरमशाला के सन्निकट होने के कारण वहाँ के बूचड़खाने को हटाकर और कहीं ले जाया जाए। दिल्ली में मुसलमानों द्वारा चलाए जा रहे एक आन्दोलन के सम्बन्ध में भी रिपोर्ट मिली जिस में वे पत्र प्रस्तुत करके संसद को स्मरण करवाना चाहते थे कि विप्लव के पूर्व उन्हें जो अधिकार प्राप्त थे वे पुनः दिये जाय और घरों में पशु हत्या की अनुमति दी जाए।

१३९. वसीर उल मुल्क (सियालकोट)ने अपने १२ अक्टूबर १८८६ के अंक में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच पशु हत्या को लेकर हुए विद्रोह का हवाला देते हुए लिखा कि मुसलमानों को पशुहत्या नहीं करनी चाहिए।

१४०. अक्टूबर के आरम्भ में अमृतसर जिले में अफवाह फैली कि कश्मीर में सेना की छावनी बनने के कारण वहाँ भी गोहत्याएँ होनी आरम्भ हो गई थीं। दो यूरोपीय सिपाहियों द्वारा एक नील गाय की गोली मारकर हत्या करने के आरोप में

दीवान लक्ष्मणदास ने उन्हें फाँसी देने का आदेश दिया हालाँकि वहाँ के रेजीडेन्टों ने इसका विरोध किया तथा उन्होंने इस मामले की रिपोर्ट वायसराय को भी भेजी थी।

१४१. इसी माह अमृतसर शहर में गोहत्या के प्रश्न को लेकर आर्य समाज ने चर्चा की। उनके द्वारा बनाई गई योजनाओं में से एक योजना यह थी कि अत्यन्त निकटवर्ती दिवाली पशु मेले में पशुओं की खरीद हेतु कसाइयों द्वारा लगाई जानेवाली बोली से बढ़कर बोली लगाकर सभी गायों को खरीद लिया जाए तथा वकील नारायण द्वारा निर्मित पशु बाड़े में रखने के लिए पहुँचाया जाए। इस उद्देश्य के लिए धन भी एकत्रित किया गया। नारायण सिंहने दीवालों पर चिपकाने हेतु भित्तिपत्रक भेजे। उन्होंने हिन्दुओं से इस पुण्य कार्य में सहायता करने की प्रार्थना की। आर्यसमाज के सदस्यों द्वारा गोहत्या विषयक दिए गए भाषणों के कारण से कुछ उत्तेजना व्याप्त हुई। हिन्दुओं को यह कहते हुए सुना गया कि पशु मेले के दौरान कसाइयों तथा गोहत्या के उद्देश्य से सीमान्त जिलों से खरीद हेतु आनेवाले पशु व्यापारियों से झगड़ने के लिए मंझा जाट को बुलाया जायेगा। यह भी कहा गया कि यदि सरकार गोहत्या पर रोक लगा दे तो हिंदू सरकार को प्रतिवर्ष तीन लाख रूपए देने को तैयार थे। लुधियाना के तत्कालीन सहायक आयुक्त सरदार गुरदयालसिंह इस मामले में अत्यन्त रुचि ले रहे थे। वकील बाबा नारायणसिंह मुसलमान क्रेताओं से अधिक बोली लगाकर ५०० पशुओं को खरीदकर लाए थे। लाए गए सभी पशु बूढ़े और बेकार थे। वे उन्हें हरिद्वार भेजना चाहते थे जहाँ उनके चरने के लिए चारागाह उपलब्ध था। इन पशुओं की खरीद के लिए अंशदान इकठ्ठा किया गया, शहर के विभिन्न भागों में भित्तिपत्र चिपकाए गए जिनमें हिन्दुओं से इन गायों के संरक्षण के लिए आगे आकर धन द्वारा सहायता देने के लिए अनुरोध किया गया था।

१४२. इसके तुरन्त बाद मुरी के हिन्दुओंने बाजार से माँस खरीदना बन्द कर दिया क्योंकि उनका कहना था कि हत्या से पूर्व बाजार सार्जेंट गायों और बकरियों पर एक ही प्रकार का निशान लगाते थे।

१४४. ३१ अक्टूबर की अमृतसर में हुई आर्यसमाज की बैठक में बाबा नारायण सिंह ने घोषित किया कि दिवाली मेले से सोसाइटी द्वारा ९०० पशुओं की खरीद की गई थी जिनमें से ५०० बूढ़ी और बेकार गाएँ भी थीं। उन्हें खरीदकर मुसलमानों के हाथ पड़ने से बचाया गया था। उन्होंने मुद्दा उठाया कि प्रत्येक हिन्दू को कुछ न कुछ कष्ट उठाकर बहादुरी पूर्वक गाय की रक्षा करनी चाहिए। उसी दिन २० सेवकों की देखरेख में हरिद्वार के लिए सड़क के रास्ते से भेजी जानेवाली गायों की

पूजा करने के लिए बड़ी भारी संख्या में लोग एकत्रित हुए थे। हिन्दू प्रमुखों एवं अन्य लोगों को इस उद्देश्य से भेजा गया कि वे दुर्बल एवं थकी माँदी गायों को पकड़कर आर्य समाज के पास पहुँचवाएँ जहां उन्हें खरीद लिया जाएगा। अनुरोध किया गया कि पशुओं को कसाइयों के हाथ किसी भी हालत में नहीं बेचना चाहिए। अमृतसर की पण्डित सभा ने भी पशु मेले से लगभग सौ गायों की खरीद की। उनमें से २७ गायों को ५ नवम्बर को मालगाड़ी द्वारा हरिद्वार भेजा। आर्यसमाज के एक सदस्य नवलसिंह ने अमृतसर से हरिद्वार के लिए अपने साथ ३१२ गायों को लेकर प्रस्थान किया। १ नवम्बर को वे जण्डियाला पहुँचे। वहाँ उन्होंने बाजार में बड़ी भारी संख्या में एकत्रित श्रोताओं को गोसंरक्षण विषय पर दो घण्टे तक भाषण दिया। कस्बे के हिन्दुओंने उन्हें छह से सात बूढ़े पशु ले जाने के लिए सौंपे और उन्हें ले जाने के लिए धन भी दिया। इनमें से एक गाय को पहले एक मुसलमान के पास से लाया गया था।

१४५. पण्डित धर्मचन्दने अमृतसर में ७ एवं १३ नवम्बर को आयोजित आर्यसमाज की दो सभाओं में दो भाषण दिए जिनमें बड़ी भारी संख्या में लोग आए थे। उन्होंने दिवाली के मेले से बूढ़ी एवं अशक्त गायों और बैलों की खरीद को पुण्य कार्य बताया। ७ नवम्बर को बाबा नारायणसिंह ने हिन्दुओं को गायों के एक दल को हरिद्वार रवाना करने के लिए साक्षी बनने के लिए आमन्त्रित किया। नगर से वाद्यवृन्द के साथ लोगों की शोभायात्रा गायों के साथ आगे बढी। इस प्रकार लोगों ने सम्मान के साथ उन्हें वहाँ से विदा किया। बाद में एक पत्र प्राप्त हुआ जिसमें लिखा था कि गायों के जलन्धर पहुँचने पर वहाँ के हिन्दुओं ने उन्हें और १८ गाएँ दीं और धन भी दिया। जलन्धर में गोसंरक्षण समिति की स्थापना करने की भी ठानी।

१४६. अमृतसर से भेजी गई ३०० गायों समेत लुधियाना में लगभग ८०० गायें साधु अलाराम के संरक्षण एवं नेतृत्व में हरिद्वार के लिए भेजी जाने के लिए एकत्रित की गईं। लुधियाना के हिन्दुओं ने और अधिक गाएँ खरीदने के लिए ८०० रूपये का अंशदान दिया। गाँवों के मुसलमानों ने अपनी बेकार गायों को उन्हें बेचकर इस मौके का फायदा उठाया। तथापि उन्हें कोई बहुत अधिक कीमत नहीं मिली।

१४७. नवम्बर १८८६ में अफवाह फैली कि शिमला की हिन्दू सिंह सभा और लाहौर का खालसा गजट गोहत्या बन्द कराने के प्रयत्न कर रहे थे। आर्यसमाज के सदस्य सेना में भर्ती होकर तथा सिपाहियों पर अपना प्रभाव डालकर इस प्रथा पर अंकुश लगाने के प्रयास कर रहे थे। दूसरी ओर मुसलमानों ने घोषणा की कि वे अपने धार्मिक कृत्य जहाँ तक गोबलि देने का सवाल है, तब तक करते रहेंगे जब तक ऐसा

न करने के लिए सरकार आदेश नहीं देती।

१४८. दिल्ली के तीन खटीकों द्वारा इस अफवाह के फैलाने से, कि कुछ मुसलमान बकरियों की हत्या करने से पूर्व उन पर गाय का खून छिड़कते थे, हिन्दुओं ने उनसे बकरे का माँस खरीदना बन्द कर दिया। हिन्दुओं ने कुम्हारों को मुसलमानों को दूध के लिए मिट्टी की हण्डिया न बेचने की सलाह दी क्योंकि ऐसा करने से उनके व्यापार पर भी इसका असर हो सकता था।

१४९. २० नवम्बर की अमृतसर आर्यसमाज की सभा में नवलसिंह द्वारा प्रेषित एक पत्र पढ़ा गया जिसमें उनके गायों के दल के साथ लुधियाना में आगमन की सूचना थी। वहाँ हिन्दुओं ने उनका भव्य स्वागत किया था। बाबा नारायणसिंह ने आर्यसमाज की लाहौर, फिरोजपुर एवं जलन्धर की शाखाओं को पत्र भेजकर उनसे अनुरोध किया कि गायों की खरीद के लिए अंशदान एकत्रित किया जाए तथा कसाइयों से ऊँची बोली लगाकर गायों को खरीदने के हरसम्भव प्रयास किए जाएँ। छीता कटरा के धारी, सुचते एवं खत्री लोग अमृतसर नगर में गोसंरक्षण हेतु निधि में अंशदान लेने के लिए स्थान स्थान पर घूमते हुए देखे गए। एकत्रित अंशदान को आर्यसमाज के हवाले कर दिया गया। सोसाइटी गुरदासपुर जिले में कुछ जमीन प्राप्त करना चाहती थी जहाँ मुसलमानों से मुक्त की गई गायों को सुरक्षित रखा जा सके।

१५०. 'कोह-ए-नूर' के संवाददाता ने लाहौर से प्रकाशित इसके दिनांक २७ नवम्बर १८८६ के अंक में लिखा कि हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच में हाल ही में भड़के दंगों का मुख्य कारण पशु हत्या थी। उसने लिखा कि हिन्दू मुसलमानों के विरुद्ध इस प्रकार की अशान्ति निर्माण करके गलती करते रहे थे क्योंकि उन्हें विरोध तो उन यूरोपीय लोगों का करना चाहिए था जो गोमाँस खाते हैं। मुसलमान ने भी उनके लिए यह काम नहीं करना चाहिये तथा पशु हत्या भी नहीं करनी चाहिये।

१५१. १ दिसम्बर को साधु अलाराम हरिद्वार के लिए गायों के दल के साथ लुधियाना से अम्बाला पहुँच गए। उन्होंने नगर में हिन्दुओं की एक बैठक आयोजित की जिसमें पशुओं को चरने के लिये चारागाह के लिए भूमि खरीद करने हेतु निधि के लिए लोगों से अंशदान प्राप्त करने का प्रस्ताव पारित किया गया। धन एकत्रित करने के लिए एक समिति की रचना की गई जिसमें बिशनदास खत्री, विशाम्बर दास एवं ठाकुरदास बनिया, रामलाल कलाल, लहनासिंह जाट, कैथदास बनिया तथा देवासिंह कलाल शामिल थे। इनमें पहले चार सदस्य अम्बाला नगर पालिका के सदस्य थे तथा हाल ही मुहर्रम एवं दशहरा त्योहारों के दौरान हुए दंगों में इन्होंने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई

थी।

१५२. रोहतक जिले में बेरी के हिन्दुओं ने एक बैठक आयोजित करके निश्चय किया कि बूढ़े और बेकार पशुओं को खरीदने के लिए एक निधि की व्यवस्था की जाए। राजा कल्याणसिंह के ज्योर्जगढ़ के नजदीक स्थित पशुशाला में इन पशुओं को रखने की निःशुल्क व्यवस्था कर दी गई थी। ऐसे पशुओं की खरीद के लिए धन विवाह एवं धार्मिक विधि विधान के आयोजनों पर नियत भुगतान द्वारा एकत्रित किया जाता था।

१५३. अम्बाला के लहनासिंह जाट के निवास पर आयोजित ११ दिसम्बर की बैठक में भाग लेनेवाले हिन्दुओं ने गायों को कसाइयों के हाथ न पड़ने देने के उद्देश्य से उनकी खरीद निधि में बड़ी मात्रा में अंशदान प्राप्त करने के लिए जोर शोर से अभियान चलाया।

१५४. लाहौर के आर्यसमाज के सैनदास ने अमृतसर में १४ दिसम्बर को कहा कि समाज ने गोसंरक्षण विषय पर दो पुस्तकें प्रकाशित की थीं जिनमें से पहली पुस्तक उत्तर पश्चिमी सूबे के फतेहगढ़ के लाला मोहनलाल द्वारा लिखित गोधर्म सार है जिसकी एक प्रति का मूल्य दो आना है। दूसरी पुस्तक स्वामी प्रकाशानन्द सरस्वती द्वारा लिखित गोमाहात्म्य है जिसकी एक प्रति का मूल्य एक आना है। इसी विषय पर हरिद्वार से एक मासिक पत्रिका भी प्रकाशित की जाएगी।

१५५. २० दिसम्बर को चिचावतनी के मुसलमान गाय की हत्या करके उसका माँस गाँव में लाए। उस पर हिन्दुओं ने उन पर धावा बोल दिया। तत्पश्चात् अन्य मुस्लिम भी वहाँ एकत्रित हो गए। परिणामस्वरूप दंगा भड़क उठा। १२ हिन्दू एवं १३ मुसलमान गिरफ्तार किए गए। भारतीय दण्ड संहिता की धारा १४७ के तहत उन पर मुकद्दमा चलाया गया।

१८८७

१५६. ७ जनवरी १८८७ को अम्बाला के लहनासिंह जाट के आवास पर एक बैठक हुई जिसमें नगरपालिका के सदस्य बिशनदास, बिशम्भरदास तथा ठाकुरदास समेत लगभग पचास लोगों ने भाग लिया था। इसमें चर्चित विषयों में से एक विषय सभी पशुओं को मुसलमानों के हाथ किसी भी हालत में न पड़ने देने की सम्भावनाओं के सम्बन्ध में था ताकि पशु हत्या पर रोक लग जाए।

१५७. अन्जुमन-ए-पंजाब (लाहौर) ने अपने २६ फरवरी १८८७ के अंक में

लिखा कि मुम्बई में मुसलमान कसाइयों ने हिन्दुओं की भावनाओं की कद्र करते हुए १६ फरवरी को स्वैच्छिक रूप से पशुहत्या नहीं की। मुम्बई सरकार ने एक प्रस्ताव पारित करके दो सम्प्रदायों के बीच व्याप्त सद्भावना के प्रति सन्तोष व्यक्त किया था।

१५८. इसी वर्ष २ मार्च को शामगढ़ के हिन्दुओंने मुस्लिम तेलियों के गाँव के अन्दर गोमाँस लाने पर आपत्ति प्रकट की। इसके परिणामस्वरूप उनके बीच झगड़ा हो गया और तेलियों के साथ दुर्व्यवहार किया गया। तत्पश्चात् उनके कार्यों के प्रति हिन्दू सतर्क हो गए। विरोध समाप्त करने के लिए मुस्लिमों को १०० रू. अदा किए गए। कुछ स्थानीय ब्राह्मण लोगों का यह सुव्यवस्थित प्रयास था। उन्हें कुछ अधिकारियों से समर्थन प्राप्त करने की आशा भी थी। शामगढ़ के सरदार का उद्देश्य मुसलमानों को गोमाँस के उपयोग से रोकने का भी था।

१५९. मार्च १८८७ को वकील नारायणसिंह ने बैसाखी मेले के दौरान गायों की खरीद हेतु अंशदान देने के लिए नोटिस जारी किया। उन्होंने कहा कि विगत दिवाली पशु मेले से गोसंरक्षण एवं उनकी खरीद हेतु बढ़-चढ़कर अंशदान देने के कारण ही लोग रोगमुक्त रहे हैं। परन्तु अप्रैल में रिपोर्ट मिली कि बाबा नारायणसिंह ने सिंहसभा से अपना नाम वापस लिया इसी कारण अमृतसर के बैसाखी पशु मेले से एक भी गाय खरीद नहीं की गई।

१६०. किशोरीलाल एवं शिवचरणदास की अध्यक्षता में लुधियाना के कुछ हिन्दू फिर भी गोहत्या पर रोक लगाने के प्रयास करने की बातें करते रहे थे।

१६१. गुरदासपुर जिले के फतेहगढ़ के एक कहार इचरासिंह ने लाहौर की सुथार मण्डी में झटका माँस की एक दुकान खोली। मुसलमानों ने इस पर नाराजगी व्यक्त की। उन्होंने नवाब गुलाम महबूब सुभानी एवं शेख सण्डेखान की अध्यक्षता में प्रतिशोध की भावना के वशीभूत होकर गोमाँस की बिक्री हेतु एक दुकान खोलने की धमकी दी।

१६२. मुजफ्फरगढ़ जिले में किंजर के कुछ मुसलमानों पर गोहत्या के अभियोग में मुकद्दमा चल रहा था जिसमें उन्हें बरी कर दिया गया। इससे उस स्थान के हिन्दुओं और मुसलमानों में एक दूसरे के प्रति कड़वाहट की भावना बढी।

१६३. लाहौर के भाई अमरसिंह एवं पण्डित तेलूराम ने २७ जून को लुधियाना में आर्यसमाज की बैठक में भाषण दिए। उन्होंने कहा कि गाय एक पवित्र प्राणी है, अतः इसके साथ दुर्व्यवहार तथा इसकी हत्या न होने देने के हर सम्भव प्रयास किए जाने चाहिए। रामजीलाल खजांची बैठक में उपस्थित रहे थे।

१६४. फर्रुखाबाद जिले के खेमगंज के बाबू छेड़ालाल द्वारा लिखित तथा हरिद्वार की गोसंरक्षण सोसाइटी के अध्यक्ष लाला मोहनलाल द्वारा प्रकाशित गोमाहात्म्य शीर्षकयुक्त एक प्रकाशित पुस्तिका अमृतसर में जुलाई में परिचालित होती हुई रिपोर्ट की गई। सर्वरक्षक हरिद्वार गोरक्षिणी सभा ने भी सोसाइटी के नियम जारी किए जिसकी प्रतियाँ अमृतसर भेजी गई थीं।

१६५. अमृतसर में १९ जून को आयोजित आर्यसमाज की एक बैठक में घोषित किया गया कि आगरा का आर्यसमाज गोहत्या विषय पर ओजस्वी भाषण दे रहा था तथा इस प्रथा की कठोर शब्दों में निन्दा कर रहा था। आर्यसमाज की २७ जून को आयोजित अमृतसर की बैठक में पण्डित लेख राज ने बताया कि बड़ी संख्या में गाएँ लेकर हरिद्वार को गए हुए सुन्दरदास गायों को वहाँ सुरक्षित पहुँचाकर वापस आ गए थे। सोसाइटी के एक सदस्य गंगाराम ने बैठक में जानकारी दी कि गोहत्या पर रोक लगाने के लिए हिन्दुओं द्वारा प्रस्तुत की गई अरजी को महारानी की जयन्ती के कारण सरकार ने अस्वीकृत कर दिया था। अमृतसर के वकील बाबा नारायणसिंह ने बताया कि कश्मीर प्राधिकारियों के साथ और बैलों को इकट्ठा करके उन्हें जम्मू भेज दिया जाए ताकि उन्हें इस देश में हत्या किए जाने से बचाया जा सके।

१६६. दिल्ली में रिपोर्ट मिली कि अम्बाला के वकील मुरलीधर जिन्हें पिछले वर्ष के मुहर्रम के दंगों के लिए अभियुक्त मानकर मुकद्दमा चलाकर सजा दी गई थी लेकिन उच्च न्यायालय में अपील किए जाने पर उन्हें बरी कर दिया गया था, ईद के अवसर पर गायों की कुर्बानी के लिए हत्या करने के विरोध में आन्दोलन छेड़ने से अब वे अत्यन्त लोकप्रिय एवं प्रभावी हो गए थे।

१६७. जुलाई के आरम्भ में दसूया से एक रिपोर्ट प्राप्त हुई जिसके अनुसार आर्यसमाज के सदस्य बेकार मवेशी को हत्या से बचाने के लिए खरीदकर गोहत्या विरोधी आन्दोलन को सफल बनाने के प्रयत्न कर रहे थे।

१६८. मुट्टरा के एक ब्राह्मण महाराज कुमार देश में यात्राएँ करके अंशदान एकत्रित कर रहे थे। साथ ही वे नगर में पशुओं, बन्दरों एवं अन्य प्राणियों की हत्या पर रोक लगाने के लिए भारत सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने हेतु एक स्मरणपत्र पर प्रमुख हिन्दुओं के हस्ताक्षर प्राप्त कर रहे थे। ९ जुलाई को बिहारीलाल नामक व्यक्ति के साथ वे मुल्तान में देखे गए। उन्होंने डेरा इस्माइलखान से ४०० रूपये डेरा गाजी खान से ३०० रूपये तथा मुल्तान से ७५ रूपये का अंशदान प्राप्त किया। ऐसी भी आशंका व्यक्त की गई कि इस धन का किसी अन्य उद्देश्य के लिए उपयोग किया गया था।

१६९. अम्बाला में ४ जुलाई को भाई अमरसिंह एवं पण्डित तेलूराम (लाहौर) द्वारा आयोजित एक सभा में लगभग ४०० लोगों ने भाग लिया। भाई अमरसिंह ने कहा कि ईश्वर ने उन्हें दृष्टि दी है और वे नित्यप्रति गोहत्या होते हुए देखने को विवश थे । गाय सभी हिन्दुओं के लिए पवित्र है, इसका दूध लोगों के लिए जीवन का अमृत है, तथा गाय का गोबर भी उपयोगी है। कुछ समय पूर्व हरिद्वार में बहुत बड़ी संख्या में हिन्दू एकत्रित हुए थे। लोगों को गोहत्या के विरोध में आन्दोलन करने के लिए एक पत्रक पर हस्ताक्षर करने हेतु आमन्त्रित किया गया। उनके हस्ताक्षर पण्डित रघुनाथ को भेजे गए। व्याख्याता ने समस्त हिन्दू समाजों को इस मामले में रुचि लेने के लिए कहा था तथा अधिकाधिक संख्या में लोगों के हस्ताक्षर प्राप्त करने के लिए भी कहा था ताकि यह प्रथा बन्द हो सके। भाई अमरसिंह एवं पण्डित तेलूराम ८ जुलाई तक अम्बाला में रुके। बाजारों में मोर्चे निकाले तथा हस्ताक्षर आदि प्राप्त किए। ९ एवं १० तारीख को वे छावनियों की ओर गए और वहाँ भाषण दिए। नगर में वे ११ तारीख को लौटे और १२ तारीख को लाहौर के लिए रवाना हो गए। भाई अमरसिंह लाहौर शासकीय विद्यालय के पूर्व छात्र थे। वहाँ से वे उत्तर पश्चिमी सूबे की ओर गए थे। पण्डित तेलूराम ने बताया कि वे गुरदासपुर के हाईस्कूल में शिक्षक के पद पर कार्यरत थे तथा उस समय छुट्टी पर थे।

१७०. सियालकोट के आर्यसमाज के अध्यक्ष तथा अतिरिक्त सहायक आयुक्त राय नारायणदास के आवास पर सोसाइटी की एक बैठक १७ जुलाई को आयोजित की गई जिसमें पशु हत्या विषयक विचार विमर्श किया गया। रायमूल राज, एम.ए., अतिरिक्त सहायक आयुक्त ने प्रस्ताव रखा कि पशुहत्या बन्द करने हेतु प्रयास किए जाने चाहिए। २४ जुलाई को अमृतसर में आर्यसमाज की एक बैठक आयोजित की गई जिसमें बताया गया कि आगरा में गोसंरक्षण हेतु सक्रिय कदम उठाए जा रहे थे।

१७१. अखबार-ए-आम (लाहौर) ने अपने २८ जुलाई के अंक में निम्नलिखित समाचार को पुनः प्रकाशित किया तथा उसे दिल्ली के एक संवाददाता द्वारा मुहम्मद इहसानुल्लाह के कोलकता से प्रकाशित समाचार पत्र (दार उल-सल्तनत) में प्रकाशनार्थ भेजाः 'दिल्ली के हिन्दू रोज बैठकें आयोजित कर रहे हैं तथा आगामी इदुलजुहा के त्योहार पर गोहत्या रोकने हेतु अंशदान एकत्रित कर रहे हैं। इस हेतु उनके द्वारा १,७५,००० रूपये की राशि पहले ही एकत्रित की जा चुकी है। उनका मानना है कि बिना अशान्ति फैलाए उनके लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकती। अतः वे कुछ ऐसे दुस्साहसी निर्भीक लोगों की खोज कर रहे हैं जिन्हें नगर में अशान्ति फैलाने

के लिए लगाया जा सके। उन्हें संरक्षण देने के लिए हिन्दुओं के मोहल्लों में गूजरों और जाटों को गुप्त रूप से काम में लगा दिया है।'

१७२. अगस्त १८८७ में रिपोर्ट प्राप्त हुई कि दिल्ली के हिन्दुओं में इस समाचार को सुनकर खुशी की लहर फैल गई है कि इदुलजुहा त्योहार पर गायों की बिक्री नहीं की जाएगी। तथापि मुसलमानों ने इस निषेध को शिकायत के रूप में लिया है। उन पंजाबी व्यापारियों द्वारा बैठकें आयोजित की गई थीं जिन्होंने घोषित किया था कि अगर कुर्बानी के लिए गायों की बिक्री रोकी गई तो वे उनके अधिकारों की रक्षा के लिए उन्हें सहयोग देंगे। ईद के अवसर पर नगर की चौहद्दी के अन्दर गायों को कुर्बानी के लिए बेचने की पुरानी परम्परा को रोककर हिन्दुओं के प्रति पक्षपात करने की शिकायत की।

१७३. खबर मिली कि लुधियाना के जिन मुसलमानों ने पिछली ईद पर बकरियों की ही कुर्बानी दी थी, वे इस वर्ष पशु हत्या करके कुर्बानी देंगे। करनाल में भी एक अफवाह फैली कि दिल्ली के मुसलमान ईद के अवसर पर कुर्बानी हेतु बड़ी संख्या में गाएँ खरीदकर लाए थे। हिन्दू इन गायों की हत्या रोकने के लिए आन्दोलन कर रहे थे।

१७४. इसी महीने फतेहगढ़ के बाबा सुन्दरसिंह ने अमृतसर में कहा कि आर्यसमाज द्वारा शीघ्र ही गोसंरक्षण एवं पशुहत्या रोकने के उपायों को तलाशने के उद्देश्य से कोलकता में एक बैठक आयोजित की जाएगी। इसमें समग्र भारत से सभी सम्प्रदायों के लोगों को आमन्त्रित किया जाएगा। इस बैठक में आनेवाले लोगों पर होने वाले खर्च हेतु अंशदान इकट्ठा किया जा चुका था।

१७५. अम्बाला से सूचना प्राप्त हुई कि देहरादून की गोसंरक्षण सोसाइटी के लिए मेरठ के विद्यादर्शन प्रेस से गोरक्षिणी सभा देहरादून के नियम और उपनियम विषयक पुस्तिका जारी की गई थी। सोसाइटी का उद्देश्य गोरक्षा करना, उनके लिए गोशालाएं स्थापित करना, उनके लिए गोचरभूमि खरीदना तथा पशुहत्या को बन्द कराना था।

१७६. इससे पूर्व सितम्बर में रोहतक जिले के महिम में कुछ बनिया लोगों ने शिकायत की कि ३० अगस्त को ईद के त्योहार पर कस्बे के कुछ मुसलमानों ने हिन्दुओं के घरों के बीच में एक स्थान पर एक गाय की हत्या की थी। तत्पश्चात् उन्होंने माँस का एक टुकडा हिन्दुओं के मन्दिर के प्रांगण में फैंका था। स्थानीय प्राधिकारियों ने मामले की तहकीकात की और उसे निपटा दिया।

१७७. ३ सितम्बर को जलन्धर से रिपोर्ट मिली कि कूका लोग दलीपसिंह के शासन की पुनर्स्थापना की बाट जोहने लगे थे क्योंकि उन्हें विश्वास था कि वे गोहत्या अवश्य बन्द करा देंगे। उनका कहना था कि यदि अंग्रेज पशुहत्या पर रोक लगा दें तो वे उनके सिवाय किसी की भी सरकार की माँग नहीं करेंगे। गुरदासपुर से भी रिपोर्ट मिली कि श्री गोविन्दपुर के कूका लोग अधीर एवं असन्तुष्ट दिख रहे थे तथा गोहत्या के विषय पर अत्यन्त चिन्तित थे।

१७८. १ सितम्बर को आर्यसमाज की तरनतारन में आयोजित बैठक में कहा गया कि ब्रिटिश शासन में भारत के लोगों ने बहुत से लाभ प्राप्त किए थे जिनके लिए वे इस सरकार के कृतज्ञ थे। लेकिन पशुहत्या का मामला भारत के लोगों के लिए अत्यन्त अन्यायपूर्ण था। अतः इस आपत्तिजनक प्रथा को बन्द कराने के लिए हरसम्भव प्रयास किए जाने चाहिए।

१७९. झज्झर के हिन्दू महिम में हुई गोहत्या के सम्बन्ध में अत्यन्त उत्तेजित थे। वे उनके कस्बे में गोहत्या पर सरकार की ओर से निषेध लगवाने की प्रार्थना युक्त एक याचिका सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने की तैयारी कर रहे थे। कुछ मुसलमान भी उन्हें इस हेतु समर्थन देते हुए रिपोर्ट किए गए।

१८०. दोस्त एवं सफीर-ए-हिन्द (दिल्ली) ने अपने क्रमशः ८ एवं १६ सितम्बर के अंकों में बादशाह शाह आलम द्वारा जारी किए गए एक फरमान की साक्ष्यांकित प्रति प्रकाशित की जिस में कहा गया कि हदिस के अनुसार गायों या बैलों की हत्या पूर्णतः निषिद्ध है अतः उनके समग्र साम्राज्य में इन पशुओं की हत्या पर निषेधाज्ञा लागू कर दी थी।

१८१. आर्यसमाज की सामान्य बैठक १८ सितम्बर को अमृतसर में हुई। आर्यगजट के कुछ उद्धरण पढ़कर सुनाए गए जिनसे यह ज्ञात होता था कि पण्डित धनीराम हरिद्वार गए थे तथा वहाँ उन्होंने गोरक्षा (गोसंरक्षण सोसाइटी) के लिए कुछ धनदान दिया था। मुम्बई में भी पशु हत्या को रोकने के लिए प्रयत्न किए गए।

१८२. दिवाली मेले से पूर्व, तरनतारन डिस्पेंसरी के अस्पताल सहायक तथा आर्यसमाज के सदस्य सावयाराम ने अपने धर्म के लोगों से निवेदन किया कि वे जितनी अधिक गाएँ इस मेले से खरीद सकते थे, खरीद लें। उन्होंने कहा कि लाहौर स्थित आर्यसमाज ने उन्हें ऐसा करने के लिए कहा था। इस सलाह को उन सभी स्थानों पर सम्प्रेषित किया गया जहाँ आर्यसमाज के प्रतिष्ठान थे।

१८३. नवम्बर १८८७ में आर्यसमाज की लखनऊ शाखा द्वारा प्रेषित

अमृतसर में गोप्रश्न पर एक पत्र प्राप्त हुआ जिसे सोसाइटी की बैठक में पढ़ा गया। सभी सदस्यों को वायसराय को स्मरणपत्र प्रस्तुत करके गोहत्या बन्द कराने हेतु निवेदन करने के लिए निर्देशित किया गया था।

१८४. सिविल एण्ड मिलट्री गजट के कानपुर संवाददाता ने १८ नवम्बर के अंक में उल्लेख किया था कि साधु अलाराम ने भगवानदास घाट पर एक भाषण दिया जिसमें उन्होंने कहा कि कुछ यूरोपीय सज्जनों ने गोरक्षा सभा से जुड़ने को इच्छा व्यक्त की थी तथा भविष्य में कभी भी गोमाँस नहीं खाने का वायदा किया था।

१८५. २९ दिसम्बर को कूका खड़क सिंह को अमृतसर में निम्नलिखित कविता गाते हुए सुना गया :

लन्दन से म्लेच्छ चार आए
इन्होंने घर घर बूचड़खाने लगाए
गुरुओं को इन्होंने मारा
अब हमें ये अपना सिर देने आए।

१८६. इसी माह रिपोर्ट मिली कि दिल्ली में गोहत्या विषय पर मौलवी नासिरहुसैन एवं अब्दुल हक के दृष्टांत के अनुसार 'फतवादार तक्सीव फरमान शाह आलम सानी' शीर्षक वाली एक पुस्तिका प्रकाशित हुई थी। लेखक ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया था कि शाह आलम द्वितीय द्वारा उनके साम्राज्य में गोहत्या निषेध विषयक जिस फरमान को 'दोस्त' के ८ सितम्बर, १८८७ तथा सफीर-ए-हिन्द के १६ सितम्बर, १८८७ के अंक में प्रकाशित किया था, वह प्रामाणिक नहीं था। उन्होंने पशुहत्या को वैध ठहराने के लिए कुरान से कुछ आयतें उद्धरणस्वरूप दीं तथा हिन्दू धर्म के अनुसार भी अपने कथन की पुष्टि हेतु गोहत्या को वैध ठहराने की कोशिश की थी।

१८७. मोन्टगोमेरी जिले में एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि कबीर के मुसलमानों ने हिन्दुओं पर अपने घर में खाने के लिए गोमाँस लाने का आरोप लगाया।

१८८८

१८८. इससे पूर्व जनवरी १८८८ में होशियारपुर जिले के मुकेरियन पुलिस थाने के झण्डोवाल के सुधसिंह लाल मिश्र एवं नत्थासिंह ने गोहत्या विषयक एक पार्सल प्राप्त किया जिसे लखनऊ से एक वकील (नाम अज्ञात) ने भेजा था।

१८९. लुधियाना जिले में भी ऐसा बताया गया कि अमृतसर और लाहौर के आर्यसमाज इंग्लैंड की संसद में अपना एक प्रतिनिधि भेजकर गोहत्या बन्द कराने के लिए एक याचिका प्रस्तुत करने के उद्देश्य से अंशदान इकट्ठा कर रहे थे।

१९०. फरवरी के आरम्भ में लुधियाना से प्रकाशित मशीर-ए-हिन्द समाचार पत्र ने बनारस में आयोजित हिन्दुओं की एक बड़ी सभा का ब्यौरा प्रस्तुत किया जिसमें इस बात पर चर्चा हुई कि १८८६ की अशान्ति से हिन्दुओं के सम्बन्ध में सरकार की गलत सोच को कैसे बदला जाए। इसमें इस बात को भी रखा गया कि यदि सरकार की भूमिका ठीक होती तो मुसलमानों ने गोहत्या छोड दी होती।

१९१. लखनऊ के एक वकील, मिर्जा अब्दुल्ला ने गोहत्या विषयक एक पुस्तिका प्रकाशित की जिसमें उन्होंने भारत के मुसलमानों से पशुहत्या न करने की अपील की। उन्होंने हिन्दुओं के साथ अपने मतभेद दूर करने के लिए भी कहा। इसमें २४ पृष्ठ हैं। २६ मार्च के एक परिपत्र की काफी प्रतियाँ हिन्दी एवं उर्दू भाषा में तथा अंग्रेजी में हस्ताक्षरित रूप में धरमशाला में प्राप्त हुईं। लेखक को १० रुपये मूल्य की पुस्तिका का पार्सल वी.पी.पी. से भेजने की सलाह दी गई। यह भी बताया गया कि 'वकीलनामा' नामक पत्र हाल ही में प्रारम्भ हुआ था। इसे खरीदनेवाले को निःशुल्क भेजा जाएगा। साथ ही भारत में पशु हत्या पर पूरी तरह से रोक लग जाने के बाद वे समस्त कार्यवाही की मुद्रित प्रति पाने के भी हकदार होंगे। कहा जाता था कि मिर्जा अब्दुल्ला सेवाभाव से अपनी रुचि से उन्हें प्रेषित कर रहे थे। वे 'कोह-ए-नूर' समाचारपत्र के पूर्व सम्पादक थे। पशुहत्या विषयक पुस्तिका में कहा गया था कि हिन्दुओं को मुसलमानों के सहयोग से सरकार से इस प्रथा को बन्द करवाना चाहिए। यह तर्क भी दिया था कि इस मामले पर दोनों पक्षों द्वारा संयुक्त रूप से कार्रवाई करने से दोनों का ही फायदा होगा। धरमशाला के पुलिस निरीक्षक ने भी इसकी एक प्रति प्राप्त की। उसने इसका मूल्य चुकाने के लिए अपने मातहतों से अंशदान प्राप्त किया। इसकी एक प्रति देहरा के तहसीलदार ने प्राप्त की थी। पुस्तिका के लेखक मिर्जा अब्दुल्ला ने इसे इस उद्देश्य एवं आशा से जारी किया था कि वे पशुहत्या के खिलाफ आन्दोलन छेड़कर हिन्दुओं की तरह धन इकट्ठा करेंगे तो उनका हित होगा। अमृतसर में ४ मार्च की आर्यसमाज की बैठक में लगभग ५० लोगों ने भाग लिया। जब सालिग राम वकील ने घोषणा की कि इलाहाबाद में साधु अलाराम ने उन्हें कहा था कि अत्यन्त प्रभावशाली लोग आर्यसमाज के साथ जुड़ने के लिए तैयार थे और गोसंरक्षण हेतु सभी प्रकार की सहायता देने को तत्पर थे।

१९२. 'अखबार-ए-आम' (लाहौर) ने अपने ७ अप्रैल १८८८ के अंक में दो मुसलमान समाचार पत्रों द्वारा उठाए गए गोहत्या विषयक प्रश्न पर अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा ताकि पाठक इस प्रश्न के दोनों पहलुओं से परिचित हो सकें। ऐसी सूचना मिली कि मुसलमान ने गोमाँस की बिक्री करने के लिए एक दुकान खोलने की अनुमति फिरोजपुर के उपायुक्त से माँगी थी। उसे अनुमति दी गई तथा तहसीलदार को एक उपयुक्त जगह पर उस दुकान को खुलवाने के लिए आदेश दिए गए। फिरोजपुर से प्रकाशित साप्ताहिक अल सादिक ने इस घटना पर टिप्पणी प्रस्तुत की कि इस प्रकार की दुकान के खुलने से हिन्दुओं की भावनाओं को ठेस पहुँचेगी। इसके परिणाम अवांछित होंगे। उसने सुझाव दिया कि मुसलमानों को हिन्दुओं के हित के लिए इस प्रथा को त्याग देना चाहिए। 'अखबार-ए-आ'म ने बंगलौर के 'सुल्तान-ए-अखबार' से उद्धरण प्रस्तुत किए जिनमें कहा गया था कि कुछ कट्टर हिन्दू भारत में पशु हत्या बन्द कराने के लिए भरसक कोशिश कर रहे हैं तथा सरकार को भी यह घोषित करने हेतु प्रेरित कर रहे हैं कि भारतीय दण्ड संहिता के तहत पशुहत्या को दण्डनीय अपराध माना जाए। लेखक ने आगे लिखा कि हिन्दुओं ने बिना किसी कारण के गोमाँस निषिद्ध किया है लेकिन मुसलमानों को वे पशु हत्या करने से क्यों रोकते हैं। उनके तर्क की खिल्ली उड़ाते हुए लिखा कि जब तक पशु हत्या पर रोक नहीं लगाई जाती खेती के लिए पशुओं की कमी रहेगी।

१९३. फिरोजपुर के उपायुक्त को ६ अप्रैल को अंग्रेजी में एक अनाम पत्र प्राप्त हुआ जिसमें उन्हें धमकी दी गई कि यदि उन्होंने फिरोजपुर में गोहत्या की अनुमति दी तो उनकी हालत भी जैश राम, अतिरिक्त सहायक आयुक्त जैसी कर दी जाएगी।

१९४. 'आफताब-ए-पंजाब' ने अपने ११ अप्रैल १८८८ के अंक में एक लेख में लिखा कि ईशहरसिंह, उपओवर्सियर ने हफीजाबाद तहसील के अहमदपुर के उन लोगों पर मुकद्दमा चलाया था जिन्होंने हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाने के उद्देश्य से उनके घर के सामने दिन दहाड़े एक गाय एवं बैल की हत्या की थी। आफताब ने सुझाव दिया के दोषियों को सख्त सजा दी जानी चाहिए क्योंकि ऐसे अपराधों के कभी कभी अत्यन्त भीषण परिणाम निकलते हैं।

१९५. एक संवाददाता ने 'कोह-ए-नूर' (लाहौर) के दिनांक २४ अप्रैल १८८८ के अंक में लिखा कि पंजाब सरकार के परिपत्र सं. १२/४८८१, दिनांक १९ दिसम्बर १८८८ का गुजराँवाला में पालन नहीं किया गया है। प्रस्तुत परिपत्र के उपबन्धों का उल्लंघन करते हुए गुजराँवाला का बूचड़खाना कस्बे की हद में ३००

मीटर के अन्दर एक आम सड़क के किनारे स्थित है। साथ ही कत्ल करने के लिए लाए गए पशुओं को कचहरी रोड पर सड़क के किनारे बाँधा जाता है। हिन्दुओं एवं कई प्रभावशाली मुसलमानों द्वारा हस्ताक्षरित कई याचिकाएँ जिला प्राधिकरण एवं नगरपालिका के समक्ष इस बूचड़खाने को कस्बे की हद से हटाकर अन्यत्र उपयुक्त स्थल पर ले जाने के लिए प्रस्तुत की गई, लेकिन दुर्भाग्यवश अभी तक कोई भी निर्णय नहीं लिया गया जबकि नगरपालिका के कई सदस्यों ने इस बूचड़खाने को वर्तमान स्थल से अन्यत्र ले जाने हेतु अपनी सम्मति व्यक्त की थी। लेखक ने आगे कहा कि गुजराँवाला के हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच अब तक सम्बन्ध अत्यन्त मैत्रीपूर्ण रहे हैं। दोनों समुदायों में सद्भावना बनाए रखने के लिए यह अत्यावश्यक होगा कि शिकायतों को अविलम्ब हल कर लिया जाए।

१९७. पंजाब पंच (लाहौर) ने ३ मई १८८८ को लिखा कि हिन्दू का पशुहत्या का विरोध करना पूर्णतः न्यायसंगत है क्योंकि उनका धर्म पशुओं की हत्या करने की अनुमति नहीं देता। लेकिन इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर लिखते समय हिन्दू समाचार पत्रों की दृष्टि विचलित हो जाती है। मुसलमान समुदाय अकेला इस प्रथा के लिए उत्तरदायी नहीं हैं। वे यह सब मुख्य रूप से यूरोपीय लोगों के लिए करते हैं जो पशुहत्या की अनुमति देते हैं। मुसलमान समुदाय के लोगों के बीच इस प्रश्न पर मतभेद हो सकते हैं कि गोमाँस बिक्री के लिए दुकानें होनी चाहिए या नहीं। साथ ही समस्त समझदार मुसलमानों एवं समाज का हित सोचनेवाले लोगों की यही राय होगी कि गोमाँस बिक्री करनेवाली दुकानों को सरकार आदेश निकालकर बन्द करा दे क्योंकि इस प्रकार की दुकानों से दोनों समुदायों के बीच भीषण झगड़े तक की नौबत आ जाती है। लेखक ने अनुरोध किया कि हिन्दुओं को मुसलमानों से न कहकर सरकार से इस प्रथा को बन्द करने के लिए कहना चाहिए।

१९८. २६ मई को गुरदासपुर जिले से एक अफवाह की खबर मिली कि कूका लोग सही या गलत किसी भी तरीके अपनाकर गोहत्या रोकने पर तुले हुए थे ताकि जब दलीपसिंह आएँ तो, यह सब देखकर प्रसन्न हो जाएँ।

१९९. दिल्ली से ऐसी रिपोर्ट मिली कि पारसियों ने दिल्ली सरकार को गोहत्या विषयक एक याचिका प्रस्तुत की थी।

२००. 'आफताब-ए-पंजाब' (लाहौर) ने अपने ३० मई १८८८ के अंक में ईसाइयों के लिए एक पत्र प्रकाशित किया। ईसमें लेखक ने धर्मग्रन्थ से कुछ अंश उद्धृत करके यह दिखाने का प्रयास किया है कि गोमांस भक्षण करना इसाइयों का

धर्म नहीं है। उसने हिन्दुओं के हित में इस प्रथा का त्याग करने हेतु आह्वान किया क्योंकि इससे हिन्दुओं की भावनाओं को बहुत ठेस पहुँचती है।

२०१. ईद के दिन होशियारपुर पुलिस को सूचना मिली कि कस्बें में गोमाँस घड़ल्ले से बेचा जा रहा था। जाँच करने पर पता चला कि कसाई वहाँ गोमाँस बेच रहे थे। लेकिन इस की खबर मिलते ही ख्वाजा नामक शेख को रिपोर्ट दी गई जिसने इसे तुरन्त बन्द करा दिया।

२०२. २४ जून को आर्यसमाज के दिलबाघराय ने लाहौर में एक भाषण दिया जिसमें उन्होंने घोषणा की कि माँस खाते हैं वे सभी हिन्दू कसाई हैं और मुसलमानों से भी बुरे हैं। उनके इस बयान से अत्याधिक रोष व्याप्त हो गया।

२०३. फिरोजपुर जिले के मिनरान के सोधी खजान सिंह ने कहा कि जुलाई १८८८ के प्रारम्भ से हैदराबाद के निजाम तथा रियासतों के रावों ने वायसराय को एक याचिका भेजी है जिसमें पशु हत्या बन्द कराने हेतु सरकार से अनुरोध किया है जिससे मुसलमान एवं हिन्दू एकता से रह सकें।

२०४. इसी महीने में एक हिन्दू वकील की अध्यक्षता में फिरोजपुर में हिन्दुओं और मुसलमानों की एक जनसभा हुई। उसका उद्देश्य उपराज्यपाल को एक स्मरणपत्र प्रस्तुत करके यह अनुरोध करना था कि हाल ही में नगर के उपनगरीय क्षेत्र में जो बूचड़खाने खोले गए थे उन्हें बन्द कर दिया जाए। मुसलमानों ने इस आन्दोलन में इसलिए हिस्सा लिया क्योंकि उन्हें भय था कि हिन्दू और मुस्लिमों के बीच अब तक व्याप्त शान्ति एवं सद्भाव को गोमाँस की दुकान खुलने से चोट पहुँचेगी। उनको यह कहते हुए बताया गया कि जिन लोगों को गोमाँस की आवश्यकता हो वे छावनियों से सरलता से प्राप्त कर सकते है।

२०५. लगभग इसी समय, लुधियाना जिले के खन्ना से चोरी किए गए गाय के बछड़े की हत्या कर दी गई। इस स्थिति से अत्यधिक उत्तेजना व्याप्त हुई तथा दुर्भावना बढ़ी। हिन्दुओं ने इस घटना की शिकायत तार से उपायुक्त, आयुक्त एवं सरकार को की परन्तु उसे अस्वीकृत कर दिया गया। एक चोर पर मुकद्दमा चलाया गया। इसके परिणाम : स्वरूप मुसलमान सब्जी विक्रेताओं ने बहिष्कार किया। अगुआ व्यक्तियों में हीरालाल, नगरपालिका समिति के मुर्रिर थे जिन्हें बाबा भीमसेन, प्रभु बनिया, तथा परसा ब्राह्मण, सदस्य नगरपालिका, बंसी ब्राह्मण, तथा कालू कलाल का समर्थन था। इन लोगों ने बूचड़खाने बन्द कराने पर विचार विमर्श किया। यह भी सोचा गया कि यदि उत्तेजना बढ़ती गई तो दंगा भड़क जाएगा। अगस्त १८८८ में

अगली रिपोर्ट मिली कि खन्ना में हुई गोहत्या के सम्बन्ध में हिन्दुओं और मुस्लिमों में दुर्भावना बढ़ी थी। वह गाँवों तक पहुँच गई थी। लोगों में बातचीत का यह प्रमुख विषय बन गया था।

२०६. इम्पीरियल पेपर (लाहौर) ने अपने २१ जुलाई १८८८ के अंक में फिरोजपुर में कुछ समय पूर्व खुली गोमाँस की दुकान को बन्द कराने हेतु व्यापक विचार विमर्श के लिए की गई एक बैठक का हवाला दिया। गोप्रश्न पर आयोजित इस बैठक की कार्यवाही पर टिप्पणी करते हुए इम्पीरियल पेपर ने लिखा कि फिरोजपुर के मुसलमान वास्तव में पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के मूल उद्देश्य को समझ नहीं पाए थे। इस आन्दोलन के समर्थकों का मुख्य उद्देश्य अंग्रेज और मुसलमान दोनों थे, क्योंकि दोनों गोमाँस खाते हैं। अतः उन्होंने इन दोनों के खिलाफ हिन्दुओं को एकजुट किया है। लेखक ने मुसलमानों को चेतावनी देते हुए इस आन्दोलन के सम्बन्ध में लिखा कि इस आन्दोलन के मूल में हिन्दुओं की धार्मिक दृष्टि से आपत्ति थी। परन्तु उद्देश्य राजनीतिक दृष्टि से अंग्रेज एवं मुसलमान दोनों के विरुद्ध लोगों को संगठति करना था। अल सादिक (फिरोजपुर) ने २७ जुलाई १८८८ के अंक में इसी टिप्पणी को दुहराया कि फिरोजपुर की इस बैठक में पशु हत्या के मुद्दे पर चर्चा नहीं हुई बल्कि गोमाँस की दुकान बन्द कराने के उपाय सोचे गये।

२०७. अगस्त १८८८ के महीने में फिरोजपुर शहर के मौलवी हाशिम शाह ने गोहत्या करने के पक्ष में मुसलमानों द्वारा आन्दोलन छेड़ने का प्रयास किया। उसने घर घर जाकर इस हेतु सरकार समक्ष प्रस्तुत करने के लिए एक पत्र पर हस्ताक्षर करवाए।

२०८. इसी महीने के मध्य में फिरोजपुर नगर में पशु हत्या के सन्दर्भ में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच संघर्ष की स्थिति पैदा हो गई। देशी भाषाओं के समाचारपत्रों में इस विषय पर निम्नलिखित टिप्पणियाँ पढ़ने को मिलीं। 'कोह-ए-नूर' (लाहौर) ने अपने एक आलेख में फिरोजपुर के मुसलमानों की प्रशंसा की और उनके इस संयुक्त बैठक में भाग लेने तथा शहर में गोमाँस की दो दुकानों को खोलने के उपायुक्त के आदेश को रद्द कराने के लिए पंजाब सरकार को एक स्मरणपत्र देने के निर्णय में शामिल होने की भी प्रशंसा की। लेखक ने फिरोजपुर के मुसलमानों के इस सराहनीय कार्य की तुलना खान बहादुर मुहम्मद हयात खान के मैत्रीपूर्ण कार्य से की। 'आफताब-ए-अलामताब' (लाहौर) ने लिखा कि एक साधु ने हिन्दुओं के कर्तव्यों पर फिरोजपुर में भाषण दिया। उन्होंने पशु संरक्षण के महत्त्व को समझाया। उन्होंने कहा कि ६० वर्ष पूर्व एक रूपये का दस सेर घी मिलता था, अब पाँच या सात वर्षों में

इसके भाव पर अंकुश रखना कठिन होगा। चूँकि मुसलमान भी खूब घी खाते हैं, वे भी पशुहत्या बन्द कराने के लिए सरकार की अनुमति में हिन्दुओं का साथ दें। 'रफीक-ए-हिन्द'ने टिप्पणी की कि फिरोजपुर के हिन्दुओं ने पशु हत्या तथा गोमाँस की दुकान बन्द कराने हेतु उपराज्यपाल को एक स्मरण पत्र देने के लिए की गई बैठक में मुस्लिमों को शामिल किया था। तथापि, लेखक को उम्मीद थी कि सरकार इस स्मरण पत्र पर कोई ध्यान नहीं देगी। यदि स्मरणपत्र पर कुछ मुसलमानों के हस्ताक्षर कर देने से गोमाँस की दुकान बन्द हो जाती हैं, तो अन्य नगरों के हिन्दू पशु हत्या बन्द कराने के लिए इसी प्रकार से स्मरण पत्रों पर मुसलमानों के हस्ताक्षर कराकर गोहत्या बन्द कराकर मुस्लिमों को उनके धार्मिक स्वातन्त्र्य से वंचित कर देंगे। 'आफताब-ए-पंजाब' (लाहौर) ने इस पर टिप्पणी की तथा पशुओं का संरक्षण करने से होनेवाले लाभों की लम्बी सूची दी। उसने टिप्पणी की कि कुछ बहुत गरीब मुसलमानों को छोड़कर अन्य मुसलमान गोमाँस नहीं खाते और न वे उसे मानते हैं। लेखक का मत था कि ऐसा करने से हिन्दुओं पर मुसलमानों का उपकार होगा और उनके बीच दुर्भावना भी नहीं फैलेगी। उनके बीच के झगड़े समाप्त हो जाएँगे। अतः दोनों समुदायों को परस्पर सहयोग करके मसले सुलझाने चाहिए। 'खैर-ख्वाह-ए-कश्मीर' (लाहौर) ने टिप्पणी की कि फिरोजपुर के मुसलमानों एवं हिन्दुओंने संयुक्त रूप से, पशु हत्या के विरुद्ध, स्मरण पत्र प्रस्तुत करके, एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया है जिसका अन्य शहरों को भी अनुकरण करना चाहिए।

२०९. वर्ष १८८८ के उत्तरार्ध में गाय के प्रश्न के सम्बन्धित आन्दोलन का स्वर अत्यन्त मन्द रहा। विविध प्रान्तों से कदाचित ही कोई रिपोर्ट इस विषय पर प्राप्त हुई। तथापि, समाचार पत्रों के विविध लेखों एवं जनसंचार में यह मसला कभी कभार अवश्य स्थान प्राप्त करता हुआ देखा गया।

२१०. २५ जुलाई १८८८ के सिविल एण्ड मिलिटरी गजट (लाहौर) के अंक में चिश्ती का पशुहत्या विषयक प्रश्न 'समय रहते चेतावनी' शीर्षक से प्रकाशित एक पत्र इस संचार का अत्यन्त महत्वपूर्ण उदाहरण था। पत्र इस प्रकार है :

महोदय,

पशुहत्या विषयक प्रश्न बहुत लम्बे अरसे से जोर पकडकर ज्वलन्त राजनीतिक प्रश्न बन गया है। इस प्रथा को बन्द करने के लिए मेरे हिन्दू देशवासियों के द्वारा अखिल भारतीय रूप में बैठकें आयोजित की जा रही हैं। पशु हत्या के कारण विगत वर्षो में बकरईद के अवसरों पर इटावा, होशियारपुर, अम्बाला, लुधियाना तथा अन्य

अनेक स्थानों पर कई बार भीषण दंगे भड़क उठे हैं। पुनः वही समय समीप होने के कारण मैं आपके इस महत्त्वपूर्ण समाचारपत्र के माध्यम से इस अत्यावश्यक प्रश्न पर प्राधिकारियों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। भारत के हित के लिए कार्य करने वाले तटस्थ लोग इस अत्यावश्यक प्रश्न पर अवश्य ध्यान देंगे, क्योंकि कुछ पूर्व भड़के भीषण दंगो के लिए प्राधिकारियों ने झगड़े की जड़ के रूप में पशुहत्या को ही माना है। इस प्रश्न के समाधान से ही शान्ति एवं व्यवस्था ही नहीं स्थापित होगी अपितु नियन्त्रक प्राधिकारियों को भी इससे सहयोग मिलेगा। अतः सरकार का यह महत् कर्तव्य है कि इस प्रश्न का सदा के लिए समाधान कर दे।

भारत में पशु हत्या धार्मिक प्रश्न है। हिन्दू इसे अपने धर्म के विरोध के रूप में देखते हैं तो मुसलमान इसे वैध करार देते हैं। वास्तव में मुसलमान गायों की विशेषरूप से बकरईद के अवसर पर कुर्बानी देना धार्मिक प्रथा मानते हैं जिसका शाब्दिक अर्थ होता है गायों की दावत। इस प्रश्न पर अत्यन्त लम्बे समय से मतभेद रहे हैं। देश के मुसलमान एवं हिन्दू शासकों ने इस पर भिन्न भिन्न प्रकार से सोचा है। मुसलमानों ने इस प्रथा को बिना किसी रोकटोक के चालू रखने की अनुमति दी थी तो हिन्दुओं ने इसे कठोरतापूर्वक बन्द कराया था। दुर्बल पक्ष हमेशा बलवान पक्ष के आदेशों का पालन करता आया है। इसी मानसिकता के कारण पहले दंगे नहीं भड़के थे। देशी राज्यों ने प्राचीन भारतीय शासकों के द्वारा प्रवर्तित नीति का पूर्ण रूप से पालन किया है। परन्तु उसके बाद सरकार की सत्ता का हस्तान्तरण हुआ। भारत के धार्मिक एवं जातिगत रूप से तटस्थ ऐसे बाहर से आए विदेशी शासकों ने पूर्वाग्रह की भावना से ग्रसित होकर इस विशाल प्रायदीप के विभिन्न प्रजातियों के निवासियों में विद्वेषभाव के बीज बोए। इस सरकार के बाहर से आगमन के परिणाम स्वरूप धार्मिक मामलों पर तटस्थता की नीति बनी। यह नीति निस्सन्देह रूप से अत्यन्त न्यायसंगत नीति थी क्योंकि उसने सभी वर्गों के लोगों की पूर्ण स्वतन्त्रता का स्वीकार किया। परन्तु मुसलमानों को पशु हत्या करने की अनुमति दी गई। यह नीति निस्सन्देहरूप से बहुत अच्छी नीति थी क्योंकि यदि मुसलमानों का केवल इस कारण से पशु हत्या प्रथा का निषेध किया जाता था क्योंकि उससे हिन्दुओं की भावनाओं को ठेस पहुँचती थी तो फिर इसी आधार पर तोडने के कार्य में भी दखल देनी पडती क्यों कि हिन्दुओं को वह स्वीकार्य नहीं था। परन्तु सरकार के लिये यह भारी असुविधाजनक स्थिति थी।

मुसलमानों द्वारा पशु हत्या की प्रथा विगत १३०० वर्षों से अस्तित्व में है।

अंग्रेजों के आने के ३०० वर्षों से की जा रही है परन्तु दोनों समुदायों के बीच पहले कभी दुर्भावना पैदा नहीं हुई। तथापि, विगत कुछ वर्षों से देश में भड़कनेवाले सभी दंगों का मूल कारण यही प्रथा रही है। इससे पता चलेगा कि इस प्रथा के चालू रहने से हिन्दुओं में व्याप्त असन्तोष सभी दंगों के मूल में है। अतः प्रश्न उठता है क्या हिन्दुओंने अपना धर्म बदल लिया है? क्या पशु हत्या विषयक कोई नया अध्यादेश उन्हें उपलब्ध करा दिया गया है? क्या मुसलमानों ने पशुहत्या के लिए किसी नवीन प्रणाली की खोज कर ली है? क्या बकरईद नया त्योहार है? क्या सरकार ने इस प्रथा के सम्बन्ध में मुसलमानों को कोई रियायत दी है? मुझे आशा है कि कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति इन प्रश्नों के उत्तर नकार में ही देगा । तो फिर हिन्दुओं में इस नई उत्तेजना को भड़काने की स्थिति में क्यों पहुँचाया गया? इस प्रश्न पर प्रत्येक व्यक्ति सावधानी पूर्वक अपनी पूरी सामर्थ्य के अनुसार चिन्तन करे तथा वह उन कारकों को ढूँढ निकाले जो इसके लिए तथ्य प्रस्तुत कर सके। क्या इससे वह तथ्य निकलता है कि हिन्दू इतने शक्तिशाली हो गए हैं तथा उनकी यह भावना उन्हें इस प्रकार के अलग रूप में व्यवहार करने को प्रेरित कर रही है। उन्होंने पहले अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति किसी को भी हानि न पहुँचाने वाले तरीके अपना कर की, जैसे कि अंशदान लेकर, गायों को खरीदकर, तथा पशुओं के संरक्षण के लिए सोसाइटियों की स्थापना कर, भाषण देकर तथा सरकार के समक्ष इस विषय पर प्रस्तुत कर। इन तरीकों से उनके पक्ष में कोई भी हल न निकलने के कारण तथा उन्हें किसी भी वांछित परिणाम की प्राप्ति में सफलता न मिलने के कारण उन्होंने मुसलमानों से झगड़ना आरम्भ कर दिया। उन्हें आशा थी कि झगडों के परिणामस्वरूप भड़कनेवाले दंगों के कारण सरकार की नींद खुलेगी। इसे पूर्ण रूप से सत्य सिद्ध कर दिया है।

अब केवल यह देखना शेष रह जाता है कि सरकार इस मामले को सख्ती से हल कर पाएगी या हिन्दुओं के आन्दोलन के कारण इसमें कोई नया मोड़ आएगा। जो लोग ब्रिटिश की शक्ति से अवगत हैं वे जानते हैं कि इन दंगों के साथ अत्यन्त उपेक्षा पूर्ण व्यवहार किया जाएगा तथा दंगाइयों को निदर्शनात्मक सजा दी जाएगी। लेकिन जिन विभिन्न नई पाबन्दियों के तहत मुसलमानों को बकरईद के अवसर पर दिल्ली, लुधियाना, होशियारपुर एवं अन्य स्थानों पर पशुहत्या की अनुमति गत वर्ष दी गई थी उसके प्रति हिन्दू आन्दोलनकारियों के प्रति सरकार के नरम रवैये को देखकर मुसलमान समुदाय में अत्यन्त असन्तोष की भावना पनपी है ।

कुछ लोगों का मानना है कि हिन्दू अपने आन्दोलन की सफलता के प्रति गौरव

की अनुभूति कर सकते हैं। हमें स्पष्टरूप से कहना होगा कि सरकार को फिर भी उसकी सक्षमता के लिए बधाई नहीं दी जा सकती। हिन्दुओं के पक्ष में जनमत उन्हीं स्थानों पर अधिक रहा जहाँ पशुहत्या के कारण दंगे भड़के थे। यह आश्चर्य की बात ही है कि इसी प्रकार की सुविधाएँ उन स्थानों पर नहीं दी गईं जहाँ दंगे नहीं भडके थे। कोई भी व्यक्ति एक पल के लिए भी नहीं सोच सकता कि धर्मस्थान कम महत्त्वपूर्ण है अथवा इस प्रथा का कम विरोध है। अशान्ति की स्थिति पैदा करके सरकार पर दबाव बनाने की नीति को जनसामान्य का समर्थन प्राप्त है।। क्या इससे अन्य स्थानों के हिन्दुओं को भी कोई प्रेरणा मिलती है ? क्या प्राधिकारियों की इस प्रकार की कार्यवाही से लोगों के किसी भी वर्ग पर कोई भी अच्छा प्रभाव पड़ता है ?

महारानी साम्राज्ञी की प्रजा का एक आज्ञाकारी सेवक होने के नाते मेरा मानना है कि इस दुर्बल नीति के भयानक परिणाम निकल सकते हैं क्योंकि आन्दोलनकारियों के प्रति सद्भाव रखनेवाले लोगों को सबक सिखाने के स्थान पर उनके पक्ष में विनम्रता दिखाना सरकार के स्थायित्व के लिए भी खतरनाक सिद्ध हो सकता है। इस कार्य से आन्दोलनकारियों को ही बढ़ावा मिलता है। इतना ही नहीं तो उन अन्य वर्गों को भी बढ़ावा मिलता है जो इससे दूर हैं। सरकार को सोचना चाहिए कि हिन्दुओं का यह आन्दोलन यद्यपि मुसलमानों के विरोध में निर्देशित है, तो भी वास्तविक रूप में गोमाँस खाने वाले उन सभी लोगों के विरोध में है जिन्होंने इस प्रथा को भारत में कानूनी जामा पहनाया है। मुसलमानों के विरोध में छेड़े जा रहे इस आन्तरिक युद्ध के परिणाम अन्ततोगत्वा सरकार को ही भुगतने पडेंगे। वर्तमान समय में हो रहे दंगे एक प्रकार से युद्धाभ्यास ही है जिसमें हिन्दू पशुहत्या करनेवाली प्रजातियों को समाप्त करना सीख रहे हैं।

कश्मीर राज्य में पशु हत्या की सजा के लिए बर्बरनीति अपनाई गई है। वहाँ पशुहत्या को दण्डनीय अपराध माना गया है जिसके लिए आजीवन कारावास की सजा का प्रावधान है। सरकार द्वारा आजकल ढुलमुल नीतियाँ अपनाई जा रही हैं जब कि दण्ड का प्रावधान करने से शान्ति एवं व्यवस्था एक सीमा तक बनी रहती है।

भारत में ब्रिटिशों के शासन में मुसलमान एक ओर तो यह सोचते हैं कि ब्रिटिश संविधान के अनुसार उन्हें अपने धार्मिक मामलों में पूरी स्वतन्त्रता है जबकि दूसरी ओर हिन्दू यह मानते हैं कि यदि सरकार पर दबाव डाला जाए तो उसे नए कानून बनाने के लिए बाध्य किया जा सकता है। इस स्थिति में यह आवश्यक लगता है कि सरकार अपनी इस समय की ढुलमुल नीति के स्थान पर कोई एक निश्चित नीति

बनाकर उस पर दृढ़ रहे ताकि प्रत्येक पक्ष अपनी स्थिति के सम्बन्ध में भलीभाँति अवगत हो तथा दंगों के खतरे से भी बचा जा सके।

पिछली बकरईद के अवसर पर पशुहत्या पर प्रतिबन्ध लगाए जाने से मुसलमानों को लगा कि ऐसे प्रतिबन्ध लगाकर उन्हें उनके धार्मिक रूप से मान्य विधियों को करने से अप्रत्यक्ष रूप से रोका गया है। इसी के परिणामस्वरूप होशियारपुर के मुसलमान तो इतने सचेत हो गए कि बकरईद के अवसर पर उन्होंने पशुहत्या नहीं की। उन्होंने पर्याप्त संख्या में बकरियों की भी कुर्बानी नहीं दी और इस तरह उन्हें उनके धार्मिक कर्तव्य का पालन करने से भी रोका गया। इतना ही नहीं तो बकरईदवाले दिन कसाई भी गायों का कत्ल नहीं कर सके। आशा है कि सरकार इस प्रकार की धारणा जनता के किसी भी वर्ग में, खासकर मुसलमानों में, नहीं पनपने देगी। मुसलमान अपने धर्म को अपने जीवन से भी अधिक, सब कुछ खोकर भी, मानते हैं तथा ब्रिटिश सरकार के लिए वे अपनी जान भी दे सकते हैं। बस उन्हें ब्रिटिश सरकार से पूर्ण रूप से धार्मिक स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। वास्तव में, इसी स्वतन्त्रता के कारण से वे दारूलहरब की भाँति भारत को नहीं मानते और ब्रिटिश सरकार के प्रति एकनिष्ठ और आज्ञाकारी रहने के लिए बाध्य हैं।

यह अत्यन्त असंगत बात है कि ब्रिटिश शासन के अधीन एक ही क्षेत्र में पशु हत्या के लिए प्रत्येक जिले एवं तहसील में भिन्न भिन्न नियम लागू किए जाएँ। यह तर्कसंगत भी नहीं है। इन आदेशों में कई बार, कई अवसरों पर कई जिलो में सुधार किया गया और इस प्रकार इतने अहम मुद्दे पर विधायी सत्ता स्थानीय अधिकारियों को दी गई।

पशु हत्या विरोधी आन्दोलन अन्तहीन आन्दोलन है। यदि सरकार उन्हें थोड़ी छूट देती भी है तो फिर आगे छूट देने का कोई अन्त नहीं होगा। उदाहरण के लिए, सिख लोग तम्बाकू की बिक्री पर आपत्ति उठाएँगें, जब कि भारत में कुछ ऐसी भी विभिन्न जातियाँ है जो प्याज, मछली और अण्डा खाने पर भी इसी प्रकार से तर्क देकर आपत्ति उठाएँगे। जैनों के अनुसार मुँह पर बिना कपड़ा बाँधे सीधे साँस लेना भी अवैध है क्योंकि इससे हवा के कीड़े मर जाते हैं। मैं सरकार को स्पष्ट रूप से चेतावनी देता हूँ कि पशुहत्या विरोधी आन्दोलन का निहित उद्देश्य उन सभी हिन्दुओं को संगठित करना है जो इस सर्वव्यापी प्रश्न का विरोध करना चाहते हैं।

मेरा पत्र वैसे ही लम्बा हो गया है। मैं इसका समाहार यह कहकर करुंगा कि सरकार इस महत्त्वपूर्ण मसले पर कानून बनाए। सरकार को ढुलमुल नीति लागू करने

के स्थान पर सख्ती से अपनी नीति लागू करनी चाहिए। सन् १८६२ में विधानसभा ने भारत में गोमाँस की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए एक विधेयक प्रस्तुत करने की प्रार्थना को बेतुका मानकर खारिज कर दिया था। परन्तु यह आश्चर्य की बात नहीं तो और क्या है कि उस समय जिसे बेतुका माना गया उसे अब उचित माना जा रहा है।

किसी भी स्थिति में सरकार या तो एक अधिनियम पारित करके मुसलमानों और ईसाइयों द्वारा किए जानेवाली पशुहत्या को प्रतिबन्धित कर दे या फिर अचूक ढंग से तटस्थता की पुरानी नीति पर कायम रहे। वह स्पष्ट करे कि वह जनता के किसी भी वर्ग की किसी भी प्रकार की धार्मिक स्वतन्त्रता में कोई भी हस्तक्षेप नहीं करेगी। किसी भी मामले में कानून के उल्लंघन करनेवाले को उपयुक्त दण्ड दिया जाना चाहिए ताकि भविष्य में दंगे रोके जा सके। स्थानीय अधिकारियों को हर अवसर पर नए नियम बनाने एवं उन्हें बार बार बदलने से बचने के लिए कहा जाए।

२११. इस पत्र से पंजाब में हिन्दुओं के हितचिन्तक समाचारपत्रों में अत्यन्त तीव्र रोष पैदा हुआ। 'रावी अखबार' (लाहौर) ने अपने १ अगस्त १८८८ के अंक में टिप्पणी की कि मुहर्रम अली को यह भी याद रखना चाहिए कि सरकार हिन्दुओं के धार्मिक मसलों में भी कोई हस्तक्षेप न करने के लिए भी अपनी बुद्धि का उपयोग कर सकती है और हस्तक्षेप करने से उनकी भावनाओं को भी ठेस पहुँच सकती है। सूअर के माँस की बिक्री से् मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचती है। फिर गोमाँस भक्षण को यदि राजनीतिक प्रश्न के रूप में लिया जाएगा तो सूअर माँस भक्षण को भी इसी स्वरूप में लिया जाना चाहिए क्योंकि मुसलमान इस प्रश्न पर जान कुर्बान करने को सिद्ध हैं। 'दानिश-ए-हिन्द' (लाहौर) ने अपने ८ अगस्त १८८८ के अंक में लिखा कि मुहर्रम अली ने इस प्रकार का लेख हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच विद्वेष की भावना पैदा करने के उद्देश्य से लिखा है। 'रावी अखबार' (लाहौर) में ८ अगस्त १८८८ को एक संवाददाता ने लिखा कि 'दुश्मन-ए-हिन्द' (रफीक-ए-हिन्द) के सम्पादक गोहत्या के प्रश्न पर लिखकर हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं का अपमान करने के उद्देश्य से स्वयं को बदनाम कर रहे हैं। 'गंजीना-ए-अखबारात' (लाहौर) ने मुहर्रम अली चिस्ती के पशुहत्या विषयक पत्र पर टिप्पणी करते हुए लिखा कि मुहर्रम अली एवं सिविल एवं मिलिटरी गजट के सम्पादक ने हिन्दू मुस्लिमों को एक दूसरे के विरुद्ध खड़ा करने के उद्देश्य से इस आलेख को प्रकाशित किया है। 'नानक प्रकाश' (लाहौर) ने अपने १५ अगस्त १८८८ के अंक में टिप्पणी की कि 'रफीक-ए-हिन्द'

के सम्पादक ने प्रथम तो कश्मीर के सम्पालन की वकालत हेतु एक पत्र लिखा था परन्तु उसका कोई भी प्रभाव न होने के कारण से सिविल एण्ड मिलिटरी गेझेट को पत्र भेजा और कहा कि धड़ल्ले से खुले आम पशुहत्या करने की अनुमति दें। इस प्रकार लिखने का उद्देश्य हिन्दू और मुस्लिमों को एक दूसरे के विरुद्ध खड़ा करना था। यदि कोई हिन्दू यह सुझाव दे कि सूअरों की धड़ल्ले से खुलेआम हत्या की जाए तो मुसलमान इसे अत्यन्त गलत रूप में लेंगे।

२१२. 'रफीक-ए-हिन्द' (लाहौर) ने अपने ४ अगस्त १८८८ के अंक में रामपुर के 'दबदबा-ए-सिकंदरी' से एक आलेख प्रकाशित किया जिसमें लेखक ने लिखा था कि पशुहत्या के विरोध में हिन्दुओं द्वारा किए गए आन्दोलन में उन्हें सफलता प्राप्त नहीं होगी। बादशाह अकबर के समय में यह प्रथा बन्द करा दी गई थी। परन्तु मुसलमानों द्वारा शिकायतें किए जाने के परिणाम स्वरूप कुछ समय के पश्चात् इसे पुनः आरम्भ करा दिया गया था। जब तक सरकार हिन्दू धर्म स्वीकार नहीं कर लेती तथा देश के मुसलमानों को बाहर निकाला नहीं जाता तब तक इस प्रथा के बन्द होने के कोई भी आसार नहीं थे।

२१३. 'विक्टोरिया पेपर' ने इसी तारीख के अपने अंक में लिखा कि 'रफीक-ए-हिन्द' ने भारत सरकार का ध्यान आनेवाले ईद के त्योहार के प्रति आकर्षित किया है तथा अनुरोध किया है कि मुसलमानों द्वारा गायों की कुर्बानी देने के लिए हत्या करने पर हिन्दुओं द्वारा हस्तक्षेप करने पर या तो कडी सजा देने हेतु आदेश निकाले या फिर कोई भी मुसलमान किसी भी गाय की हत्या न करे, ऐसा आदेश निकाले और उसके किसी भी आदेश का उल्लंघन करने पर दोषी को कठोर दण्ड दिया जाय। लेखक ने टिप्पणी की कि सरकार इस मसले में हस्तक्षेप न करने के लिए अपने विवेक का उपयोग भलीभाँति कर सकती है। कोई भी बेतुका आदेश निकालकर हिन्दुओं या मुसलमानों की भावनाओं को ठेस पहुँचाना हितकर नहीं होगा। अतः बिल्कुल निष्पक्ष रूप में धार्मिक मसलों को देखे तथा किसी के द्वारा कान भरे जाने पर ध्यान न दे, साथ ही दोनों समुदायों के साथ एक समान व्यवहार करे।

२१४. 'रफीक-ए-हिन्द' (लाहौर) ने अपने १८ अगस्त १८८८ के अंक में 'राजनीतिक दृष्टि से पशुहत्या विषयक प्रश्न' शीर्षक से एक लेख छापा जिसमें लेखक ने व्यापक रूप में मुद्दा उठाया कि ब्रिटिश सरकार भारत की पिछली सभी सरकारों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली सरकार थी। साथ ही चेतावनी भी दी कि यह पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के खिलाफ लापरवाही बरत रही थी। आन्दोलनकारियों के प्रति

किसी भी प्रकार की ढील बरतना सरकार की प्रतिष्ठा को आँच पहुँचाएगा। इससे सरकार की दुर्बलता ही माना जाएगा। मुसलमान भी इससे ऐसा सोचने को विवश होंगे कि उनकी धार्मिक स्वतन्त्रता में अनुचित रूप से हस्तक्षेप किया गया था। मुसलमान निस्सन्देह रूप से दुर्बल थे परन्तु सरकार तो निश्चित रूप से शक्तिशाली थी अतः उसने दोनों पक्षों के सम्बन्ध में निष्पक्ष व्यवहार अपनाना चाहिए। पशु हत्या के विरोध में चलाए जा रहे इस आन्दोलन का उद्देश्य अत्यन्त व्यापक है अतः इसे चलने नहीं देना चाहिए। यदि सरकार थोड़ी सी भी ढील बरतेगी तो फिर यह कहाँ जाकर रुकेगा यह कहना कठिन होगा।

२१५. 'खैर-ख्वाह-ए-कश्मीर' (लाहौर) ने अपने १९ अगस्त १८८८ के अंक में टिप्पणी की कि मुस्लिम समुदाय ने अनबन एवं दुर्भावना पैदा होने से अपने आपको दूर रखा था। पशु हत्या करने से हिन्दुओं की भावनाओं को ठेस पहुँचेगी इस लिये उन्होंने शहर में गोमाँस की बिक्री को बन्द कराने के लिए एक सभा आयोजित की। फिरोजपुर के मुस्लिम समुदाय के व्यवहार का यह एक उत्कृष्ट उदाहरण था। 'इम्पीरियल पेपर' (लाहौर) ने लिखा कि लेखक ने फिरोजपुर के उन मुसलमानों के व्यवहार पर अत्यन्त खेद प्रकट किया था जो यह नहीं समझते कि हिन्दू आन्दोलन का असली उद्देश्य पशु संरक्षण प्रश्न के सम्बन्ध में क्या है, यह प्रश्न धार्मिक न होकर राजनीतिक है जिसके माध्यम से वे भारत के सभी हिन्दुओं को अंग्रेजों एवं मुसलमानों के विरुद्ध संगठित कर रहे थे।

२१६. 'खैर-ख्वाह-ए-कश्मीर' ने स्वीकार किया कि निश्चित रूप से इस प्रश्न का उद्देश्य भारत के सभी हिन्दुओं को उनके वर्ण एवं जातिगत रागद्वेषों को भुलाकर एक झण्डे के नीचे संगठित रूप में खड़ा करके शक्तिशाली बनाना था। लेकिन यह इसीलिए नहीं था कि यह धार्मिक प्रश्न था। यदि 'इम्पीरियल पेपर' का शिया मालिक पशु हत्या विषयक प्रश्न में 'रफीक-ए-हिन्द' के सुन्नी सम्पादक के साथ अवश्य सहमत होता है। तो समस्त हिन्दू पशु संरक्षण के प्रश्न पर संगठित होने में क्या हानि हो सकती थी। क्या मराठा शासन काल में मुसलमानों का सामूहिक कत्लेआम हुआ था और क्या सिख शासन में हिन्दुओं की एकता उनके लिए घातक थी ? यदि 'इम्पीरियल पेपर' निष्पक्ष था तो उसे याद होगा कि ऐसी बर्बरता का नंगा नाच उस समय हुआ था जब शेख और सैयद आए थे। लेखक ने आगे लिखा कि पशु हत्या का प्रश्न निश्चित रूप से राजनीतिक परिप्रेक्ष्य से संपोषित था। यह भी सम्भव था कि रुसी भारत पर आक्रमण करके घोषित करते कि वे भारत में पशु हत्या बन्द

करा देंगे तो इस प्रपंच का परिणाम यह होता कि हिन्दू रूसी का पक्ष लेते। अतः सरकारी अधिकारियों को इस प्रश्न को सरसरे रूप से नहीं देखना चाहिए बल्कि इसके गम्भीर परिणामों की ओर देखकर पशुहत्या को बन्द करा देना चाहिए।

२१७. इस समाचार पत्र के इसी अंक में : 'अखबार-ए-आम' (लाहौर) में प्रकाशित बयानों पर कुछ अवलोकन भी थे। बयान यह था कि लाहौर नगरपालिका म्यूजियम भवन में एक बाजार खोलेगी जिसमें अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त गोमाँस एवं सूअरमाँस को भी यूरोपीय लोगों की सुविधा के लिए बिक्री के लिए लटकाया जाएगा। लेखक ने इस प्रस्ताव पर इसलिए आपत्ति की क्योंकि यह भवन एक आम सड़क के पास था जहाँ हिन्दू मुस्लिम आते जाते थे। अतः नगरपालिका आयुक्त का यह कर्तव्य था कि वह इस प्रस्ताव का पूरी शक्ति के साथ विरोध करे क्योंकि इससे अशान्ति एवं झगड़े बढ़ेंगे। अतः यूरोपीय लोगों द्वारा लाए गए ऐसे प्रस्तावों पर सावधानीपूर्वक विचार किए बिना उन्हें अनुमति हेतु आगे न प्रस्तुत न करें।

२१८. 'अखबार-उल-अख्यार' (दिल्ली) ने अपने २२ अगस्त १८८८ के अंक में लिखा कि एक पशुहत्या विरोध के घोर समर्थक पारसी सज्जन के अनुसार, ब्रिटिश सेना के लिए विगत ३० वर्षों में ४०,५०,००० से अधिक मवेशी की हत्या की गई थी। जो हिन्दू मुसलमानों को इसके लिए दोषी मानते हैं, उन्हें उपर्युक्त तथ्यों पर विचार करना चाहिए।

२१९. एक संवाददाता ने 'खैर-ए-कश्मीर' (लाहौर) के उसी तारीख के अंक में अपने लेख में लिखा कि पशु हत्या विषयक प्रश्न के कारण दरभंगा के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच सम्बन्ध अत्यन्त मनोमालिन्ययुक्त हो गए थे। दरभंगा के महाराजा ने आदेश दिया कि बेची गई प्रत्येक गाय को वापस लाकर उसके लिए आरक्षित गोचर भूमि में रखा जाए। बकरईद त्योहार के अवसर पर मुसलमान बड़ी संख्या में गायों की हत्या करना चाहते थे। हिन्दू उन्हें बचाएँगे, और यदि उनके प्रयास प्रभावी नहीं हुए तो वे हथियार उठाने से भी नहीं चूकेंगे। मुसलमान भी अपनी कुर्बानी देने को तैयार थे। उन्हें दूर रहनेवाले मुसलमानों ने भी सहायता देने का वायदा किया था। इस पर टिप्पणी करते हुए 'खैर-ख्वाह-ए-कश्मीर' ने लिखा कि हिन्दु और मुसलमान दोनों का यह कर्तव्य था कि दोनों के लिए अत्यधिक उपयोगी मवेशी के संरक्षण के लिए दोनों समान रुप से कटिबद्ध हों।

२२०. 'अल सादिक' (फिरोजपुर) ने अपने २४ अगस्त १८८८ के अंक में लिखा कि इस्लाम अपने अनुयायियों को किसी भी पशु की खुले आम हत्या करने की

अनुमति नहीं देता। विशेषतः तब जब इस प्रकार के कृत्य से अशान्ति फैलने की सम्भावना हो। इसके समर्थन में उन्होंने सुन्नी पत्रिका 'आवाज' से एक उद्धहरण दिया जिसके अनुसार मुसलमानों का कर्तव्य गोहत्या करना नहीं है, उल्टे हिन्दुओं के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध बनाना है तथा ऐसा कुछ भी करने से स्वयं को बचाना है जिससे उसे दोषी करार दिया जाए।

२२१. २५ अगस्त १८८८ को 'रफीक-ए-हिन्द' (लाहौर) ने एक अत्यन्त योग्य एवं प्रतिष्ठित मुसलमान कार्यपालक अधिकारी के पशुहत्या विषय पर विचारों को प्रकाशित किया तथा लिखा कि मुसलमानों की हार्दिक इच्छा है कि सरकार इस प्रश्न का हमेशा के लिए निराकरण करे। इस आलेख के लेखक ने लिखा कि यह खुला रहस्य है कि लगभग सभी समाचारपत्रों ने हिन्दू-मुसलमानों के बीच अशान्ति एवं झगड़े का मूल इसी पशुहत्या को माना है। उसका विचार था कि आगामी मुहर्रम एवं दशहरा एक साथ पड़ने के कारण अशान्ति व्याप्त न हो इसके लिये प्रबन्ध होना चाहिये। यह सामान्य बात हो गई थी कि प्रति दिन एक ही नगर में कुछ ऐसा घटित हो रहा था कि एक व्यक्ति अपने परिवार के एक सदस्य की मृत्यु पर शोक ग्रस्त था तो उसका पड़ोसी अपने सम्बन्धी के विवाह में खुशियाँ मना रहा था। इस बात को लेकर किसी के झगडे नहीं होते थे। दशहरा और मुहर्रम के त्योहार दोनों समुदायों को अपने अपने प्रतिशोध निकालने के मौके देते थे। लेखक ने अपने आलेख को तीन शीर्षकों में विभाजित किया : धार्मिक, सामाजिक एवं राजनीतिक। उसने लिखा कि धार्मिक दृष्टि से मुसलमान सूअर को उतना ही मानते हैं जितना कि हिन्दू पवित्र गाय को सम्मान देते हैं। मुसलमान सूअर से घृणा करते हैं तथा इसके शरीर के किसी भी भाग को छूने से परहेज करते हैं। जब कि हिन्दू गाय के दूध, मक्खन, त्वचा, मूत्र एवं गोबर का खुलकर उपयोग करते हैं, तथा इसके मूत्र एवं गोबर को पवित्र एवं वैध मानते हैं। कुरान मुसलमानों को सूअर का माँस खाने हेतु प्रतिबन्धित करती है जब कि मनु के समकालीन हिन्दू अंग्रेजों के समान गोमाँस भक्षी थे तथा गायों एवं बैलों की बलि चढ़ाई जाती थी। भैंसे की अब भी भारत में बलि चढ़ाई जाती है। तो फिर हिन्दू मुसलमानों के दुश्मन क्यों बन जाते हैं जब वे पशु हत्या करते हैं ? बर्मा में सूअर, गौ तथा बकरे का माँस बिक्री हेतु साथ साथ लटकाया जाता है। उसमें कोई आपत्ति नहीं उठाई जाती। इसी प्रकार अफगानिस्तान, बलूचिस्तान, पर्सिया, तथा मध्य एशिया में सभी हिन्दू अपने काम से काम रखते हैं। फिर उन देशों में पशुहत्या को लेकर कोई अशान्ति क्यों नहीं फैलती? लेखक उनसे पूछता है जो यह कहते हैं कि यह इस लिए

है क्योंकि उन देशों के शासक मुसलमान हैं। तो फिर हिन्दू उन सभी शासकों के साथ अपने सभी सम्बन्ध क्यों नहीं तोड़ देते? उसने आगे लिखा कि भारत के शासक उन मुसलमान शासकों से कहीं अधिक गोमाँस का उपभोग करते हैं। तो फिर हिन्दू सेना रसद विभाग पर हमला क्यों नहीं करते जहाँ प्रतिदिन हजारों गायों की हत्या की जाती है, तथा उन यूरोपीय सिपाहियों से क्यों नहीं लड़ते जो नियमित रूप से गोमाँस खाते हैं ? यदि हिन्दू धर्म यह चाहता है कि मुसलमान पशु हत्या बन्द कर दे तो उन्हें ईसाइयों को भी इस प्रथा से रोकना चाहिए। लेकिन यदि हिन्दू सोचते हैं कि मुसलमान असहाय है क्योंकि उनके पास हेनरी मार्टिन रायफलें नहीं हैं तो वे भारी भूल करते हैं। उनका धर्म उन्हें यह नहीं सिखाता कि वे गरीब एवं दुर्बल गोमाँसभक्षी लोगों को सताएँ तथा ताकतवर लोगों को उनकी मनमानी करने दें। दूसरे मुद्दे पर लेखक अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखता है कि हिन्दुओं और मुसलमानों के सामाजिक सम्बन्धों में व्यापक रूप से परिवर्तन आया है। मुसलमानों के धर्म के विरोध में होते हुए भी उन्होंने हिन्दुओं से कई रीतिरिवाजों को अपनाया है। उनसे उनकी आजीविका चलती है। उनके वे ऋणी हैं। उन हिन्दुओं को वे अपने शासक एवं अपने उच्च दर्जे का मानें। उन्होंने हिन्दुओं को भी सलाह दी कि उन्हें मुसलमानों से उन मुसलमान बादशाहों की निरंकुशता का बदला नहीं लेना चाहिए जिसके वे कभी शिकार हुए थे। एक शेर दूसरे शेर का इसलिए शिकार नहीं करता क्योंकि वे एक ही वंश के होते हैं, और यही बात हिन्दु और मुसलमान दोनों पर लागू होती है। मुसलमान अपने घर के अन्दर पशुओं की कुर्बानी देते हैं परन्तु हिन्दू उनके दरवाजों को तोड़कर अन्दर घुसकर उनसे झगड़ा करते हैं। उन्हें ऐसा कुछ भी नहीं करना चाहिए। हिन्दू सूअर का माँस एवं झटका माँस खाते हैं परन्तु मुसलमान उनके प्रति कभी भी विरोध प्रदर्शित नहीं करते। राजनीतिक दृष्टि से लेखक लिखता है कि सरकार मुसलमानों द्वारा की जा रही पशु हत्याओं को बन्द नहीं करा सकती क्योंकि कुछ वर्षों के बाद हिन्दू इस छूट का फायदा उठाकर सेना रसद विभाग में इस प्रथा को बन्द करने के लिए दबाव डालेंगे जहाँ यूरोपीय सिपाहियों के उपयोग के लिए गायों की हत्या की जाती है। फिर इसके लिए सीधे मना करने पर राजनीतिक संगठन बनाकर इस प्रथा को बन्द करने हेतु आन्दोलन होंगे। अतः यदि हिन्दुओं के दबाव के कारण सरकार कोई भूल करती है तो पूरा देश युद्ध क्षेत्र बन जायेगा। जिला अधिकारियों को भी यह ठीक प्रकार याद रखना चाहिए कि यदि वे ऐसे दबावों के सामने झुकेंगे तो उनकी कायरता आगे जाकर निश्चित रूप से घातक सिद्ध होगी।

२२२. अगस्त १८८८ के अन्तिम समय में डेरा गाजी खान जिले के राजनपुर के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना व्याप्त होने की रिपोर्ट प्राप्त हुई थी जिसका कारण यह था कि मुसलमानों ने एक गाय को फूल मालाओं से सजाकर शहर में सड़कों पर घुमाया और उसके पश्चात् वर्षा होने हेतु कुर्बानी देने के रूप में कत्ल कर दिया। इस दुर्भावना का परिणाम एक सितम्बर को गोमाँस की बिक्री को लेकर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच हुए झगड़े के रूप में देखने को मिला। हालाँकि इस झगड़े का सन्तोषजनक समाधान कर लिया गया था।

२२३. 'रफीक-ए-अखबार' (लाहौर) ने १ सितम्बर १८८८ के अपने अंक में *कानपुर के 'अखबार-ए-आलम' से एक आलेख छापा जिसमें कहा गया था कि* कानपुर में उत्तेजना फैलने का कारण यह था कि पुलिस अधिकारियों ने चार मुसलमानों से इस प्रकार के घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करवाये थे कि वे अपने घरों में गोहत्या नहीं करेंगे। मुसलमानों ने इस घटना का यह अर्थ लगाया था कि पुलिस उन्हें उनकी धार्मिक क्रियाओं को करने से रोक रही है और इस प्रकार धीरे धीरे उन्हें धार्मिक स्वतन्त्रता से वंचित कर दिया जाएगा। तथापि, अखबार का मत था कि पशु हत्या पर रोक लगाने के स्थान पर इस तिकड़म से और अधिक संख्या में गायों की हत्याएँ होंगी तथा दोनों समुदायों के बीच दुर्भावना और अधिक बढ़ेगी। साथ ही उसने ऐसे स्थानों का ब्यौरा दिया जहाँ वास्तविक रूप में ऐसा हुआ था।

२२४. एक संवाददाता ने 'धर्मध्वनि' (लाहौर) के दिनांक १६ सितम्बर, १८८८ के अंक में लिखा कि बकरईद के अवसर पर मुसलमानों द्वारा कुर्बानी हेतु की जानेवाली हत्याओं की कुरान इजाजत नहीं देता। लेखक ने मुसलमानों को इसे गलत ठहराने हेतु चुनौती भी दी।

२२५. 'आफताब-ए-हिन्द' (लाहौर) ने २५ सितम्बर १८८८ के अंक में लिखा कि पण्डित श्रीमन स्वामी पशुसंरक्षण विषय पर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाषण दे रहे थे। इस प्रश्न पर लम्बे अरसे से चर्चा होती रही थी परन्तु पवित्र पशु के संरक्षण की बात का मुसलमानों द्वारा विरोध किए जाने के कारण कोई भी सफलता प्राप्त नहीं हुई इस लिये सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट करने की आवश्यकता लगी। लेखक ने मुसलमानों से निवेदन करते हुए कहा कि वे पशुहत्या के कारण देश को होनेवाले भारी नुकसान के विषय में विचार करें। इसी के कारण दूध और उससे निर्मित वस्तुएँ प्रतिदिन मँहगी होती जा रही हैं। यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि समाज का गरीब वर्ग इनका उपयोग कर नहीं पाएगा।

२२६. इसी समाचार पत्र ने अपने ९ अक्टूबर १८८८ के अंक में लिखा कि सिविल एण्ड मिलिट्री गजट में मुहर्रम के अवसर पर पशु हत्या विरोधी आन्दोलन को लेकर हुए दंगों की बात छापकर भारी भूल की थी, क्योंकि इससे इस आन्दोलन को और अधिक बल मिला। आन्दोलन गत दो वर्षों से चल रहा था जबकि दंगे प्रत्येक ऐसे विशेष अवसरों पर सदैव भड़कते रहते थे।

२२७. 'नानक प्रकाश' (कपूरथला) ने अपने १८ अक्टूबर १८८८ के अंक में आर्यों के समय से चली आ रही पशु संरक्षण एवं उसकी पूजा के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा कि जो मुसलमान सोचते थे कि भारत कृषि प्रधान देश नहीं था उन्होंने आर्यों का अपमान करने के लिए पशुहत्या को अनुमति दी थी। अंग्रेजों का देश चूँकि मछली एवं छिपकलियों के सिवाय कुछ भी पैदा करने में असमर्थ था, इस लिये उन्होंने भी इस प्रथा का आरम्भ कर दिया था, क्यों कि वे पशुओं से प्राप्त होने वाले लाभों से सर्वथा अनभिज्ञ थे।

२२८. इसी समाचार पत्र ने इसी विषय पर दिनांक ३१ अक्टूबर के अंक में इस दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया कि गाय एक ऐसा प्राणी है जिसकी पूजा तो की ही जाती है, साथ ही वह अत्यन्त उपयोगी भी है। गाय का गोबर, दूध, मक्खन, पनीर, चमड़ा आदि मानव के लिए अत्यन्त उपयोगी है। अतः बूढ़े होने पर भी इसकी हत्या करना बहुत बड़ी मूर्खता ही होगी।

२२९. अमृतसर जिले के जलालाबाद के जाट मेहरसिंह ने लुधियाना में २० अक्टूबर १८८८ के अन्तिम सप्ताह में अमृतसर सिंह सभा की बैठक में कहा कि सरकार को स्मरण पत्र प्रस्तुत करके गोहत्या रोकने के लिए कहा जाए और यदि याचिका स्वीकृत कर दी जाए तो सरकार को तीन लाख रुपए दे दिए जाएँ। कई मुसलमानों ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया था।

२३०. १३ नवम्बर १८८८ को 'अखबार-ए-आम' (लाहौर) ने धुमरी के पशुहत्या विषयक दंगों में भाग लेने वाले लोगों पर चलाए गए मुकद्दमें का हवाला देते हुए लिखा कि सात हिन्दुओं को छह सप्ताह और दो को एक सप्ताह के कारावास की सजा सुनाई गई तथा क्रमशः ६० रूपयों एवं १०० रूपयों का जुर्माना भरने की सजा भी दी गई। शेष अभियुक्तों में नगरपालिका आयुक्त को बरी कर दिया गया। कोलकता के प्रख्यात वकील बाबू लाल मोहन घोष ने हिन्दुओं की ओर से तथा एम. सैय्यद शम्स-उल-कादिर ने मुसलमानों की ओर से मुकद्दमे की पैरवी की। अदालत ने उन दो मुसलमानों को भी हर्जाना दिलवाया जो दंगों में घायल हो गए थे।

२३१. १ दिसम्बर १८८८ को हवेली के एक हिन्दू ने अपने गाँव में कुछ मुसलमानों द्वारा की गई एक गाय की हत्या के सम्बन्ध में मोन्टगोमेरी जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत की।

२३२. दिसम्बर १८८८ में लखनऊ से वीपीपी से कुछ पुस्तिकाएँ जिले के प्रख्यात लोगों एवं विभिन्न हिन्दू अधिकारियों के नाम झांग डाक घर में प्राप्त हुईं परन्तु इन्हें लेने से प्रापकों ने ना कर दिया। प्रत्येक पैकिट पर निम्नलिखित टिप्पणी लिखी हुई थीः 'मुख्य प्रबन्धक, खैराती गौशाला तथा वकील कौमी से समग्र भारत में गोहत्या के विरोध में, लखनऊ।' इसी प्रकार की १०० से अधिक पुस्तिकाएँ डेरा गाजी खान डाकघर में प्राप्त हुईं जिन्हें प्रापकों ने लेने से ना कर दिया। ये पुस्तिकाएँ इसी प्रकार अम्बाला जिले में खराड़, जगाधरी, सधौरा एवं शाहाबाद डाकघरों को भेजी गई थीं तथा इन्हें भी झाँग एवं डेरा गाझी खान की पुस्तिकाओं की भांति प्राप्तकर्ताओं ने लेने से मना कर दिया था।

१८८९

२३३. जनवरी १८८९ में दिल्ली एवं होशियारपुर से रिपोर्ट प्राप्त हुई जिसके अनुसार दिसम्बर १८८८ में विभिन्न जिलों को भेजे गए वीपीपी पार्सलों की तरह ही इन जिलों के कुछ व्यक्तियों के नाम पर लखनऊ से भेजे गए थे। ये सभी बिना खोले वापस कर दिये गये थे।

२३४. 'आफताब-ए-पंजाब' ने २३ जनवरी के अपने अंक में संवाददाता के पत्र में आर्यसमाज की पिछली वर्षगाँठ के अवसर पर सिख गुरुओं के खिलाफ दी गई टिप्पणियों के सम्बन्ध में कहा कि भारत पर ब्रिटिश शासन में और कोई नहीं अपितु सिख पशु संरक्षण हेतु अपनी जान की बाजी लगाने को सदैव तत्पर रहे थे। सिखों ने १८७२ में अमृतसर में गोमाँस बेचने वाले बहुत से कसाइयों की हत्याएँ की थीं तथा बाद में अपने अपराध को स्वीकार कर लिया था ताकि बेकसूर लोगों को गिरफ्तार करने से प्राधिकारियों को रोका जा सके। इसके परिणामस्वरूप ६३ कूकाओं को तोप से उड़ा दिया गया था तथा कईयों को फाँसी पर लटका दिया गया था। लेखक ने पत्र के अन्त में सुझाव दिया कि सिख गुरुओं के प्रति अपमानजनक ढंग से बोलने वाले उस दुर्जन (गुरुदत्त, प्रोफेसर, लाहौर शासकीय महाविद्यालय) को मौत के घाट उतारा जाए या उत्पीडित किया जाए।

२३५. इसी समय गौहत्या एवं कुए में सूअर के बाल डालने के मामलों को लेकर जलालपुर में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच संघर्ष की स्थिति पैदा हो गई। गुजरात के उपायुक्त ने इस मामले का समाधान करा दिया।

२३६. इससे पूर्व फरवरी में थानेसर से यह रिपोर्ट मिली कि पिपली में एक बूचड़खाना खोले जाने के कारण हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अत्यधिक दुर्भावना व्याप्त रही। पिपली के तहसीलदार को सम्भावित दंगे भड़कने की चेतावनीवाले कई सन्देश भी मिले थे।

२३७. इसी महीने, 'अमृतसर गजट' (अमृतसर) के सम्पादक ने गो-संरक्षण के महत्त्व पर पण्डित मथुराप्रसाद मिश्र द्वारा लिखित हिन्दी-उर्दू में एक छोटी सी पुस्तिका को अपने समाचार पत्र के साथ परिचालित किया।

२३८. लगभग इसी समय प्रबन्धक, खैराती गोशाला, लखनऊ द्वारा प्रेषित पशुहत्या विरोधी पुस्तिकाओं की प्रतियों वाले दो वीपी पार्सल रूपाड़ डाकघर में प्राप्त हुए जिनमें एक रूपाड़ के तहसीलदार के नाम था तथा दूसरा गरौली के मानद मजिस्ट्रेट सरदार उत्तमसिंह के नाम था। पहले व्यक्ति ने पार्सल लेने से इंकार कर दिया लेकिन दूसरे ने रू. १४-१४-० की रकम अदा करके उस पार्सल को प्राप्त किया।

२३९. इसी वर्ष मार्च महीने में ढाका में मुहम्मद बख्श, कृषक के घर में एक विवाह समारोह था जिसमें कम से कम १५ गायों और बैलों की कुर्बानी देकर हत्या की गई जिनमें से आधी संख्या की मवेशी दूल्हे के मित्रों ने दी थी। मुजफ्फरगढ़ के जिला पुलिस अधीक्षक ने इसी रिपोर्ट के सन्दर्भ में निम्नलिखित स्पष्टीकरण दिया :

मुजफ्फरगढ़ जिले में विवाह के अवसर पर मवेशी की हत्या करने का आम रिवाज है तथा यार-दोस्तों द्वारा चोरी करके लाई गई मवेशी भी इन पशुओं में शामिल होती है।

२४०. महीने के उत्तरार्ध में गुरदासपुर से रिपोर्ट प्राप्त हुई कि डेरा नानक पुलिस थाना के कोटली सूरतमल के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच कुछ दुर्भावना पैदा हुई है जिसका कारण एक चौकीदार द्वारा कलनौर से गोमाँस प्राप्त करके उसे गाँव के एक मुसलमान को बेचना था, साथ ही, थकी-माँदी गायों को कलनौर के कसाइयों को बेचना भी था।

२४१. लगभग इसी समय, मंचारजी की फर्म में लिपिक के पद पर कार्यरत ईश्वर दास नामक एक व्यक्ति ने पशु हत्या के विरोध में मुल्तान शहर की गलियों में

अंशदान देने तथा बूढ़ी एवं थकी-माँदी मवेशी के लिए एक पशुशाला स्थापित करने हेतु आह्वान किया। उसने कुछ मुसलमानों के नाम लेकर उनके सिर दोष मढ़ा। उपायुक्त ने पुलिस को आदेश दिया कि उस व्यक्ति को सड़कों पर इकट्ठी भीड़ को संबोधित करने की अनुमति न दी जाए।

२४२. इससे पूर्व अप्रैल १८८९ में बन्नू से पशु हत्या होने तथा गोमाँस की बिक्री हाट एवं हावेद रोड पर शुक्रवारी मेले के अवसर पर होने की खबर प्राप्त हुई। बन्नू के उपायुक्त ने आदेश दिया कि इस प्रथा को तुरन्त रोक दिया जाए।

२४३. १६ अप्रैल १८८९ को थानेसर के कुछ ब्राह्मण पिपली में हुई पशुहत्या एवं थानेसर में कसाइयों द्वारा गोमाँस की बिक्री होने के खिलाफ एक याचिका प्रस्तुत करने अम्बाला गए। उनमें से एक आगे पंजाब सरकार को अभ्यावेदन प्रस्तुत करने हेतु लाहौर गया हुआ बताया गया। इस याचिका पर अम्बाला के उपायुक्त ने निम्नलिखित आदेश पारित किए :

(१) कि सरकार के पत्र के अनुसार पिपली में एक बूचड़खाने की स्थापना करने की अनुमति दी गई है तथा थानेसर के मुसलमानों को गोमाँस उपलब्ध कराने की अनुमति दी गई है,

(२) कि उनके अपने उपभोग की आवश्यकता हेतु पिपली से गोमाँस खरीदने के बारे में ही आदेश में स्पष्टरूप से व्यवस्था है,

(३) कि वे इस प्रकार से गोमाँस को थानेसर ले जा सकते हैं, परन्तु उन्हें इसे शालीन एवं व्यवस्थित ढंग से इस तरह से ले जाना होगा जिससे उनके हिन्दू पड़ोसियों को अपमान न लगे,

(४) कि थानेसर कस्बे में न तो कोई गोमाँस की बिक्री हेतु दुकान खोली जाएगी और न ही गोमाँस को किसी भी तरह से बिक्री के लिए प्रदर्शित किया जाएगा।

थानेसर के ब्राह्मण इन निर्देशों को मानने को तैयार थे। पुलिस को उनके पालन होने के प्रति सचेत रहने को कहा गया।

२४४. मई १८८९ में थानेसर में एक अफवाह घर कर गई कि हिन्दू पशु हत्या करनेवाले कसाइयों के खिलाफ कानूनी कार्यवाही करने के लिए अंशदान एकत्रित कर रहे थे।

२४५. ८ जून १८८९ को एक रिपोर्ट रोहतक जिले में महिम से प्राप्त हुई। अलाउद्दीन नामक एक मुसलमान ने अपने एक रिश्तेदार की पुण्यतिथि के अवसर पर

२३५. इसी समय गौहत्या एवं कुए में सूअर के बाल डालने के मामलों को लेकर जलालपुर में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच संघर्ष की स्थिति पैदा हो गई। गुजरात के उपायुक्त ने इस मामले का समाधान करा दिया।

२३६. इससे पूर्व फरवरी में थानेसर से यह रिपोर्ट मिली कि पिपली में एक बूचड़खाना खोले जाने के कारण हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अत्यधिक दुर्भावना व्याप्त रही। पिपली के तहसीलदार को सम्भावित दंगे भड़कने की चेतावनीवाले कई सन्देश भी मिले थे।

२३७. इसी महीने, 'अमृतसर गजट' (अमृतसर) के सम्पादक ने गो-संरक्षण के महत्त्व पर पण्डित मथुराप्रसाद मिश्र द्वारा लिखित हिन्दी-उर्दू में एक छोटी सी पुस्तिका को अपने समाचार पत्र के साथ परिचालित किया।

२३८. लगभग इसी समय प्रबन्धक, खैराती गोशाला, लखनऊ द्वारा प्रेषित पशुहत्या विरोधी पुस्तिकाओं की प्रतियों वाले दो वीपी पार्सल रूपाड़ डाकघर में प्राप्त हुए जिनमें एक रूपाड़ के तहसीलदार के नाम था तथा दूसरा गरौली के मानद मजिस्ट्रेट सरदार उत्तमसिंह के नाम था। पहले व्यक्ति ने पार्सल लेने से इंकार कर दिया लेकिन दूसरे ने रू. १४-१४-० की रकम अदा करके उस पार्सल को प्राप्त किया।

२३९. इसी वर्ष मार्च महीने में ढाका में मुहम्मद बख्श, कृषक के घर में एक विवाह समारोह था जिसमें कम से कम १५ गायों और बैलों की कुर्बानी देकर हत्या की गई जिनमें से आधी संख्या की मवेशी दूल्हे के मित्रों ने दी थी। मुजफ्फरगढ़ के जिला पुलिस अधीक्षक ने इसी रिपोर्ट के सन्दर्भ में निम्नलिखित स्पष्टीकरण दिया :

मुजफ्फरगढ़ जिले में विवाह के अवसर पर मवेशी की हत्या करने का आम रिवाज है तथा यार-दोस्तों द्वारा चोरी करके लाई गई मवेशी भी इन पशुओं में शामिल होती है।

२४०. महीने के उत्तरार्ध में गुरदासपुर से रिपोर्ट प्राप्त हुई कि डेरा नानक पुलिस थाना के कोटली सूरतमल के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच कुछ दुर्भावना पैदा हुई है जिसका कारण एक चौकीदार द्वारा कलनौर से गोमाँस प्राप्त करके उसे गाँव के एक मुसलमान को बेचना था, साथ ही, थकी-माँदी गायों को कलनौर के कसाइयों को बेचना भी था।

२४१. लगभग इसी समय, मंचारजी की फर्म में लिपिक के पद पर कार्यरत ईश्वर दास नामक एक व्यक्ति ने पशु हत्या के विरोध में मुल्तान शहर की गलियों में

अंशदान देने तथा बूढ़ी एवं थकी-माँदी मवेशी के लिए एक पशुशाला स्थापित करने हेतु आह्वान किया। उसने कुछ मुसलमानों के नाम लेकर उनके सिर दोष मढ़ा। उपायुक्त ने पुलिस को आदेश दिया कि उस व्यक्ति को सड़कों पर इकट्ठी भीड़ को संबोधित करने की अनुमति न दी जाए।

२४२. इससे पूर्व अप्रैल १८८९ में बन्नू से पशु हत्या होने तथा गोमाँस की बिक्री हाट एवं हावेद रोड पर शुक्रवारी मेले के अवसर पर होने की खबर प्राप्त हुई। बन्नू के उपायुक्त ने आदेश दिया कि इस प्रथा को तुरन्त रोक दिया जाए।

२४३. १६ अप्रैल १८८९ को थानेसर के कुछ ब्राह्मण पिपली में हुई पशुहत्या एवं थानेसर में कसाइयों द्वारा गोमाँस की बिक्री होने के खिलाफ एक याचिका प्रस्तुत करने अम्बाला गए। उनमें से एक आगे पंजाब सरकार को अभ्यावेदन प्रस्तुत करने हेतु लाहौर गया हुआ बताया गया। इस याचिका पर अम्बाला के उपायुक्त ने निम्नलिखित आदेश पारित किए :

(१) कि सरकार के पत्र के अनुसार पिपली में एक बूचड़खाने की स्थापना करने की अनुमति दी गई है तथा थानेसर के मुसलमानों को गोमाँस उपलब्ध कराने की अनुमति दी गई है,

(२) कि उनके अपने उपभोग की आवश्यकता हेतु पिपली से गोमाँस खरीदने के बारे में ही आदेश में स्पष्टरूप से व्यवस्था है,

(३) कि वे इस प्रकार से गोमाँस को थानेसर ले जा सकते हैं, परन्तु उन्हें इसे शालीन एवं व्यवस्थित ढंग से इस तरह से ले जाना होगा जिससे उनके हिन्दू पड़ोसियों को अपमान न लगे,

(४) कि थानेसर कस्बे में न तो कोई गोमाँस की बिक्री हेतु दुकान खोली जाएगी और न ही गोमाँस को किसी भी तरह से बिक्री के लिए प्रदर्शित किया जाएगा।

थानेसर के ब्राह्मण इन निर्देशों को मानने को तैयार थे। पुलिस को उनके पालन होने के प्रति सचेत रहने को कहा गया।

२४४. मई १८८९ में थानेसर में एक अफवाह घर कर गई कि हिन्दू पशु हत्या करनेवाले कसाइयों के खिलाफ कानूनी कार्यवाही करने के लिए अंशदान एकत्रित कर रहे थे।

२४५. ८ जून १८८९ को एक रिपोर्ट रोहतक जिले में महिम से प्राप्त हुई। अलाउद्दीन नामक एक मुसलमान ने अपने एक रिश्तेदार की पुण्यतिथि के अवसर पर

हाल ही में एक गाय की हत्या की थी। इससे हिन्दू नाराज थे लेकिन उन्होंने कोई शिकायत नहीं की। जिस स्थान पर हत्या की गई, उसका भी उल्लेख नहीं किया गया। इस विषय में रोहतक के जिला पुलिस अधीक्षक ने निम्नानुसार रिपोर्ट भेजी :

'यह अलाउद्दीन अतिरिक्त सहायक आयुक्त मुहम्मद हुसैन का भाई है। वह महिम के मुसलमानों का नेता है। वह प्रभावशाली व्यक्ति है, घातक एवं कट्टर प्रवृत्ति का मनुष्य है। दो वर्ष पूर्व कस्बे में गोहत्या को लेकर छायी अशान्ति का यह सरगना था।'

२४६. महीने के उत्तरार्ध में जाखड़ के दो महाजनों ने रिपोर्ट भेजी कि २३ जून को कमालिया पुलिस थाना क्षेत्र के एक गाँव में कुछ मुसलमान एक बैल को लेकर आए थे तथा मस्जिद में उसकी हत्या करने के बाद उसके माँस को चावल के साथ अपने धर्म के लोगों में वितरित किया। शिकायतकर्ता ने कहा कि उनकी धार्मिक भावनाओं को ऐसी करतूतों से ठेस पहुँचती है।

२४७. जुलाई १८८९ के पूर्वभाग में 'रफीक-ए-हिन्द' (लाहौर) ने एक लेख प्रकाशित किया जिसमें सरकार द्वारा समय समय पर पशु हत्या विषयक आदेशों का ब्यौरा तरतीबवार इस उद्देश्य से दिया गया था कि बकरईद के अवसर पर पशु हत्या करना वैध था। लेखक ने स्थानीय सरकार को २९ मार्च १८४९ को जारी पंजाब के अनुलग्नक विषयक घोषणा के अनुच्छेद-९ में विनिर्दिष्ट शर्तों को लागू करने तथा १८७२ के अधिनियम-४ की धारा ५० के तहत नियम बनाने तथा उन्हें प्रतिवर्ष सरकारी राजपत्र में प्रकाशित करने का मुद्दा उठाया। लेखक ने लिखा कि होशियापुर, जलंधर, रोहन, एवं लुधियाना के मुसलमान बकरईद के अवसर पर पशुहत्या करके पहले मुसीबत मोल ले चुके हैं। अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि जब तक इस प्रथा को भारतीय दण्डसंहिता के तहत एक अपराध नहीं है ऐसा नहीं कह दिया जाएगा तब तक कोई भी मुसलमान अपने इस धार्मिक कर्तव्य को पूरा करने का साहस ही नहीं कर पाएगा। साथ ही नियमों के प्रकाशन से लोगों को यह जानकारी मिलेगी कि किस स्थिति में पशुहत्या निषिद्ध है।

२४८. २७ जुलाई १८८९ को बन्नू के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि आमसड़कों पर गोहत्या करने की प्रथा हिन्दुओं की दृष्टि में अत्यन्त अपमानजनक बात है। अन्य लोगों की दृष्टि में भी यही बात स्पष्ट दिखाई देती है।

२४९. अगस्त १८८९ में झाँग जिले के लालियाँ से एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि मुसलमानों की शादी के अवसर पर गोहत्या आम बात हो गई है यह हिन्दुओं के लिए अत्यन्त अपमानजनक बात है। इस वर्ष मार्च में मुजफ्फरगढ़ से भी इसी प्रकार की

एक रिपोर्ट प्राप्त हुई (देखिए अनुच्छेद-२३९)

२५०. 'आफताब-ए-हिन्द' (जलन्धर) में ३ अगस्त, १८८९ को एक बयान प्रकाशित किया गया कि जलंधर के कुछ हिन्दू अपने सहधर्मियों से उपायुक्त को अभ्यावेदन देने हेतु एक इस आशय के स्मरणपत्र पर हस्ताक्षर करा रहे थे कि जलंधर से बूचड़खाने को हटाया जाए तथा यदि इसकी आवश्यकता हो तो नगर से तीन चार मील दूर किसी स्थान पर इसे बनाया जाए। 'आफताब-ए-पंजाब' (लाहौर) के ७ अगस्त १८८९ के अंक में, इसी विषय पर जलंधर के बाबा सरमुख सिंह का एक पत्र भी प्रकाशित किया गया। इसमें लेखकने 'आफताब-ए-हिन्द' में प्रकाशित तथ्यों को सत्य एवं निष्पक्ष रूप में मानने से इंकार करने के पश्चात् लिखा कि बड़ी संख्या में प्रतिष्ठित हिन्दुओं एवं मुसलमानों ने इस स्मरणपत्र पर अपनी इच्छा से हस्ताक्षर किए थे। अपने इस दावे के समर्थन में बाबा ने इस स्मरणपत्र का पाठ दिया जिसमें जलंधर के हिन्दू एवं मुस्लिम समुदाय के प्रतिष्ठित लोगों के हस्ताक्षर थे।

२५१. 'रियाज-ए-हिन्द' (अमृतसर) ने अपने ५ अगस्त, १८८९ के अंक में आश्चर्य व्यक्त किया कि कश्मीर में पशु हत्या के लिए आजीवन कारावास की सजा काट रहे अभियुक्तों को स्वर्गीय महाराजा रणबीर सिंह की चौबरसी के उपलक्ष्य में मुक्त किया गया था।

२५२. अगस्त १८८९ में आरम्भ में हिन्दुओं द्वारा बताए गए साक्ष्य के आधार पर रेवाड़ी की पुलिस ने रेवाड़ी में मुसलमानों द्वारा लाई गई दो गायों को जब्त किया। क्योंकि गायों को ईद के लिए लाया गया था तथा दूसरे पक्ष का प्रतिष्ठित व्यक्ति हिन्दू गोशाला के प्रबन्धकों में से एक था अतः मामले में उलझन थी। तथापि, उपायुक्त ने ९ अगस्त की रात को रेवाड़ी में झगड़े को रफा-दफा करा दिया।

२५३. इस घटना के कुछ दिन पश्चात् रेवाड़ी के गीजू नामक एक कसाई ने रिपोर्ट की कि जिन गायों की वजह से धार्मिक विवाद पैदा हुआ था उनमें से एक कहीं चली गई थी। अन्य कसाई लोगों को गीजू कसाई के बयान पर विश्वास नहीं हुआ अतः एक पंचायत बुलाकर उनकी राय जानी गई तो पता चला कि वह गाय ३०० रू. में एक हिन्दू को बेची गई थी। तदुपरान्त उन्होंने फिर कभी गीजू कसाई की बात पर विश्वास नहीं किया।

२५४. बकरईद के अवसर पर (८ अगस्त १८८९) रोहतक के बनिया जाति के कुछ लोगों ने रिपोर्ट दी कि कस्बे में धोबियों ने एक गाय की हत्या की थी। जिला पुलिस अधीक्षक ने स्थल का मुआयना किया तथा अशान्ति फैलाने के उद्देश्य से उस

स्थान पर एकत्रित हुए हिन्दुओं की भीड़ के दो दलों को वहाँ से तितर बितर करके जांच की तथा उन छह लोगों को तुरन्त गिरफ्तार किया जिन्होंने गाय की हत्या की थी। उपायुक्त के आदेशानुसार लाश को तत्पश्चात् वहाँ से हटाया गया और कस्बे के बाहर दफना दिया गया। उत्तेजना धीरे धीरे मन्द पड़ गई लेकिन इस घटना के परिणामस्वरूप कस्बे के हिन्दुओं और मुस्लिमों के बीच दुर्भावना काफी समय तक व्याप्त रही। उपर्युक्त घटना का संकेत देते हुए 'कोह-ए-नूर' (लाहौर) ने लिखा कि रोहतक में कुछ मुसलमान धोबियों ने एक पुलिस हवालदार की साक्षी में एक गाय की हत्या कर दी। इससे कस्बे के हिन्दुओं में अत्यन्त उत्तेजना फैल कई। यदि जिला पुलिस अधीक्षक तुरन्त शीघ्रता से उस स्थल पर आते तथा गोमाँस को कस्बे के बाहर कहीं न दफनवाते तथा हिन्दू मुस्लिमों को एक दूसरे के प्रति समझदारी की भावना के लिए बाध्य नहीं करते तो वहाँ दंगा भड़क गया होता। अगले दिन उपायुक्त ने दोनों समुदायों के लोगों को बुलाकर एक बैठक की तथा उसमें एक भाषण दिया। जिससे दोनों समुदायों के लोगों में सामंजस्य की भावना पैदा होने के बजाय वे पहले से भी अधिक उत्तेजित हो गए। वे एक दूसरे पर मुकद्दमा चलाने के लिए अंशदान करते हुए देखे गए।

२५५. 'कोह-ए-नूर' (लाहौर) ने अपने १७ अगस्त १८८९ के अंक में एक लेख प्रकाशित किया जिसमें लेखक ने लिखा कि बकरईद के त्योहार के अवसर पर रामपुर के कुछ शरारती मुसलमानों ने गाय की हत्या की तथा नवाब के दीवान लाला परमेशरी दास के घर के दरवाजे पर उसका खून छिड़क दिया। लेखक ने रामपुर पुलिस पर कर्तव्य की भारी अवहेलना करने का दोष मढ़ा तथा टिप्पणी की कि इस तरह की घटनाएँ सामान्यतः खतरनाक परिणाम लानेवाली होती हैं।

२५६. इसी दिन, रोहतक से एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि उस स्थान पर हाल ही में एक गाय की हत्या होने के कारण से उस जगह के हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे से किसी भी प्रकार का व्यवहार न करके एक दूसरे का बहिष्कार कर रहे थे। दोनों ही पक्षों ने अपनी अपनी अलग दुकानें, सब्जी के स्टॉल, आदि लगा दिए थे तथा एक दूसरे के खिलाफ अदालत में मुकद्दमा दायर करके एक-दूसरे को नीचा दिखाने के उद्देश्य से वे वकील आदि के खर्च के लिए अंशदान प्राप्त कर रहे थे। यह भी कहा गया कि मुसलमानों ने दिल्ली के वकील श्री किर्कपैट्रिक को रोहतक के उपायुक्त के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए मुकद्दमा चलाने के लिए नियोजित किया था। क्योंकि उपायुक्त ने उन्हें उनके द्वारा मारी गई गाय के टुकड़े करने तथा उन्हें खाने की अनुमति नहीं

दी थी। दूसरी ओर, हिन्दू इस पर कानूनी निर्णय प्राप्त करने की ऐसी कार्रवाई करते रिपोर्ट किए गए कि रोहतक में गोहत्या पूरी तरह से हमेशा के लिए निषिद्ध करवा दी जाए।

२५७. 'पंजाब पंच' (लाहौर) ने अपने २२ अगस्त १८८९ के अंक में पशु संरक्षण के महत्त्व पर एक आलेख प्रकाशित किया जिसमें भारत के लोगों को खैराती गोशालाएँ खोलने एवं बूढ़ी गायों को चारा खिलाने एवं उनके संरक्षण के लिए निधि इकट्ठी करने के लिए अंशदान करने हेतु आह्वान किया।

२५८. २१ अगस्त १८८८ को दो जाटों ने बालंद गाँव का दौरा किया । गाँव के लोगों को कहा कि ७ एवं ८ सितम्बर को रोहतक के जलझूलनी एवं मुहर्रम त्योहार के अवसर पर गाँव से ५० लठैत जाटों को रोहतक भेजें। बालंद के जाटों द्वारा जाँच करने पर ज्ञात हुआ कि गाँव में आने वाले वे दो जाट रोहतक के जाट समुदाय के सन्देशवाहक नहीं थे। अतः उन्होंने कोई कार्रवाई नहीं की। चमड़े एवं मसालों के कुछ मुसलमान व्यापारियों ने इसी समय रिपोर्ट दी कि हिन्दू बहुल गाँवों में जाने पर उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता था तथा बहिष्कार प्रणाली के प्रवर्तमान किए जाने के कारण उनकी वस्तुओं का कोई हिन्दू खरीददार वहाँ नहीं था।

२५९. २४ अगस्त १८८९ को रिपोर्ट प्राप्त हुई कि थानेसर में ईद के त्योहार वाले दिन से ही हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच संघर्ष कुछ बढ़ गया था। बनिया समुदाय के लोग मुसलमानों के खिलाफ अदालत में मुकद्दमे दायर करने के उद्देश्य से ब्राह्मणों को निधि संचित करने के लिए अंशदान उगाहने के लिए सहायता कर रहे थे। ७०० रू. इस हेतु पहले ही एकत्रित किए जा चुके थे तथा १२०० रू. का प्रबन्ध हो रहा था। लाड़वा के कुछ हिन्दुओं को कहते हुए सुना गया कि पशु हत्या के मामले में मुसलमानों के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए वे थानेसर के ब्राह्मणों की धन देकर मदद कर रहे थे। इस रिपोर्ट के प्राप्त होने के तुरन्त बाद अमृतसर से एक दूसरी रिपोर्ट पुष्टि स्वरूप प्राप्त हुई।

२६०. इसी दिन, जलंधर के निहालचंद ने खन्ना पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी को सूचना दी कि हिसार जिले में हिन्दूओं एवं मुसलमान दोनों समुदायों के सदस्यों से एक समिति की रचना पशु हत्या पर रोक लगाने के उद्देश्य से की गई थी।

२६१. जगाधरी के हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच एक थोड़ी सी असहमति की स्थिति पैदा होने की रिपोर्ट उस समय प्राप्त हुई जब मुसलमानों ने ईद के अवसर पर कुछ पशुओं की हत्या की।

२६२. सितम्बर १८८९ के उत्तरार्ध में, थानेसर के मौलवी अलिकउल्लाह ने दिल्ली की अंजुमन-ए-इस्लामिया को ईद के त्योहार के अवसर पर हिन्दुओं के व्यवहार के खिलाफ अदालती कार्रवाई करने के लिए आर्थिक सहायता माँगने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। तथापि, अंजुमन ने उत्तर दिया कि शाहाबाद में सिखों के कब्जे से एक मस्जिद को मुक्त कराने के लिए वे पहले से ही अंशदान प्राप्त करने में लगे हुए थे, अतः वे उनके अनुरोध पर सहयोग नहीं दे सकते थे।

२६३. २१ सितम्बर १८८९ को करनाल के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि उन्होंने रोहतक कस्बे के कुछ धोबियों को पानीपत में उस गोहत्या में लिप्त होते हुए स्वयं देखा था जो ईद के त्योहार पर उनके मुहल्ले में हुई थी। उन्होंने कहा कि वे कुछ समय तक पानीपत में ही रहेंगे क्योंकि उन्हें भय था कि गाँव में पहुँचने पर गाँव के जाट उनकी घात लगाकर बैठे होंगे और उन पर हमला करेंगे।

२६४. इसी दिन रोहतक से सूचना प्राप्त हुई कि उस कस्बे के बनिया समुदाय के लोग गोहत्या पर रोक लगाने के लिए बढ़चढ़कर अंशदान दे रहे थे। वे हिन्दू जाटों को कसाइयों की हत्या करने के लिए उकसा रहे थे तथा उन्हें इसके लिए अच्छा खासा इनाम देने के वायदे भी कर रहे थे।

२६५. सितम्बर १८८९ के अन्तिम सप्ताह में दिल्ली में अफवाह फैली कि पंजाबी व्यापारी एवं जूते के विक्रेता सरकार को एक याचिका प्रस्तुत करके उनके घर के अन्दर कुर्बानी के लिए गोहत्या की अनुमति प्राप्त कराने के लिए सोच रहे थे। वे यह भी कह रहे थे कि यदि इस तरह की अनुमति दी जाएगी तो हिन्दू पशुओं को हत्या किए जाने के लिए बाहर ले जाते हुए नहीं देखेंगे अतः वे इससे क्रुद्ध भी नहीं होंगे।

२६६. २८ सितम्बर १८८९ को अम्बाला के जिला पुलिस अधीक्षक ने कहा कि जगाधरी में हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच संघर्ष की स्थिति मन्द पड़ गई थी। जिन मुसलमानों ने आदेश की अवहेलना करके कुछ पशुओं की हत्या की, उन पर जुर्माना लगाया गया। उपायुक्त ने जगाधरी में पशु हत्या निषेध का सख्ती से पालन करने हेतु आदेश जारी कर दिए थे।

२६७. इसी दिन रिपोर्ट प्राप्त हुई कि अम्बाला जिले के चंडीगढ़ पुलिस हद के सोहाना, मातौर एवं कामाह के हिन्दू लखनऊ से प्रकाशित गोहत्या पुस्तिका की प्रतियाँ आन्दोलन में जुड़ने के उद्देश्य से प्राप्त करने के प्रयत्न कर रहे थे।

२६८. नवम्बर १८८९ के आरम्भ में, जलंधर जिले के भोगपुर पुलिस थाना के लरोहा के सरदार बसावासिंह ने कहा कि एक जमींदार द्वारा दी गई अरजी पर उस

जिले के सोहेलपुर गाँव में एक बूचड़खाना खुला था और इसका दोष हिन्दुओं के मत्थे मढ़ा गया कि उन्होंने उनके कुओं में सूअर का गोश्त डाला था। प्राधिकारियों ने अंततः हस्तक्षेप किया और बूचड़खाने को वहाँ से हटाया गया।

२६९. इसी समय के आसपास, जमींदार केवलसिंह ने रोहतक जिले में बहादुरगढ़ के तहसीलदार को शिकायत की कि पशुओं की हत्या करके उन्हें बैलों पर लादकर शहर के अन्दर लाया जाता था, तथा इस प्रथा पर उन्हें आपत्ति थी।

२७०. ११ नवम्बर १८८९ को पिंडोरी गल्ला के एक ब्राह्मण को तरनतारन बाजार में यह कहते हुए सुना गया कि ब्रिटिश शासन में गायों के साथ बदसलूकी की जाती थी तथा उसका दुरुपयोग किया जाता था। उसने अमृतसर के पिछले पशु मेले में कसाइयों को बूढ़े एवं बेकार पशुओं को हत्या करने के लिए खरीदते हुए देखा था, तथा इस प्रकार का निर्दयतापूर्ण व्यवहार सिख सरकार के शासन में कभी भी बरदाश्त नहीं किया जाता था।

२७१. 'अखबार-ए-आम' (लाहौर) ने अपने १४ नवम्बर १८८९ के अपने अंक में मिर्जापुर के 'नाजिम-ए-शहर' से एक अनुच्छेद पुनः प्रकाशित किया जिसमें कहा गया था कि पशु संरक्षण के लिए बनाई गई सभाओं की संख्या में वृद्धि के साथ साथ पशु हत्या भी बढ़ती जा रही थी और चूँकि अंग्रेज स्वयं पशुहत्या के हिमायती थे अतः उनसे इस प्रथा के बन्द करने की आशा करना मूर्खता ही होगी।

२७२. मोन्टगोमेरी से २१ दिसम्बर १८८९ को एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि कुछ मुसलमानों ने जाखड़ गाँव में एक गाय की हत्या की थी और उसका माँस खाया था। प्रतिशोध की भावना से प्रेरित होकर किशनसिंह नामक एक व्यक्ति गाँव में एक सूअर ले आया तथा उसने कहा कि वह उसे मारेगा और खा जाएगा। तथापि, उसे ऐसा करने से रोका गया और अशान्ति नहीं फैली।

१८९०

२७३. जनवरी १८९० के आरम्भ में ऐसी रिपोर्ट मिली कि कसौली के हिन्दू निवासियों ने शिकायत की थी और बताया था कि वहाँ किस तरह से गोमाँस लाया जाता था तथा कसाइयों द्वारा उस स्थान पर उसे बेचा जाता था। छावनी समिति ने इस पर प्रस्ताव पारित किया कि कसाइयों को माँस बाजार के रास्ते से लाने की अनुमति नहीं दी जाए बल्कि वे इस अन्य निचले छोटे रास्तों से लाए तथा माँस को

कपड़े से अच्छी तरह ढ़ककर लाया जाए। कसाइयों को अपनी दुकान के बाहर चिक लटकानी चाहिए ताकि वहाँ होकर गुजरनेवालों की दृष्टि उस पर न पड़े।

२७४. लगभग इसी समय, फिरोजपुर जिले के माखू कस्बे में गायों की हत्या को लेकर वहाँ के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना फैल गई। हिन्दुओं ने मुसलमानों के लिए अपनी दुकानें एक या अधिक दिन के लिए बन्द कर दी थीं। इस मामले की रिपोर्ट तुरन्त उपायुक्त को की गई तथा सुझाव दिया गया कि हिन्दू चौधरियों को बुलाकर चेतावनी दी जाए। यहाँ यह ध्यातव्य है कि ८ फरवरी को इस मामले को निपटा दिया गया तथा दुर्व्यवहार के लिए मुसलमानों ने राजीनामे दिए।

२७५. जनवरी १८९० के उत्तरार्ध में तरन तारन में आयोजित आर्य समाज की एक बैठक में सदस्यों को गोसंरक्षण के प्रति अधिक ध्यान देने तथा बूचड़खाने से मुक्त कराए गए उन पशुओं के अनुरक्षण के लिए उदारतापूर्वक अंशदान देने के लिए सदस्यों को आमंत्रित किया गया था।

२७६. फरवरी १८९० में लाहौर जिले के कनकचा गाँव में कुछ सिखों द्वारा एक जंगली सूअर के माँस की दावत खाने की वजह से कुछ उत्तेजना फैली। मुसलमान लोग एक गाय को मारकर खाने की तैयारी करने लगे परन्तु उन्हें ऐसा नहीं करने दिया गया। मुसलमानों ने अदालत में शिकायत की लेकिन अंततः समझौता हो गया। पुनः ऐसी खबर मिली कि गाँव के लोगों में दुर्भावना फैलने से वे मौका मिलते ही एक दूसरे के सम्प्रदाय की भावनाओं को ठेस पहुँचाने के प्रयास करते थे।

२७७. 'पते खान' (लाहौर) ने अपने १९ फरवरी १८९० के अंक में लिखा कि लाखू (जीरा तहसील) के समीपवर्ती गाँव के मुसलमानों ने एक गाय की हत्या की, लाखू के मोची ने चमड़े को खरीदा और उसे गाँव में ले आया। गाँव के हिन्दुओं ने उसका और उसके दो छोटे बच्चों का अपमान किया। उसकी सहायता करने आए कुछ अन्य मुसलमानों के साथ भी ऐसा ही सुलूक किया गया। मोची को अस्पताल में भर्ती कराया गया तथा हिन्दू बनियाओं ने अपनी दुकानें बन्द रखीं।

२७८. ठीक इसी समय, आर्यसमाज की अमृतसर की नियमित सामान्य बैठक में शिवदत्त ब्राह्मण ने सुझाव दिया कि आगामी बैशाखी के पशु मेले में कसाइयों से ऊँची बोली लगाकर गायों को उनके हाथ बेचे जाने से मुक्त कराने के उद्देश्य से विभिन्न जिलों से समस्त आर्य समितियों को आमन्त्रित किया जाए। इस प्रस्ताव को आम स्वीकृति प्राप्त हुई थी।

२७९. गोहत्या विरोधी आन्दोलन के एक प्रमुख नेता स्वामी अलाराम मार्च

१८८० के आरम्भ में लाहौर आए। २५, २७ एवं २९ मार्च १८९० को उन्होंने ट्रिब्यून प्रेस, लाहौर में व्याख्यान दिए जिनमें उन्होंने पशुहत्या की प्रथा की निन्दा की तथा समस्त जातियों एवं वर्णों के लोगों को पशु का भोजन में उपयोग न करने की सलाह दी। अपने व्याख्यान में उन्होंने अत्यन्त सशक्त भाषा का उपयोग किया। उन्होंने भावुकता में न बहकर भी इस प्रथा की निन्दा की। लाहौर में आगमन से पूर्व अलाराम ने सुक्कूर में पशुहत्या विषयक व्याख्यान दिए। मुम्बई प्राधिकारियों ने रिपोर्ट दी कि अलाराम को भड़काने वाला भाषण देने के आरोप में एक बार कारावास की सजा भी हुई थी। लाहौर में अलाराम स्वामी के आगमन पर जिला पुलिस अधीक्षक के माध्यम से जाँचें की जाने लगीं कि अपना खर्चा उठाने के लिए उन्हें फंड कहाँ से प्राप्त होता था। जाँचों से पता चला कि स्वामी अलाराम खैरात में मिली सुविधाओं पर निर्भर थे, उनके कपड़ों की और खाने की व्यवस्था आम जनता, खासकर हिन्दुओं द्वारा की जाती थी। इसके लिए उन्होंने कभी भी किसी से कुछ भी माँगा नहीं था। यह भी रिपोर्ट की गई कि वे धनलोलुप भी नहीं थे तथा जीवन की सामान्य आवश्यकताओं से संतुष्ट थे।

२८०. २२ मार्च को तरनतारन के आर्यसमाज की एक सभा में भाषण देते हुए पोहलोमल ने कहा कि फतेहपुर जिले के बहरामपुर में आठ गायों को खरीदने के लिए कसाइयों द्वारा लगाई गई बोली से अधिक बोली लगाकर उन्हें हिन्दुओं द्वारा खरीदकर बचाया गया। वक्ताने समस्त सच्चे हिन्दुओं को इस पुण्य के कार्य में सहायक बनकर गायों की हत्या होने से बचाने के कार्य में सहायता प्रदान करने का निवेदन किया।

२८१. २७ मार्च १८९० को दिल्ली में नवाब सर्फउद्दीन के निवास पर निम्नलिखित व्यक्ति एकत्रित हुए : मौलवी अहमद-उल-हक, भूतपूर्व तहसीलदार बदरूद्दीन खान - हकीम, मौलवी अहसान-उल-हक, सैयद नासिर, मिर्जा इकबाल शाह, तथा नवाब सक्नुद्दीन। इस बैठक का उद्देश्य दिल्ली के मुसलमानों को उनके घरों में कुर्बानी हेतु पशुहत्या करने की सरकार से अनुमति प्राप्त करने हेतु आम राय कायम करने के सम्बन्ध में था। इलाहाबाद में उनके सहधर्मी लोगों को उनकी ऐसी ही माँग पर प्राधिकारियों ने उन्हें इस प्रकार की अनुमति दी थी।

२८२. स्वामी अलाराम ३० मार्च को अमृतसर में आए तथा उन्होंने २ अप्रैल को गुरु-का-बाग तथा स्वर्ण मंदिर के पास गोसंरक्षण गोशालाओं की स्थापना करने के विषय पर भाषण दिया। उन्होंने कहा कि वे कुछ वर्षों से इन्हीं उद्देश्यों हेतु यात्रा कर रहे थे तथा उन्होंने हिन्दुस्तान में ३६० गोशालाओं की स्थापना कराई थी जिनमें से

इलाहाबाद की गोशाला में १५०० गाएँ थी। वहाँ दूध एक आना प्रति सेर के हिसाब से बेचा जा रहा था जबकि बाजार में दूध की कीमत दो आना प्रति सेर थी। उन्होंने कुरान एवं हदिस (प्रोफेट मुहम्मद के परंपरागत वचनों) का उल्लेख करते हुए कहा कि इनमें सभी वर्गों के लिए दया का व्यवहार करने के लिए कहा गया है। गाय चूँकि सबसे अधिक उपयोगी प्राणी है अतः वह अन्य सभी से ज्यादा दया की पात्र है। साथ ही, उन्होंने यह भी बताया कि कुछ स्थानों पर इसी वजह से मुसलमानों ने भी गोशालाओं के लिए उदारतापूर्वक अंशदान दिया था। उन्होंने इस बात पर अत्यन्त खेद व्यक्त करते हुए कहा कि चार या पाँच वर्ष पूर्व जब उन्होंने अमृतसर में ही भाषण दिया था तब भी परिणामस्वरूप कोई गोशाला नहीं बनाई गई। उपसंहार करते हुए उन्होंने उस शहर में एक मास रुकने की मंशा व्यक्त की तथा इस हेतु स्थान स्थान पर भाषण देने तथा राष्ट्रीय कांग्रेस आन्दोलन में भाग लेने पर वहाँ से भी इसका फायदा उठाने की बात कही।

२८३. ४ अप्रैल को स्वामी अलाराम ने अमृतसर में मवेशियों को हत्या से बचाकर उन्हें संरक्षण देने से होनेवाले लाभ पर भाषण दिया। उन्होंने कुछ स्वरचित कविताएँ भी गाकर सुनाईं। लोगों की संवेदनाशक्ति को जाग्रत करने में उनकी अत्यन्त प्रभावकारी भूमिका रही।

८ अप्रैल को उन्होंने गुरु-का-बाग स्थल पर इसी विषय पर पुनः भाषण दिया। उनके भाषण को सुनने के लिए वकील बाबा नारायणसिंह एवं अन्य बहुत से हिन्दू एकत्रित हुए। उन्होंने कुछ कागज पत्रों आदि की एक प्रदर्शनी भी लगाई जिसमें पशु-हत्या को अत्यन्त बर्बर एवं नृशंस कृत्य सिद्ध किया गया था। लेकिन गोसंरक्षण हेतु गोशालाओं की स्थापना करना अत्यन्त पुण्य का कार्य था जिसके लिए अंशदान देने के लिए कहा गया था। स्वामीजी के भाषण का अभिप्राय निम्नानुसार था : एक राजपूत सिपाही ने एक व्यक्ति को एक गाय २० रूपये में कसाई को बेचते हुए देखा। उसने उस गाय को उसी कीमत पर उसे बेचने के लिए प्रस्ताव रखा। लेकिन गाय के मालिक ने उसे गाय २५ रू. से कम कीमत पर बेचने से मना कर दिया। राजपूत सिपाही से उस गाय की कीमत विक्रेता ने पुनः ३० रूपये माँगी। इस प्रकार गाय की कीमत बढ़ाई जाती रही। गाय के मालिक ने उस गाय को ७५ रू. की कीमत पर भी बेचने से इंकार कर दिया। गाय के मालिक के इस दुष्टतापूर्ण व्यवहार से कुपित होकर उस सिपाही ने अपने म्यान से तलवार खींचकर गाय के उस मालिक का सिर धड़ से अलग कर दिया और उस गाय को मुक्त कराकर गोशाला में पहुँचाया। उसे पुलिस ने

गिरफ्तार किया। उस पर मुकद्दमा चलाया गया लेकिन अदालत ने उसे इस आधार पर दोष मुक्त कर दिया कि गाय का मालिक हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाने के उद्देश्य से उस गाय को कसाई के हाथों बेच रहा था। अभियुक्त ने भयंकर गुस्से एवं धार्मिक उत्तेजना के वशीभूत होकर इस तरह का कृत्य किया था अतः इस प्रकार के नैतिक कृत्य को अंजाम देकर उसने अपने जीवन की रक्षा ही की थी। स्वामीजी ने आगे कहा कि बड़े खेद की बात है कि हिन्दुओं ने इतने महत्त्वपूर्ण विषय पर बहुत कम ध्यान दिया। यदि दिया भी है तो मात्र इतना ही कि ब्रिटिश शासन में पशुहत्या बन्द कराना बड़ा ही कठिन काम था। वे यह भूल ही गए कि हिन्दू साम्राज्य में गोशालाएँ खोलना आवश्यक नहीं था जबकि इस वर्तमान सरकार के शासनकाल में अब तक कम से कम ३०० गोशालाओं की स्थापना की जा चुकी थी। हिन्दू धर्म का पालना कहे जानेवाले अमृतसर के स्थापक गुरु रामदासजी के समय तक किसी गोशाला की आवश्यकता नहीं रही। धर्मशास्त्रों में लिखा है कि जब किसी गाय की मृत्यु उसके गले में रस्सी बँधी होने पर होती है तो उस गाय के मालिक को गंगा की तीर्थयात्रा करनी चाहिए। वहाँ उसे सफाई करने वाले लोगों द्वारा पीटा जाना चाहिए ताकि वह इस भयंकर पाप का प्रायश्चित करके अपने पाप से मुक्त हो सके। यह पाप उस समय कितना जधन्य हो जाता है जब कोई व्यक्ति किसी गाय को हत्या करने के लिए किसी कसाई को स्वयं बेचता है। स्वामीजी ने श्रोताओं को इस जधन्य अपराध पर विचार करने के लिए प्रबोधित किया। इस दिशा में एक या दो व्यक्तियों द्वारा किए गए सुधार के प्रयास अपर्याप्त ही होंगे अतः उन्होंने २० करोड़ हिन्दू जनता को एकजूट होकर इस अन्यायपूर्ण विधर्मियों के कुकृत्ययुक्त प्रथा को बन्द कराने के लिए अनुरोध किया। उन्होंने लोगों से कहा कि वे अपने पशुओं को किसी भी अपरिचित व्यक्ति को न बेचें ताकि उन्हें कसाइयों के हाथों में पड़ने से बचाया जा सके। भाषण के अन्त में उन्होंने लोगों को परामर्श दिया कि उनके पास जितना भी धन हो, वे उससे गायों को खरीदें तथा उन्हें कसाइयों के हाथों निर्मम हत्या होने से बचाएँ, साथ ही, उनके लिए गोशालाओं की स्थापना भी करें।

९ अप्रैल को स्वामी अलाराम ने गुरु का बाग में राष्ट्रीय कांग्रेस के तत्त्वावधान में आयोजित समारोह में भाषण दिया जिसमें बाबा नारायणसिंह तथा अन्य कई लोग उपस्थित थे। भाषण के समाप्त होने पर पर गोशालाओं की स्थापना के लिए पुनः अंशदान एकत्रित किया गया।

२८४. स्वामी अलाराम ने १२, १३ एवं १४ अप्रैल को पशु हत्या के विरोध

में पुनः भाषण दिया। उन्होंने १२ तारीख के अपने भाषण में कहा कि जो लोग पशुहंत्या करते हैं, वे इसी तरह से हत्या के भोग बनेंगे। १४ वीं तारीख के भाषण में उन्होंने अन्य बातों के साथ एक बात यह भी की कि लखनऊ के मुंशी नवलकिशोर सी.आई.ई. मिथ्यावादी, चुगलखोर एवं चापलूस व्यक्ति हैं। क्योंकि एक बार अलाराम ने उन्हें पूछा कि उन्होंने भारतीय कांग्रेस में शामिल होने से क्यों इंकार कर दिया तथा अब वे तैंतीस करोड़ हिन्दुओं को क्या कहकर तुष्ट करेंगे तब उन्होंने उत्तर दिया कि वे उन सभी फायदों के बारे में भलीभाँति अवगत हैं जो उनके बच्चों को कांग्रेस से मिल सकते हैं, लेकिन वे खुलकर कांग्रेस में जुड़ नहीं सकते क्योंकि उन्होंने सरकार से प्रेस के लिए चार लाख रू. ऋण पर लिए हैं। फिर भी बड़ी मुश्किल से उन्हें समझाबुझाकर कांग्रेस निधि के लिए ५०० रू. का अंशदान देने के लिए राजी किया गया। अलीगढ़ के सर सैयद अहमद, के.सी.एस.आई. के सम्बन्ध में अलाराम साधु ने कहा कि वह उनका कट्टर दुश्मन है। यह भी बताया कि वह पशु हत्या विरोधी इस आन्दोलन के प्रति भी वैरभावना से पीड़ित है। वह न तो हिन्दू है, न ही मुसलमान। मक्का के लोगों ने तो उसे काफिर घोषित कर दिया था। अलाराम ने अपने इस भाषण में इसी मानसिकता वाले तीसरे व्यक्ति बनारस के राजा शिवप्रसाद को कोसते हुए उसका उल्लेख कांग्रेस का दुश्मन कहकर किया। उनका व्याख्यान इस टिप्पणी के साथ समाप्त हुआ कि ये तीन लोग कांग्रेस को हालाँकि दिल से चाहते तो थे लेकिन मिथ्यावादी चरित्र के होने के कारण ये आन्दोलन में खुलकर जुड़ नहीं पाए तथा इसका विरोध करने के बहाने ढूंढते रहे।

अमृतसर के जिला पुलिस अधीक्षक ने अलाराम के भाषणों पर अपनी टिप्पणी करते हुए कहा कि हिन्दुओं की धार्मिक भावानाओं को भड़काने की शरारतपूर्ण मंशा के वशीभूत होकर कार्य किया गया है। हिन्दुओं को हत्या एवं अन्य इसी प्रकार अवैध कार्य करने में कूका गुरु राम सिंह की भाँति ही उकसाया जा रहा है। उदाहरण के लिए अलाराम द्वारा अपने भाषण में एक ऐसे राजपूत का उल्लेख करना जिसने गाय के मालिक की हत्या की तथा जो अपने इस नीतिसम्मत कार्य से कानून से बच गया। अलाराम वकील बाबा नारायणसिंह के साथ षडयंत्र रच रहे हैं अतः इनसे बाबा नारायणसिंह पर चौकसी रखने की अत्यन्त आवश्यकता जान पड़ती है क्योंकि उनका मुख्य उद्देश्य लोगों की नजर में अपनी लोकप्रियता बढ़ाने के लिए सरकार विरोधी किसी भी आन्दोलन को हवा देकर अपना उल्लू सीधा करना है। आर्यसमाज के सदस्य तथा अन्य हिन्दू अलाराम की यात्राओं एवं अन्य खर्च के लिए उदारतापूर्वक अंशदान देकर

निधि उपलब्ध कराते हैं। स्वामी अलाराम के शिष्यों से उनके विषय में यह ज्ञात हुआ है कि वह जाति से बढ़ई है तथा अमृतसर जिले के घरेंडा पुलिस सीमा के एक गाँव के निवासी हैं, जहाँ उनकी पत्नी एवं २० वर्ष का एक बेटा रह रहे हैं। लगभग १७ वर्ष पूर्व वे फकीर बन गए थे तथा सांध्य गायत्री नामक एक हिन्दू धर्मग्रन्थ से श्लोक गुनगुनाते रहते थे। तदुपरान्त उन्होंने आर्य समाज के सिद्धान्तों पर भाषण देना शुरु किया। पाँच वर्ष पूर्व अमृतसर के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थलों पर उन्होंने पशु हत्या के विरोध में भाषण दिए थे। उस समय अलाराम ने दिवाली के पशु मेले से आर्यसमाज द्वारा बहुत बड़ी संख्या में खरीदी गई गायों को लेकर हरिद्वार के लिए प्रस्थान किया था।

२८५. १८ अप्रैल १८९० को अमृतसर में गंगाराम नामक एक व्यक्तिने भाषण दिया था जिसका सारांश इस प्रकार है : पाँच वर्ष पूर्व वह स्वामी अलाराम के साथ कृशकाय गायों को लेकर अमृतसर से हरिद्वार गए थे। वहाँ से कानपुर, इलाहाबाद तथा अन्य स्थानों पर गए थे। वहाँ रास्ते में अलाराम ने पशुशालाएँ स्थापित करने के विषय पर जगह-जगह भाषण दिए थे। गंगाराम दो साल तक अलाराम के साथ रहे, तत्पश्चात् वे अमृतसर लौटे जहाँ उन्होंने वकील बाबा नारायणसिंह के साथ काम किया। उनके साथ वे तीन वर्ष तक रहे। उस समय नारायणसिंह आर्यसमाज के सदस्य थे, लेकिन समाज की निधि-दुर्विनियोजन करने के लिए उन्हें समाज से निकाल दिया गया था। तत्पश्चात् वे सिंह सभा में शामिल हो गए। वहाँ अंशदान के रूप में धन एकत्रित किया परन्तु एकत्रित बड़ी मात्रा में धन का अपने लिए उपयोग किया। यह धन उन्हें मजबिस से सिखों के साथ खान-पानगत सामाजिक समता की भावना को सुदृढ करने हेतु मिला था।

२८६. इसी समय स्वामी अलाराम ने मजीठा में सरदार दयालसिंह के संरक्षण में भाषण दिया।

२८७. इसके कुछ समय पश्चात् मुजफ्फरगढ जिले में अलीपुर तहसील में खैरपुर के कुछ कसाइयों ने एक गाय की हत्या हमेशा के स्थल पर कर दी तथा उसके माँस का एक हिस्सा गलती से दुकान पर उस समय लाया गया जब वहाँ आए हुए हिन्दू बकरे का मांस खरीद रहे थे। इससे हिन्दूओं बड़ी ही अपमानजनक स्थिति में आ पडे। उन्होंने उन कसाइयों से बकरे का माँस खरीदना बन्द कर दिया।

२८८. अप्रैल के अन्तिम सप्ताह में दिल्ली के पूर्व शाही परिवार के एक सदस्य मिर्जा सुनइया जाहने अपने चार परिचरों के साथ वहाँ से बनारस के लिए प्रस्थान

किया। उसका उद्देश्य पशु हत्या विषय पर जारी हुए एक आदेश की प्रति प्राप्त करना था। उसे प्राप्त करने में इलाहाबाद में उन्हें सफलता भी मिली। उसके बाद वे टोंक गए।

२८९. ४ मई १८९० को स्वामी अलाराम, वकील बाबा नारायणसिंह को अपने साथ लेकर स्वर्णमन्दिर के आसपास के इलाकों में गए। वहाँ उन्होंने स्वामी केशवानन्दजी का भाषण सुना। लेकिन उन दोनों ने वहाँ कोई भी भाषण नहीं दिया। वहाँ कुछ भी बोलना उन्होंने टाल दिया। स्वामी अलाराम से सम्बन्धित पूर्ववृत्त अमृतसर के जिला पुलिस अधीक्षक द्वारा प्राप्त किया गया। उसने रिपोर्ट किया: मनहुला-खान-खाना, मानवा पुलिस थाना, जिला - लाहौर में चार भाई रहते थे जो जाति से बढ़ई थे। इन चारों के नाम हैं - जवाहिरसिंह, हीरासिंह, दयासिंह, एवं देलसिंह। देलसिंह का विवाह मुसम्मात रामी के साथ हुआ था। जिससे उनके दो बेटे - अलासिंह (जिसे अब अलाराम कहा जाता है) एवं निहाल सिंह हुए थे। वे वहाँ से अपने परिवार के साथ कपूरथला रियासत में गए। वहाँ उन्होंने पोथी एवं ग्रंथी की पांडुलिपियों की बिक्री करके आजीविका चलाई। देलसिंह की वहाँ मृत्यु हुई। अलाराम एवं उसके भाई निहालसिंह ने अपने पिता के व्यवसाय को सँभाला। वे सिंधु में सक्कूर गए। वहाँ निहालसिंह की मृत्यु हुई तथा अलाराम एक फकीर बनकर उसी स्थान पर रहने लगे। उसी समय, उन्होंने अपनी माता रामी, पत्नी लक्ष्मी तथा बेटे सुन्दरसिंह से भी कोई संपर्क नहीं किया। बेटा उस समय मात्र चार वर्ष का था। वे सभी अपने पैतृक गाँव में रह रहे थे। चार वर्ष पश्चात् अलाराम फकीर की पत्नी लक्ष्मी ने लाहौर जिले के खालरा पुलिस थाना के धिरकी गाँव के एक व्यक्ति के साथ पुनर्विवाह कर लिया। सुन्दरसिंह अपनी दादी मुसम्मात रामी के पास रह गया। उसने उसका लालनपालन किया था। चार वर्ष पूर्व अलाराम ने इस जिले के नेश्टा गाँव की यात्रा की। वहाँ से वे अपने पैतृक गाँव गए। वहाँ उन्होंने अपनी माँ, बेटे, एवं रिश्तेदारों के साथ कोई सम्पर्क नहीं किया। चार दिन के बाद वे वहाँ से लाहौर चले गए। उनका पुत्र सुन्दरसिंह जहानाबाद रेल्वे स्टेशन पर पिछले १८ माह या २ वर्ष से १५ या १६ रूपये प्रति माह पर बढ़ई की नौकरी कर रहा है। उसने अपनी बूढ़ी दादी को एक भी रूपया नहीं भेजा है। दयासिंह का पुत्र जीवनसिंह (अलाराम का भतीजा) सुक्कूर रेल्वे कर्मशाला में १२-१४ रू. प्रतिमाह की नौकरी कर रहा था। जवाहिरसिंह का पुत्र प्रेमसिंह (अलाराम का दूसरा भतीजा) मढ़ी में बढ़ई के रूप में कार्यरत है। हीरासिंह का पुत्र कालासिंह (अलाराम का तीसरा भतीजा) लाहौर रेलवे कर्मशाला में १० या

१५ रू. प्रतिमाह के वेतन पर बढ़ई के रूप में कार्यरत है। अलाराम का एक चाचा दयासिंह अपने पैतृक गाँव में बढ़ई के रूप में काम कर रहा है। अलाराम की कोई चाची या बहन नहीं है। उनकी माता रामी अजनाला पुलिस थाने के जगदेव गाँव की है तथा उनकी पत्नी लक्ष्मी अमृतसर जिले के लोपोकी पुलिस थाना झंजोटी गाँव की है। चार वर्ष पूर्व अलाराम ने धरिंदा पुलिस थाना की हद के एक गाँव नेश्टा की यात्रा की थी। उन्होंने वहाँ दो या तीन दिन भाषण दिए थे। उसके बाद उन्होंने लाहौर के लिए प्रस्थान किया था।

२९०. स्वामी अलाराम ने २२ मई को गुरु-का-बाग में गोशाला विषयक पुनः व्याख्यान दिया तथा भारतीय कांग्रेस की ओर से ब्रेडलाफ बिल पर लोगों के हस्ताक्षर प्राप्त किए थे।

२९१. २६ मई को अलाराम ने गुरु का बाग में पुनः भाषण दिया। उन्होंने तथा वकील बाबा नारायणसिंह, दोनों ने राष्ट्रीय कांग्रेस के समर्थन में शहरी और ग्रामीण लोगों के हस्ताक्षर प्राप्त करने के हरसम्भव प्रयास किए लेकिन यह सब उन्होंने पशुहत्या को बन्द कराने के बहाने तथा आयकर न देने के लिए किया।

२९२. २८ जून १८९० को अलाराम ने मुल्तान से कराची के लिए प्रस्थान किया। उनके आगमन के विषय में २६ जुलाई १८९० के सप्ताहान्त के मुम्बई पुलिस द्वारा भेजे गए सारांश में उल्लेख मिलता है। अलाराम के आगमन की रिपोर्ट के साथ इस उद्देश्य वाली एक टिप्पणी साथ में जोड़ी गई थी कि सिखों के धर्म का लोगों के बीच अपमान करने, उनके गुरु नानक के सम्बन्ध में अपमानजनक बातें कहने तथा गुरु ग्रन्थ से कुछ पन्ने फाड़कर उसी समय फैंकने के लिए उन्हें १० या १२ वर्ष की जेल की सजा सुनाए जाने पर कराची जेल में भेजा गया था।

२९३. इसी दिन रोहतक से भी एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि निम्न जाति के कुछ मुसलमान धोबी अपने मुहल्ले में एक गाय की कुर्बानी देकर हत्या करने की तैयारी कर रहे हैं जहाँ १८८९ में अशान्ति फैली थी।

२९४. 'केसर-उल-अखबार' (करनाल) ने अपने दिनांक १९ जुलाई १८९० के अंक में एक लेख प्रकाशित किया जिसमें लेखक ने लिखा कि दिल्ली के मुसलमानों ने हाल ही में ईद के त्योहार के अवसर पर अपने घरों में अन्दर पशुहत्या करने हेतु अनुमति प्राप्त करने के लिए स्थानीय प्राधिकारियों के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया था। लेकिन उस शहर के हिन्दू ने उन्हें इस प्रकार की अनुमति देने के विरोध में प्रदर्शन किया था। हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच इससे फूट पड़ गई है जो कि अत्यन्त

निन्दनीय बात थी। जब तक वे परस्पर व्याप्त इन छोटे छोटे मतभेदों को नहीं भुला देते तब तक वे कोई भी प्रगति नहीं कर सकते। हिन्दुओं के लिए पशु संरक्षण स्पष्टतः धार्मिक कर्तव्य है। यह मात्र कृषि के लिए ही नहीं है अपितु दूध एवं घी की बड़ी मात्रा में आपूर्ति हेतु भी अत्यावश्यक है क्योंकि ये जीवन के लिए अत्यावश्यक वस्तुएं हैं। यदि मुसलमान पशुओं की हत्याएँ निरन्तर करते रहे तो इससे उनको भी हिन्दुओं की भाँति ही आगे कष्ट भुगतने पडेंगे। लेखक ने अपने विचार व्यक्त करते हुए आगे लिखा कि यदि हिन्दू मुसलमानों को पशुओं की हत्या करने से रोकना चाहते हैं तो वे उन्हें इस प्रथा के जारी रहने से होनेवाले नुकसान से अवगत कराएँ, ताकि वे इस बात को समझकर पशु हत्या करना स्वयं बन्द कर दें। ईद के अवसर पर गोहत्या करने के लिए मुसलमान धार्मिक रूप से बाध्य नहीं हैं। यदि बकरियों एवं अन्य पशुओं की हत्या करके वे इस प्रथा को जारी रखना आवश्यक समझें भी तो यह सब उन्हें अपने घर के अन्दर करना चाहिए ताकि इससे हिन्दुओं की भावनाओं को ठेस न पहुँचे।

२९५. २६ जुलाई १८९० को रोहतक के जिला पुलिस अधीक्षक ने निम्नलिखित रिपोर्ट भेजी : जिला मजिस्ट्रेट द्वारा उन क्षेत्रों को निर्देशित करने के लिए आदेश जारी कर दिए हैं जहाँ बकरईद के अवसर पर पशु हत्या करने की अनुमति दी गई है। दोनों समुदायों की भावनाओं पर सभी दृष्टि से व्यापक विचार किया गया है ताकि उनमें से किसी को ऐसा न लगे कि उनके साथ न्याय नहीं किया गया है। फिर भी ऐसा मानना है कि कुछ कुख्यात दुष्ट प्रकृति वाले लोगों ने आयुक्त के समक्ष याचिका प्रस्तुत करके इन आदेशों में हस्तक्षेप करने का प्रयास किया है। २०० सिपाहियों के एक दल को इस हेतु तैनात किया गया है। किसी भी प्रकार की अशान्ति फैलने की स्थिति से निपटने के लिए किए गए व्यापक प्रबन्धों के सम्बन्ध में उपायुक्त एवं उपमहानिरीक्षक से अनुमोदन प्राप्त कर लिए गए है।

२९६. इसी दिन अमृतसर से एक रिपोर्ट प्राप्त हुई। हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच, विशेष रूप से पशु हत्या एवं गोमाँस बिक्री विषय पर जारी सरकार के आदेश के सन्दर्भ में कुछ संघर्ष की स्थिति पैदा हो गई थी। 'सिंह सहाय' समाचार पत्र ने सुझाव दिया कि मुसलमानों द्वारा भेड़ एवं बकरियों की हत्या किए जाने पर भी पाबन्दी लगा दी जानी चाहिए।

२९७. २९ जुलाई १८९० को जगाधरी में हिन्दुओं की एक बैठक कमैटी के अध्यक्ष बंसीलाल के निवास पर आयोजित की गई। उसमें उन सभी व्यापारियों का बहिष्कार करने का निर्णय लिया गया जो ईद के अवसर पर पशु हत्या में लिप्त थे।

अम्बाला के उपायुक्त ने श्री बंसीलाल के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट में निम्नानुसार लिखा : बंसीलाल ने देशभक्त कुर्सीनसीन के रूप में ख्याति अर्जित कर ली है। मुझे भय है कि वह जगाधरी के सब से बड़े असली शरारती षड़यंत्रकारी हो सकते है।

२९८. इसी समय, पंजाब सरकार ने पशु हत्या के सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम प्रकाशित किए :

पंजाब सरकार : गृह विभाग

सामान्य

१५ जुलाई १८९०

सं. ८१९ अधिसूचनाः १९७२ के अधिनियम-४ की धारा ४३ में, जहाँ घोषित है कि पशुहत्या एवं गोमाँस की बिक्री नहीं की जाएगी बशर्ते कि स्थानीय सरकार निर्धारित नियम बनाकर ऐसी अनुमति दे दे। जब भी, इसके पश्चात् प्रवृत्त नियमों की विधि मान्यता के सम्बन्ध में किसी सन्देह की स्थिति पैदा हो तथा इस प्रथा को चालू रखना वांछनीय हो तो उन्हें इन नियमों के अनुसार प्रचलित किया जा सकेगा।

निम्नलिखित नियम, जिन्हें परिषद में गवर्नर जनरल की पूर्व अनुमति प्राप्त हुई है, को उपराज्यपाल द्वारा एतद्द्वारा विहित किया जाता है :

१. (१) किसी भी शहर, या कस्बे या कस्बे की भूमि पर पशु हत्या नहीं की जा सकती सिवाय इसके कि ऐसा करने के लिए उपायुक्त द्वारा लिखित लाईसेंस प्रदान कर अनुमति दे दी गई हो तथा ऐसे लाइसेंस में उल्लिखित शर्तों का अनुपालन करके ऐसा किया गया हो,

(२) उपायुक्त को अपने विवेकानुसार तथा बिना कोई कारण बताए इस प्रकार के लाइसेंस देने से मना करने की सत्ता होगी।

(३) इन नियमों में कस्बा या कस्बाभूमि से अभिप्राय क्रमशः समस्त नगरपालिकाओं, छावनियों, नागरिक स्टेशनों तथा सभी कस्बों या उन बाजार-कस्बों, जहाँ नगरपालिका अभी अस्तित्व में नहीं है तथा ऐसे स्थानों पर जहाँ पशुओं की हत्या के लिए बूचड़खाना अब तक अस्तित्व में है या उससे सम्बन्धित है, जब से ये नियम प्रभावी होंगे। इसकी व्याप्ति वह समग्र भूमि होगी जो इन सीमाओं के अन्दर है या किसी भी शहर, कस्बे या नगरपालिका की परिसीमा में है।

(४) कोई भी ऐसा कत्लगाह या उससे सम्बन्धित स्थान कस्बे की सीमा के अन्दर या उस की भूमि के निकटवर्ती भाग, जो ये नियम लागू होने के समय,

नगरपालिका या छावनी प्राधिकरण द्वारा अनुमत हैं या इन्हें आम बूचड़खाने के रूप में पशुओं की हत्या करने के लिए पिछले तीन वर्षों से लगातार उपयोग किया जा रहा है तो उन्हें उपायुक्त द्वारा इन नियमों के तहत लाइसेंस दिया हुआ माना जाएगा, बशर्ते कि उपायुक्त किसी भी समय ऐसे लाइसेंस का उपयोग करनेवाले या अनुरक्षण करनेवाले किसी व्यक्ति को इन नियमों के तहत लिखित रूप में लाइसेंस प्राप्त करने के निर्देश देंगे या ऐसे बूचड़खाने में उस समय तक पशुओं की हत्या करने पर निषेधाज्ञा लागू कर देंगे जब तक लाइसेंस प्राप्त नहीं कर दिया जाता और जब तक लाइसेंस की शर्तों पर अमल नहीं किया जाता।

२. (१) गोमाँस किसी भी कस्बे या कस्बे की भूमि पर न तो बेचा जाएगा और न बिक्री हेतु प्रदर्शित ही किया जाएगा बशर्ते कि ऐसा नियम-१ के तहत लाइसेंस प्राप्त आम बूचड़खाने के अहाते में या उपायुक्त द्वारा लिखित रूप में इस हेतु दुकान खोलने के लाइसेंस दिए जाने पर किया गया हो।

(२) कोई भी ऐसा स्थान जो नगरपालिका या छावनी प्राधिकरण द्वारा अनुमत रूप में इन नियमों के लागू होने के समय होगा या जिसको लगातार तीन वर्ष तक दुकान के रूप में या गोमाँस की बिक्री करने के लिए उपयोग में लाया जा रहा होगा, को उपायुक्त द्वारा इस उद्देश्य के लिए लाइसेंस प्राप्त माना जाएगा बशर्ते कि उपायुक्त ऐसी किसी दुकान के मालिक या दुकानदार से इन नियमों के तहत लाइसेंस प्राप्त करने के लिए आवश्यक समझें तथा वे ऐसी दुकानों पर गोमाँस बिक्री हेतु तब तक निषेधाज्ञा लागू कर सकते हैं जब तक लाइसेंस की सभी शर्तों का पालन नहीं किया जाता।

(३) उपायुक्त को अपने विवेकानुसार तथा बिना कोई कारण बताए किसी भी दुकान पर गोमाँस की बिक्री के लिए लाइसेंस मंजूर करने से इंकार करने की सत्ता होगी। जिन्होंने अब तक इस नियम की व्याख्या के अनुसार लाइसेंस प्राप्त नहीं किया है उन्हें आदेश लिखित रूप में जारी करके ऐसी किसी दुकान के लिए लाइसेंस प्राप्त करने के लिए कह सकते हैं, जिसे वे अनावश्यक या आपत्तिजनक मानते हों तथा जो पिछले तीन वर्षों से अधिक समय से निरन्तर अनुरक्षित न किया गया हो।

३. उपायुक्त किसी गाँव के मुखिया या मुखिया लोगों या ग्राम प्रमुख या किसी कस्बे के चौधरियों को सम्बोधित करके, लिखित आदेश निकालकर नियम-१ एवं २ के उपबन्धों के तहत ऐसे गाँव, कस्बा या उसकी परिसीमा में समाहित भूमि या उसके किसी भाग के विषय में यदि वे मानते हैं कि इससे ऐसे गाँव या कस्बे के लोगों में

शान्तिपूर्ण माहौल निर्मित होगा या दंगों या हंगामों से मुक्ति मिलेगी, आदेश निकाल सकते हैं।

४. मंडल के आयुक्त के अनुमोदन से या अत्यावश्यक मामलों में अनुमोदन प्राप्त होने की प्रत्याशा में, उपायुक्त-

(१) पशु हत्या या गोमाँस की बिक्री किसी ऐसे स्थान पर निषिद्ध कर सकते हैं जहाँ इन नियमों के तहत लाइसेंस अब से पहले प्राप्त भले ही कर लिया गया हो तथा उसके बजाय किसी अन्य स्थान या स्थानों का इस उद्देश्य हेतु निर्देश कर सकते हैं,

(२) इन नियमों के तहत लिए गए किसी भी लाइसेंस को अस्थाई रूप से रद्द कर सकते हैं :

बशर्ते कि नियम-१(४) या २(२) के उपबन्धों के तहत आदेश जारी करने हेतु आयुक्त का अनुमोदन प्राप्त करना आवश्यक न हो, या ऐसे लाइसेंस की शर्तों का पालन न किए जाने को पर्यवेक्षित करके इन नियमों के तहत लाइसेंस को वापस ले लिया गया हो।

५. उपायुक्त के समस्त आदेशों में शामिल हैं

(१) पशुहत्या के लिए किसी स्थान हेतु लाइसेंस देना या देने से इंकार करना,

(२) किसी गाँव या कस्बे को नियम-१ के उपबन्धों को लागू करना या उनके आवेदन हेतु किसी प्रस्तुत याचिका को खारिज करना,

(३) गोमाँस की बिक्री हेतु किसी दुकान को लाइसेंस देना या देने से इंकार करना या दिए गए लाइसेंस को वापस लेना,

(४) अब तक अनुमत किसी भी स्थान पर पशुहत्या या गोमाँस की बिक्री को प्रतिबन्धित करना तथा उस स्थान के बजाय किसी अन्य स्थान पर देना,

(५) इन नियमों के तहत प्राप्त किए गए किसी भी लाइसेंस को अस्थाई रूप से रद्द करना,

जो मंडल आयुक्त द्वारा उसके अपने प्रस्ताव के अनुसार या सम्बन्धित किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा आवेदन देने पर परिशोधन करने की गुंजाइश होगी तथा उनके द्वारा आशोधित या रद्द किये जा सकेंगे। स्थानीय सरकार को ऐसे समस्त आदेशों को आयुक्त द्वारा आशोधित या रद्द कराना आवश्यक हो सकता है या उपायुक्त या आयुक्त द्वारा जारी किए ऐसे सभी आदेशों का आशोधन वे स्वयं कर सकते हैं। आशोधित

नियम आदेश के तहत मूल नियमों की तरह प्रभावी होंगे।

६. १८७२ के अधिनियम-४ की धारा ४३ के तहत बनाए गए इन नियमों के किसी भी व्यक्ति के द्वारा भंग किए जाने पर कारावास में भेजकर दंडित किया जा सकता है जिसकी अवधि छह मास तक बढाई जा सकती है तथा तीन सौ रूपये का जुर्माना या दोनों किए जा सकते हैं।

२९९. 'आफताब-ए-हिन्द' (जलंधर) के २ अगस्त के अंक में, 'आफताब-ए-पंजाब' (लाहौर) के ३० जुलाई के अंक में, तथा 'केसर-उल-अखबार' (करनाल) के २६ जुलाई १८९० के अंक में पंजाब सरकार द्वारा पशु हत्या से सम्बन्धित हाल ही में बताए गए नियमों के सम्बन्ध में समर्थन के स्वर से परिपूर्ण लेख प्रकाशित हुए। 'दोस्त-ए-हिन्द' (भेड़ा) ने अपने ८ अगस्त १८९० के अंक में पशुहत्या को नियमित करने के दृष्टिकोण से पंजाब सरकार द्वारा बताए गए नियमों का सार प्रकाशित किया तथा टिप्पणी की कि उपराज्यपाल ने दोनों समुदाय के लोगों के लिए इस प्रकार के नियम बनवाकर दंगे पैदा होने की स्थिति तो असम्भव कर ही दी है, साथ ही, हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को बढ़ाने में प्रोत्साहन भी दिया है।

३००. ९ अगस्त १८९० को जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट भेजी कि अमृतसर के मुसलमान पशुहत्या के सम्बन्ध में जारी किए गए नियमों को लेकर कुछ ज्यादा ही स्पष्ट हैं। उनका मानना है कि हिन्दुओं को सन्तुष्ट करने के लिए उनके धार्मिक अधिकारों में हस्तक्षेप किया गया है। इसीके सन्दर्भ में अमृतसर के जिला मजिस्ट्रेट ने टिप्पणी भेजी कि मुसलमान नाराज थे लेकिन शान्त थे। नियमों का पुराना सन्दर्भ एवं इनके पीछे निहित उद्देश्य उन्हें स्पष्ट कर दिया गया।

३०१. लगभग इसी समय, पठानकोट की नगरपालिका द्वारा आदेश पारित किया गया जो उपनिरीक्षक कालकासिंह की जानकारी के अनुसार यह था कि पठानकोट का बूचड़खाना बन्द कर दिया जाए। उपायुक्त उस जगह गए और मामले को सुलझा दिया गया।

३०२. 'गम-ख्बार-ए-हिन्द' (लाहौर) ने अपने दिनांक ९ अगस्त १८९० के अंक में कलकत्ता के उर्दू गाइड द्वारा हिन्दू ओर मुस्लिमों में परस्पर मनमुटाव पैदा करने के उद्देश्य से पशुहत्या विषयक प्रकाशित लेख के उत्तर में उसके सम्पादक को सलाह दी कि वे भविष्य में ऐसा करने से बाज आएँ तथा जनता के सभी वर्गों में एकता एवं भाईचारे की भावना प्रवर्धित करने के प्रयत्न करें।

३०३. २० अगस्त १८९० को 'सिंहसहाय' (अमृतसर) ने एक संवाददाता

का प्राप्त पत्र प्रकाशित किया जिसमें कहा गया था कि मुसलमान तहसीलदार की उपस्थिति में जगाधरी के मुसलमानों ने ईद के अवसर पर पहली बार एक गाय की हत्या की। सरकार द्वारा पशुहत्या के विरोध में आदेश जारी करने के बावजूद भी मुसलमान सडकों पर खुलेआम गोमाँस लेकर चलते थे तथा हिन्दुओं के घरों में हड्डियां फैंकते थे।

३०५. 'सिरमौर गजट' (नाहन) ने अपने १९ अगस्त १८९० के अंक में इसी विषय पर लिखा कि जगाधरी के मुसलमान चूँकि गरीब हैं अतः उन्हें हिन्दू अपने धार्मिक विधि विधान सम्पन्न करने की अनुमति नहीं देते क्योंकि वे कस्बे के शक्तिशाली एवं समृद्ध लोग हैं। जिन नए नियमों द्वारा उपायुक्त को पशुहत्या हेतु लाइसेंस देने के लिए अनुमति दी गई है, उनसे हिन्दू नाराज हैं तथा प्रतिशोध लेने हेतु वे मुसलमानों का बहिष्कार करने के प्रयत्न कर रहे हैं। लेखक ने उम्मीद व्यक्त की कि भारतीय कांग्रेस के प्रतिनिधियों को जगाधरी जाकर वहाँ दोनों समुदायों में सामंजस्य स्थापित करने के प्रयास करने चाहिए।

इसी पत्र के इसी अंक में 'अलीगढ़ गजट' से अलीगढ़ की ईद का विवरण प्रकाशित किया गया जिसमें क़हा गया था कि मुसलमानों ने कुछ पशुओं की हत्या की जिसके परिणामस्वरूप हिन्दुओं ने एक बैठक की तथा मुसलमानों के बहिष्कार करने की दृष्टि से एक प्रस्ताव पारित किया कि हिन्दू मुसलमानों से कुछ भी नहीं खरीदें और न उन्हें अपने यहाँ कोई काम ही दें। इस बैठक के परिणामस्वरूप मुसलमान दुग्ध विक्रेता (घोष) अपने यहाँ से दूध एक रू. का २४ सेर बेचने के लिए बाध्य हो गए जबकि हिन्दू अहीर एक रू. का छह सेर दूध बेच रहे थे। तथापि, हिन्दूवादियों ने अपने प्रतिधारकों को वकीलों के बीच में पड़ने पर वापस ले लिया था। फिर हिन्दुओं ने मुसलमानों को अपनी चीजें बेचना आरम्भ किया। लेखक ने आशा व्यक्त की कि कांग्रेसियों को हिन्दुओं और मुसलमानों में एकता कायम करने के प्रयत्न करने चाहिए। एकता के द्वारा ही एक राष्ट्र में दो समुदाय प्रगति कर सकते हैं। इस बात का अत्यन्त दुख है कि हिन्दुओं ने अपने बहिष्कार वाले प्रस्ताव में उन मुसलमानों का भी पक्ष नहीं लिया जो कांग्रेस के बहुत बड़े समर्थक थे।

३०६. लगभग इसी समय गुड़गाँव से एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि वहाँ अलीगढ़ के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच बहुत अधिक दुर्भावना व्याप्त थी। हिन्दुओं ने एक नोटिस जारी करके मुसलमानों के पशुओं के निपटाने के विरोध में धमकी दी तथा अपने हिन्दूभाईयों को इस नोटिस की सूचना को दूर-दूर तक परिचालित करने हेतु

आह्वान किया। इस नोटिस के किसी भी प्राप्तकर्ता को उसके चार लोगों को आगे भेजने के लिए कहा गया था। यह नोटिस इस प्रकार था।

नोटिस :

पिछली इदुलजुहा के अवसर पर अलीगढ़ के मुसलमानों और कसाइयों ने १५ गायों की हत्या की। इनमें से एक गाय भाग गई और एक हिन्दू मन्दिर में घुस गई। वहाँ वह इस तरह रँभाई - अरे, इस दुनिया में क्या कोई हिन्दू शेष नहीं बचा? गाय हिन्दुओं की मुक्तिदात्री है। वह हिन्दू पापी है जो मुसलमान को अपनी गाय बेचता है। हिन्दुओं ने पशु हत्या को रोकने के लिए अपना धन खर्च किया है और करते भी रहेंगे। इसके पाठक से अनुरोध है कि वह इसकी चार प्रतियाँ तैयार करे और उन्हें आगे चार लोगों तक पहुँचाए। अन्यथा वह गोहत्या के पाप का भागी होगा।

इनमें से तीन परिपत्र प्राप्त किए गए। स्पष्टतः इन परिपत्रों को परिचालित करने में बहुत कम गोपनीयता बरती गई थी। इनमें से पहला नोटिस बनचारी (होडल पुलिस थाना) के खतरब से हाथोंहाथ बालिम (हाथण पुलिस थाना) के लम्बरदार राम दयाल को भेजा गया था। दूसरा नागल जाट (हाथिण पुलिस थाना) के लम्बरदार सालिग द्वारा अंडूप (हाथिण पुलिस थाना) के लम्बरदार पिरथी को भेजा गया था।) तीसरा नोटिस इन्हीं लम्बरदार द्वारा अलीब्राह्मण (हाथिण पुलिस थाना) के लम्बरदार लेखराम को भेजा गया था।

३०७. जगाधरी से यह भी रिपोर्ट मिली कि वहां के हिन्दुओं ने पशुहत्या के मामलों में मुसलमानों का साथ देने वाले मुसलमान व्यापारियों का संयुक्त रूप में बहिष्कार करने का निर्णय लिया। इन दों दलों में दुर्भावना अत्यधिक रूप में व्याप्त होने की रिपोर्ट भी मिली।

३०८. ३० अगस्त १८९० को इलाहाबाद का छत्र नन्द नामक एक ब्राह्मण दिल्ली पहुँचा जहाँ उसने गलियों में पशु हत्या विरोधी भाषण दिए।

३०९. १२ सितम्बर को स्वामी अलाराम ने अमृतसर के स्वर्णमन्दिर के पास माँस भक्षण के दुर्गुणों पर एक भाषण दिया। उन्होंने दुर्बल एवं बूढ़ी गायों के लिए गोशालाएँ स्थापित करने की भी वकालत की। १३ सितम्बर को उन्होंने लाहौर के लिए कूच किया। लाहौर से वे जलंधर गए। १७ सितम्बर को वे जलंधर पहुँचे। मिया जलमिझ को बरदाश्त किया। उन्होंने वहाँ १७, १८ एवं १९ को भाषण दिए लेकिन कुछ भी ऐसा नहीं कहा जो उत्तेजक हो। यद्यपि उनके विषय पशु हत्या एवं पशुओं के

जीव न देने पर थे।

३१०. १३ सितम्बर को कानपुर के छेदीलाल नामक ब्राह्मण, जिसने दरीबा में एक प्रेस के मालिक अम्बे सहाय को वरदाश्त किया था, ने कोतवाली के सामने फव्वारे के पास हिन्दुओं और मुसलमानों की भीड़ को सम्बोधित करते हुए भाषण दिया। उसने दोनों समुदायों के लोगों को सौहार्दपूर्ण मैत्रीभाव से परस्पर सम्बन्ध बनाने का परामर्श दिया। उसने कहा कि अब समय बदल गया है तथा कुर्बानी के लिए अब पशुओं की हत्या करने की कोई आवश्यकता नहीं है। प्राचीन समय में पशुबलि देना आरम्भ किया था तब अत्यधिक पशु थे तथा वे सस्ते भी थे। इसी अवधि में गुड़गाँव जिले में अलीगढ़ से कई पत्र प्राप्त हुए थे जिनमें हिन्दुओं से अनुरोध किया गया था कि वे कसाइयों एवं अन्यों को अपने पशुओं को न बेचें।

३११. 'आर्य अखबार' (फिरोजपुर) ने अपने २४ सितम्बर के अंक में 'केसर-उल-अखबार' (करनाल) में प्रकाशित एक आलेख में संस्कृत ग्रंथों से उद्धृत उन अंशों को गलतरूप में प्रस्तुत करने के लिए लताड़ा था जिनमें यह सिद्ध करने के प्रयत्न किए गए थे कि हिन्दू गोमाँस भक्षण को गैर-कानूनी नहीं मानते थे, तथा वेद से एक उद्धरण प्रस्तुत करके सिद्ध करने के प्रयास किए थे कि हिन्दुओं में गोमाँस भक्षण निषिद्ध नहीं था।

३१२. इससे पूर्व अक्टूबर में मुजफ्फरगढ़ के कोट अडू के हिन्दुओं ने राँजा नामक एक तरखान पर बैल की हत्या करने का आरोप लगाया था। उन्होंने सिनानवान के तहसीलदार एवं डेरादिनपाणा पुलिस थाने को तार से इसकी सूचना दे दी थी। राँजा हिन्दुओं के खिलाफ एक याचिका प्रस्तुत करने के लिए मुजफ्फरगढ़ गया भी था लेकिन वहाँ उसे ऐसा न करने की सलाह दी गई क्योंकि वह गरीब आदमी था और यदि वह याचिका प्रस्तुत करना ही चाहता हो तो उसके पास ४०० या ५०० रू. ४० या ५० व्यक्ति उसका समर्थन करने के लिए होने ही चाहिए अन्यथा याचिका प्रस्तुत करने का कोई अर्थ नहीं रह जाता। अतः वह अपने गाँव लौट गया। अडू गाँव के हिन्दू लोग राँजा के खिलाफ याचिका दायर करने के लिए धन एकत्रित कर रहे थे।

३१३. ११ अक्टूबर को उज्जैन से पण्डित ओझा दिल्ली में लाला श्री किशनदास, गुडवाला के यहाँ आए। गोरक्षा विषय पर चर्चा हुई।

३१४. इसी समय दिल्ली से एक रिपोर्ट मिली की गोप्रश्न विषयक पुस्तिकाएँ समग्र भारत में मुक्त रूप से वितरित की जा रही हैं। गुडगाँव जिले के थाना होडल के सुल्तानपुर गाँव में कुछ कार्य हेतु बल्लभगढ़ का रामप्रसाद नामक व्यक्ति गया तथा वहाँ

से वह एक पुस्तिका अपने साथ लेकर आया। उसे बताया गया कि ये पुस्तिकाएँ अलीगढ़ से प्राप्त हुई थीं।

इसी अवधि में एक अफवाह भी फैली कि दिल्ली के प्रभावशाली हिन्दुओं ने कई गाँवों में आदेश भेजा है कि कोई भी हिन्दू अपने पशुओं को कसाइयों को न बेचे क्योंकि इसका पाप अपनी जाति को लगता है। यदि कोई व्यक्ति अपने पशु कसाइयों को बेचेगा तो माना जाएगा कि उसने स्वयं अपने हाथों से गोहत्या की थी। हिन्दुओं की कार्रवाई के परिणामस्वरूप कसाइयों को गाएँ मिलने में अत्यधिक परेशानी हुई।

३१५. अक्टूबर मास के उत्तरार्द्ध में 'आफताब-ए-पंजाब' (लाहौर), 'दोस्त - ए-हिन्द' (भेड़ा) तथा 'मुखबर-ए-सादिक' (कासुड़) में आलेख प्रकाशित हुए जिनमें इस समाचार के लिए सन्तोष व्यक्त किया गया था कि अरब में पशु हत्या रोकने के औचित्य पर चर्चा हो रही थी। इसी विषय पर लिखते हुए 'गम-ख्वार-ए-हिन्द' (लाहौर) ने अपने दिनांक २५ अक्टूबर १८९० के अंक में यह पर्यवेक्षण प्रस्तुत किया कि जब तक गरीब तबके के मुसलमानों के लिए गोमाँस की जगह अन्य पशुओं के माँस को सस्ती दर पर उपलब्ध नहीं कराया जाता तब तक इस पशु की हत्या की प्रथा को उनके द्वारा छोड़ने की आशा करना व्यर्थ है। इस समाचार पत्र ने नए ढंग से एक आलेख को भी पुनर्प्रकाशित किया जिसमें कहा गया था कि बादशाह अकबर ने पशु हत्या पर इस लिए रोक लगा दी थी क्योंकि इससे उपयोगी पशुओं का विनाश किया जा रहा था। साथ ही, यह टिप्पणी भी की कि मुसलमानों को इस प्रथा को छोड़ने के लिए प्रेरित करना बहुत अधिक मुश्किल नहीं होगा, लेकिन जब तक वह यूरोपीय सिपाहियों के लिए गोमाँस के बजाय बकरे या भैंस के माँस की आपूर्ति नहीं की जायगी, तब तक इस प्रथा के बन्द होने की दिशा में कोई भी आशा करना व्यर्थ है।

३१६. नवम्बर में पहले एक रिपोर्ट मिली कि अलीगढ़ के सर सैय्यद अहमद खान ने इस विषय पर समग्र ब्यौरा लिखकर हाकिम अब्दुल मजीद खान को भेजा था तथा उनसे राय माँगी थी कि पशु हत्या के प्रश्न का हल कैसे ढूंढा जाए जिससे दोनों पक्षों के लोग एवं सरकार सन्तुष्ट हो सकें।

३१७. १९ नवम्बर को 'अखबार-ए-आम' (लाहौर)ने एक बयान प्रकाशित किया कि फतेहपुर (राजपूताना) के पंचों ने राव राजा जयशंकर के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत करके पशुसंरक्षण हेतु कदम उठाने के लिए अनुरोध किया था तथा राव साहब ने अपने अधिकार क्षेत्र के समस्त थानेदारों को पत्र जारी कर दिए कि मुसलमानों एवं अपरिचित हिन्दुओं को पशुओं की बिक्री करने से रोका जाए। इस आदेश द्वारा राजा

के अधिकार क्षेत्र के बाहर गायों का निर्यात करना निषिद्ध कर दिया गया। अज्ञात हिन्दुओं को पशुओं की बिक्री न करने की रोक इस उद्देश्य से लगाई गई ताकि कोई कसाई हिन्दू के वेश में गायों की खरीद न करने पाए।

३१८. २८ नवम्बर को 'दोस्त-ए-हिन्द' (भेड़ा) में एक इस प्रकार की कहानी छापी गई कि गरार गाँव के कुछ मुसलमान जमींदारों ने एक बैल की हत्या अपने घर के अन्दर की। कुछ दिनों के पश्चात् हिन्दुओं को इस घटना की भनक लगने पर उन्होंने कुछ प्रभावशाली मुसलमानों को बुलाकर धमकाया कि यदि वे पशु हत्या करने से बाज नहीं आएँ तो उनके गाँव के मुसलमानों को धन उधार नहीं दिया जाएगा। उन मुसलमानों ने अपने गाँव के सहधर्मी लोगों के साथ विचारविमर्श करके उत्तर देने का वायदा किया। लेकिन अगले दिन उस स्थान के एक मौलवी ने अपने धार्मिक प्रवचन में एक मुसलमान के उस कृत्य पर टिप्पणी की कि एक मुसलमान द्वारा एक बैल की हत्या करने पर उनके धर्मसिद्धांतों के साथ वैरभाव व्याप्त हो गया और इसके परिणाम स्वरूप उन्हें आदेश दिया गया कि जो कोई भी इस प्रथा को रोके उसे बहिष्कृत कर दिया जाए।

३१९. ६ दिसम्बर को दिल्ली से यह रिपोर्ट प्राप्त हुई कि पशुहत्या विरोधी सोसाइटी असफलता के कगार पर पहुँच चुकी थी। इसे पुनः आगे बढ़ाने के उद्देश्य से मथुरा से वहाँ पहुँचा फकीर वापस चला गया था।

१८९१

३२०. 'अखबार-ए-आम' (लाहौर) ने अपने १० जनवरी १८९१ के अंक में उल्लेख किया कि मद्रास प्रेसीडेन्सी में बहुत से भाषण दिए गए जिनमें पशुसंरक्षण के लिए कदम उठाने के लिए लोगों का आह्वान किया गया था। सरकार को भी कानून बनाकर पशु हत्या निषिद्ध कराने के लिए अनुरोध किए गए थे।

३२१. ३१ जनवरी १८९१ को लुधियाना के पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि हिन्दू अपना ध्यान बूचड़खाने की ओर आकर्षित कर रहे थे। इससे ऐसा लग रहा था कि वे उसे बन्द कराने के लिए आन्दोलन छेड़ेंगे। मच्छीवाड़ा पुलिस थाना क्षेत्र के लोलपुर के हिन्दुओं तथा लुधियाना सदर स्टेशन के दो गाँवों के हिन्दुओं ने याचिका दायर की थी कि बहलोलपुर और वाड़ानबासु (लुधियाना शहर से लगभग ८ मील दूर स्थित) के बूचड़खानों को बन्द कर दिया जाए।

३२२. ७ फरवरी १८९१ को अमृतसर के जिला पुलिस अधीक्षक ने अपनी

गोपनीय डायरी में उल्लेख किया था कि हिन्दू यात्रियों ने शिकायत दी थी कि अम्बाला में रेलवे पटरी के पास एक बूचड़खाना खोला गया था। इसमें वे आँखों के सामने पशुओं की हत्या होते देखकर अत्यन्त व्यथित होते थे।

३२३. २१ फरवरी १८९१ को लुधियाना के जिला पुलिस अधीक्षक ने पुनः अपनी रिपोर्ट भेजी कि जिले के दो विभिन्न भागों में लोगों के बीच विवादों की स्थिति निर्माण हुई है जिनका कारण कुछ गाँवों में बूचड़खाने खुलना था। जिला पुलिस अधीक्षक ने बहलोलपुर के झगडे. की जाँच की तथा पाया कि इसमें हिन्दुओं का हाथ था। उन्होंने अपनी याचिका में जुड़ने के लिए कुछ प्रभावशाली मुसलमानों को प्रेरित किया था। उनकी आपत्ति के कारण थे :

(१) बीमारी युक्त माँस खाने से लोगों का स्वास्थ्य बिगड़ा तथा मृत्युदर में वृद्धि हुई,

(२) पशुओं की हत्या के कारण से बैलों और गायों की आपूर्ति कम हो गई थी। जिला पुलिस अधीक्षक ने पाया कि इन बयानों का बहलोलपुर में कोई मजबूत आधार नहीं था। दूसरा झगड़ा लुधियाना के समीपवर्ती गाँव वाड़ानबासु का था। उपायुक्त ने टिप्पणी की कि वहाँ जो कुछ दिखा उससे लगा कि वहाँ निरीक्षण करने की और अच्छे प्रबन्ध करने की आवश्यकता थी।

३२४. अलाराम ने अमृतसर पहुँचकर राष्ट्रीय कांग्रेस में २ मार्च को भाषण दिया। वहाँ वे बाबा नारायणसिंह के अतिथि थे। उन्होंने गुरु-का-बाग तथा स्वर्णमन्दिर के पास पशु हत्या की बुराइयों पर भाषण दिए थे। गोहत्या पर रोक लगाने के लिए हिन्दुओं को उन्होंने उकसाया भी था। उन्होंने यह भी मुद्दा उठाया कि लोगों में फूट पड़ने के कारण सरकार ने कश्मीर पर आधिपत्य स्थापित कर लिया था और वह नेपाल की ओर हाथ फैलाए जा रही थी।

३२५. ८ मार्च १८९१ को अलाराम ने अपने भाषण में लोगों को एकजूट होकर पशु हत्या पर रोक लगाने के लिए कहा। उन्होंने यह कहकर अपने भाषण की समाप्ति की कि उस गाय की हत्या मत करो जिसका तुम दूध पीते हो।

३२६. मार्च १८९१ के अन्तिम दिनों में हिसार जिले में भिवानी में एक सभा आयोजित की गई जिसकी अध्यक्षता झज्झर के पण्डित दीनदयाल ने की जो भारत धर्म महामंडल के महासचिव के रूप में अपना परिचय देते थे। लगभग चार हजार हिन्दू, मुख्यतः बनिया जाति के कुछ धनाढ्य एवं प्रभावी लोगों समेत उपस्थित थे। पण्डित ने सभा को सम्बोधित करते हुए हिन्दुओं से कहा कि उन्हें शादी-ब्याह में

इतनी बड़ी मात्रा में धन का अपव्यय नहीं करना चाहिए। अच्छा तो यह होगा कि उन्हें यह धन उन ब्राह्मणों को देना चाहिए जो इसे आत्माओं के कल्याणार्थ खर्च करेंगे। इससे ईश्वर प्रसन्न होंगे। सभी हिन्दुओं को चेतावनी दी गई थी कि वे मुस्लिमों को किसी भी प्रकार का ऋण नहीं देंगे क्योंकि वे यह धन अधिकांश रूप में पशु खरीदने में लगाते थे जिनकी हत्या कर दी जाती थी तथा जिनका चमड़ा विभिन्न उद्देश्यों हेतु उपयोग किया जाता था। इस पाप के भागीदार हिन्दू ही बनते थे। वहाँ एकत्रित लोगों को तत्पश्चात् एक स्वेच्छापत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा गया कि वे आगे शादियों पर फिजूलखर्ची नहीं करेंगे, नर्तकियों के नाच के आयोजन, आतिशबाजी तथा अन्य इसी प्रकार के व्यर्थ के कामों पर फिजूलखर्ची नहीं करेंगे, वे विवाह के अवसर पर गरीबों की ओर पैसे फैंकने की प्रथा भी बन्द करेंगे तथा यथासम्भव मुसलमानों के साथ किसी भी प्रकार का लेनदेन नहीं करेंगे।

तदुपरांत वहाँ एकत्रित हिन्दुओं को पण्डित ने कहा कि उसकी मंशा दिल्ली में ब्राह्मणों के पुत्रों के लिए शिक्षा हेतु एक पाठशाला की स्थापना करने की थी। इस पर होनेवाला खर्च, लगभग डेढ़ लाख रू. होने के कारण उसने हरियाणा के गरीब से गरीब व्यक्ति को इस हेतु कम से कम १ रू. का अंशदान तथा दूसरों को अपनी आय के अनुसार अंशदान देने हेतु प्रस्ताव रखा। इस उद्देश्य के लिए १२५१ रू. की राशि उसी स्थान पर एकत्रित कर दी गई। वहाँ उपस्थित लोगों ने गाँव के लोगों से अंशदान एकत्रित करके सम्बन्धित व्यवस्था करने का वचन भी दिया।

उस पण्डित ने उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए विभिन्न राजाओं के पास जाकर स्वयं धन एकत्रित किया।

तदुपरांत भिवानी के हिन्दुओं ने सुझाव दिया कि इस पाठशाला की एक शाखा भिवानी में भी स्थापित की जानी चाहिए।

सभा समाप्त होने से पूर्व १५० या २०० रू. भिवानी की उस गोशाला के लिए एकत्रित किए गए जहाँ तीन या चार सौ के लगभग मवेशी थी जो बूढ़ी, बेकार एवं अन्य बीमारियों से ग्रस्त थी।

३२७. ७ अप्रैल १८९१ को झेलम जिले के पिंड दादनखान के हिन्दुओं की एक सभा निक्कादास धर्मशाला में आयोजित की गई। उसका उद्देश्य चोहा सैदानशाह मेले में पिंड दादनखान के कसाई को पशुहत्या हेतु लाइसेंस दिए जाने का विरोध करना था। इस आन्दोलन में नगरपालिका के उपाध्यक्ष एवं सदस्य एवं पिंड दादनखान के प्रतिष्ठित प्रभावी हिन्दूओं ने भाग लिया। कुल मिलाकर लगभग ४०० लोग

उपस्थित थे। इस सभा में निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किए गए :

(१) पशु हत्या रोकने के लिए पंजाब के उपराज्यपाल एवं उपायुक्त को तार भेजे जाएँ,

(२) वहाँ के हिन्दू न तो चोहा सैदान शाह मेले में जाएँगे और न उस स्थल के मकबरे में ही जाएँगे।

स्थल का मुआयना करने पर जिला अधीक्षक को ज्ञात हुआ कि १८८५ से एक कसाई उस मेलें में लगातार गोमाँस बिक्री हेतु दुकान लगाता था लेकिन १८९१ तक उसने लाइसेंस प्राप्त करने के लिए कोई भी आवेदन प्रस्तुत नहीं किया। १८९१ में लाइसेंस प्राप्त करने के लिए आवेदन प्रस्तुत करने पर उसे लाइसेंस दिया गया। साथ ही मेले में गोमाँस न ले जाने हेतु समस्त प्रबन्ध किए गए। जिला पुलिस अधीक्षक को भी निजी तौर पर सूचित किया गया कि हिन्दुओं के इस आन्दोलन के पीछे एक अन्य मुख्य कारण यह भी था कि पिंड दादनखान के हिन्दुओं में सर्जन फज्ल-उद्दीन के प्रति घृणा थी। वे उसका वहाँ से स्थानांतरण किए जाने के इच्छुक थे। यह भी दोष मढ़ा गया कि उसी के प्रभाव एवं बहकावे में आकर उस कसाई ने लाइसेंस लेने के लिए आवेदन पत्र प्रस्तुत किया था। पिंड दादन खान में आन्दोलन शुरू हुआ, परन्तु हिन्दुओं ने यदि कोई खास प्रयास नहीं किये होते तो वहाँ के ब्राह्मणों ने इस मामले में कोई रुचि ही नहीं ली होती।

३२८. २५ अप्रैल १८९१ को झेलम के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि पूर्व अनुच्छेद में उल्लिखित मामले पर पिंड दादनखान के हि़न्दू अभी तक चर्चा कर रहे थे। वे दृढता पूर्वक कह रहे थे कि सर्जन फज्लउद्दीन एवं उप रजिस्ट्रार सैफ अली ने उस कसाई को लाइसेंस लेने के लिए उकसाया था। इसके परिणामस्वरूप बहुत सारे हिन्दुओं ने उस अस्पताल से दवाई लेना बन्द कर दिया था। साथ ही, उन्होंने मुसलमान कसाई से माँस खरीदना भी बन्द कर दिया था। उन्होंने बड़ी संख्या में बकरियाँ खरीदी थीं तथा आवश्यकता पड़ने पर वे सिखों की पद्धति 'झटका' द्वारा उन्हें मारकर अपनी आवश्यकता की पूर्ति करने की मंशा रखते थे। खजान सिंह, राम आसरा, ज्वाला सहाय सभी वकील तथा नगरपालिका के अन्य सदस्य इस आन्दोलन के नेता थे।

३२९. १४ मई १८९१ को 'सिंह सहाय' नामक समाचार पत्र ने एक कंपनी की विवरणपत्रिका प्रकाशित की जिसे पशुसंरक्षण हेतु वकील बाबा नारायणसिंह ने शुरू किया था। इस विवरण पत्रिका में बताया गया कि इससे मिलने वाले लाभ से पशुओं

के लिए १०० बीघा गोचरभूमि खरीदी जाएगी। दूध की बिक्री एवं पशुओं के बच्चों रूप में प्राप्त पशुधन से इस जमीन के एक हिस्से में सामान्य खेती करके अतिरिक्त लाभ प्राप्त किया जा सकेगा।

३३०. मई की लगभग १५ तारीख के आसपास पिंड दादन खान के सम्बन्ध में सहायक जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि उस स्थान के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना अब भी व्याप्त थी तथा वहाँ के हिन्दू मुसलमान कसाइयों द्वारा मारे जा रहे पशुओं का माँस नहीं खरीद रहे थे। नगरपालिका के उपाध्यक्ष ज्वालासिंह इस हिन्दू धड़े के मुखिया थे तथा उत्तरसिंह, अरोड़ा एवं ज्वाला, दुकानदार सामान्यतः आन्दोलन की सभा में प्रवक्ताओं की भूमिका अदा करते थे।

३३१. पुनः जून में पिंड दादन खान से सहायक जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि वहाँ के हिन्दुओं ने मुसलमानों द्वारा निर्मित साबुन की खरीद बन्द कर दी थी क्योंकि उनका मानना था कि वे उसे गोमाँस की चर्बी से बनाते थे। दूसरी ओर, मुसलमानों ने हिन्दू हलवाइयों को दूध की बिक्री करना कम कर दिया। हिन्दुओं द्वारा बाजार के पास एक झटका मीट की दुकान खोलने के कारण दोनों समुदायों के लोगों के बीच दुर्भावना और बढ़ गई।

३३२. जून १८९१ के समाप्त होते होते वकील बाबा नारायणसिंह के यहाँ अमृतसर में संन्यासी फकीर परमानन्द गिरि ने एक भाषण दिया जिसमें उन्होंने वहाँ उपस्थित हिन्दुओं को पशु हत्या के प्रश्न पर उदासीनता दिखाने के लिए धिक्कारा। उन्होंने सरकार को स्मरण पत्र देकर बूचड़खानों एवं कसाइयों की दुकानों को बन्द कराने के लिए कहा। बड़ी संख्या में उपस्थित लोगोंने उनका भाषण सुना।

३३३. जुलाई महीने में उपरि उल्लिखित व्यक्ति को अमृतसर में सर्पदंश विषहर बेचते हुए देखे जाने की रिपोर्ट प्राप्त हुई। उसके परिपत्र में उसका नाम मिर्जापुर जिले के असरा गाँव के स्वामी परमहंस के रूप में था। उसने पशुहत्या पर पुनः कोई भाषण नहीं दिया।

३३४. इसी महीने रिपोर्ट मिली कि गुजरात जिले में कोहर के मुसलमान गाँव में गुप्त रूप से पशु हत्या करने के आदी हो गए थे। उस गाँव के हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को इससे ठेस पहुँचती थी।

३३५. दिल्ली जिले में शाहदरा में ईद के अवसर पर गोहत्या को लेकर अत्यधिक उत्तेजना की स्थिति बनी हुई थी। वहाँ के बनिया लोगों ने एक दिन के लिए अपनी दुकानें बन्द रखी थीं।

३३६. यह भी कहा गया कि हरिद्वार में मुसलमानों ने एक हिन्दू को अपनी मवेशी उन्हें बेचने हेतु बाध्य किया था। वे स्वयं बोली लगाने गए तथा इस बात को न जानने के कारण हिन्दुओं ने सोचा कि पशुओं को कुर्बानी देने के लिए खरीदा जा रहा था, अतः उन्होंने बढ़ चढ़कर बोली लगाई परिणामतः पशुओं के मालिक को उनकी अच्छी-खासी कीमत मिल गई।

३३७. पुनः रिपोर्ट प्राप्त हुई कि दिल्ली के सदरबाजार एवं सब्जी मंडी में रह रहे मुसलमानों ने प्रेरित होकर प्राधिकारियों के समक्ष मुद्दा रखा कि वहाँ का बूचड़खाना उनके लिए असुविधाजनक था। उन्होंने स्पष्ट रूप से आशा की कि उन्हें घर के अन्दर कुर्बानी देकर पशुहत्या करने की अनुमति दी जाए या इस हेतु कुछ विशेष व्यवस्थाएँ की जाएँ।

३३८. दिल्ली में ऐसी रिपोर्ट मिली कि वहाँ के पंजाबी मुसलमान सरकार का ध्यान १८५७ में जारी मुनादी के प्रति आकर्षित कर रहे थे तथा उसमें निहित व्यवस्थाओं के सन्दर्भ में पूछ रहे थे कि सरकार निजी घरों में कुर्बानी देने की पुरानी अनुमत प्रथा में हस्तक्षेप क्यों कर रही थी ?

३३९. दिल्ली की पीपलवाली गली के निवासियों को उनके कोलकता के हिन्दू मित्रों के पत्र प्राप्त हुए थे जिनमें लिखा था कि ईद के अवसर पर मच्छीबाजार में हंगामा हुआ था परन्तु मुसलमानों ने कुर्बानी के लिये खरीदी गाय को मुक्त करके ही उससे छुटकारा पाया था।

३४०. दिल्ली से पुनः प्राप्त एक रिपोर्ट में बताया गया था कि कसाइयों ने हमिल्टन सराय के बाजार से रेलवे के दूसरी ओर कश्मीरी गेट के पास जाने से मना कर दिया था तथा वे विरोध प्रदर्शित कर रहे थे।

३४१. अगस्त १८९१ की शुरुआत में रावलपिंडी जिले से रिपोर्ट मिली कि शहर के मानद मजिस्ट्रेट नबी बक्श खोजा ने उस जगह पर कसाई की दुकान बनाने के लिए अनुमति माँगी थी जहाँ पहले से अन्य कसाइयों की दुकानें थी। इसकी खबर लगते ही, हिन्दुओं के प्रमुखों की ओर से मीठा मल एवं लक्कू मल ने आपत्ति प्रकट की थी। उपायुक्त ने स्वयं उस स्थल का मुआयना किया था तथा निर्णय किया था कि वहाँ पर दुकान बनाए जाने पर किसी को कोई आपत्ति नहीं थी। मीठामल एवं लक्कूमल से बात करके उन्हें दुर्भावना फैलाने के लिए चेतावनी दी गई। इससे हिन्दू नाराज हो गए। उन्होंने इसके विरोध में एक झटका-दुकान खोलना चाहा जिससे मुसलमान नाराज हो गए।

उपायुक्त ने कहा कि उपर्युक्त बातें सही नहीं थी। नबी बख्श ने कसाइयों के मुहल्ले में दो अन्य कसाइयों की दुकानों के पास एक अन्य इसी प्रकार की दुकान खोलने के लिए तीन साल पूर्व आवेदन प्रस्तुत किया था। वांछित अनुमति उसे दी गई तथा दुकान बनाई गई। तत्पश्चात् हिन्दुओं ने आपत्ति की थी।

३४२. शाहपुर जिले में इलाका कोट मामन के चक मियाना में हसन गोंडल नामक व्यक्ति ने शादी की दावत के लिए गोमाँस खुलेआम पकाया था जिस के कारण गेंदा, गंगा, तथा अन्य हिन्दू पडोसियों को अपमान लगा था। उस समय उस गाँव में गश्त लगा रहे कुछ सिपाहियों के द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया गया होता तो यह मामला झगड़े में परिणत हो गया होता।

३४३. ८ अगस्त १८९१ को दिल्ली के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट भेजी कि हिन्दुओंने शिकायत की कि सँकरे पुल से कसाइयों को माँस लाने की अनमुति देने के कारण वहाँ से गुजरने वाले लोगों पर खून की बूँदें आदि गिरने से खतरे की स्थिति बनी रहती थी। उपायुक्त ने इस पर टिप्पणी की कि यदि हिन्दू भी उस रास्ते का उपयोग करते थे तो उस रास्ते से माँस न ले जाकर और किसी रास्ते से ले जाया जाए।

३४४. आर्य समाज के मुखपत्र 'भारत सुधार' (लाहौर) ने अपने ८ अगस्त, १८९१ के अंक में लिखा कि पशु हत्या विरोधी आन्दोलनकर्ता स्वामी अलाराम को सोसाइटी से निकाल दिया गया था।

३४५. अक्टूबर में शाहपुर के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि झौरिअन में छन्नू नामक एक नाई द्वारा एक गाय की हत्या किए जाने से वहाँ के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना फैल गई थी।

उसी जिले में झौरिअन पुलिस थाना से भी एक रिपोर्ट प्राप्त हुई कि पशुहत्या के कारण हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना फैल गई थी और हिन्दुओं ने दशहरा के दौरान झटका पद्धति से बकरियों की हत्या करने की धमकी दी थी।

३४६. इसी समय के आसपास, हिसार जिले के हाँसी इलाके में पुथी मंगल खान गाँव में पशु हत्या को लेकर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच विवाद की स्थिति पैदा हो गई थी।

३४७. १३ अक्टूबर १८९१ को पिंड दादन खान में आन्दोलन पुनर्जीवित हुआ। हिन्दू समुदाय के लोगों की एक बैठक ज्वाला सहाय, नगरपालिका के उपाध्यक्ष, लोरिंद चंद, गोपालसिंह, तुलसीदास द्वारा बुलाई गई थी। इससे प्रेरित होकर विरोधी

खेमे के मुसलमानों की भी एक बैठक सहायक सर्जन फजलदीन एवं नगरपालिका के सदस्य पीर खोजा की अध्यक्षता में आयोजित की गई।

३४८. १७ अक्टूबर १८९१ को लाहौर के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि फिरोजपुर जिले के जीरा का वहाबी अब्दुल रहीम लाहौर आया था। पता चला कि वह वहाबी ईद पर पशु हत्या निषेधाज्ञा आदेश के खिलाफ मुख्य अदालत में याचिका प्रस्तुत करने के इरादे से आया था। यदि उसे इसमें सफलता मिल जाती तो पशुओं की हत्याएँ तुरन्त शुरू कर दी जातीं। छीतू तथा अन्य वहाबियों ने खर्चे की भरपाई के लिए २० रू. का अंशदान दिया।

३४९. 'सनातन धरम गजट' (सियोलकोट) ने अपने २० अक्टूबर १८९१ के अंक में पशुसंरक्षण के महत्त्व पर प्रकाश डाला तथा अनुरोध किया कि हिन्दुओं को अपनी जान की बाजी लगाकर भी पशुओं को बचाने के प्रयास करने चाहिए क्योंकि एक गाय की हानि से हजारों मानवों की हानि होती है। गोरक्षिणी सभाओं की स्थापना करने के लिए सोसाइटियों का आह्वान किया और कहा कि यदि ऐसी ही स्थिति बनी रही तो आगामी ८० वर्षों में भारत से गाय विलुप्त हो जाएगी। इस लेख की समाप्ति गायों को बचाने के लिए किए जाने वाले प्रयासों की प्रशंसा करते हुए की गई जिनमें शामिल थे लाला बख्तावर मल, लाला दीनामल, हरिदास मुखर्जी, सोनीपत के स्टेशन मास्टर, तथा मुसलमान पुलिस उपनिरीक्षक जिन्होंने एक कसाई से ५१ रू. में १४ गायें खरीद कर मुक्त कराई थीं।

३५०. ३१ अक्टूबर को झेलम के जिला पुलिस अधीक्षक ने पुनः रिपोर्ट भेजी कि पीरा खोजा की अध्यक्षता में गठित झटका विरोधी समिति की पिंड दादनखान में बैठक हुई। इसने हिन्दुओं की दुकानों के सामने दूध एवं दही की दुकान खोलने के लिए लोगों से निधि हेतु अंशदान प्राप्त करने के प्रयास किए। तथापि उन्हें धन प्राप्त नहीं हुआ।

३५१. 'ताज-उल-अखबार' (रावलपिंडी) ने अपने १ नवम्बर १८९१ के अंक में लिखा कि मिशन स्कूल से सम्बन्धित इनायत मसीह नामक एक ईसाई लिपिक ने एक छात्र को बाजार से गोमाँस खरीदने के लिए भेजा। वह छात्र बाजार से लौटकर हाथ में गोमाँस लेकर उस लिपिक की खोज में प्रत्येक कक्षा में गया। इससे हिन्दू छात्रों को अपना अपमान लगा। उन्होंने प्रधान अध्यापक से शिकायत की। प्रधान अध्यापक ने इस विषय में कोई भी कार्रवाई नहीं की। अतः वे छात्र कक्षा में अनुपस्थित रहने लगे। उन्हें आशा थी कि ऐसा करने से प्रधान अध्यापक उस मामले

की जाँच करेंगे। लेकिन प्रधान अध्यापक ने मामले की जाँच करने के बजाय एक आदेश निकाला कि यदि वे २४ घंटे के अन्दर वापस आकर माँफी नहीं माँगते हैं तो उनके नाम विद्यालय की पंजी से काट दिए जाएँगे।

३५२. 'खैर-ख्बाह-ए-आलम' (दिल्ली) ने अपने ८ नवम्बर १८९१ के अंक में उपर्युक्त मामले के सन्दर्भ में लिखा कि इससे हिन्दुओं में तीव्र उत्तेजना व्याप्त हो गई थी। उन्होंने एक बैठक की तथा निर्णय लिया कि छात्र विद्यालय में वापस नहीं लौटेंगे।

३५३. जलंधर में बस्ती शेख के गाम नामक एक जुलाहे ने अपने घर में एक गाय की हत्या की थी। इसकी रिपोर्ट मजिस्ट्रेट को दी गई। उसने उस गाय के माँस को जमीन में दफनाने के आदेश दिए। इस मामले का निपटारा उपायुक्त द्वारा किया गया जिसने उस व्यक्ति को ७ नवम्बर १८९१ को जेल भेज दिया।

३५४. दिल्ली के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि सर्वत्र गोशालाएँ खोली गई थीं और दिल्ली के लोगों को कहा गया था कि वे हर सम्भव प्रयास करके पशुओं को मुजफ्फरनगर और गढ़ मुक्तेश्वर में गोशालाओं में भेजें। वहाँ उनकी उचित देखभाल की जाएगी। मेरठ जिले में गढ़ मुक्तेश्वर में एक गोशाला खोले जाने के लिए प्रख्यात धनाढ्य हिन्दुओं ने ४०० रू. का अंशदान दिया था।

३५५. दिसम्बर १८९१ में करनाल के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट भेजी कि करनाल में घोषीगेट के पास खोली गई कसाई की दुकान को नवाब अजमल अली खान द्वारा इस लिए बन्द करा दिया गया क्योंकि उस जगह के आसपास के हिन्दुओं को इस पर आपत्ति थी। नवाब ने उन्हें आश्वासन दिया था कि उन्हें न्याय मिलेगा।

३५६. २ दिसम्बर को पिंड दादनखान में एक सभा आयोजित की गई जिसका गुजराँवाला में हाफिझाबाद के तहसीलदार (अवकाश पर) पिंडी दास, ज्वाला सहाय, एवं लोरिंद चंद ने नेतृत्व किया। इसमें लगभग १५० हिन्दू उपस्थित थे। इस बैठक का उद्देश्य झटका पद्धति से हत्या करना बन्द करके वहाँ के कसाइयों से पुनः माँस खरीदने के लिए लोगों को प्रेरित करना था। इस बैठक का आयोजन पिंडी दास ने उन मुसलमान कसाइयों के अनुरोध पर किया था जिनका व्यवसाय हिन्दुओं और मुसलमानों के बीज दुर्भावना की स्थिति पैदा होने के कारण अत्यन्त प्रभावित हुआ था।

३५७. लगभग इसी समय, मौजू नामक मोची तथा कुछ अन्य मुसलमानों ने पिंड दादन खान में मजिस्ट्रेट की अदालत में हिन्दुओं को झटका पद्धति से बकरियों आदि की हत्या करने से रोकने के लिए मामला दायर किया।

१८९२

३५८. २ जनवरी को झेलम के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि रोहतास में मुसलमानों द्वारा कुछ पशुओं की हत्या किए जाने तथा उनका माँस उनके बीच बाँटे जाने के कारण वहाँ के हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच दुर्भावना पुनः व्याप्त हो गई थी। तथापि वास्तविक रूप में कोई दंगा नहीं हुआ था।

३५९. १६ जनवरी १८९२ को मेरठ के एक ब्राह्मण नारायणदास को गोशाला के लिए खर्च के लिए अंशदान प्राप्त करते हुए दिल्ली में देखा गया। ऐसा कहा गया कि उसने लगभग ५० रू. इकट्ठे किए थे।

३६०. १७ जनवरी को पिंड दादन खान के मौजू नामक एक मोची ने खजूरवाली मस्जिद में मुसलमानों की एक बैठक आयोजित की थी जिसका उद्देश्य झटका पद्धति से माँस प्राप्त करने के समर्थक हिन्दुओं को परास्त करने के उपाय खोजना तथा अंशदान प्राप्त करना था।

३६१. 'आफताब-ए-पंजाब' (लाहौर) ने अपने २५ फरवरी १८९२ के अंक में एक खबर छापी थी जिसमें लेखक ने लिखा था कि पेशावर जिले में तारू और जाबा के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच सम्बन्ध तनावपूर्ण थे और शान्ति भंग होने की सम्भावना थी। ऐसा कहा गया कि मुसलमान कत्था के किनारे पशुओं की हत्या करते थे जहाँ से हिन्दू पानी लेते थे।

३६२. 'ताज-उल-अखबार' (रावलपिंडी) ने अपने ६ फरवरी १८९२ के अंक में लिखा कि डिंगा (गुजरात जिला) में कुछ कश्मीरियों ने एक गाय की हत्या कर दी थी। मुहल्ले के हिन्दुओं ने इस मामले की पुलिस में शिकायत दर्ज करा दी थी लेकिन थानेदार अब्दुल गनी ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। तत्पश्चात् गोपालसिंह दीवान तीरथ राम के पास गए। उन्होंने चार सदस्यों की एक टीम को स्थल पर जाँच करने के लिए भेजा। उनमें से एक सदस्य मुहम्मद खान, जेलदार उस स्थल पर नहीं गया लेकिन अन्य तीन लोगों ने स्थल पर जाकर जाँच की। कश्मीरी के घर में खून और कुछ गोमाँस पाया गया। इसकी सूचना नगर पालिका को उन्होंने दी। तत्कालीन गुजरात पुलिस का निरीक्षक फैज बख्श इस मामले की छानबीन करने के लिए गया। अन्त में, हिन्दू न्याय माँगने के लिए जिला मजिस्ट्रेट की अदालत में गए। 'सिंह सहाय' (अमृतसर) ने अपने २ मार्च १८९२ के अंक में एक खबर प्रकाशित की जिसमें लेखक ने लिखा था कि कस्बे में गोमाँस की बिक्री करके बटाला के हिन्दुओं

की भावनाओं को ठेस पहुँचाई गई थी। इस सम्बन्ध में आम जनता इस दबाव में थी कि यह सब कुछ बटाला के तहसीलदार के सामने उपायुक्त की जानकारी में लाए बिना किया गया था। मारे गए पशु का चमड़ा बूचड़खाने से कस्बे की गलियों में होकर हिन्दुओं के कुए के पास लाया गया।

३६३. इसी समाचार पत्र ने अपने समाचार स्तंभ में लिखा कि गोमाँस की बिक्री के कारण बटाला में अशान्ति फैलने की सम्भावना बनी हुई थी।

३६४. झेलम के जिला पुलिस अधीक्षक ने अपनी दिनांक ५ मार्च १८९२ की गोपनीय डायरी में लिखा कि पिंड दादन खान से एक रिपोर्ट इस प्रकार की प्राप्त हुई थी कि उस कस्बे के हिन्दुओं ने ४०० रू. का अंशदान एकत्रित किया था। वे 'झटका खाना' के विषय में उपायुक्त के आदेश के विरुद्ध याचिका दायर करेंगे। इसके लिए उन्होंने दीवान सिंह को अपना एजेंट नियुक्त किया था। पीरा और फजल, खोजा तथा इमामदीन मुंशी की अध्यक्षता में लगभग ४० मुसलमान हिन्दुओं का विरोध करने के उपाय खोजने के लिए जानमुहम्मद के आवास पर आयोजित बैठक में उपस्थित हुए थे।

३६५. २६ मार्च १८९२ को रिपोर्ट मिली कि पिंड दादन खान के हिन्दुओं और मुसलमानों ने अपना झगडा इस शर्त पर समाप्त कर दिया था कि बकरी का माँस बेचनेवाले कसाइयों का गोमाँस से कोई लेनादेना नहीं था।

३६६. ३० अप्रैल १८९२ को कहा गया कि आनन्दपुर में हिन्दू और मुसलमान आमने सामने आ गए थे। इस दुर्भावना का मूल कारण मुसलमानों द्वारा कस्बे में गोमाँस लाना था। दोषी दलों पर फोजदारी कार्यवाही की धारा २९० तथा १८७२ के अधिनियम-४ की धारा ५० के तहत मुकद्दमा चलाया गया लेकिन सभी आरोपी बरी कर दिए गए। मुसलमानों ने कस्बे में एक बूचड़खाना खोलने की अनुमति प्राप्त करने हेतु उपाध्यक्ष के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत करके हिन्दुओं को पुनः नाराज कर दिया। हिन्दुओं ने प्रतिशोध की भावना से मुसलमानों को अपने कुओं से पानी लेने से तथा बाज़ारों से बहिष्कृत कर दिया या ऐसा किए जाने की धमकी दी।

३६७. २१ मई १८९२ को आनन्दपुर में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच वैमनस्य बढ़ गया ऐसा रिपोर्ट किया गया।

आनन्दपुर मामले की परिस्थिति के विषय में उपायुक्त द्वारा भेजी गई रिपोर्ट इस प्रकार थी :

रूपड में एक मुसलमान ने थोड़ा सा गाय का माँस खरीदा और उसे लेकर

आनन्दपुर आया। जब वह चुंगी नाका को पार कर रहा था तब चुंगी पर कार्यरत चौकीदार को इसका पता चल गया। हिन्दुओंने दण्ड संहिता के तहत उस पर मुकद्दमा चलाने का प्रयास किया लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली। तथापि, मुसलमानों ने इससे भड़ककर कहना शुरू किया कि वे आनन्दपुर में एक बूचड़खाना एवं एक कसाई की दुकान खोलेंगे। तदनुसार अनुमति प्राप्त करने हेतु उन्होंने याचिका प्रस्तुत की। उपायुक्त ने उनकी याचिका इस आधार पर रद्द कर दी क्योंकि आनन्दपुर विशेषतः हिन्दू या सिख बहुल मुख्यालय था तथा वहाँ के निवासी अपने सम्मुख पशुहत्या देखना सह नहीं सकते थे। फिर वहाँ के मुसलमान, अधिकांशतः जुलाहे अप्रभावी नहीं थे। मामला सुलझाया जाता उससे पहले ही हिन्दुओं ने प्रतिकारात्मक कदम उठा लिए थे। उन्होंने मुसलमानों के साथ किसी भी प्रकार के सम्बन्ध रखने से इंकार कर दिया था। हिन्दुओं ने मुसलमानों को अपने कुओं से पानी लेने से रोक दिया। वे मुसलमानों को अपने घरों से भी निकालने की बातें करने लगे। इस मामले में यह भी कहा गया कि पटियाला के महाराजा को भी निहंगों को आनन्दपुर जाने से रोकने में कुछ कठिनाई हुई थी। इस महीने के मध्य में मौलवी गौहर अली ने आर्यसमाज के विरुद्ध अनारकली बाजार में एक भाषण दिया। उसने कहा कि हिन्दू धर्म के अनुसार गो-माँस भक्षण वैध है। उपस्थित कुछ हिन्दुओं ने इस पर अपना रोष प्रकट किया लेकिन कोई दंगा नहीं हुआ। मौलवी ने पहले भी एक पुस्तिका प्रकाशित की थी जिसमें कहा गया था कि गोमाँस सर्वोत्कृष्ट भक्ष्य माँस था तथा हिन्दू इसका भक्षण करते थे।

३६८. २८ मई को दिल्ली के हजारी मल भाबरा का गोशाला की स्थापना करने हेतु धन एकत्रित करने सियालकोट आगमन हुआ था। सियालकोट के भाबरा लोगों ने उन्हें ४०० रू. इकट्ठे करके देने का वचन दिया था।

३६९. 'भारत सुधार' ने अपने ९ जुलाई १८९२ के अंक में एक कविता का प्रकाशन इस दृष्टिकोण से किया कि देश में आज जो कॉलेरा फैल रहा था तथा अन्य संकट पूर्ण स्थिति उत्पन्न हुई थी उसका कारण पशुहत्या था।

३७०. रोहतक में ईद का त्योहार शान्ति से बीता। नगर के अन्दर गाय की कुर्बानी देने की अनुमति नहीं दी गई। नगर के बाहर इस हेतु दो स्थान निर्धारित किए गए थे। इस आदेश के परिणामस्वरूप अधिकांश मुसलमानों की संख्या के बड़े भाग ने कुछ भी कुर्बानी नहीं दी थी।

३७१. 'ताज-उल-अखबार' (रावलपिंडी) ने अपने २३ जुलाई १८९२ के अंक में टिप्पणी की कि कुछ समय पूर्व रेलवे स्टेशन पर पका हुआ गोमाँस बेचे जाने

की शिकायत मिली थी। इससे हिन्दू यात्रियों की भावनाओं को अत्यन्त ठेस पहुँची थी। लेकिन इस मामले पर कोई ध्यान नहीं दिया गया था। अखबार ने इस पर दुख व्यक्त किया कि ऐसा सुनने में आया था कि रावलपिंडी रेलवे स्टेशन पर अब भी चिकित्सक की अनुमति से पका हुआ गोमाँस बेचा जा रहा था। उसने टिप्पणी की कि इससे हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचती थी, अतः इसकी बिक्री पर तुरन्त रोक लगाई जानी चाहिए।

३७२. जुलाई के अन्त में सुना गया कि रोहतक के मुसलमान ईद के अवसर पर नगर के अन्दर गोहत्या की अनुमति न देने के लिए उपायुक्त के विरुद्ध शिकायत करने के लिए अंशदान एकत्रित कर रहे थे।

३७३. उन्होंने शहर में गाय की हत्या न होने के कारण ताजिया न निकालना तय किया। फिर भी, मुहर्रम शान्ति से गुजरी थी।

३७४. २० अगस्त को अम्बाला के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट भेजी कि कलियाना, नाहर मुर्जा, रामनगर और बोखर मुर्जा के जमींदारों ने ईद के दौरान पशु हत्या रोकने के लिए मानद मजिस्ट्रेट की अदालत में याचिका दायर करना निश्चित किया था।

३७५. सितम्बर में एक ऐसी घटना घटी कि जिंद रियासत के कुछ मुसलमानों पर पशुओं की हत्या करने का अभियोग लगाया गया, जिससे वहाँ उत्तेजना व्याप्त हो गई। रीजेंसी परिषद भी इसमें दोषी पाई गई क्योंकि साक्ष्यों की तोड़मरोड़ करने हेतु लोगों को तंग करने में उसकी भूमिका थी। स्थानीय समाचार पत्रों ने सरकार को इस मामले की स्वतंत्र जांच कराने हेतु बाध्य किया था तथा देशी भाषा के समाचार पत्रों में यह विषय बारबार टिप्पणी करने का विषय बन गया। 'पैसा अखबार' नामक देशी भाषा के समाचार पत्र को उसके एक समकालीन समाचार पत्र 'ताज-उल-अखबार' ने दोषी करार देते हुए उसके उपर आरोप लगाया कि वह हिन्दुओं और मुसलमानों में फूट के बीज डाल रहा था।

३७६. ८ अक्टूबर को करनाल के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि जिंद में कुछ प्रभावी लोगों को जेल में भेजे जाने के कारण करनाल जिले में दोनों समुदायों के बीच दुर्भावना फैल गई थी, क्योंकि दोनों पार्टियाँ अपना अपना प्रभुत्व स्थापित करने के प्रयास कर रही थी। पटियाला सीमा पर होने के कारण, वहाँ भी खूब दुर्भावना व्याप्त थी। धीरे धीरे करनाल में भी वह फैलने लगी थी।

३७७. १५ अक्टूबर १८९३ को दिल्ली के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी

कि कटरा अशर्फी में स्थापित गोशाला चलने लगी थी। वहाँ ३० पशु थे। उनकी देखभाल के लिए वहाँ चार नौकर कार्यरत थे। उसका खर्चा मारवाड़ी लोग उठा रहे थे।

३७८. २२ अक्टूबर को पिंड दादन खान के सहायक जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि पिंड दादन खान के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अत्यधिक दुर्भावना व्याप्त थी। फिर भी दोनों पार्टियों ने थोड़े समय के पश्चात् विवाद को परस्पर मित्रभाव से सुलझा लिया था।

३७९. २९ अक्टूबर को दिल्ली से रिपोर्ट मिली कि पशुहत्या के मामले में जिंद के प्राधिकारियों द्वारा हाल ही में की गई कार्रवाई के कारण १५ परिवार उस क्षेत्र को छोड़कर रोहतक जिले में अपने गाँव बादली चले गए थे।

३८०. १२ नवम्बर को रोहतक के जिला पुलिस अधीक्षक को सूचना मिली कि रोहतक का कसाई समाज ईद के अवसर पर नगर में पशुओं की कुर्बानी देने पर निषेधादेश के सम्बन्ध में उपराज्यपाल को एक याचिका प्रस्तुत करने का विचार कर रहा था। उनका एक प्रमुख सदस्य हमदा ने मोती राम के डाक बंगले में तीन सीटें नाथूराम के नाम से बुक कराई थीं। अपने दो साथियों के साथ उपराज्यपाल को याचिका प्रस्तुत करने के लिए वे दिल्ली गए लेकिन एक वकील द्वारा उन्हें ऐसा न करने की राय दिए जाने पर वे रोहतक लौट गए।

३८१. दिल्ली से ऐसी खबर मिली कि दिल्ली के समीपवर्ती गाँव में मारवाड़ी लोग एक गोशाला स्थापित करने जा रहे थे। इस हेतु उन्होंने आशा माली से ११०० रू. में कुछ भूमि भी खरीदी थी।

३८२. नवम्बर में हिसार जिले के भिवानी के हिन्दू गोहत्या के मामले में व्याप्त दुर्भावना को बढ़ाने का प्रयास कर रहे थे। हिन्दू विद्यालय के एक शिक्षक गणेशीलाल ने १८ नवम्बर को उपराज्यपाल को एक तार भेजकर कालानौर में एक ब्राह्मण के बैल के साथ दुर्व्यवहार के सम्बन्ध में शिकायत की तथा उसे व्यक्तिगत रूप से निवेदन करने देने की गुजारिश की। इस मामले को उपायुक्त के पास अग्रेषित किया गया।

३८३. 'हिमाला' (रावलपिंडी) ने अपने १८ नवम्बर १८९२ के अंक में खबर प्रकाशित की जिसमें लेखक ने टिप्पणी की थी कि जिन समाचार पत्रों ने गोमाँस की बिक्री के विज्ञापन प्रकाशित किए थे उन्होंने कसाइयों के समतुल्य काम ही किया था क्योंकि उन्होंने गोमाँस की बिक्री में सहायता की थी। अतः वे मनु द्वारा उल्लिखित कसाइयों की आठवीं श्रेणी में आते थे।

३८४. इस पर टिप्पणी करते हुए सम्पादक ने लिखा कि यह प्रश्न कुछ समय पूर्व उठाया गया था लेकिन हिन्दू समाचार पत्रों ने कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया था। तथापि 'हिमाला' समाचार पत्र को उम्मीद थी कि यह प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होने के कारण हिन्दू समाचार पत्र, विशेष रूप से इस प्रकार के विज्ञापन छापने के अभ्यस्त समाचार पत्र, वर्तमान स्थिति को देखते हुए संतोषजनक स्पष्टीकरण अवश्य देंगे।

३८५. 'वफादार' (लाहौर) ने अपने २२ नवम्बर १८९२ के अंक में टिप्पणी की कि जिंद के पशुहत्या मामले में पारित आदेशों ने राज्य की मुसलमान जनता को सचेत कर दिया था तथा सरकार को कहा कि वह इस मामले को अवलोकन एवं अभिलेख के लिए भेजे।

३८६. २६ नवम्बर को पिंड दादन खान के सहायक जिला पुलिस अधीक्षक ने पुनः रिपोर्ट भेजी कि एक गाय की हत्या के परिणामस्वरूप कस्बे में कुछ उत्तेजना व्याप्त हो गई थी तथापि वह शीघ्र ही मंद पड़ गई। फट्टापौली नामक कसाई ने गाय की हत्या की और माँस को बिक्री के लिए लाया। उसे उप मंडल मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया और दंडित किया गया। मामला वहीं समाप्त हुआ।

३८७. 'दोस्त-ए-हिन्द' (भेड़ा) ने अपने १६ दिसम्बर १८९२ के अंक में एक समाचार प्रकाशित किये कि नौशेरा (पेशावर) के सदर बाजार में एक कट्टर नानवाई गोमाँस बेचा करता था। इससे हिन्दुओं को अपना घोर अपमान लगा। कमजोर होने के कारण वे चुप रहे लेकिन इस बात की ओर प्राधिकारियों का ध्यान आकर्षित किए जाने पर उस नानवाई को बाजार से बहिष्कृत किया गया। कुछ दिनों के पश्चात् कालू नामक एक केवट ने एक गाय कसाई को बेची। बीमारी के कारण गाय विद्यालय एवं बाजार के पास लुढ़क गई। तदुपरान्त कालू और कसाई ने उसी स्थान पर गाय की हत्या कर दी। अस्पताल सहायक ने एक मुसलमान होते हुए भी इस बात की जानकारी तहसील में कर दी और कालू एवं कसाई दोनों पर, प्रत्येक को रू. १५ का जुर्माना लगाया गया और गोमाँस लोगों को बेच दिया गया। बीमार पशुओं के माँस के बेचे जाने से बीमारी में वृद्धि होने की बात कही गई थी।

३८८. 'हिमाला' (रावलपिंडी) ने अपने २३ नवम्बर १८९२ के अंक में एक इस प्रकार की शिकायत 'अनीस-ए-हिन्द' (मेरठ) से पुनर्प्रकाशित की कि गुजरात नगर के समीपवर्ती गाँवों के चौकीदार एवं लम्बरदार पशुओं की हत्या करके, हिन्दुओं के घरों के पास गोमाँस की बिक्री करके वहाँ के लोगों पर ज्यादती करने में लिप्त थे। यदि हिन्दू उनके इस कृत्य का विरोध करते भी थे तो मुसलमान उन्हें पीटकर

धमकियाँ देते थे। (गोपनीय)

१८९३

३८९. जनवरी, १८९३ में डेरा नानक के धर्मकोट रंधावा के चौकीदारों के जमादार रंगीखान ने रिपोर्ट दी कि मौकम के पुत्र बूरा एवं बगा और इमामदीन, सभी कश्मीरी, तथा नबू एवं बस्सा, दोनों काक्के जिया मुस्लिम समुदाय के लोगों को गोमाँस बेचने के लिए रात में अपने अपने घरों में गायों की हत्याएँ करने के आदी थे। मुल्ला अब्राहम और समदू, दोनों कश्मीरी पशुओं की हत्या में लिप्त लोग थे। हिन्दू इनके इस कुकृत्य पर खीजकर भुनभुनाते रहते थे, अतः यदि कोई आवश्यक कार्रवाई नहीं की गई तो वहाँ भविष्य में अशान्ति फैलने की सम्भावना थी।

३९०. तत्पश्चात् डेरा नानक के पुलिस उपनिरीक्षक ने रिपोर्ट दी कि धर्मकोट रंधावा के मुसलमानों द्वारा उनके घरों में पशुहत्याएँ करने के विषय में रंगीखान जमादार द्वारा दी गई सूचना बिल्कुल सही थी। परन्तु वहाँ के मुसलमानों ने एक बैठक आयोजित की थी तथा लिखित रूप में वचन दिया था कि वे पुनः इस प्रकार का कोई कृत्य नहीं करेंगे। उनकी इस कार्यवाही से हिन्दू संतुष्ट थे। वहाँ समस्या निर्माण होने का कोई अन्य कारण दिखाई नहीं देता था।

३९१. गुरदासपुर जिले के कालानौर के पुलिस उपनिरीक्षक ने रिपोर्ट दी कि कालानौर के कसाई बूचड़खानों में पशुओं की हत्या करते थे लेकिन वे लाश के लोथड़ों को एक गाँव से दूसरे गाँव में घूमकर बेचते थे। १८ जनवरी को दो कसाई गोमाँस दो गधों पर लादकर डेरा नानक के सिख मन्दिर में वर्तमान गद्दीनशीन महन्त मनोहरदास के मालिकाना गाँव किला नत्थासिंह से निकले थे, तब हिन्दू अत्यन्त चिन्तित हुए लेकिन महन्त के स्थानीय प्रतिनिधि कुछ करते, उससे पूर्व ही कसाइ वहाँ से आगे चले गए।

उपर्युक्त विषय में, उपनिरीक्षक ने अपनी रिपोर्ट दी कि उसने कालानौर के बूचड़खानों की मुलाकात ली। वहाँ दस दुकानें थीं। प्रत्येक दुकान में पशुओं के माँस के लोथड़े थे तथा दो पशुओं की हत्या की जा रही थी। स्थल पर जाँच करने पर ज्ञात हुआ कि कसाई गधों और खच्चरों पर गोमाँस लादकर उसे एक गाँव से दूसरे गाँव बेचने के लिए २० किलोमीटर से अधिक परिधि के क्षेत्र में जाते थे। कसाइयों के अतिरिक्त अन्य कई लोगों की आजीविका उन बूचड़खानों से एकमुश्त गोमाँस खरीदकर गाँव गाँव जाकर फुटकर बेचकर चलती थी।

३९२. उसी जिले के नारोट से खबर भेजी गई कि झेला गाँव के मुसलमान कभी कभी अपने घरों में छिपकर पशुओं की हत्या करते थे।

३९३. 'पैसा अखबार' (लाहौर) ने अपने १६ जनवरी १८९३ के अंक में लिखा कि जिंद और संगरूर में सरकारी जाँच में बाधा डालने हेतु अत्यन्त घनिष्ठ प्रयास किए जा रहे थे। अंशदान एकत्रित किए जा रहे थे, अतिरिक्त सहायक आयुक्त आदि के पास भेदिये भेजे जा रहे थे और प्राधिकारियों पर अपना प्रभाव डाला जा रहा था। कुछ धार्मिक एवं राष्ट्रीय परिषदों के कार्यालयों के पदाधिकारियों द्वारा भी इसी प्रकार के प्रयास कराए जा रहे थे। एक प्रतिष्ठित आंग्ल-भारतीय समाचार पत्र को राज्य के अधिकारियों का पक्ष रखने के लिए प्रभावित करने के प्रयास भी किए जा रहे थे।

३९४. 'आफताब-ए-पंजाब' (लाहौर) ने ६ फरवरी १८९३ को एक समाचार प्रकाशित किये जिसमें लेखक ने शिकायत की थी कि अम्बाला का बूचड़खाना छावनी के नजदीक होने के कारण हिन्दू यात्रियों को वहाँ से रेलगाड़ी गुजरते समय अपनी आँखें बन्द करनी पड़ती थीं। लेखकने सुझाव दिया कि इस बूचड़खाने को उसके वर्तमान स्थान से हटाकर किसी अन्य स्थान पर ले जाना चाहिए।

३९५. फरवरी १८९३ के आरम्भ में बनारस के पण्डित जगत नारायण अमृतसर पधारे। उन्होंने गाय के सम्मान में स्वर्णमन्दिर में एक भाषण दिया। ऐसे समाचार मिले कि नगर में गायों को रखने के लिए एक गोशाला स्थापित करने की उनकी मंशा थी। इसके लिए उन्होंने अंशदान देने हेतु लोगों को कहा। कहा जाता था कि उनका कांग्रेस से कुछ सम्बन्ध था।

३९६. अमृतसर में नगर के एक खत्री नथ्थूमल कोतवाली में मौला बख्श नामक एक मुसलमान कसाई को अपने साथ लेकर आए तथा शिकायत की कि वह एक कपड़े में गोमाँस लेकर रूस्ला कश्मीरी के घर आया था। वहाँ आकर उसने तराजू से उसे तौलना शुरु किया। लेकिन वहाँ नत्थूमल एवं अन्य हिन्दुओं ने उसे ऐसा करते हुए देख लिया। गोमाँस को एक कपड़े में छिपाकर बाजार के रास्ते से लाया गया था। निरीक्षक संधीखान ने अतिरिक्त सहायक उपायुक्त राय खुशाल सिंह से परामर्श करके मामले को आगे नहीं बढ़ने दिया।

३९७. फरवरी में लाहौर में शाकाहारी सोसाइटी की एक बैठक आयोजित की गई। इसमें लगभग ४० लोग उपस्थित थे। माँस भक्षण करने के विरोध में एक भाषण दिया गया। गायों के संरक्षण एवं अनुरक्षण हेतु चंदा एकत्रित करने के लिए एक प्रस्ताव

भी पारित किया गया।

३९८. मार्च में अमृतसर में जगत नारायण नामक ब्राह्मण एक गोशाला की स्थापना करने के लिये अभी भी जुटा हुआ था।

३९९. 'सनातन धर्म गजट' (सियालकोट) ने अपने २० मार्च १८९३ के अंक में एक समाचार प्रकाशित किये जिसमें लेखक ने टिप्पणी की थी कि सरकार ने पशुसंरक्षण हेतु अभी तक कोई कदम इस लिए नहीं उठाए थे क्योंकि यूरोपीय सिपाहियों के लिए गोमाँस की आपूर्ति करने के लिए पशु हत्या की प्रथा को उसका समर्थन था। अतः हिन्दुओं को प्रत्येक नगर एवं कस्बे में समितियां गठित करनी चाहिए तथा गायों के संरक्षण के लिए और चारे घास खरीदने के लिए चंदा एकत्रित करना चाहिए। लेखक का विचार था कि यदि हिन्दू अपने उद्देश्य की प्राप्ति करना चाहते थे तो उन्हें इस हेतु अपने प्रयत्नों पर पूर्ण रूप से निर्भर रहकर तथा किसी की सहायता की अपेक्षा किए बिना उद्देश्य पूर्ण करने का प्रयास करना चाहिए।

४००. दिल्ली के जिला पुलिस अधीक्षक गंगाराम ने घोषणा की थी कि वे दिल्ली में ईद के अवसर पर गाय खरीदने के लिए दिल्ली के अपने मित्रों की सहायता करना चाहते थे।

४०१. 'नुसरत-उल-अखबार' (दिल्ली) ने अपने १४ मई १८९३ के अंक में लिखा कि अंग्रेजी समाचार पत्र के अनुसार बैलों के रक्त का चीनी साफ करने में उपयोग किया जाता था। सम्पादक का मानना था कि शाहजहाँपुर में तैयार की गई चीनी खून से शुद्ध नहीं की जाती थी। परन्तु उसने चीनी मिलों के मालिकों से इस विषय पर स्पष्टीकरण देने तथा हिन्दू जनता को पुनः आश्वासन देने के लिए कहा।

४०२. कपूरथला रियासत में फगवाड़ा में भटकती मवेशी के संरक्षण के लिए एक गोशाला की शुरुआत मई में हुई रिपोर्ट की गई। इसमें आरम्भ में १३ पशु थे। इसे चलाने के लिए ६०० रू. का चंदा एकत्रित किया गया था। इसकी ब्याज से एक व्यक्ति को गायों की देखभाल करने तथा उन्हें चारा देने के लिए नौकरी पर रखा गया था। तहसीलदार, स्टेशन मास्टर तथा फगवाड़ा के अन्य हिन्दू इस विषय में अत्यन्त रुचि लेते थे।

४०३. बनारस के जगत नारायण नामक ब्राह्मण ने २४ मई को किल्ला भाँगियाँ के मेहरदास की धर्मशाला में एक सभा आयोजित की जिसमें लगभग २५० लोग एकत्रित हुए। उन्होंने गोशाला की शुरुआत करने के लिए निधि की प्राप्ति हेतु साधन तलाशने पर चर्चा की। सुंदरसिंह, पशुचिकित्सा सहायक ने सुझाव दिया कि प्रत्येक

व्यक्ति की आय पर कर लगाया जाए, लेकिन कुछ भी सुनिश्चित नहीं किया जा सका।

४०४. 'सिराज-उल-अखबार' ने अपने २९ मई १८९३ के अंक में एक समाचार प्रकाशित किया जिसमें एक मुसलमान लेखक ने यह दर्शाने का प्रयत्न किया कि भारत में पशुओं की हत्या करके जनता का बहुत अधिक नुकसान किया जा रहा था। इससे साफ दिखता था कि दूध और घी का मूल्य बढ़ गया था। लेखक ने सरकार का आह्वान किया कि वह पशुहत्या बन्द कराए।

४०५. 'नानक प्रकाश' (कपूरथला) ने मई १८९३ के अंक में यह प्रदर्शित करते हुए एक आलेख प्रकाशित किया कि गाय अत्यन्त उपयोगी पशु है और घी के मूल्य में बढ़ोतरी का कारण पशु हत्या की प्रथा है। सम्पादक ने निवेदन किया कि भारत में पशु संरक्षण की दिशा में कदम उठाए जाने चाहिए।

४०६. जिंद रियासत का लालू नामक राजपूत जिसने ईद के अवसर पर जिंद रियासत के एक गाँव में एक गाय की हत्या की थी जून में सजा के सम्बन्ध में उपराज्यपाल के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत करने के उद्देश्य से आया।

४०७. 'पीपल्स जनर्ल' (लाहौर) ने अपने १० जून १८९३ के अंक में पुनः 'गोसंरक्षण आन्दोलन' शीर्षक से आलेख प्रकाशित किया जिसमें श्रीमन स्वामी के उन सभी व्याख्यानों की शृंखला का सन्दर्भ दिया जो उन्होंने बंगाल में मुसलमानों एवं ईसाइयों की सहानुभूति प्राप्त करने हेतु पशुसंरक्षण के विषय में दिए थे।

४०८. रोहतक का रमजान नामक एक कसाई २१ जून को शिमला में आया। उसने बताया कि वह उस गोहत्या मामले में उपराज्यपाल के समक्ष याचिका प्रस्तुत करने के लिए आया था जिसका उसके विरुद्ध निर्णय दिया गया था।

४०९. २४ एवं २५ जून १८९३ को लाहौर के लेंदा बाजार में गुरुदासपुर जिले के बटाला गाँव के भाई हरनाम सिंह को पशुहत्या से होने वाले नुकसानों पर एक पुस्तक पढ़ते हुए एवं लोगों को बेचते हुए देखा गया। उन्होंने टिप्पणी की कि पशुहत्या से उत्पीड़न बढ़ रहा था।

४१०. जून अन्त फिरोजपुर छावनी के सदरबाजार के रहनेवाले अब्दुल रहीम नामक निचली जाति के एक मुसलमान के कारण विगत इद पर कुछ परेशानी पैदा हुई थी। उसने पुनः कहा कि वह अपने गाँव ज़ीरा जाना चाहता था। वहाँ जाकर वह गोहत्या करके ईद मनाएगा। जिला पुलिस अधीक्षक ने उस व्यक्ति को जब खड़खड़ाया तब वह कहने लगा कि वह तब तक पशु हत्या नहीं करेगा जब तक उसे इम्पीरियल सरकार को उसके द्वारा प्रस्तुत स्मरण पत्र का कोई उत्तर नहीं मिल जाता।

४११. 'दोस्त-ए-हिन्द' (भेड़ा) ने अपने ७ जुलाई १८९३ के अंक में नौशेरा से एक समाचार प्रकाशित किया जिसमें लेखक ने कहा था कि ईद के दिन हिन्दुओं की दुकानों के पास एक गाय की हत्या की गई थी जिन्होंने इस घोर अपमान की दुखी होकर शिकायत की थी।

४१२. 'अखबार-ए-आम' (लाहौर) ने २० जुलाई १८९३ के अपने अंक में लिखा कि पशुहत्या को लेकर हिन्दुओं और मुसलमानों में व्याप्त दुर्भावना के विषय में पायोनियर ने आलेखों की एक श्रेणी प्रकाशित की थी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिन्दुओं की उपस्थिति में पशुओं की हत्या करने से उनकी धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचती है। दूसरी ओर, यह भी इतना ही सत्य है कि मुसलमान गोमाँस खाने के शौकीन थे तथा वे पशुओं को कुर्बानी देने के लिए उनकी हत्या करने को अपना धार्मिक कर्तव्य मानते थे। इस तरह का मामला होने पर ब्रिटिश सरकार जैसी तटस्थ सरकार के लिए यह समझ पाना सरल नहीं था कि एक वर्ग की धार्मिक स्वतन्त्रता के लिये दूसरे वर्ग को वंचित कैसे किया जा सकता है। तथापि, इस प्रश्न पर धार्मिक दृष्टिकोण छोडकर विचार करने पर पशु संरक्षण हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों तथा अन्य समुदायों के लिए समान रूप से अत्यन्त लाभदायी था।

४१३. रावलपिंडी के जिला पुलिस अधीक्षक ने जुलाई में अपनी रिपोर्ट भेजी कि शहर में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच धार्मिक विरोध अत्यन्त बढ़ा था। झगड़े की जड़ के रूप में बकरी के माँस के लिए खुली कसाइयों की दुकानें थीं।

इस सम्बन्ध में तथ्य संक्षेप में निम्नानुसार थे : नब्बी बख्श नामक एक सम्माननीय खोजा मुसलमान, जो शहर का मानद मजिस्ट्रेट भी था, ने कुछ वर्ष पूर्व एक वेश्या से 'कसाबा बाजार' में एक मकान खरीदा था। इस गली में वेश्याओं के कोठे तथा कसाइयों की दुकानें थी। १८९१ में नब्बी बख्श इस मकान में बकरी एवं मटन की दुकान खोलना चाहता था लेकिन हिन्दुओं के द्वारा आपत्ति प्रकट करने के कारण यह मामला उपायुक्त के पास पहुंचा। परन्तु जिला पुलीस अधीक्षक के अनुसार उसने सुझाव दिया कि हिन्दू इसे किराए पर ले लें। इस प्रकार यह मामला परस्पर सहयोग से निपट जाएगा। तथापि, हिन्दुओंने वह मकान किराए पर नहीं लिया। नब्बी बख्श ने एक बैरिस्टर इनायतुल्लाह से परामर्श करके इस मकान में कसाई की दुकान खोलने की अनुमति प्राप्त की थी। तुरन्त हिन्दुओं ने विरोध प्रदर्शित किया अतः इस दुकान को बन्द करने हेतु पुनः आदेश जारी किए गए। परिणाम यह हुआ कि दलगत भावना एवं धार्मिक विरोध में वृद्धि हुई। दोनों पक्ष अपनी बात पर अड़े हुए थे।

मुसलमानों ने गुजारिश की कि बकरी के मटन की दुकान खुलने से हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को ठेस नहीं पहुँचती। दूसरी ओर हिन्दुओं ने कहा कि इसके सामने उनकी धर्मशाला थी अतः धर्मशाला के सामने कसाई की दुकान का खुलना आपत्तिजनक था। अफवाहें भी फैलीं कि यदि मुसलमान वहाँ कसाई की दुकान खोलेंगे तो हिन्दू मस्जिद के पास झटका-माँस की दुकान खोलेंगे और मुसलमान प्रतिशोध लेने की भावना से पूरे शहर में गोमाँस की दुकाने खोलेंगे।

जिला पुलिस अधीक्षक द्वारा जाँच किए जाने पर जो तथ्य सामने आए उनमें एक ओर नब्बी बख्श था जिसके पक्ष में बहुत सारे मुसलमान थे तथा दूसरी ओर मिट्ठा, खजान का पुत्र खत्री, लखू, गंगा का पुत्र - भगत, तथा बहुत सारे हिन्दू थे। मुसलमानों के वकील एवं परामर्शदाता इनायतुल्लाह थे तथा हिन्दुओं के वकील एवं परामर्शदाता हंसराज थे। उपायुक्त ने टिप्पणी की कि यह लम्बे समय तक चलनेवाला मामला था और इससे दंगा भड़कने का भी कोई खतरा नहीं था।

४१४. 'अम्बाला गजट' (अम्बाला) ने अपने २५ जुलाई १८९३ के अंक में दर्शाने का प्रयत्न किया कि मुसलमान हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं पर आघात करने के उद्देश्य से पशुओं की हत्या करते थे। उसने उन्हें परामर्श दिया कि वे पशुओं की हत्या न करें और हिन्दुओं के साथ शान्ति से रहें ताकि दोनों समुदायों के बीच धार्मिक विवादों का शमन हो जाए। सम्पादक ने टिप्पणी की कि पशुओं का संरक्षण भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए आवश्यक था। खेती लोगों का प्रमुख व्यवसाय होने के कारण गोवंश के संरक्षण से देश का ही लाभ होगा।

४१५. 'खोज-ए-नूर' (लाहौर) ने अपने २९ जुलाई १८९३ के अंक में इसी विषय पर उन समस्त फायदों का आकलन प्रस्तुत किया जो पशु संरक्षण से हो सकते थे। उसने खेद व्यक्त किया कि सरकार इतने उपयोगी पशुओं का विनाश करने की अनुमति दे रही थी, जिसके अभाव में निरन्तर अकाल को आमंत्रण मिलेगा। हिन्दू एवं मुस्लिम-दोनों सामान्य रूप से पशु संरक्षण के पक्ष में थे लेकिन कुछ अल्पद्रष्टा मुसलमान हिन्दुओं की भावनाओं को आघात पहुँचाने के उद्देश्य से पशुओं की हत्या करते थे हालाँकि गाय की हत्या करना अनिवार्य नहीं था। सम्पादक ने सरकार एवं मुस्लिम समुदाय के ख्यातिप्राप्त सदस्यों से अनुरोध किया कि वे पशुसंरक्षण के लिए कदम उठाएँ।

४१६. 'नानक प्रकाश' (कपूरथला) ने जुलाई १८९३ के अंक में टिप्पणी की कि पशु संरक्षणं हिन्दुओं का धार्मिक कर्तव्य है। उसने प्रत्येक हिन्दू को सलाह दी कि

४११. 'दोस्त-ए-हिन्द' (भेड़ा) ने अपने ७ जुलाई १८९३ के अंक में नौशेरा से एक समाचार प्रकाशित किया जिसमें लेखक ने कहा था कि ईद के दिन हिन्दुओं की दुकानों के पास एक गाय की हत्या की गई थी जिन्होंने इस घोर अपमान की दुखी होकर शिकायत की थी।

४१२. 'अखबार-ए-आम' (लाहौर) ने २० जुलाई १८९३ के अपने अंक में लिखा कि पशुहत्या को लेकर हिन्दुओं और मुसलमानों में व्याप्त दुर्भावना के विषय में पायोनियर ने आलेखों की एक श्रेणी प्रकाशित की थी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिन्दुओं की उपस्थिति में पशुओं की हत्या करने से उनकी धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचती है। दूसरी ओर, यह भी इतना ही सत्य है कि मुसलमान गोमाँस खाने के शौकीन थे तथा वे पशुओं को कुर्बानी देने के लिए उनकी हत्या करने को अपना धार्मिक कर्तव्य मानते थे। इस तरह का मामला होने पर ब्रिटिश सरकार जैसी तटस्थ सरकार के लिए यह समझ पाना सरल नहीं था कि एक वर्ग की धार्मिक स्वतन्त्रता के लिये दूसरे वर्ग को वंचित कैसे किया जा सकता है। तथापि, इस प्रश्न पर धार्मिक दृष्टिकोण छोडकर विचार करने पर पशु संरक्षण हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों तथा अन्य समुदायों के लिए समान रूप से अत्यन्त लाभदायी था।

४१३. रावलपिंडी के जिला पुलिस अधीक्षक ने जुलाई में अपनी रिपोर्ट भेजी कि शहर में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच धार्मिक विरोध अत्यन्त बढ़ा था। झगड़े की जड़ के रूप में बकरी के माँस के लिए खुली कसाइयों की दुकानें थीं।

इस सम्बन्ध में तथ्य संक्षेप में निम्नानुसार थे : नब्बी बख्श नामक एक सम्माननीय खोजा मुसलमान, जो शहर का मानद मजिस्ट्रेट भी था, ने कुछ वर्ष पूर्व एक वेश्या से 'कसाबा बाजार' में एक मकान खरीदा था। इस गली में वेश्याओं के कोठे तथा कसाइयों की दुकानें थी। १८९१ में नब्बी बख्श इस मकान में बकरी एवं मटन की दुकान खोलना चाहता था लेकिन हिन्दुओं के द्वारा आपत्ति प्रकट करने के कारण यह मामला उपायुक्त के पास पहुंचा। परन्तु जिला पुलीस अधीक्षक के अनुसार उसने सुझाव दिया कि हिन्दू इसे किराए पर ले लें। इस प्रकार यह मामला परस्पर सहयोग से निपट जाएगा। तथापि, हिन्दुओंने वह मकान किराए पर नहीं लिया। नब्बी बख्श ने एक बैरिस्टर इनायतुल्लाह से परामर्श करके इस मकान में कसाई की दुकान खोलने की अनुमति प्राप्त की थी। तुरन्त हिन्दुओं ने विरोध प्रदर्शित किया अतः इस दुकान को बन्द करने हेतु पुनः आदेश जारी किए गए। परिणाम यह हुआ कि दलगत भावना एवं धार्मिक विरोध में वृद्धि हुई। दोनों पक्ष अपनी बात पर अड़े हुए थे।

मुसलमानों ने गुजारिश की कि बकरी के मटन की दुकान खुलने से हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को ठेस नहीं पहुँचती। दूसरी ओर हिन्दुओं ने कहा कि इसके सामने उनकी धर्मशाला थी अतः धर्मशाला के सामने कसाई की दुकान का खुलना आपत्तिजनक था। अफवाहें भी फैलीं कि यदि मुसलमान वहाँ कसाई की दुकान खोलेंगे तो हिन्दू मस्जिद के पास झटका-माँस की दुकान खोलेंगे और मुसलमान प्रतिशोध लेने की भावना से पूरे शहर में गोमाँस की दुकाने खोलेंगे।

जिला पुलिस अधीक्षक द्वारा जाँच किए जाने पर जो तथ्य सामने आए उनमें एक ओर नब्बी बख्श था जिसके पक्ष में बहुत सारे मुसलमान थे तथा दूसरी ओर मिट्ठा, खजान का पुत्र खत्री, लखू, गंगा का पुत्र - भगत, तथा बहुत सारे हिन्दू थे। मुसलमानों के वकील एवं परामर्शदाता इनायतुल्लाह थे तथा हिन्दुओं के वकील एवं परामर्शदाता हंसराज थे। उपायुक्त ने टिप्पणी की कि यह लम्बे समय तक चलनेवाला मामला था और इससे दंगा भड़कने का भी कोई खतरा नहीं था।

४१४. 'अम्बाला गजट' (अम्बाला) ने अपने २५ जुलाई १८९३ के अंक में दर्शाने का प्रयत्न किया कि मुसलमान हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं पर आघात करने के उद्देश्य से पशुओं की हत्या करते थे। उसने उन्हें परामर्श दिया कि वे पशुओं की हत्या न करें और हिन्दुओं के साथ शान्ति से रहें ताकि दोनों समुदायों के बीच धार्मिक विवादों का शमन हो जाए। सम्पादक ने टिप्पणी की कि पशुओं का संरक्षण भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए आवश्यक था। खेती लोगों का प्रमुख व्यवसाय होने के कारण गोवंश के संरक्षण से देश का ही लाभ होगा।

४१५. 'खोज-ए-नूर' (लाहौर) ने अपने २९ जुलाई १८९३ के अंक में इसी विषय पर उन समस्त फायदों का आकलन प्रस्तुत किया जो पशु संरक्षण से हो सकते थे। उसने खेद व्यक्त किया कि सरकार इतने उपयोगी पशुओं का विनाश करने की अनुमति दे रही थी, जिसके अभाव में निरन्तर अकाल को आमंत्रण मिलेगा। हिन्दू एवं मुस्लिम-दोनों सामान्य रूप से पशु संरक्षण के पक्ष में थे लेकिन कुछ अल्पद्रष्टा मुसलमान हिन्दुओं की भावनाओं को आघात पहुँचाने के उद्देश्य से पशुओं की हत्या करते थे हालाँकि गाय की हत्या करना अनिवार्य नहीं था। सम्पादक ने सरकार एवं मुस्लिम समुदाय के ख्यातिप्राप्त सदस्यों से अनुरोध किया कि वे पशुसंरक्षण के लिए कदम उठाएँ।

४१६. 'नानक प्रकाश' (कपूरथला) ने जुलाई १८९३ के अंक में टिप्पणी की कि पशु संरक्षण हिन्दुओं का धार्मिक कर्तव्य है। उसने प्रत्येक हिन्दू को सलाह दी कि

वह अपने इस कर्तव्य को पूरा करे। गाय सभी पशुओं में सर्वाधिक उपयोगी है, अतः उसकी रक्षा करना हिन्दुओं का धार्मिक कर्तव्य बनता है।

४१७. जुलाई में जगाधरी से रिपोर्ट मिली कि वहां ईद के अवसर पर गोहत्या रोकने के लिए अदालती कार्यवाही के खर्चे के लिए ३००० रू. की रकम चंदे के माध्यम से एकत्रित की गई थी। रामाक्षर, पूर्व पटवारी, तथा छूज्जू पूर्व अर्जीनवीस इसके समर्थक थे।

४१८. 'बे-मिसाल पंच' (दिल्ली) ने १ अगस्त १८९३ के अंक में खेद व्यक्त करते हुए लिखा कि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच धार्मिक दंगे भड़कना आम बात हो गई थी। उसने टिप्पणी की कि हिन्दू एवं गोसंरक्षण सोसाइटियाँ पशु संरक्षण हेतु मुसलमानों के कृत्यों पर जितनी अधिक आपत्ति करेंगी उतनी ही अधिक संख्या में वे पशुओं की हत्या करेंगे।

४१९. अगस्त में करनाल के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि पट्टी कल्लियान गाँव में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना फैल रही थी। यह दुर्भावना गोहत्या के प्रश्न तथा सूअर पालन के कारण थी।

४२०. लगभग इसी समय बताया गया कि दिल्ली शहर में कश्मीरी गेट के पास तक गोशाला निर्माण के लिए दीपचंद, मोतीराम, दोनों मारवाड़ी, मनुलाल, कपड़ा व्यापारी खेमचंद, बनिया, तथा अन्य लोगों ने धन एकत्रित किया।

४२१. 'सिंह सहाय' (अमृतसर) ने अपने ७ अगस्त १८९३ के अंक में लिखा कि यह पढ़कर दुख हुआ कि पशु हत्या प्रश्न में हिन्दुओं पर बड़े ही कटु व्यंग्यपूर्ण कटाक्ष किए गए थे लेकिन 'अखबार-ए-आम' की इस बात से सहमत नहीं हुआ जा सकता कि जिस प्रकार एक हिन्दू गाय की पूजा करता था उसी प्रकार एक मुसलमान को उसकी हत्या करने का अधिकार मिल जाता था। यदि यह दृष्टिकोण सत्य होता तो प्रत्येक व्यक्ति को अपने पुत्र की हत्या करने या आत्महत्या करने का अधिकार भी होता। इसी प्रकार यदि किसी व्यक्ति ने कुरान या बाइबल खरीदकर जलायां या पैरों के नीचे रौंदा या अपने रूपये लगाकर एक चर्च का निर्माण करके उसे अपवित्र किया तो क्या उसने कोई जुर्म नहीं किया? किसी की धार्मिक भावनाओं को ठेस नहीं पहुँचाई? सम्पादक ने आगे लिखा कि पशु हत्या विषयक प्रश्न पर मतभेद निर्माण करके सरकार भारी गलती कर रही थी। हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं के सम्मान के लिए पशु हत्या रोकने की दिशा में कुछ भी नहीं कर रही थी। सरकार वास्तव में मुसलमानों को इसलिए उत्साहित कर रही थी क्योंकि यूरोपीय भी गोमाँस

खाते हैं। यही कारण था कि हिन्दुओं के प्रति न्याय नहीं किया गया था।

४२२. 'गम-ख्वार-ए-हिन्द' (लाहौर) ने अपने १२ अगस्त १८९३ के अंक में आजमगढ़ जिले में घटित गोहत्या विषयक दंगों के सम्बन्ध में पायोनियर के ८ जुलाई १८९३ के अंक में प्रकाशित एक लम्बे आलेख के सन्दर्भ में लिखा कि गोसंरक्षण सोसाइटियों की संख्या में वृद्धि होने से धार्मिक दंगे अत्यधिक रूप में भड़के। इतना ही नहीं तो पशुओं की हत्याएँ भी अनावश्यक रूप से अधिक की जा रही थीं। दूसरे शब्दों में ये सोसाइटियाँ गोसंरक्षण का कार्य करने के स्थान पर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावनाओं को और अधिक भड़काने का काम कर रही थीं। पशुहत्या विरोधी निषेध के सम्बन्ध में 'गम-ख्वार-ए-हिन्द' ने टिप्पणी की थी कि जब तक यूरोपीय लोग गोमाँस भक्षण के शौकीन रहेंगे तब तक पशु हत्या बन्द कराने की बात व्यर्थ ही होगी। सम्पादक ने मुसलमानों को पशुहत्या करने से रोकने के लिए हिंसा का सहारा लेने की हिन्दुओं की कार्यवाई की निन्दा की तथा टिप्पणी की कि हिन्दुओं के लिए इस दृष्टि से सर्वोत्तम योजना यह होगी कि वे मुसलमानों को मित्र भाव से प्रभावित करें, उनके साथ एक सहमति बनाएँ तथा उन्हें समझाएँ कि पशुओं का विनाश करने से देश की समृद्धि नष्ट हो जाएगी, गोसंरक्षण भारत को प्रगति के लिए अत्यन्त लाभकारक होगा। उन मुगल बादशाहों द्वारा उठाए गए कदमों से भी यथार्थ स्थिति से अवगत कराएँ कि किस प्रकार बादशाह अकबर, जहाँगीर और औरंगजेब ने अपने अपने अधिकार क्षेत्र में विशिष्ट समय के लिए पशु हत्या को फरमान जारी करके प्रतिबन्धित कर दिया था।

४२३. 'सिंह सहाय' (अमृतसर) ने अपने १६ अगस्त १८९३ के अंक में उत्तरपश्चिमी सूबों की सरकार द्वारा गोहत्या विषयक दंगों के सम्बन्ध में जिला अधिकारियों को जारी परिपत्र का सार प्रकाशित किया।

४२४. 'नूर-अफशाँ' (लुधियाना) ने अपने १८ अगस्त १८९३ के अंक में उपराज्यपाल, बंगाल द्वारा गोहत्या के सम्बन्ध में हिंदू और मुस्लिमों को दी गई ठोस सलाह पर ध्यान दिया था।

४२५. ९ अगस्त को रिपोर्ट मिली कि अनुच्छेद ४१९ के सन्दर्भ में पट्टी कल्लिनाना के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दुर्भावना कम आई थी लेकिन सेविन एवं सीकरी में अभी तक उसी प्रकार से व्याप्त थी। दुर्भावना एवं विवाद के कारण गोहत्या, एक मस्जिद एवं उसमें अजान की पुकार बताए गए।

४२६. 'ताज-उल-अखबार' (रावलपिंडी) ने अपने १९ अगस्त १८९३ के

अंक में इस आधार पर एक गोसंरक्षण सोसाइटी के जम्मू में स्थापित होने की निन्दा की थी कि जम्मू सरकार पहले से ही पशु संरक्षण की दिशा में ठोस कदम उठाकर कार्यरत थी तथा कश्मीर में इसका अत्यन्त आदर था। गोसंरक्षण सोसाइटी की स्थापना से किसी को कोई नुकसान नहीं था लेकिन भविष्य में इससे राज्य के समक्ष कठिनाइयाँ खड़ी करने के गम्भीर परिणाम हो सकते थे।

४२७. 'विक्टोरिया पेपर' (सियालकोट) ने अपने २८ अगस्त १८९३ के अंक में टिप्पणी की कि रंगून, आजमगढ़ तथा बलिया आदि में धार्मिक दंगे भड़कने के कारण देश का बहुत नुकसान हुआ था। इन दंगों को हिन्दुओं और मुसलमानों ने भविष्य के लिए एक चेतावनी के रूप में लेना चाहिए। धर्मशास्त्रों में लिखा हुआ है कि हिन्दुओं को गाय की पूजा करनी चाहिए तथा उसके पालन से आजीविका चलानी चाहिए लेकिन उसमें यह कहीं भी नहीं लिखा हुआ है कि यदि कोई अपने धार्मिक विधिविधानों को पूरा करे तो उससे झगड़ना चाहिए। दूसरे, मुसलमानों को भी अपने धार्मिक सिद्धांतों के अनुसार चलना चाहिए तथा दूसरों की भावनाओं का आदर करना चाहिए। यदि दोनों समुदायों के लोग अपने अपने धर्म के सिद्धांतों के विषय में पूर्वग्रहों से ग्रसित नहीं होते हैं तो देश में आगे और कोई भी दंगा कभी नहीं भड़केगा।

४२८. 'लाहौर पंच' ने ३० अगस्त १८९३ के अपने अंक में एक गाय का कार्टून प्रकाशित किया था जिसमें गाय को हिन्दू-मुस्लिमों को उसके निमित्त से झगड़ने तथा एक दूसरे की हत्या करने की बजाय शान्तिपूर्वक रहने के लिए निवेदन करते हुए चित्रित किया गया था।

४२९. 'सदा-ए-हिन्द' (लाहौर) के ३१ अगस्त १८९३ के अंक में एक मुसलमान संवाददाता ने अपने आलेख में खेद व्यक्त किया था कि पशु हत्या के परिणामस्वरूप भारत में कई स्थानों पर दंगे भड़के थे। इन दंगों से क्योंकि हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों समुदायों का नुकसान हुआ था अतः दोनों समुदायों के लोगों के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वे एक दूसरे के प्रति सामंजस्य स्थापित करें। दोनों समुदायों के अज्ञानी लोग दुर्भावना के कारक की भूमिका निभाते थे। ईद के त्योहार पर मुसलमानों के लिए गाय की कुर्बानी देकर हत्या करना अनिवार्य नहीं था, और ऐसा होता भी तो वे अपने हिन्दू साथियों की भावनाओं को ठेस न पहुँचे इस हेतु से ऐसा कदापि नहीं करते, क्योंकि गाय भारत के लोगों के लिए अत्यन्त उपयोगी पशु है। दूसरी ओर, हिन्दू भी ऐसे प्रयत्न करेंगे जिनसे उनके मुसलमान साथियों को कोई परेशानी न हो या फिर उनकी भावनाओं की भी कद्र हो। अधिकांश हिन्दू मुसलमानों

का साथ देना पाप मानते थे और उन्हें अपमानित करने के भरसक प्रयास करते थे। यूरोपीय सिपाहियों के लिए प्रतिदिन हजारों गायों की हत्या की जा रही थी लेकिन हिन्दुओं ने इसका विरोध नहीं किया। अतः यदि मुसलमान ईद के त्यौहार पर धार्मिक विधि विधान के लिए गायों की हत्या करते हैं तो उसका भी विरोध नहीं करना चाहिये था।

४३०. 'सिंह सहाय' (अमृतसर) के ३१ अगस्त १८९३ के अंक में लिखा गया कि गोहत्या विषयक एक आलेख इसके ७ अगस्त १८९३ के अंक में प्रकाशित हुआ था उसे 'अखबार-ए-आम' द्वारा फैलाई गई गलत धारणा को खंडित करने के लिए छापा गया था। उसमें जिन विशेष शब्दों का प्रयोग हुआ था वे मात्र उदाहरण थे, कुरान या बाइबल के सम्बन्ध में कोई भी अपमानजनक बात कहना उसका उद्देश्य बिल्कुल नहीं था। तथापि, 'सिंह सहाय' के कुछ मित्रों की सम्पादक को सलाह थी कि इन शब्दों का प्रयोग करना अनुचित था क्योंकि ऐसा करने से अन्य धर्म के लोगों की भावना को आघात पहुँच सकता था। इस आलेख के सम्बन्ध में गोरखपुर के एक समाचार पत्र ने भी ध्यान आकृष्ट किया था। सम्पादक ने इसके लिए खेद व्यक्त किया तथा गलती की ओर ध्यान दिलाने के लिए अपने मित्रों एवं समकालीनों का धन्यवाद ज्ञापित किया। कुरान एवं बाइबल हिन्दू धर्मग्रंथों की तरह ही पवित्र धर्मग्रंथ हैं। ऐसे धर्मग्रंथों का अपमान करना किसी का भी उद्देश्य नहीं हो सकता क्योंकि सभी धर्मग्रंथ समानभाव से उस परम सत्ता की आराधना का पाठ ही तो सिखाते हैं। वे अत्यत श्रद्धा के पात्र ऐसे ग्रंथ अतः उनका अपमान करना परम सत्ता का अपमान करने के बराबर होगा।

चूँकि इस आलेख को मुसलमान समुदाय के लोगों ने अपनी धार्मिक भावनाओं पर आघात के रूप में लिया था, अतः सम्पादक द्वारा क्षमा माँगी गई तथा समस्त आलेख को वापस लिया गया।

४३१. सितम्बर १८९३ के आरम्भ में लुधियाना के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि वहाँ एक गोरक्षिणी सभा की स्थापना हुई थी जिसके लिए २००० रू. जगरौन से तथा ५००० रू. लुधियाना के अन्य लोगों से एकत्रित किए गए जिन्हें बालमुकुंद साहूकार के पास जमा किया गया था। रोहतक के पूर्व उपजज जुगल किशोर, जो कि वहाँ फैली अशान्ति के लिए पहले भी दोषी थे, वे इस मामले में भी जुड़े हुए थे। गोरक्षिणी सभा के निम्नलिखित सदस्यों की समिति फंड के उपयोग करने की सत्ता के साथ बनाई गई : लाला किशोरी लाल, एवं लाला महताव राय, लाला

शिबूमल, लाला साबनमल, दीना, वासुदेव, कालूमल के पुत्र, किरपाल, दरोगा एवं उमरा सिंह।

सोसाइटी का स्पष्ट उद्देश्य दुर्बल एवं बीमार गायों को खरीदकर उनकी हत्या होने से बचाना था, साथ ही, उन्हें एक सुरक्षित स्थान पर रखने के लिए भूमि का एक टुकड़ा खरीदकर उस पर गोशाला बनाना था। ऐसा भी कहा गया कि इस उद्देश्य के लिए धन खर्च नहीं होगा। बाबू शिवचरण दास को सोसाइटी के उद्देश्यों की सिद्धि हेतु सहायता प्राप्त करने के लिए सरकार के समक्ष एक याचिका दायर करने का दायित्व दिया गया।

४३२. 'वकीली-बेवागम-ए-हिन्द' (दिल्ली) ने 'बोम्बे समाचार' गुजराती, १६ अगस्त १८९३ एवं गुजराती अखबार 'असलम' २० अगस्त १८९३ का प्राधिकार देते हुए अधिकृत रूप से लिखा कि सूरत के एक ब्राह्मण ने गाय के साथ प्रकृति विरोधी कृत्य किया था जिसके अपराध में पुलिस ने उसे गिरफ्तार किया था। सम्पादक ने टिप्पणी की कि हिन्दू मुसलमानों के विरोध में विष उगलने के लिए ही गाय के प्रति अत्यन्त सम्मान दर्शाने का दम्भ करते थे। इन कृत्यों से तो लगता है कि उन्हें इस प्राणी के प्रति सम्मान की कोई भावना नहीं थी।

४३३. 'वफादार अखबार' (लाहौर) ने ८ सितम्बर १८९३ के अंक में एक समाचार प्रकाशित किया जिसमें लेखक ने भारत के विविध भागों में फैले दंगों के सन्दर्भ में कहा कि पंजाब में ऐसी अशान्ति से पूर्ण रूप से मुक्ति मिली थी यह भगवान की कृपा है। सम्पादक ने इसे अशिक्षित जनता के अज्ञान के कारण हुआ माना। स्वयं एक मुसलमान होते हुए भी वह यह बात कहने में हिचकिचाया नहीं कि उसके अज्ञानी सहधर्मी कम दोषी नहीं थे। प्रथम तो ईद के अवसर पर गोहत्या मुसलमानों का धार्मिक कर्तव्य नहीं था। मेमने या ऊंट की कुर्बानी देना उनके लिये आवश्यक था। दूसरे, यद्यपि मुसलमानों के धर्म के अनुसार गोमाँस भक्षण वैध था, तो भी, गाय की हत्या करना पापपूर्ण कृत्य घोषित किया गया था। तीसरे, गायों की हत्या करना जरा भी आवश्यक नहीं था। तो फिर उन्हें अपने पुराने पड़ोसी हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुँचाने की क्या जरूरत थी? शान्ति एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए यह आवश्यक भी था कि मुसलमान यह प्रथा बन्द कर दें। हिन्दू भी दूध के धुले नहीं थे। उन्होंने बिना किसी कारण के मुसलमानों को म्लेच्छ कहा। उनमें से कुछ तो इतने कट्टर थे कि वे मुसलमानों के साथ बात तक करने को पाप समझते थे। इससे मुसलमानों को अपमान लगता था।

४३४. उपर्युक्त अनुच्छेद ४३१ के सन्दर्भ में लुधियाना के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट दी कि उसने गोरक्षा आन्दोलन के लिए जागरौन से २००० रू. एकत्रित होने के सम्बन्ध में जाँच की थी। राशि लगभग इतनी ही एकत्रित की गई थी तथा लाला रामप्रसाद, बेरी; उनके सहायक किशन गोपाल, मुख्तार एवं दौलतराम, ब्राह्मण द्वारा यह रकम एकत्रित की गई थी। चन्दा धनाढ्य बनियों और खत्रियों से लिया गया था। धन एकत्रित करने का ज्ञात उद्देश्य जागरौन में संरक्षण फंड एकत्रित करना था। रामप्रसाद बेरी वहाँ का एक प्रभावशाली व्यक्ति था। वह राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के सदस्यों के साथ सम्पर्क स्थापित किए हुए था तथा उसकी मंशा लाहौर में दिसम्बर में होनेवाली कांग्रेस की सभा में उपस्थित रहने की थी। ९ सितम्बर को सूचना प्राप्त हुई कि सोनी लोग पहाड़गंज से थोड़ा आगे जयसिंहपुरा में एक गोशाला बनाने के लिए चंदा एकत्रित कर रहे थे। इसी प्रकार का एक अन्य प्रतिष्ठान दिल्ली में सराय रोहिल्ला खान में बनाया जा रहा था।

४३५. 'अखबार-ए-आम' (लाहौर) ने अपने १४ सितम्बर १८९३ के अंक में लिखा कि यह सर्वज्ञात तथ्य है कि सिखों सहित हिन्दू गाय का अत्यधिक आदर करते हैं। वे इसकी पूजा करते हैं। ऐसी स्थिति में सरकार को इस की हत्या विषयक प्रश्न पर कुछ भी निर्णय लेने से पहले अत्यन्त सावधानी पूर्वक विचार करना चाहिए।

४३६. १४ सितम्बर १८९३ को लुधियाना शहर से रिपोर्ट प्राप्त हुई कि हजूरी सड़क के निवासी गुलाम रसूल कश्मीरी ने पिछली रात घाला मंडी से थोड़ा सा नमक खरीदा। वह उस नमक का पैकेट लेकर चौरा बाजार से जा रहा था तब अचरू एवं बनिये तथा अन्य हिन्दू मिले। उन्होंने उससे पूछा कि क्या वह गोमाँस ले जा रहा था। देखने पर नमक निकला और उन्होंने उसे आगे जाने दिया।

४३७. इसी महीने की १६ तारीख को अबू नामक एक छात्र लुधियाना के पुराने छावनी क्षेत्र से कुछ गोमाँस कपड़े में लपेटकर अपने घर की ओर जा रहा था। उसे चौबारा घोष अलीशाह स्थान के पास मालीगंज बाजार में कुछ महाजनों ने रोका। महाजनों ने उसे धमकियाँ दी लेकिन वह उनसे बचकर भाग निकला और अपने घर पहुँचा। उपनिरीक्षक करम बख्श ने उस लड़के के मालिक मुजन्जी अफजल को कोतवाली में हाजिर होने को कहा। उसे पूछने पर बात सच निकली।

४३८. २२ सितम्बर १८९३ को जलंधर के मुत्सद्दी नामक एक कसाई ने एक गाय खरीदी और उसे लेकर शहर में आया। तब उसे जयमल नामक एक ब्राह्मण ने रोका जो कभी उप पोस्ट मास्टर था। उस कसाई ने बताया कि वह गाय को हत्या

करने के लिए लाया था। तब उस ब्राह्मण ने उस गाय को रू. ३-४-० में खरीद लिया।

४३९. २५ सितम्बर १८९३ की शाम को, एक मुस्लिम लड़के द्वारा अचानक एक बछड़े को चोट पहुँचाने के कारण से अमृतसर में कुछ उत्तेजना फैल गई। तथापि इस मामले को जिला सचिव निकॉल ने शान्तिपूर्वक हल कर दिया था।

४४०. १ अक्टूबर १८९३ को स्वामी अलाराम को दिल्ली से लाहौर पहुँचने के समाचार मिले। उन्होंने २ अक्टूबर को सनातन धर्म सम्प्रदाय के लोगों के समक्ष भाषण दिया। उन्होंने गोहत्या की कड़े शब्दों में निन्दा की।

४४१. दिल्ली में एक अफवाह फैली कि सोनीपत में एक गोशाला शुरू होनेवाली ही थी। लाला बनारसी दास ने इस हेतु पहल की थी। हलालपुर हत्या मामले में मुख्य न्यायालय से अपील पर मुक्त हुए सिंहराम जेलदार ने इसके लिए १५०० रू. दिए।

४४२. ७ अक्टूबर को झींवर के कम्मा के पुत्र पीर बख्श ने शिकायत की कि पिछले दिन उसने लुधियाना के चौरा बाजार से कुछ सामान खरीदा था। जब वह लालू मल गली में घुसा, तो वहाँ उसे अचरू, बनिया एवं एक ब्राह्मण ने रोका। उसे उस पैकिट में क्या था, वह दिखाने के लिए कहा। जब उन्हें संतोष हुआ कि उसके पास गोमाँस नहीं था, तब उन्होंने उसे वहाँ से आगे जाने दिया था।

४४३. 'वफादार' (लाहौर) ने अपने ८ अक्टूबर १८९३ के अंक में गोसंरक्षण एवं गोहत्या विषयक एक समाचार प्रकाशित किये जिसमें लेखक ने गोसंरक्षण के सिद्धांत के स्रोत की खोज की। यह कैसे हिन्दू धर्म का आवश्यक अंग बना यह उसने सिद्ध किया। उसने लिखा कि गोसंरक्षण का विचार भारत में इजिप्ट से लौटे एक बुद्धिशाली ब्राह्मण द्वारा सर्व प्रथम रखा गया। इन दूरदर्शी लोगों ने गाय को अत्यन्त उपयोगी रूप में देखा और हिन्दू धर्म में गो-संरक्षण के उद्देश्य से गोपूजा का प्रारम्भ किया। इसका परिणाम यह हुआ कि धीरे धीरे हिन्दू गाय को मोक्षदाता के रूप में देखने लगे। यही कारण था कि इस की हत्या से उनकी धार्मिक भावनाओं को आघात पहुँचता था।

४४४. नवम्बर १८९३ में दिल्ली के जिला पुलिस अधीक्षक ने दो पत्रक अग्रेषित किये जिनमें से एक सोनीपत गोरक्षिणी सभा के उपयोग के लिए दिल्ली में मुद्रित किया गया था तथा दूसरा नागरी लिपि में था जिसे पण्डित धरम सहाय बरेली से लाये थे। 'केसर-ए-हिन्द' प्रेस द्वारा उसे बिक्री के लिए रखा गया था। इनमें से पहले पत्रक की रचना पण्डित दीनदयाल ने सोनीपत की गोसंरक्षण सोसाइटी के

उपयोग के लिए गाय की स्तुति रूप कविता में की थी। इसे 'केसर-ए-हिन्द' प्रेस, दिल्ली में मुद्रित किया गया था। लेखक ने लिखा था कि गाय का संरक्षण एवं सम्मान करना प्रत्येक हिंदू का कर्तव्य है। यह हमें दूध, दही, और घी देती है। इन्हीं से मिठाइयाँ भी बनाई जाती है। कसाइयों द्वारा गायों की हत्या की जा रही थी। इसके प्रति यह अन्याय सर्वथा अनुचित था। गायों की हत्या किए जाने से पहले तक एक रू. का चार सेर घी मिलता था, एक रू. का दस सेर तेल मिलता था तथा एक रू. का २४ सेर गुड़ मिलता था। लेकिन गोहत्या होने के कारण अब ये वस्तुएँ महँगी हो गई थीं। गाय हिन्दुओं की मातृदेवी थी। इसके संरक्षण के लिए गोशालाएँ बनाई गई थीं। हिन्दुओं को इसमें तन, मन, धन से सहायता करनी चाहिए। भारत के बीस करोड़ हिन्दुओं ने एकजुट होकर गाय की रक्षा का कार्य करना चाहिए। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शेष सभी ऐसे धार्मिक उत्कृष्ट कार्य को करने के लिए क्यों नहीं जुड़ते। गाय को देखते ही पाप दूर हो जाते है। इसकी सेवा करने से आशीर्वाद प्राप्त होते हैं। हिन्दू आभूषणों, आतिशबाजी एवं नाचों पर पैसा फूँकते थे लेकिन गाय को इस तरह से कटते हुए देखते थे। हिन्दू इन बातों का सदैव स्मरण रखें। अधिकांश मुसलमान, ईसाई एवं यहूदी गोहत्या के भयानक कृत्य से डरते थे। गोसंरक्षण की बात कुरान में भी है। कभी कभी विवाह के अवसर पर बूढ़ी गाएँ ब्राह्मणों को दान स्वरूप दी जाती थीं और वे उन्हें मुसलमानों को बेच देते थे। वे उन्हें बंजारों के वेश में खरीद लेते थे। बूढ़े साँड भी कमजोर होते गए क्योंकि उन्हें कोई चारा ही नहीं देता था। अतः हिन्दुओं को गोसंरक्षण आन्दोलन के लिए उदारतापूर्वक चंदा देना चाहिए। कुछ हिन्दू वेश्याओं पर हजारों रूपए लुटा देते थे लेकिन गोसंरक्षण के लिए एक पैसा भी देने से कतराते थे। गोशालाएँ खोली जानी चाहिए। यह एक धार्मिक कार्य है। भारत के २० करोड हिन्दुओं ने भारत में गोशालाएँ निर्मित करनी चाहिए। बूढी एवं थकी माँदी गायों को खरीदना चाहिए। उन्हें इन गोशालाओं में रखी जानी चाहिये।' दूसरा पत्रक नागरी लिपि में था। उसका शीर्षक था 'गोबन पत्रिका'। इसे 'रक्षक-ए-कांशी' प्रेस, दिल्ली में जुलाई, १८९० में हरिद्वार की गोरक्षिणी सभा के सचिव सेठ मोहनलाल की अनुमति से बाबू रामचंद द्वारा प्रकाशित किया गया था। गाय को मुसलमानों द्वारा मारे जाते हुए रूप में उसके द्वारा हिन्दुओं से बचाने हेतु आर्तनाद करते हुए चित्रित किया गया था। हिन्दुओं से उसके संरक्षण के लिए गोशालाएँ स्थापित करने के लिए चंदा देने का अनुरोध किया गया था।

४४५. दिल्ली से रिपोर्ट मिली की लक्ष्मीनारायण एवं पन्नालाल नामक दो

मारवाडियों ने रेवाड़ी की गोशाला के खर्च के लिए १५० रू. भेजे थे।

४४६. शाहपुर के उप निरीक्षक ने दिसम्बर में रिपोर्ट भेजी कि गुजरांवाला गाँव के लम्बरदार शारादू के सामने मोचियों, मिरासियों एवं फकीरों ने हिंदुओं के आवास के पास पशु हत्या की थी। इनके नाम अदालत में मुकद्दमा चलाने के लिए भेजे गए।

४४७. गुरदासपुर के उपनिरीक्षक ने रिपोर्ट दी कि उसने सुना था कि बनिया लोगों ने कसाइयों का बहिष्कार किया था और उन्हें किराना बेचना बन्द कर दिया था। उनकी याचिका को जाँच के लिए तहसीलदार के पास भेज दिया गया था।

४४८. २० दिसम्बर १८९३ को रोहतक जिले के बेरी का जोतराम महाजन झझ्झर तहसील के सियाह निवास में हरबंस लाल के पास बेरी में बन रही गोशाला के लिए चंदा लेने गया था। बेरी के महाजनों में मुत्सदी लाल, अयोध्या प्रसाद, एवं मंगत राय ने इस हेतु भूमि दान में दी थी।

९. विशिष्ट अधिकारियों का पत्राचार

गुड़गाँव के उपायुक्त जे.आर.ड्रमंड का नोट

१३ दिसम्बर १८९३

इस आन्दोलन से ही जुडा हुआ, देश के अन्य भागों में फैल रहा आन्दोलन मुम्बई और उत्तर पश्चिमी सूबों से लेकर गुडगांव तक स्थापित सोसाईटियों के तत्त्वावधान में हो रहा है यह ठोस रूप से कहना कठिन है।

या फिर यह भी नहीं कहा जा सकता कि सनातन धर्म, या आर्यसमाज या स्थानीय भार्गव सभा जैसी साम्प्रदायिक सोसाइटियों द्वारा की गई भाषणबाजी से यह हुआ होगा।

तथापि, कुछ ऐसे संकेत मिल रहे है कि यह प्रचार पूरे जिले में व्याप्त है। पशु हत्या के विरोध में आन्दोलन या संगठन कम अधिक मात्रा में विगत कुछ वर्षों में प्रगट रूप में हो रहे है।

यह आन्दोलन विगत दो वर्षों में व्यापक रूप में फैला तथा अत्यन्त तीव्र भी हुआ है।

यह शान्ति के लिए विभिन्न प्रकार से तथा विभिन्न स्थानों पर हानिकर सिद्ध हुआ है। इससे समस्या भी निर्माण हुई है। परन्तु जिला प्राधिकारियों के लिए यह कोई बड़ी बात नहीं थी।

जब तक जिला अधिकारी को गुड़गाँव में स्थानीय जानकारी है तथा वहाँ उसका प्रभाव है, और पुलिस के कार्य में लेफ्टीनेंट डेनीज और हेमिल्टन का समर्थन प्राप्त है (जैसे मुझे है), तब तक स्थानीय आन्दोलन भयजनक नहीं है। इससे छिटपुट घटनाओं के अतिरिक्त कोई बड़ी अशान्ति नहीं होगी। यदि कोई स्थानीय तू-तू-मैं-मैं या हंगामा हुआ भी तो इससे लोगों का ध्यान आकर्षित नहीं होगा, या इसका कोई प्रभाव नहीं पडेगा इससे कोई फरक नहीं पड़ेगा। जो कुछ भी चल रहा है वह निश्चित

रूप से उत्पाती है। इससे लोगों में असन्तोष और अस्वस्थता निश्चित रूप से बढेगी। जैसा मैंने पहले कहा है, सूबे के हिन्दुस्तानी लोगों में अभी भी अस्वस्थता है।

इस जिले में कोई भी दृढ गोरक्षिणी सभा कार्यरत नहीं है। ये संगठन अपनी खास शैली नहीं अपना रहे हैं, और चुपचाप कार्य कर रहे हैं इसके कुछ विशेष कारण हैं। इन आन्दोलनों का हमारे अधिकारियों द्वारा प्रारम्भ न होते हुए भी, वे प्रायः किसी को भी उसकी सहमति लिए बिना अध्यक्ष बना देते हैं। अभी, १८८४ में, अवध ब्राह्मणों के वाजपेयी गोत्र के बाबू परमानन्द, जो शिमला सरकारी खजाने के तत्कालीन लेखाकार थे, ने कोलकता तथा उसके समीपवर्ती अन्य स्थानों पर गोरक्षिणी सभाएँ आरम्भ करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। उसके इस प्रकार के व्यवहार के विषय में सरकार को जानकारी दी गई थी, क्यों कि उसके इस प्रकार के प्रचारवादी कार्यों के कारण से उसके लेखाकार के रूप में कार्य करने की दक्षता पर अवरोधक प्रभाव पड़ा। उसके इस मामले में कर्नल बीड़न द्वारा की गई कार्रवाई की जानकारी शिमला में मातहतों के साथ पत्राचार बनाए रखने के लिए नियुक्त व्यक्तियों के माध्यम से करनाल एवं गुडगाँव में दी गई। वकीलों तथा जिले के इसी प्रकार के लोगों का भी उल्लेख उसमें कर दिया गया था।

जब १८८५ के आसपास रेवाड़ी में एक गोसंरक्षण सोसाइटी का आंरभ किया गया तथा भारावास एवं अन्य गांवों में उसकी शाखाएँ स्थापित हुईं तब, अहीर, मानद मजिस्ट्रेट, रामगोपाल, घुसर (एक स्थानीय वकील) तथा अन्य लोग जो इन सोसाइटियों से जुड़े थे, इन में जाना बन्द कर दिया। उन्होंने गोशाला आदि का काम जारी रखा जो आज भी चल रही है।

तथापि, उनकी कार्यवाहियों में कई अवसरों पर मुसलमानों, विशेष रूप से कसाइयों, के साथ टकारव की स्थिति पैदा हुई। मैंकोनेची के समय कुछ सीमा तक प्राधिकारियों के साथ भी टकराहट हुई।

पिछले वर्ष, एक महाजन ज्वालाप्रसाद जिसके पास समीप में ही, या गुड़गाँव में पर्याप्त मात्रा में भूमि थी बादशाहपुर हल्के का वह जेलदार भी था, साथ ही, उसका आसपास दबदबा भी था, उसने बादशाहपुर में एक गोशाला शुरु की। एक पंचायत बुलाई। उसने आसपास के गाँवों से गुर्जर जाति के लोगों ने उसमें बड़ी संख्या में भाग लिया था। उन्होंने अपनी जाति के लोगों द्वारा किसी भी परिस्थिति में मुसलमानों को मवेशी बेचने पर जुर्माना भरने के लिए बाध्य करने का प्रस्ताव पारित किया था।

उत्तर पश्चिमी सूबों में जेलदार के कुछ रिश्तेदारों के उकसाने से कदाचित यह कार्रवाई की गई हो।

पता चलता है कि उसके मणिपुरी एवं अन्य स्थानों में सम्बन्धी रहते थे। वहाँ सेठ साहूकारों एवं कसाइयों के बीच तीव्र कटुता थी। इससे हल खींचनेवाले पशुओं के नकद सौदे प्रभावित हुए हैं। परिणाम स्वरूप कृषि साहूकारों का लाभ तगडा हो गया है। पशुमेलों में वृद्धि और सूचना संचार में सुधार के कारण भी सुविधा बढी है।

यह प्रतियोगिता गुड़गाँव जिले तक व्याप्त हो गई है। इस जिले में चारागाह के लिए गोचरभूमि बहुत कम बची है। कृषि व्यवसाय के कारण समृद्धि में वृद्धि होने से कृषकों ने कुए से पानी निकालने तथा हल चलाने के लिए पशुओं की खरीद सीधे व्यापारियों से नकद भुगतान करके करनी शुरू कर दी है। व्यापारी बछिया किये हुए बैलों या अतिरिक्त बछिया को लेकर खुशी से भुगतान की राशि कम कर देते हैं। मुसलमानों के साथ ही जाटों और अहीरों ने भी यह तरीका अपनाया है क्योंकि अभी अभी तक अधिकांश मुसलमान गाय या बैल को उसके माँस या चमड़े के लिए मारना असम्मानजनक समझते थे।

आजकल कुछ रियासतों में गुर्जरों और हिन्दू राजपूतों को छोड़कर सभी जाति के लोग दलालों के साथ ऐसा व्यापार मुक्तरूप से करते हैं। वे नूह, तोरु एवं झज्झर प्रदेश के क्षेत्रीय मवेशी व्यापारियों के एजेंटों को मवेशी की बिक्री करते हैं।

रोहतक के व्यापारियों ने रेवाड़ी के समीपवर्ती स्थान पर अपने खर्चे से एक मेला लगाने का प्रयास किया। इससे रेवाड़ी के कसाई भी इस प्रकार का व्यापार करने के लिए प्रोत्साहित हुए। रेवाड़ी के हिन्दू उन्हें कितना नियंत्रित कर सके थे यह कहना मेरे लिए सम्भव नहीं है, लेकिन रेवाडी.की गोशाला के लोगों ने अहीरों को ऐसे किसी भी मेले में जाने से निरुत्साहित किया था।

स्थानीय आन्दोलन के सम्बन्ध में सब से अनिष्ट ज्ञात तथ्य यह है कि पशु हत्या विरोधी प्रचार के विख्यात समर्थकों द्वारा समय समय पर लोगों के विरुद्ध पशुओं की चोरी करने या चुराए गए पशु को देखे जाने की अप्रियकर, घिनौनी, गलत शिकायतें की जाती हैं। मुझे स्पष्ट रूप से यह बताया जाता रहा कि इस प्रकार के मामले चलाए गए हैं तथा ऐसे मामलों पर याचिकाएँ भी दायर की गई हैं। लेकिन ऐसे मामलों की जाँच करने पर मुझे पता चला कि कुछ लोग इस प्रकार के मामले चलाने के अभ्यस्त हो गए हैं। अधिकांश रूप से क्षेत्र में हिन्दू स्थानीय निवासी लोगों द्वारा

संदिग्ध दावे प्रस्तुत किए गए हैं। फर्रुखनगर से भी इसी प्रकार के गलत मामलों के संकेत मिले हैं। अभी हाल ही में इस प्रकार की एक शिकायत दबे स्वर में पुलिस को की गई, जिस में फर्रुखनगर के समीपवर्ती गाँव का एक दबंग राजपूत मुखिया ऐसे काम में लिप्त पाया गया था। यह व्यक्ति बुलंदशहर जिले से सम्बन्धित कुछ कैथ लोगों का खिलौना बना हुआ था जिन्होंने फर्रुखनगर के पास में भूमि खरीदी थी। इनमें से एक व्यक्ति गुड़गाँव कार्यालय का पूर्व नाजिर था तथा दूसरा पश्चिमी जमुना के कार्यालय में कार्यरत एक लिपिक का भाई था।

पुलिस ने रिपोर्ट भेजी कि इस जिले में आन्दोलनकारियों को रोहतक जिले के कुटानी के मानद मजिस्ट्रेट इंदरसिंह राजपूत का समर्थन प्राप्त है। कुटानी परिवार का एक सदस्य हाल ही में फर्रुखनगर इलाके में भूमि प्राप्त करने के लिए बहुत प्रयास कर रहा है। मुझे बताया गया कि इसका एक उद्देश्य गोवंश को यथासम्भव बाहर ले जाने से रोकना है। वह उत्तर पश्चिमी सूबों में उपजिलाधीश के पद पर कार्यरत है।

इस प्रश्न पर और गहन जाँच किए बिना इस समय कुछ भी कहना सरल नहीं होगा। किसी भी निर्णय पर सुनिश्चित रूप से पहुँचना भी कठिन होगा। लेकिन मैंने मजिस्ट्रेट के कार्य का वितरण इस प्रकार किया है कि पशु हत्या विषयक कोई भी मामला, चाहे वह असत्य हो, या वैरभाव से गलत बयान के रूप में हो, एकदम सामने आ जायेगा। व्यर्थ में ही लोगों का ध्यान आकर्षित न हो इस लिए ऐसी व्यवस्था की गई है।

मैंने बादशाहपुर के जिलेदार से उसकी कार्यवाहियों के विषय में बात की। मैं ने बताया कि गुड़गाँव जैसे जिले में उस प्रकार के प्रयत्न से या ऐसे व्यापार से कृषिगत हित को कोई नुकसान नहीं पहुँचता है। मैं ने यह भी कहा कि उसके अपने मामले में कार्रवाई की जाएगी। यद्यपि मैं ऐसा कोई विचार प्रस्तुत नहीं कर सकता, मैं साहूकारों के लाभ को दूसरे स्तर पर यथावत् रखना चाहता हूँ। उसे मेरी बात समझ में आ गई और उसने अपनी गलती स्वीकार की। गायों और गोमाँस के मामलों में अपने पड़ोसियों को कभी भी न फँसाने की उसने शपथ ली। मुझे विश्वास है कि ज्वाला प्रसाद ने सद्भाव पूर्ण व्यवहार किया। उसने स्वीकार किया कि इन संगठनों ने ब्रिटिश सरकार का समर्थन प्राप्त करके प्रख्यात परिषदों के विकास के लिए एक अच्छा वातावरण बनाना चाहिए।

इस प्रकार की छवि वाले लोग ऐसे मामलों की राजनीतिक दृष्टि से एवं विशेष

उदारता के साथ चर्चा कर रहे हैं। मुझे पता है कि वे अपने स्वभाव के अनुरूप ही कल्पना करेंगे कि सरकारी उदारता का आशय किसी भी ऐसे कार्य को पूरा करना होता है जो भावनाओं के अनुरूप हो या विशिष्ट वर्ग के हित में हो, बशर्ते इस से किसी की भी अभिव्यक्ति में और सकारात्मक पालन करने में कोई विवाद या विरोध न हो। कुछ माह पूर्व दूसरे पक्ष द्वारा इसी आधार पर बात की गई थी जब ईद के अवसर पर विभिन्न कस्बों में पशुओं की हत्या करने के व्यापक प्रयास किए गए थे, तथा १८७२ एवं १८९० के अधिनियम-४ के नियमों के तहत आवेदन (अस्पष्ट) दिए गए थे।

इस प्रश्न से जुड़े सभी मामलों का मैंने पूर्ण रूप से अध्ययन नहीं किया है जो मेरे आने से पहले हुए। लेकिन अक्टूबर १८९० में गुड़गाँव जिले का कार्यभार सँभालने के साथ ही मैं इनसे जुड़ गया। यह अस्पष्टता काफी लम्बे समय से बनी हुई थी। मुझे लगा कि स्थानीय हितों के प्रश्न मेरे लिए अस्पष्ट है। अतः इन्हें उन लोगों के समक्ष यथातथ रूप में प्रस्तुत करना इतना सरल नहीं है।

उपसंहार करते हुए, सरकारी जाँच में पाए गए मुद्दों को मैं अत्यन्त संक्षेप में रखना चाहूँगा :

(अ) मुख्य गोरक्षिणी आन्दोलन फैला हुआ था, फिर भी, गुड़गाँव जिले में मन्दरूप में था। अब तक तुलनात्मक रूप से वह हानिकर नहीं है।

(आ) दूसरे प्रान्तों की संगठित सोसाइटियाँ गुड़गाँव में स्पष्ट रूप से पैर नहीं जमा पाई हैं।

(इ) स्थानीय जाति विशेष के लोग या धार्मिक सोसाइटियाँ तथा आर्यसमाज की हाल ही में पुनर्जीवित कुछ शाखाएँ अभी तक पशु हत्या विरोधी आन्दोलन को प्रकट रूप में नहीं ला पाई है।

(ई) जिले में हिन्दुओं के सभी वर्गो में भावनाओं में निश्चित रूप से वृद्धि हुई है। गोवंश की हत्या तथा बिक्री के विषय पर स्पष्ट रूप से निर्देशित आन्दोलन के सम्बन्ध में वे अब अपनी इस व्यापक भावना के अनुसार ही सोचते हैं।

(उ) अभी उल्लिखित यह भावना ठीक नहीं है। इससे कभी भी गडबड हो सकती है। इससे मुसलमानों के कुछ वर्गो में विद्वेष पनपता है, दूसरी ओर कुछ मुसलमान इससे भड़क जाते हैं। उनका इस प्रकार से भड़कना या तो व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण होता है या फिर भावनात्मक आधार पर होता है।

स्थानीय रूप से अत्यन्त प्रभावी दरवेश वर्ग के लोग तथा अनेक मुसलमान राजपूत हिन्दू आन्दोलनकारियों के साथ इस मामले में जुड जाते है।

कर्नल जे. बी. हचिंसन को ए.ई.हर्री का पत्र

छावनी लाहौर,
२६ नवम्बर १८९३

प्रेषक : ए.ई.हर्री, कार्यकारी उपायुक्त, लाहौर
सेवा में, कर्नल जे. बी. हचिंसन, आयुक्त एवं अधीक्षक, लाहौर मण्डल

लाहौर में कोई गोसंरक्षण सोसाटिटी कार्यरत नहीं है। मई १८९१ में आर्यसमाज की प्रेरणा से शाकाहारी सोसायटी, लाहौर के सदस्यों ने एक सभा आयोजित की उस समय स्वामी अलाराम ने गोसंरक्षण पर एक भाषण दिया था। नगर में एक गोशाला स्थापित करने का निर्णय लिया गया जिसमें गायों और बैलों को खरीदकर रखा जाएगा। गायों को गंगा की ओर भेजा जाएगा ताकि ईद के त्योहार पर उनकी हत्या न हो। चन्दा एकत्रित करने का भी निर्णय लिया गया। लेकिन इस विषय में आगे कोई कार्यवाही नहीं हुई। अब लाहौर में कोई गोशाला नहीं है। रल्लाराम गोसंरक्षण सोसाइटी के एक सदस्य हैं। यह आन्दोलन पंजाब में निस्सन्देह रूप से फैल रहा है परन्तु मैं इसे भयप्रद नहीं मानता।

मुझे लगता है कि गोसंरक्षण सोसाइटियों के ऊपर अत्यन्त सतर्कतापूर्वक निगरानी रखने की आवश्यकता है। ये निश्चित रूप से मुसलमानों के प्रति बैर रखते हैं। यदि उनके उकसाने से मुसलमान हमारे शासन के प्रति असन्तुष्ट हो जाते हैं तो इनका महत्त्व बहुत ही बढ जायेगा। भारत की शान्ति नहीं बनी रहेगी। मुझे लगता है कि यदि ये दोनों आन्दोलन एक साथ होते हैं तो अत्यन्त भयजनक स्थिति निर्माण होगी।

मुझे लगता कि अभी तक तो ऐसी स्थिति पैदा नहीं हुई है।

विशेष सूचना : पंजाब सरकार के मुख्य सचिव द्वारा आपके पूर्वाधिकारी के पते पर २ नवम्बर १८९३ के गोपनीय परिपत्र के उत्तर में यह भेजा गया है।

कर्नल जे. बी. हचिंसन को बी.टी.एम. लैंग का पत्र

छावनी, अमृतसर जिला,
१० दिसम्बर १८९३

प्रेषक : कर्नल बी.टी.एम. लैंग, उपायुक्त, अमृतसर
सेवा में, कर्नल जे.बी.हचिंसन, कार्यकारी आयुक्त एवं अधीक्षक, लाहौर मण्डल

पंजाब में गोहत्या विरोधी सोसाइटियों के सम्बन्ध में मुख्य सचिव के २ नवम्बर के गोपनीय परिपत्र के उत्तर में मेरे द्वारा की गई जाँच से मेरे पहले के विचार पुष्ट हुए हैं। जैसे कि हमारी जाँच से पता चला है कि अमृतसर नगर या जिले में गायों के संरक्षण के लिए कोई भी नियमित संगठित सोसाइटी कार्यरत नहीं है। इस प्रकार की एक सोसाइटी की स्थापना करने का एक प्रयास लगभग छह वर्ष पूर्व 'सिंह सहाय' समाचार पत्र के प्रख्यात व्यक्ति बाबा नारायण सिंह द्वारा किया गया था। परन्तु इसका कोई स्थाई रूप नहीं बन सका। इस तरह की कोई भी सोसाइटी अब अस्तित्व में नहीं है। परन्तु मैं निश्चित रूप से मानता हूँ कि हिन्दू समाज, या सामान्यतः प्रत्येक हिन्दू गोसंरक्षण के मुद्दे पर सहायता करने के लिए सदैव तत्पर है। जब भी उसे कहा जाएगा, वह सहायता करेगा। आर्यसमाज, सिंहसभा, खालसा दीवान एवं धर्म सभा जैसी समस्त हिन्दू सोसाइटियाँ अपनी सभाओं में समय समय पर गोसंरक्षण की चर्चा करती हैं। सभी सोसायटियों की सभाओं में प्रायः इसी विषय पर भाषण दिए जाते हैं। समाचार पत्र इनमें अत्यन्त रुचि लेते हैं। कभी कभी इस विषय पर आलेख भी प्रकाशित करते हैं। अब तक इसका स्पष्ट रूप से कुछ भी ठोस परिणाम नहीं निकला हैं, अभी तक गोसंरक्षण के लिए कोई भी सुनियोजित संगठन नहीं दिखता है, फिर भी उत्तेजना फैलाने के लिए सोसाइटियों द्वारा निरन्तर भाषण आयोजित करने एवं समाचार पत्रों में आलेख प्रकाशित करने से उत्तेजना बनी रहती है।

विलम्ब से उत्तर देने के लिए क्षमा करें। कारण यह था कि मैं कैम्प में था। साथ ही एल्सॉप एवं निकोल्स को भी मैंने लिखा था और इस विषय पर उनसे परामर्श लिया था।

कर्नल एल.जे.एच.ग्रे, सी.बी.आई. आयुक्त एवं अधीक्षक को कैप्टन सी. जी. पार्सन्स का पत्र

अम्बाला शहर,
१२ दिसम्बर १८९३

प्रेषक : कैप्टन सी.जी.पार्सन्स, उपायुक्त, अम्बाला
सेवा में, कर्नल एल.जे.एच.ग्रे, सी.बी.आई. आयुक्त एवं अधीक्षक, दिल्ली मण्डल

मैं फंशॉ के गोपनीय परिपत्र दिनांक २ नवम्बर १८९३ के सन्दर्भ में गोसंरक्षण संगठनों के सम्बन्ध में अपना उत्तर आपके पते पर भेज रहा हूँ।

मैं इसके साथ अर्नेस्ट होल्डर, अतिरिक्त सहायक आयुक्त एवं मीकिंस, पुलिस निरीक्षक द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट को भी संलग्न करके भेज रहा हूँ।

यह रिपोर्ट मेरे अपने विचारों की भी पुष्टि करती है। मैं नहीं मानता कि इस जिले में कोई भी संगठित हलचल हो रही है। हां, वह जगाधरी या थानेसर में हो सकता है, लेकिन मेरा विश्वास है कि इस मामले पर अभी कार्यवाही नहीं हुई है।

कांग्रेस विषयक मेरे गोपनीय पत्राचार में मैंने मत व्यक्त किया है कि आर्यसमाज जैसी संस्थायें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से गोरक्षा के विषय में प्रचार करती हैं परन्तु व्यापक जांच के बाद भी मुरलीधर नामक वकील को छोडकर अन्य कोई भी प्रत्यक्ष रूप से सक्रिय नहीं पाया गया है। कांग्रेस संगठन के सम्बन्ध में मेरे पत्र में मैंने मुरलीधर की इस बात का रिपोर्ट किया था। वह एक अत्यन्त उत्साहपूर्ण एवं सक्रिय कांग्रेसी है। वह देशभर में घूमता है तथा लाहौर में भाषण देता है। वह अम्बाला में कांग्रेस का प्रमुख प्रतिनिधि है।

यह समझना अत्यन्त कठिन है कि वह अपनी उग्र राजनीतिक विचारधारा का समन्वय गोहत्या विषयक रूढिवादी विचार धारा के साथ कैसे करता है। यह कदाचित इस बातका एक प्रमाण है कि कांग्रेसी अपनी वास्तविक आकांक्षाओं को ढंकने का कैसा स्वाँग भरते है।

उत्तर में विलंब के लिए मुझे खेद है, परन्तु जानकारी एकत्रित करने में होल्डर ने कुछ विलम्ब किया है।

कैप्टन सी. जी. पार्सन्स, उपायुक्त,

अम्बाला को ई.होल्डर का पत्र

९ सिदंबर १८९३

प्रेषक : ई. होल्डर, अतिरिक्त सहायक आयुक्त, अम्बाला
सेवा में, कैप्टन सी. जी. पार्सन्स, उपायुक्त, अम्बाला.

गोसंरक्षण आन्दोलन विषयक पंजाब सरकार के २ नवम्बर १८९३ के गोपनीय परिपत्र के उत्तर में मैं निम्नलिखित रूप में रिपोर्ट करना चाहता हूँ :

२. इस जिले में विशेष रूप से गोसंरक्षण के लिए गठित कोई सोसाइटी कार्यरत नहीं है।

३. सामान्य धार्मिक या साम्प्रदायिक उद्देश्यों के लिए गठित सोसाइटियाँ निम्नानुसार हैं :

अम्बाला शहर –

(१) आर्य समाज (२) अंजुमन इस्लामिया
(३) कायस्थ सभा (४) सिंह सभा

अम्बाला छावनी

(५) आर्य समाज (६) कायस्थ सभा
(७) सिंह सभा

जहाँ तक मैं पता लगा पाया हूँ, इनमें से किसी की भी किसी विशेष बैठकों या अन्य बैठकों में गोहत्या विषयक प्रश्न पर चर्चा नहीं हुई।

अम्बाला शहर में अत्यन्त सतर्कता बरतते हुए जाँच की गई है। पुलिस को सादी पोशाक में हाल ही में हुई बैठकों में भेजकर भी पता लगाया गया है।

अम्बाला छावनी के सम्बन्ध में अभी कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ है परन्तु मैंने मौखिक रूप से कई प्रतिष्ठित लोगों से अप्रत्यक्ष जाँच की है। पता चला है कि छावनियों में इस आन्दोलन के विषय में किसी को कोई जानकारी नहीं है।

छावनी से उत्तर न मिलने के कारण इस रिपोर्ट को प्रस्तुत करने में विलम्ब हुआ है। (मैंने पुलिस निरीक्षक मीकिंस को लिखा है। मैंने अपना पत्र पंजीकृत डाक से भेजा है।)

मैं आपके १४ सितम्बर के आदेशवाली पर्ची के साथ सरकारी परिपत्र वापस

भेज रहा हूँ।

विशेष सूचना : थानेसर में किसी भी तरह की कोई सोसाइटी कार्यरत नहीं है।

ई. होल्डर, अतिरिक्त सहायक आयुक्त,
अम्बाला को पी.डबल्यू. मीकिंस का पत्र

११ दिसम्बर १८९३

प्रेषक : पी. डब्ल्यू मीकिंस, पुलिस निरीक्षक, अम्बाला छावनी,
सेवा में, ई. होल्डर, अतिरिक्त सहायक कमिश्नर, अम्बाला

मैंने अपने उपनिरीक्षक के माध्यम से गुप्त जाँच कराई। उन्होंने मुझे सूचित किया है कि छावनी में गोहत्या सोसाइटियाँ नहीं हैं। तथापि, इसका कहना है कि मुरलीधर वकील तथा अम्बाला नगर के कुछ अन्य लोग लगभग दो या तीन मास पूर्व चंदा लेने के लिए छावनी में आए थे। मामला कुछ भी हो लेकिन छावनी के हिन्दुओं ने इसमें अत्यन्त रुचि दिखाई थी। तो भी तथ्य यह है कि इसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। वास्तव में, बहुत ही छोटी सी रकम इकट्ठी हुई थी। लेकिन मुरलीधर को प्रसन्न करने के लिए थोड़ी अधिक दी गई। मुझे सही सही पता नहीं लग सका है कि कितनी रकम इकट्ठी की गई थी।

मुझे आशा है कि यह जानकारी इससे पहले प्रस्तुत न कर सकने के लिए आप मुझे क्षमा करेंगे।

आयुक्त एवं अधीक्षक, दिल्ली मंडल को ए. एंडर्सन क़ा पत्र

छावनी,
२ दिसम्बर १८९३

प्रेषक : ए. एंडर्सन, उपायुक्त, दिल्ली.
सेवा में, आयुक्त एवं अधीक्षक, दिल्ली मण्डल

मैं इसके साथ २ नवम्बर १८९३ के अर्धसरकारी गोपनीय परिपत्र तथा मुझे सीधे प्राप्त १८ नवम्बर १८९३ के अर्धसरकारी गोपनीय परिपत्र के उत्तर में गोसंरक्षण सोसाइटियों के सम्बन्ध में पुलिस से प्राप्त रिपोर्ट इसके साथ संलग्न करके अग्रेषित कर रहा हूँ।

२. गोशालाएँ निम्नलिखित स्थानों में हैं -

१. दिल्ली में

(अ) सराय रोहिल्ला खान

मात्र आरम्भ ही की गई लेकिन इसके संचालक मारवाडियों को मेरे परामर्श देने के परिणाम स्वरूप बन्द कर दी गई।

(आ) कटरा अशराफ.

२. सोनीपत में,

३. नजफगढ़ में,

४. बल्लभगढ़ में,

३. मारवाड़ी विशेषरूप से कटरा तम्बाकू के मारवाड़ी, दिल्ली की गोशाला के लिए कुछ समय से निधि एकत्रित कर रहे थे। उन्हें बिक्री आदि पर चंदा देने का वायदा किया गया है। एक बड़ी मात्रा में राशि पहले ही एकत्रित कर ली गई थी। लेकिन पिछले कुछ समय से इसके प्रबन्धक देय चंदा एकत्रित नहीं कर रहे थे। जब दिल्ली में कुछ तनाव पैदा हुआ, मैंने उनके मुखिया को पकड़ा। उन्होंने जिस जमीन को गोशाला के लिए खरीदा था वह वास्तव में सरकारी जमीन नहीं थी लेकिन इसे सरकारी जमीन के रूप में दिखाया गया था (प्रति, फटी हुई)। मैंने उनसे यह कार्य बन्द करने के लिए कहा। उसी समय मैंने उनसे यह भी कहा कि यह गतिविधि इस समय बिल्कुल गलत है। अतः उन्होंने काम रोक दिया और चंदा लेना भी बन्द कर दिया। ये लोग हाल ही में मेरे पास आए थे। उन्होंने पूछा था कि क्या वे यात्रियों के लिए रेलवे स्टेशन के पास एक धर्मशाला बना सकते हैं। मैंने उनसे कहा कि मैं इसके लिए जगह देखकर बात करुँगा। उनकी इस बात से एक बात स्पष्ट थी कि उन्होंने पुनः चंदा अवश्य इकट्ठा किया है। मेरे विचार से दिल्ली में उनका यह आन्दोलन औचित्यपूर्ण है। यह मात्र बूढ़े पशुओं को आश्रय देने के लिए है। इसका किसी राजनीतिक कारणों से कोई सम्बन्ध नहीं है। उल्टे यह विचार कदाचित राजनीतिक आन्दोलन की परिणति है। अन्य सोसाइटियाँ दिल्ली की गोरक्षिणी सभाओं में प्रत्यक्ष रूप से कोई रुचि नहीं लेती हैं। कृपया जेक्सन की टिप्पणी का अवलोकन करें। अभी भी यह आन्दोलन फैल रहा है। इसकी निगरानी रखने की आवश्यकता है। विशेषरूप से सोनीपत में, जहाँ नगर और गाँव दोनों में ही गायों के संरक्षण के लिए आन्दोलन चल रहा है। सिंह राम जेलदार ने इतनी बड़ी १५०० रूपए की राशि दी होगी इस विषय में मुझे सन्देह है। लेकिन मुख्य न्यायालय से बरी होने पर कदाचित उसने कुछ

न कुछ राशि तो दी ही होगी। इस विषय की पुनः पूर्ण जाँच करने की अपेक्षा है। यदि आवश्यक हुआ तो आगे भी रिपोर्ट भेजी जाएँगी।

एच. जैक्सन, जिला पुलिस अधीक्षक का नोट

२१ नवम्बर १८९३

बल्लभगढ़ में भी एक गोशाला शुरू की गई है। उपनिरीक्षक शौकत हुसैन को यथाशीघ्र इसके सम्बन्ध में रिपोर्ट प्रस्तुत करने को कहा गया है।

इस आन्दोलन में लोगों की रुचि है या नहीं यह दिखाने के लिये हमारे पास कुछ नही है। दिल्ली के आर्य समाजियों का इन विशेष सभाओं के साथ कोई भी सम्बन्ध है। परन्तु जहाँ तक धर्म महामंडल के लोगों का सवाल है, इस सम्बन्ध में ध्यान में रखा जाए कि मैंने हाल ही में गोपनीय डायरी के साथ जो पुस्तिका अग्रेषित की थी, उसका संपादन दीन दयाल, महासचिव एवं पण्डित रामचंद्र, जो कि धर्म महामंडल का अत्यन्त प्रभावी व्यक्ति है, द्वारा किया गया है। इसका इस पुस्तिका में उल्लेख है। वह सोनीपत गोरक्षिणी सभा में प्रत्यक्ष रूप में रुचि लेकर कार्य करता है, इसकी पुष्टि भी इस पुस्तिकाओं आदि से हो जाती है क्योंकि उसे इनकी बिक्री एवं निपटान के लिए भेजा गया है।

मैं इस पत्र के साथ एक अन्य पुस्तिका संलग्न करके आपके पास भेज रहा हूँ। इसका सम्पादन सोनीपत सभा के लिए किया गया है। अनुमानतः एक मुस्लिम व्यक्ति ने यह लिखी है। लेकिन मुझे बहुत सन्देह है कि क्या कोई मुसलमान एसे विचार प्रस्तुत कर सकता है।

वस्तुतः सभी हिन्दू इस आन्दोलन में इतनी रुचि लेते नहीं हैं, न वे इतने सक्षम भी होते हैं। परन्तु ख्यातिप्राप्त लोग अपने आप को खुले रूप से आन्दोलन के पक्षधर के रूप में प्रस्तुत न करने की सावधानी रखते हैं।

इस पुस्तिका का प्रारम्भ ईश वन्दना से होता है। वह इस प्रकार है 'इसका लेखक जन्म से एक मुसलमान है, फिर भी, उसे गाय को संरक्षित देखकर आनन्दानुभूति होगी क्योंकि भारत का सर्वनाश किया जा रहा है।' तत्पश्चात् लावनी शैली में एक कविता रखी गई है जिसमें गाय उन श्रीकृष्ण का आह्वान कर रही है जिनका इस पृथ्वी पर अवतार गायों और उसकी संतति की देखभाल के लिये एक पालक के रूप में हुआ था। गाय इसमें अपनी वेदना व्यक्त करती है कि उसने अपने

दूध आदि पिलाकर लोगों को बलशाली बनाया है जबकि वे उसे बूढ़ी होने पर कसाई को बेच देते हैं। उड़ीसा के लोगों ने गायों के लिए गोशाला का निर्माण किया है लेकिन उन्हें भय है कि कुछ दुष्ट प्रकृति के लोग भी तो वहाँ है ही।

गाय को बचाने के लिए ईश्वर से एक अन्य वरदान माँगा गया है क्योंकि इसने प्राचीन समय में दुष्टात्माओं से पुण्यात्माओं की रक्षा की थी। अब बिना किसी अपराध के हजारों गायों की हत्या की जा रही है। यह उसका दारुण दुर्भाग्य है। हे दयालु ईश्वर, उसकी रक्षा कर।

इसके बाद एक अन्य कविता में लाँघड़ी शैली में परम कृपालु ईश्वर से निवेदन किया गया है कि स्वयं ईश्वर गायों का संरक्षक होते हुए भी उनकी हत्या की जा रही है।

'हम जंगलों में चरती हैं, किसी को भी कोई नुकसान नहीं करतीं, हम कहीं भी रास्तों में डाका नहीं डालतीं, तो भी, हे ईश्वर, आपके संरक्षण में होने पर भी हमें क्यों मारा जाता है।'

अगली कविता लावनी गीत है जिसका अभिप्राय यह है कि गायों को विधर्मी मूर्खों ने दूषित कर दिया है।

गाय से मनुष्यों को होनेवाले लाभों को विस्तार से प्रस्तुत करती हुई वह निवेदन करती है कि ये सब लाभ उसने मनुष्यों को प्रदान किए हैं, फिर भी, पापी लोग उसकी हत्या करते हैं तथा उसका माँस भक्षण करते हैं। वह उन सभी लोगों को शाप देती है जो उसे उत्पीड़ित करते हैं।

तत्पश्चात् एक सम्बोधगीत है जो निम्नानुसार हैं :

'अरे लोगों, गाय का दुख निवेदन सुनो । मेरा कोई दोष नहीं है तो भी वे मेरी हत्या करते हैं।

अरे, ओ, भारत के लोगों । आपके सम्मुख ही गाय का वध किया जा रहा है। आप मुझे भूलकर कहाँ निद्राग्रस्त हैं ? यदि तुम मुझे नहीं बेचते तो मेरी हत्या ही क्यों होती।'

इसमें कवि साद्दी को यह जानकर अत्यन्त आनन्द हुआ कि उड़िया में गोशाला शुरू की गई है। एक अन्य सम्बोधगीत :

'यह क्या भीषण अंधेर ! निर्दोष गायों पर दया न दिखाकर उनकी हत्या की जाती है। क्या ममतामयी महारानी निद्राधीन है! पशुहत्या से पूरा देश कमजोर हो गया है।'

पृष्ठ संख्या ९ पर ये कविताएँ समाप्त होती है। ये साद्दी द्वारा रचित है।

उस सभा के सम्बन्ध में सोनीपत के जाटों की कुछ पंक्तियाँ है, जिनमें गोसंरक्षण जैसे पवित्र एवं उपयोगी कार्य के प्रति प्रभावी कदम उठाने की बात स्वीकार की गई है। सभी जमींदारों को एकजुट होने के लिए आह्वान किया गया है। यह भी स्पष्ट किया गया कि कसाइयों द्वारा बूढ़ी गायों की हत्या की दुखभरी कहानी उनसे जुड़ी हुई है। यह भी दर्शित किया गया कि हिन्दू किस प्रकार अपने धर्म से अलग होकर विधर्मी हो रहे थे तथा उनमें गाय के दुख दूर करने का पर्याप्त साहस शेष नहीं बचा था। श्रोताओं को चंदा देने के लिए अपील की गई। ५०५ रूपए की राशि इस हेतु एकत्रित हुई थी। निम्नलिखित अपील के साथ कविता समाप्त हुई -

'गाय का वेदों में गुणगान किया गया है। उसके प्रति अब बहुत ही अन्याय हो रहा है। कृपा करके गाय की रक्षा करो। गाय की सेवा करो। अरे, ओ, नर नारियों। अपनी कथनी और करनी दोनों से, आप यह सब करो। इससे तुम्हें मोक्ष की प्राप्ति होगी।'

पुस्तिका के अन्त में निम्नलिखित पंक्तियाँ है : 'हिन्दू पाप में डूब गए है। निर्दोष गायें मारी जा रही हैं। अपनी धार्मिक आस्था पर अड़िग रहो। गाय को नीच लोगों को मत बेचो। यह असह्य दुर्गति है कि दुष्ट गाय की हत्या करते हैं। एक गोशाला अब शुरु हुई है। एक धर्मादा संस्था भी बनी है।'

दिल्ली जिले की गोरक्षिणी सभाओं की गोपनीय पुलिस रिपोर्ट

दिल्ली सराय रोहिल्लाखान के पास

पिछले तीन वर्षों से दिल्ली में एक गोशाला चलाने के लिए धन एकत्रित करनेवाले लोगों में हरदयालसिंह, सुपुत्र दीनानाथ, पंसारी, अम्बेसहाय सुपुत्र गोपालदास, बनिया, विष्णु, शंकरदास, एवं गुरदयाल, दिल्ली के खारी बावली कटरा तम्बाकू के मारवाड़ी दुकानदार तथा अन्य हिन्दू शामिल थे।

वे खारी बावली में बेची गई वस्तुओं पर प्रति रूपए पर तीन पाई की दर से कर लगाते थे। (कुछ वस्तुओं पर तीन पाई प्रति तोला, कुछ पर तीन पाई प्रति सेर तथा कुछ पर छह पाई गट्ठर तथा इसी प्रकार से अन्य वस्तुओं पर कर लगाया जाता है।) उन्होंने लगभग १०,००० रू. एकत्रित किए थे। यह राशि नेशनल बैंक में जमा कर दी गई थी।

सराय रोहिल्ला खान के पास एक जमीन का टुकड़ा (१२ बीघे) २००० रू. में

गोशाला निर्माण के लिए खरीदा गया है। इसका निर्माण कार्य आरम्भ हो गया था परन्तु अभी पूर्ण नहीं हुआ है।

उन्होंने चंदा एकत्रित करने के लिए पाँच रूपए प्रति माह के वेतन पर एक चपरासी की नियुक्ति की है।

अन्य सदस्यों के नाम अभी तय नहीं किए गए हैं। अभी तक नियम भी नहीं बनाए गए हैं।

गोरक्षिणी सभा के पास कोई भी गाय या मवेशी नहीं है।

कटरा अशर्फी

इस कटरा में लगभग २० गायें रखी गई हैं। इनके चारे आदि के समस्त खर्चे की व्यवस्था कटरा के समस्त मारवाड़ी दुकानदारों द्वारा की जाती है। चतरभुज, रामनारायण, जीवनलाल तथा अन्य कुल मिलाकर लगभग १० लोग पशुओं को चारा खिलाने आदि की देखभाल करते हैं।

सोनीपत

इस सभा में २२ सदस्य हैं जिनमें से ४ संरक्षक हैं, ६ पंच हैं तथा शेष १२ सदस्य हैं।

संरक्षक

१. लाला बनारसीदास, सुपुत्र राजकरनदास सराओगी।
२. पण्डित केदारनाथ, सुपुत्र ब्रजनाथ ब्राह्मण।
३. मुत्सद्दी, सुपुत्र जोगीदास, सराओगी।
४. शिवनाथ, लम्बरदार, जाट।

पंच

५. रामसरणदास, सुपुत्र रामप्रसाद, बनिया, वैष्णव।
६. नानकचंद, सुपुत्र रामदयाल, बनिया, वैष्णव।
७. चिरंजीलाल, सुपुत्र प्रेमसुख, बनिया, वैष्णव।
८. मुत्सद्दी लाल, सराओगी।
९. लाखी, लम्बरदार, जाट।
१०. रिक्त (काबुलसिंह, ब्राह्मण अब स्वर्गीय)

सदस्य

११. उमरावसिंह, सुपुत्र धर्मदास सराओगी।

पृष्ठ संख्या ९ पर ये कविताएँ समाप्त होती है। ये साद्दी द्वारा रचित है।

उस सभा के सम्बन्ध में सोनीपत के जाटों की कुछ पंक्तियाँ है, जिनमें गोसंरक्षण जैसे पवित्र एवं उपयोगी कार्य के प्रति प्रभावी कदम उठाने की बात स्वीकार की गई है। सभी जमींदारों को एकजुट होने के लिए आह्वान किया गया है। यह भी स्पष्ट किया गया कि कसाइयों द्वारा बूढ़ी गायों की हत्या की दुखभरी कहानी उनसे जुड़ी हुई है। यह भी दर्शित किया गया कि हिन्दू किस प्रकार अपने धर्म से अलग होकर विधर्मी हो रहे थे तथा उनमें गाय के दुख दूर करने का पर्याप्त साहस शेष नहीं बचा था। श्रोताओं को चंदा देने के लिए अपील की गई। ५०५ रूपए की राशि इस हेतु एकत्रित हुई थी। निम्नलिखित अपील के साथ कविता समाप्त हुई -

'गाय का वेदों में गुणगान किया गया है। उसके प्रति अब बहुत ही अन्याय हो रहा है। कृपा करके गाय की रक्षा करो। गाय की सेवा करो। अरे, ओ, नर नारियों। अपनी कथनी और करनी दोनों से, आप यह सब करो। इससे तुम्हें मोक्ष की प्राप्ति होगी।'

पुस्तिका के अन्त में निम्नलिखित पंक्तियाँ है : 'हिन्दू पाप में डूब गए है। निर्दोष गायें मारी जा रही हैं। अपनी धार्मिक आस्था पर अड़िग रहो। गाय को नीच लोगों को मत बेचो। यह असह्य दुर्गति है कि दुष्ट गाय की हत्या करते हैं। एक गोशाला अब शुरु हुई है। एक धर्मादा संस्था भी बनी है।'

दिल्ली जिले की गोरक्षिणी सभाओं की गोपनीय पुलिस रिपोर्ट

दिल्ली सराय रोहिल्लाखान के पास

पिछले तीन वर्षों से दिल्ली में एक गोशाला चलाने के लिए धन एकत्रित करनेवाले लोगों में हरदयालसिंह, सुपुत्र दीनानाथ, पंसारी, अम्बेसहाय सुपुत्र गोपालदास, बनिया, विष्णु, शंकरदास, एवं गुरदयाल, दिल्ली के खारी बावली कटरा तम्बाकू के मारवाड़ी दुकानदार तथा अन्य हिन्दू शामिल थे।

वे खारी बावली में बेची गई वस्तुओं पर प्रति रूपए पर तीन पाई की दर से कर लगाते थे। (कुछ वस्तुओं पर तीन पाई प्रति तोला, कुछ पर तीन पाई प्रति सेर तथा कुछ पर छह पाई गट्ठर तथा इसी प्रकार से अन्य वस्तुओं पर कर लगाया जाता है।) उन्होंने लगभग १०,००० रू. एकत्रित किए थे। यह राशि नेशनल बैंक में जमा कर दी गई थी।

सराय रोहिल्ला खान के पास एक जमीन का टुकड़ा (१२ बीघे) २००० रू. में

गोशाला निर्माण के लिए खरीदा गया है। इसका निर्माण कार्य आरम्भ हो गया था परन्तु अभी पूर्ण नहीं हुआ है।

उन्होंने चंदा एकत्रित करने के लिए पाँच रूपए प्रति माह के वेतन पर एक चपरासी की नियुक्ति की है।

अन्य सदस्यों के नाम अभी तय नहीं किए गए हैं। अभी तक नियम भी नहीं बनाए गए हैं।

गोरक्षिणी सभा के पास कोई भी गाय या मवेशी नहीं है।

कटरा अशर्फी

इस कटरा में लगभग २० गायें रखी गई हैं। इनके चारे आदि के समस्त खर्चे की व्यवस्था कटरा के समस्त मारवाड़ी दुकानदारों द्वारा की जाती है। चतरभुज, रामनारायण, जीवनलाल तथा अन्य कुल मिलाकर लगभग १० लोग पशुओं को चारा खिलाने आदि की देखभाल करते हैं।

सोनीपत

इस सभा में २२ सदस्य हैं जिनमें से ४ संरक्षक हैं, ६ पंच हैं तथा शेष १२ सदस्य हैं।

संरक्षक

१. लाला बनारसीदास, सुपुत्र राजकरनदास सराओगी।
२. पण्डित केदारनाथ, सुपुत्र ब्रजनाथ ब्राह्मण।
३. मुत्सद्दी, सुपुत्र जोगीदास, सराओगी।
४. शिवनाथ, लम्बरदार, जाट।

पंच

५. रामसरणदास, सुपुत्र रामप्रसाद, बनिया, वैष्णव।
६. नानकचंद, सुपुत्र रामदयाल, बनिया, वैष्णव।
७. चिरंजीलाल, सुपुत्र प्रेमसुख, बनिया, वैष्णव।
८. मुत्सद्दी लाल, सराओगी।
९. लाखी, लम्बरदार, जाट।
१०. रिक्त (काबुलसिंह, ब्राह्मण अब स्वर्गीय)

सदस्य

११. उमरावसिंह, सुपुत्र धर्मदास सराओगी।

१२. मिट्ठनलाल, सुपुत्र संतलाल, बनिया, वैष्णव।
१३. प्यारेलाल, सुपुत्र संतलाल, बनिया, वैष्णव।
१४. गंगादयाल, सुपुत्र शंकरदास, बनिया, वैष्णव।
१५. नानकचंद, सुपुत्र मुत्सद्दी लाल, बनिया, वैष्णव।
१६. रविदत्त, सुपुत्र जगदीश सिंह, ब्राह्मण।
१७. नियादरमल, सुपुत्र हरप्रसाद, बनिया, वैष्णव।
१८. वजीरचंद, सुपुत्र मोहरसिंह, बनिया, वैष्णव।
१९. नन्दकिशोर, सुपुत्र रामजीलाल, बनिया, वैष्णव।
२०. निरंजनदास, सुपुत्र गणेशी, बनिया, वैष्णव।
२१. मोतीमल, सुपुत्र प्यारेलाल, बनिया, वैष्णव।
२२. थम्बू, लम्बरदार, जाट।

लगभग एक वर्ष पूर्व गोशाला शुरू हुई थी। गोशाला में कुल ६१ पशु हैं। उन्हें पहले गली खैतान स्थित एक किराए के मकान में रखा गया था लेकिन ४०० रू. में एक भूमि का टुकड़ा सर्क्युलर रोड के पास लाल दरवाजा एवं प्रेम दरवाजा के बीच में खरीदा गया था और इस पर भवन बनाया गया जहाँ अब गायें रखी जाती हैं। इस भवन के निर्माण पर ५०० रू. खर्च किए गए। सम्पूर्ण धन चंदा उगाहकर इकट्ठा किया गया। हिन्दू विवाह के अवसर पर इस निधि में दान देते हैं। दो लोगोंने साप्ताहिक प्रबन्ध करने का दायित्व अपने ऊपर लिया है। इस समय हाथ पर कोई राशि नहीं है। फसल की कटाई के समय गाँवों के कृषकों से इस मवेशी के लिए चारा निःशुल्क लिया जाता है।

इस गोशाला का खजांची रामचंद्र, सुपुत्र बंसीलाल, बनिया, वैष्णव है।

इस गोशाला में निम्नलिखित कर्मचारी कार्यरत है -

१. माखनलाल, सुपुत्र शंकरलाल, ब्राह्मण, मुहर्रिर के रूप में ६ रू. प्रतिमाह पर कार्यरत।
२. बलदेव सहाय, सुपुत्र गणेश, ब्राह्मण, चपरासी के रूप में रू. २-८-० प्रति माह पर कार्यरत।
   यह व्यक्ति आटा आदि वस्तुएँ भी दान स्वरूप एकत्रित करता है।
३. भम्बू, धानक, 'पाली' रू. ३-३-० प्रतिमाह वेतन।
४. बुद्धू, चमार, 'पाली' रू. २ प्रतिमाह वेतन।

इस गोशाला का उद्देश्य बूढ़ी एवं स्वामीहीन मवेशी की देखभाल करना है। इस

गोशाला का किसी भी अन्य सभा से कोई सम्बन्ध नहीं है। सभा ने अभी तक अन्य नियम नहीं बनाए हैं।

नजफगढ़

यहाँ एक गोशाला पौने तीन वर्षों से चलाई जा रही है। इसमें दिल्ली, रोहतक तथा गुड़गाँव जिलों के समीपवर्ती गाँवों से मवेशी लाई जाती है। उसकी देखभाल की जाती है। बागडू नामक एक बनिये ने अपने पुराने घर को इस हेतु दिया है। गोशाला बनाने के लिए निर्माण कार्य पर लगभग १५०० रू. खर्च किए गए है। इसकी समीपवर्ती भूमि नीलामी द्वारा ७० रू. में खरीदी गयी है। इसके चारों ओर दीवार बनाकर इसे घेर लिया गया है ताकि भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर दूसरी गोशाला बनाई जा सके।

गोशाला शुरु होने के समय आर. बी. रंगनाथ सिंह, मानद् मजिस्ट्रेट, हीरासिंह, अस्पताल सहायक, तिपड़चंद, गिरदार कानूनगो एवं पटवारी आदि पखवाड़े में एक बैठक आयोजित किया करते थे लेकिन अब वे इकट्ठे नहीं होते हैं। मासिक चंदा प्राप्त करने की एक सूची तैयार की गई थी जिसके अनुसार लगभग ३८ रू. प्रतिमाह एकत्रित किया जाता था। बाजार में बेची गई वस्तु पर तीन पाई प्रति रू. की दर से, आम कर्मचारियों (गिरदार, पटवारी, अस्पताल सहायक आदि) के वेतन से प्रति रू. इतनी ही राशि एकत्रित की जाती थी। अस्पताल सहायक ने अब मासिक चंदा देना बन्द कर दिया है, अतः आय कम हुई है।

हिन्दू विवाह के अवसर पर दान देते हैं। लक्ष्मण बोहरा नामक व्यक्ति ने विवाह के अवसर पर १५० रू. दान दिए थे।

गाँवों की फसल की कटाई से चारा एकत्रित किया जाता है। गोशाला में इस समय कुल १११ पशु है। गोशाला शुरू होने के समय इसमें ४०९ पशु लाए गए थे। उनमें से २६६ मर गए। ३२ की देखभाल करने के उपरांत उपयोग के लायक होने पर बिक्री कर दी गई।

सदस्य

१. पण्डित सालिगराम, विद्यालय शिक्षक। यह व्यक्ति गोशाला में पशुओं की पंजी व्यवस्थित रखता है।

२. आर. बी. रंगनाथ सिंह, मानद् मजिस्ट्रेट।

३. हीरा सिंह, अस्पताल सहायक।

४. तिपड़ चंद।

५. गिरदार कानूनगो।

६. रत्तीराम महाजन, गोशाला का खजांची भी।

७. लक्ष्मण बोहरा।

८. गणपत महाजन।

९. मथुरादास।

१०. फकीरा।

गोशाला में कार्यरत कर्मचारी

१. शंकर, ब्राह्मण, ६ रू. प्रतिमाह वेतन पर। यह व्यक्ति गाँव से चारा एकत्रित करके लाता है।

२. यदू, अहीर रू. ३-१२ प्रति माह वेतन पर। पशुओं को चारा देने आदि कार्य करता है।

३. कादरा, ग्वाला, रू. ३ प्रतिमाह के वेतन पर।

४. अब्दुल्ला, ग्वाला, रू. ३ प्रतिमाह के वेतन पर।

इस गोशाला का किसी अन्य गोशाला से कोई सम्बन्ध नहीं है। गोशाला के सदस्य वैष्णव एवं सराओत्री हैं। इनमें कोई भी आर्य समाज से सम्बन्धित नहीं है। गोशाला प्रबन्धन हेतु कोई भी नियम नहीं बनाए गए हैं।

वल्लभगढ़ की गोरक्षिणी सभा पर पुलिस निरीक्षक
बशीर हुसैन का गोपनीय नोट

२७ नवम्बर १८९३

यहाँ एक गोशाला कार्यरत है जिसमें इस समय १२ गायें एवं बछड़े हैं लेकिन ये सभी लँगड़े आदि होने के कारण बेकार हैं।

विवाह के अवसर पर हिन्दू २ रूपए गोशाला फंड में दान देते हैं।

काली नामक ब्राह्मण को गोशाला की मवेशी की देखभाल के लिए ३ रूपए प्रतिमाह पर रखा गया है। वह उन्हें चराने के लिए जंगल में ले जाता है। रात को उन्हें चारा खिलाने का खर्चा १२ आना दैनिक होता है।

१. बंसीधर, बनिया, उपपंजीयक के कार्यालय, तहसील बल्लभगढ़ में मुहर्रिर इस के अध्यक्ष हैं।
२. राम स्वरूप, बनिया, इसका प्रबन्धक है तथा
३. संतीमल, बनिया, इसका खजांची है।

इसके अध्यक्ष आर्यसमाज से सम्बन्धित हैं तथा अन्य लोग धर्म से बनिये हैं।

इस गोशाला का नाम धर्मसभा है। इसके पास लगभग ६०० रू. की निधि है।

लेखा विवरण अध्यक्ष द्वारा पारित किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कुछ भी पता नहीं चल पाया है। सभा की अब कोई बैठक आयोजित नहीं होती।

दिल्ली मंडल के आयुक्त एवं अधीक्षक को कर्नल ए. रैनिक का पत्र

सं. २००, १६ नवम्बर १८९३

प्रेषक : कर्नल ए. रैनिक, उपायुक्त, रोहतक।
सेवा में, आयुक्त एवं अधीक्षक, दिल्ली मंडल।

पंजाब सरकार के मुख्य सचिव के २ नवम्बर १८९३ के गोपनीय परिपत्र (लाहौर) के सन्दर्भ में रिपोर्ट भेजते हुए मुझे यह सूचना देनी है कि यहाँ इस जिले में ऐसी कोई भी सोसाइटी नहीं है जिसका गोसंरक्षण आदि से किसी भी प्रकार का लेना देना है। जहाँ तक मैं सोचता हूँ इस जिले में पूर्ण रूप से शान्ति व्याप्त है। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच में किसी भी प्रकार की दुर्भावना नहीं है। साथ ही गोहत्या के विषय की यहाँ चर्चा नहीं होती है।

कर्नल एल.जे.एच.ग्रे को पी.डी.एग्न्यू का पत्र

करनाल,
३ जनवरी १८९४

प्रेषक : पी.डी.एग्न्यू, कार्यकारी उपायुक्त, क़रनाल।
सेवा में, कर्नल एल.जे.एच.ग्रे, सी.बी.आई. आयुक्त, एवं अधीक्षक, दिल्ली मंडल

२ नवम्बर के गोपनीय परिपत्र के उत्तर में हुई देरी के कारणों की जानकारी मैं आपको दे ही चुका हूँ। इस जिले में मात्र एक ही स्थान है जहाँ गोरक्षिणी सोसाइटी की वास्तव में रचना हो रही है। वह स्थान पानीपत है। शादयाल सिंह एवं हरगूलाल नामक

दो बनिए चंदा एकत्रित कर रहे हैं। इस आन्दोलन का उद्देश्य लंगड़े एवं बीमार पशुओं का संरक्षण करके उन्हें कसाइयों के हाथ पड़ने से बचाना है। इनका और कोई भी उद्देश्य नहीं दिखता है।

गोहत्या विरोधी आन्दोलन या गोसंरक्षण सोसाइटियाँ के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार की कोई भी संगठित बैठक यहाँ आयोजित नहीं होती।

आयुक्त एवं अधीक्षक, दिल्ली मंडल द्वारा पृष्ठांकन

सं. सी. एक्स (अ) ६ जनवरी १८९४

इस कार्यालय के पत्र सं. सी. एक्स. १८ दिसम्बर १८९३ के क्रम में पुलिस महा निरीक्षक, पंजाब, विशेष शाखा के सहायक को अग्रेषित।

विभाग ३

बिहार का आंदोलन

१०. बिहार के आंदोलन विषयक ब्रिटिश पत्राचार

१०. बिहार के आंदोलन विषयक ब्रिटिश पत्राचार

बंगाल सरकार के मुख्य सचिव को ए. फोर्ब्स का पत्र

बाँकीपुर, २७ अक्टूबर, १८९३
ए. फोर्ब्स, आयुक्त, पटना मंडल
सेवा में,

मुख्य सचिव,
बंगाल सरकार

इस मंडल में पशु हत्या विरोधी आन्दोलन के सम्बन्ध में आपके परिपत्र सं० ६७ जे.डी. ८ सितम्बर १८९३ द्वारा वांछित रिपोर्ट गौरवसहित मैं आपको प्रस्तुत कर रहा हूँ।

२. इस मंडल के समस्त जिला अधिकारियों द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत की गई है तथा बेतिया राज के सी.आई.ई. श्री टी.एम.गिबन से मुझे एक लम्बा एवं दिलचस्प नोट प्राप्त हुआ है जिसे इस रिपोर्ट के साथ परिशिष्ट में संलग्न किया गया है। मैंने इस रिपोर्ट को चार खंडों में बाँटा है ताकि आपके परिपत्र में माँगी गई सूचना को विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत आपको प्रस्तुत कर सकूँ।

खंड-१ बिहार की गोरक्षिणी सोसाइटियों एवं आन्दोलन का इतिहास

पशु संरक्षण हेतु सर्वप्रथम संगठन गया जिले में बना दिखाई देता है। १८८७ में एक अधिवासी बंगाली जमींदार भिकारी शंकर भट्टाचारजी द्वारा इस गोरक्षिणी सभा की स्थापना हुई थी ज़ो स्वैच्छिक संगठन के रूप में १८८९ तक जारी रही। उस वर्ष गया में श्रीमन स्वामी आए थे, जिनके भाषणों से प्रभावित होकर टिकारी के राजा राम बहादुर सिंह ने भूमि दान में दी जिस पर बड़ी गोशाला बनी। उसी समय, स्वैच्छिक

रूप से चंदा एकत्रित किया गया तथा सभी हिन्दुओं से धार्मिक सदस्यता के रूप में कर लिया गया इस हेतु भाषण देने के लिए व्याख्याता नियुक्त किए गए जिन्हें पशु संरक्षण के प्रति हिन्दुओं के कर्तव्यों के सम्बन्ध में सुविख्यात गोरक्षिणी सिद्धांतों पर भाषण देने के लिए तथा हिन्दुओं को अपनी मवेशी कसाइयों को न बेचने के लिए भेजा गया तथा उन्हें बताया गया कि कसाइयों या बिचौलियों को मवेशी बेचना पाप है। इसके उपाध्यक्ष क्रमशः थे - बाबू इंद्र नारायण चक्रवर्ती -सरकारी वकील, बाबू राजकिशोर नारायण सिंह - उपजिलाधीश, तथा बाबू व्रजमोहन प्रसाद - मुंसिफ।

तथापि, १८९० में मुख्यतः गबन के कारण से निधियाँ अत्यल्प रह गईं इस सोसाइटी को बाबू बलदेव लाल वकील द्वारा नया रूप दिया गया तथा नियमित रूप से हिसाब-किताब रखा जाने लगा और एक देहाती ब्राह्मण महाबली बाजपेयी को लेखाकार एवं गोशाला अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया गया।

१८८९ में टिकारी के काबर के ब्राह्मणों द्वारा ईद के अवसर पर गाय की हत्या करने से रोकने का एक प्रयास किया गया लेकिन प्रमुख हिन्दुओं को विशेष सिपाहियों के रूप में तैनात करते ही यह प्रयास मंद हो गया। १८९१ में द्वेषभाव से पीड़ित कुछ मुसलमानों द्वारा एक गाय को कुर्बानी देने के लिए हिन्दुओं के मकानों के सामने से आडंबरपूर्ण रूप में ले जाने के कारण इसी अवसर पर गया कस्बे में भीषण दंगा भड़क गया। यह दंगा बड़ी मुश्किल से उस समय शान्त हुआ जब हिन्दुओं को वह गाय खरीदकर वापस मिल गई। उस समय अत्यधिक चिंताजनक स्थिति पैदा हो गई थी। यह स्थिति पुनः १८९२ में पैदा हो गई। तथापि, समय रहते विशेष पूर्व बंदोबस्त किए गए थे। कस्बे में शान्ति रही, यद्यपि जिले के दूसरे भागों में हस्तक्षेप करने के दो या तीन मामले प्रकाश में आए लेकिन इनसे कहीं कोई अशान्ति नहीं फैली। जहाँ तक मैकफर्सन का इस सम्बन्ध में विचार है कि वहाँ जो कुछ भी घटित हुआ उसके लिए गोरक्षिणी सभा को सीधे दोषी नहीं ठहराया जा सकता, फिर भी, इसमें कोई संदेह नहीं कि इसके द्वारा दिए गए भाषणों ने तथा इसकी शिक्षा ने इस विषय पर जनसमुदाय की भावनाओं को अवश्य उत्तेजित किया था। लेकिन इसी वर्ष मार्च के महीने में पशु-हत्या के उग्र विरोधी रूप में यह पुनः फैल गया तथा इस पर तभी काबू पाया जा सका जब उन विभिन्न स्थानों पर अतिरिक्त पुलिस के दस्ते पूरी तरह से तैनात किए गए जहाँ समय समय पर अशान्ति व्याप्त हुई थी। मुसलमानों को पशुओं की बिक्री को पशु मेलों

में निरुत्साहित करने के उद्देश्य से सोसाइटी के मुख्यालय या शाखा कार्यालय द्वारा भेजे गए छोटे छोटे कार्यकर्ताओं द्वारा उग्र एवं उत्तेजनापूर्ण भाषा का प्रयोग करने के कारण धर्मांधता का दुराग्रह पुनर्जीवित हुआ। ये छोटी छोटी या शाखा सभाएँ विशेष रूप से करीब दो वर्ष पूर्व औरंगाबाद में या उसके पास राँची जिला विद्यालय के एक पंडित के भाषण देने के परिणाम स्वरूप जिले के पश्चिमी भाग में मुख्य रूप से स्थापित हुई। ये कुल मिलाकर सात हैं :

(१) टिकारी में सकरबीघा

(२) गोपालपुर पुलिस थाना, शेरगोट्टी

(३) रानीगंज

(४) औरंगाबाद में जम्होर

(५) औरंगाबाद में ओबरा

(६) औरंगाबाद में बाड़

(७) औरंगाबाद कस्बा

इनके विशेष विवरण श्री मैकफर्सन की रिपोर्ट के संलग्रक में देखे जा सकते हैं (देखिए पृ० ३१७)

इनके बार बार प्रादुर्भाव के लिए निर्णयों को दोषी माना जा सकता है। गया की सभा की कार्यकारिणी के कुछ सदस्यों ने त्यागपत्र दिया तथा उन्हें नहीं बदला गया। सीधे कहें तो गया सभा इस समय निष्क्रिय स्थिति में थी। इसी तरह, मुफस्सल सभा के कार्यवाहक सदस्यों ने अपने नाम वापस ले लिए थे और उसमें इस समय किसी भी तरह का छोटा, बड़ा या बिल्कुल ही नगण्य रूप में गया जिले में कही भी कोई आन्दोलन नहीं हुआ था। छपरा के तत्कालीन उपजज रामचताइन सिंह बहादुर द्वारा सात वर्ष पूर्व स्थापित सनातन धर्म सभा को पुनर्गठित करके १८८७ में सारन में प्रथम गोरक्षिणी सभा की स्थापना की गई। इस तरह का रूपांतरण ठाकुर प्रसाद कलवार, साहिबगंज के एक बनिया तथा रुद्रप्रसाद वकील द्वारा लाया गया। १३ सदस्यों की एक प्रबंध समिति बनाई गई। १८८८ के सोनीपत मेले में हतवा के महाराजा की अध्यक्षता में एक जनसभा आयोजित की गई इसी वर्ष नवम्बर में इलाहाबाद के पं. जगत नारायण ने महानदी के तट पर होम्बरनाथ की समाधि के पास एक भाषण दिया। ये जगत नारायण तबसे प्रतिवर्ष छपरा आते थे आन्दोलन को इस तरह से आधार मिला तथा

गई तथा हिन्दुओं को ताजिया के जुलूस में जाने या किसी भी तरह की मदद करने की मनाही की गई।

इसके तुरन्त बाद एक मामला चला जिसमें रामनाथ को अंततः मुजरिम करार दिया गया जिसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। उसने एक कसाई को जबर्दस्ती से उसे एक भैंस देने को बाध्य कर दिया था जिसे वह हत्या करने के लिए उसी समय खरीदकर लाया था। स्थानीय पुलिस के गुप्त सहयोग से कुछ समय के लिए मामले को गुप्त रखा गया था।

२० अगस्त को महाराजगंज में एक अन्य बैठक का आयोजन दूरदराज के क्षेत्रों में सभा की शाखाओं के उद्घाटन करने के उद्देश्य से किया गया। इसके पश्चात् २६ अगस्त को बसन्तपुर में एक जनसभा का आयोजन किया गया जिसमें लोगों को मवेशी को छुड़ाने तथा पुलिस का प्रतिरोध करने हेतु प्रेरित किया गया। इसका परिणाम एक सप्ताह के अंदर ही दंगों की शृंखला के रूप में आया यह पराकाष्ठा पर उस समय पहुँचा जब ६ सितम्बर को बसन्तपुर थाना पर हमला किया गया और पुलिस द्वारा भीड़ पर गोलियाँ चलाई गईं।

इससे पहले भी कई बार हिन्दुओं ने मुसलमानों को अपने गाँव के कुओं से पानी लेने देने से मना कर दिया था। हतवा में एक गोशाला आरम्भ करने का प्रयास असफल सिद्ध हुआ था। मजहौली राज में मुसलमानों के लिए चने भूनने से गौंडों को रोकने के लिए एक आन्दोलन आरम्भ हुआ। हतवा राज के एक आदेश से आतंक की स्थिति पैदा हो गई थी जिसके माध्यम से गौंडों को अपने पुराने पात्र फैंकने तथा नए खरीदने का आदेश दिया गया था, लेकिन महाराजा ने पूर्णतः साफ सफाई के आधार पर इस आदेश को जारी करने की स्पष्टता कर दी थी।

बसन्तपुर के दंगों के कुछ दिनों पश्चात् छपरा की गोरक्षिणी सभा के मुख्य सदस्यों ने रात में रूसी के बाबू देवी प्रसाद के आवास पर एक बैठक रखी तथा पूर्व उल्लिखित मामले की पैरवी करने के लिए ५००० रु० का चंदा इकट्ठा किया गया (बाबू महावीर प्रसाद एवं बाबू देवीप्रसाद प्रत्येक ने १००० रु० का चंदा दिया तथा शिव बक्शमल ने ५०० रू. का चंदा दिया)। इस रकम को छपरा के स्थानीय साहूकार के पास जमा करा दिया गया।

शाहाबाद में प्रथम सभा की स्थापना १८८८ में जिला अभियंता के कार्यालय

वह संगठित हुआ। महर्रिर, तहसीलदार, जमादार तथा पियादा के पदनाम वाले अधिकारियों की नियुक्तियाँ की गईं। अनिवार्य तौर पर उदित चौबे को उपदेशक के रूप में भेजा गया। एक उपदेशक किशोरलाल जनवरी, १८९० में पुनः छपरा आए तथा १८९१ के अंत तक नियमित रूप से सभाएँ आयोजित की जाती रहीं। इस अवधि में बाबू त्रिजाधन उपाध्याय तथा बाबू अवध बिहारी सरण मिसिर ने क्रमशः इनकी अध्यक्षता की। खातों का नियमित रूप से हिसाब किताब रखा गया। एक गोशाला बनाई गई जिसमें सभा द्वारा संरक्षित मवेशी एवं इससे पहले सराय में रखी गई मवेशी को लाकर रखा गया। इस तरह, सभा का कामकाज शान्तिपूर्ण ढंग से १८९१ से १८९२ तक चलता रहा। लेकिन इस चालू वर्ष के मई मास में आन्दोलन ने पुनः अचानक जोर पकड़ा। उस महीने में दारावली क्षेत्र में धुटनी एवं किशनपाली स्थानों में सभाएँ आयोजित की गईं तथा बलिया के सुप्रसिद्ध जगदेव बहादुर ने इस जिले में अपने २०० से ३०० समर्थकों के साथ छापामार कर प्रवेश किया तथा इसी थाने के विभिन्न स्थानों में सभाएं आयोजित की। इन सभाओं में लोगों को किसी भी कीमत पर कसाइयों के हाथों से मवेशी को मुक्त कराने के लिए निर्देशित किया गया।

जून में पाँच सभाएँ आयोजित की गईं जो सिवान, पाटण सिदूरा (प्रख्यात आन्दोलनकर्ता होमनाथ पंडित द्वारा भाषण दिए गए), भैखा एवं महाराजगंज में हुईं जहाँ गोरखपुर के महावीर उपाध्याय ने भाषण दिया तथा गोशाला हेतु ८०० रूपये का चंदा एकत्रित किया गया। रामनाथ मीर, जो पशुओं को मुक्त कराने के लिए इस समय चार वर्ष की जेल की सजा काट रहे हैं, ने इस सभा की अध्यक्षता की।

२५ जून को (बकरी ईद के तीसरे दिन) बरहारिया सीमाचौकी में जलाहाटोला में अशान्ति फैलने की आशंका व्याप्त हुई लेकिन मामला शान्त कर दिया गया।

जुलाई में आरम्भ में, दारौली में मजहौली की रानी (जिन्होंने गोविषयक प्रश्न पर अत्यन्त उत्साह के साथ अपना समर्थन दिया था) की उपस्थिति में एक सभा आयोजित की गई तथा उसके पश्चात् शियापुरा सकरा एवं विश्मिया में सभाएँ की गईं। जुलाई की १० तारीख के आसपास दरौली में फिरोजपुर में हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच अशान्ति उग्र रूप में व्याप्त हो गई लेकिन स्पष्ट रूप से कुछ भी घटित नहीं हुआ। मजिस्ट्रेट द्वारा एहतियात के तौर पर उठाए गए कदमों की जितनी भी तारीफ की जाए, कम ही होगी। मुहर्रम के ठीक पहले महाराजगंज में हिंदुओं की एक सभा आयोजित की

गई तथा हिन्दुओं को ताजिया के जुलूस में जाने या किसी भी तरह की मदद करने की मनाही की गई।

इसके तुरन्त बाद एक मामला चला जिसमें रामनाथ को अंततः मुजरिम करार दिया गया जिसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। उसने एक कसाई को जबर्दस्ती से उसे एक भैंस देने को बाध्य कर दिया था जिसे वह हत्या करने के लिए उसी समय खरीदकर लाया था। स्थानीय पुलिस के गुप्त सहयोग से कुछ समय के लिए मामले को गुप्त रखा गया था।

२० अगस्त को महाराजगंज में एक अन्य बैठक का आयोजन दूरदराज के क्षेत्रों में सभा की शाखाओं के उद्घाटन करने के उद्देश्य से किया गया। इसके पश्चात् २६ अगस्त को बसन्तपुर में एक जनसभा का आयोजन किया गया जिसमें लोगों को मवेशी को छुड़ाने तथा पुलिस का प्रतिरोध करने हेतु प्रेरित किया गया। इसका परिणाम एक सप्ताह के अंदर ही दंगों की शृंखला के रूप में आया यह पराकाष्ठा पर उस समय पहुँचा जब ६ सितम्बर को बसन्तपुर थाना पर हमला किया गया और पुलिस द्वारा भीड़ पर गोलियाँ चलाई गईं।

इससे पहले भी कई बार हिन्दुओं ने मुसलमानों को अपने गाँव के कुओं से पानी लेने देने से मना कर दिया था। हतवा में एक गोशाला आरम्भ करने का प्रयास असफल सिद्ध हुआ था। मजहौली राज में मुसलमानों के लिए चने भूनने से गौंडों को रोकने के लिए एक आन्दोलन आरम्भ हुआ। हतवा राज के एक आदेश से आतंक की स्थिति पैदा हो गई थी जिसके माध्यम से गौंडों को अपने पुराने पात्र फैंकने तथा नए खरीदने का आदेश दिया गया था, लेकिन महाराजा ने पूर्णतः साफ सफाई के आधार पर इस आदेश को जारी करने की स्पष्टता कर दी थी।

बसन्तपुर के दंगों के कुछ दिनों पश्चात् छपरा की गोरक्षिणी सभा के मुख्य सदस्यों ने रात में रूसी के बाबू देवी प्रसाद के आवास पर एक बैठक रखी तथा पूर्व उल्लिखित मामले की पैरवी करने के लिए ५००० रु० का चंदा इकट्ठा किया गया (बाबू महावीर प्रसाद एवं बाबू देवीप्रसाद प्रत्येक ने १००० रु० का चंदा दिया तथा शिव बक्शमल ने ५०० रू. का चंदा दिया)। इस रकम को छपरा के स्थानीय साहूकार के पास जमा करा दिया गया।

शाहाबाद में प्रथम सभा की स्थापना १८८८ में जिला अभियंता के कार्यालय

में कार्यरत एक बंगाली लेखाकार, दो पंजाबी शॉल विक्रेताओं तथा एक धनाढ्य मारवाड़ी ने मिलकर की थी। आगे चलकर धीरे-धीरे अन्य सभाएँ सासाराम, मिसरीगंज में खुलीं। हाल ही में एक सभा झाबुआ में कार्यरत हुई थी। इनमें से सासाराम की सभा को कुछ वकीलों एवं नगरपालिका कर-दरोगा ने आरम्भ किया था जबकि अन्य दो को वहाँ के बनिया एवं मारवाड़ी लोगों द्वारा आरम्भ किया गया था। प्रत्येक सभा ने अपनी-अपनी गोशाला की स्थापना की थी जिसमें थकी-माँदी एवं बेकार मवेशी को रखा जाता था। जिस गोशाला में भी गायों की संख्या अधिक हो जाती थी, उन अतिरिक्त गायों को दूसरी गोशाला, जिसमें संख्या कम होती थी उसमें पारस्परिक व्यवस्था के तहत समा लिया जाता था। इस वर्ष तक वे अपने निर्धारित एवं वैध लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कार्यरत रहीं। लेकिन मुहर्रम का समय आते ही सासाराम में मुसलमानों का बहिष्कार किया गया, कहारों को ताजिया ले जाने की मनाही की गई तथा दूसरे हिन्दुओं को भी पहले की तरह से सहायता करने के लिए मना किया गया। एक संयुक्त मजिस्ट्रेट को स्थल पर प्रतिनियुक्त किया गया तथा सब कुछ शान्तिपूर्ण बीता था।

अप्रैल, १८९१ में बहर्रमपुर के मेले में एक बहुत बड़ा दंगा उस समय भड़क उठा जब हिन्दुओं की एक सशस्त्र भीड़ ने उन कसाइयों पर हमला कर दिया जो उनके द्वारा वहाँ से खरीदी गई मवेशी को ले जा रहे थे। उन्होंने उन्हें उस समय तक न तो ले जाने ही दिया और न वे वहाँ से तितर-बितर ही हुए जब तक पुलिस ने उन पर गोलियाँ नहीं चलाईं। वहाँ मेले में भाषण देकर लोगों को उत्तेजित करने वाले प्रसिद्ध आन्दोलनकर्ता गोपालानंद स्वामी को तत्पश्चात् गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें दो वर्ष की जेल की सजा हुई। स्थानीय गोरक्षिणी सभाएँ इसमें अलिप्त नहीं थी से लेकिन यह सब कुछ सभाओं के सुविख्यात आयोजक एवं उपदेशक गोपालानंद के अपने सिद्धांतों को प्रस्तुत करके भड़काने के कारण हुआ सभाओं के संगठन के लिए उनका कार्यक्रम एक अनुच्छेद में खुफिया विभाग की गोपनीय रिपोर्ट, १९६३ के सार में प्रकाशित हुआ है।

अगली करतूत सासाराम की भाँति ही वहाँ पहले से उत्तेजित रूप में दिखाई दे रही थी। साथ ही, दुमराउ के समीपवर्ती भोजपुर में एक भीषण दंगा भड़कने ही वाला था। वहाँ कुछ कसाइयों द्वारा एक ब्राह्मण की गाय को ले जाने की आशंका व्यक्त की गई थी। उस ब्राह्मण ने बाजार में आकर पूरा दोष कसाइयों के सिर मढ़ा जो उन

कसाइयों से इस पाप का बदला लेने के लिए कह रहा था। तत्पश्चात्, मुहर्रम के दौरान किसी व्यक्ति ने जुलूस पर एक मिट्टी का ढेला फैंका। मुसलमानों ने सोचा कि उन पर आक्रमण किया जा रहा था, अतः वे ताजियों को वहीं रखकर वहाँ दिखने वाले हिन्दुओं का पीछा करने लगे। इनमें से एक-दो की पिटाई की गई इसके बाद मुसलमान वहाँ से चले गए और अपने ताजियों में स्वयं छेद करके उन्होंने हिन्दुओं के खिलाफ जोरदार शिकायत पुलिस थाने में जाकर की। इसी बीच, हिन्दुओं की भीड़ भी वहाँ एकत्रित हो गई थी, लेकिन दीवान राय जयप्रकाश लाल बहादुर, सी.आई.ई. ने उस स्थान पर तुरन्त जाकर पुलिस की सहायता से दोनों पक्षों को समझा बुझाकर शान्त किया था।

अगस्त का महीना शान्ति से बीता लेकिन सासाराम एवं झाबुआ में बड़ी संख्या में पत्र परिचालित किए जाने लगे। इनमें हिन्दुओं से कसाइयों को अपनी मवेशी बेचने की मनाही की गई थी तथा मुसलमानों से किसी भी तरह के सम्बन्ध न रखने, साथ ही, उन्हें वकील आदि के रूप में न रखने के लिए भी निर्देशित किया गया था। अगस्त के अन्तिम दिनों में कोठ में दंगा भड़का जिसके सम्बन्ध में एक अलग रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी। वहां एक ब्राह्मणी-बैल की कसाइयों द्वारा हत्या किए जाने के परिणाम स्वरूप स्थिति बिगड़ी थी। पत्र भेजने की पद्धति द्वारा अत्यन्त गोपनीयता बरत कर लोगों को अवगत कराया गया और २४ घंटों के अंदर ही वहाँ एक हजार से अधिक लोगों की हथियारबंद भीड़ एकत्रित हो गई थी।

कुछ दिनों के बाद, सासाराम के कोचस के मुसलमानों एवं रानीसागर के कसाइयों पर हमला किए जाने की आशंका से सम्बन्धित अफवाहें फैलीं लेकिन प्रत्येक मामले में मजिस्ट्रेट द्वारा समय रहते चेतावनी जारी करने तथा एहतियात बरतने के कारण मुश्किल से स्थिति को बिगड़ने से बचाया जा सका था।

चंपारन में मात्र एक ही गोरक्षिणी सभा थी, जिसकी स्थापना श्रीमन स्वामी ने १८८८ में बेतिया में की थी। इसकी सम्पूर्ण व्यवस्था बेतिया राज के मातहत अधिकारियों द्वारा की जाती थी। महाराजा ने भी केन्द्रीय समिति की निधि में २००० रू. का अंशदान दिया था। तथापि, वे इस नतीजे पर पहुँचे कि इस आन्दोलन में कांग्रेसवालों का हाथ है अतः उन्होंने अपना समर्थन वापस ले लिया था। मोतिहारी में जून, १८९२ में एक सभा आरम्भ करने का प्रयास किया गया पुनः एक प्रयास चालू

वर्ष में मारवाडियों द्वारा किया गया लेकिन इसमें उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई। वे गोशाला के लिए जमीन का एक टुकड़ा खरीदना चाहते थे। बेतया का आन्दोलन पूर्णतः धार्मिक आन्दोलन था स्थानीय सभा ने वैध उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य किया। एक गोशाला की स्थापना की एवं इसके रखरखाव का कार्य किया। इस जिले में कोई भी दंगा नहीं हुआ, लेकिन विगत जुलाई में सेंगोवली और गोविंदगंज के बीच सड़क पर मवेशी को मुक्त कराने का एक छोटा सा प्रयास किया गया तथा सितम्बर के महीने में एक अफवाह फैली कि जब मुसलमान मस्जिद में शुक्रवारी नमाज अदा करेंगे तब उनके ऊपर हमला किया जाएगा। इस सम्बन्ध में और अधिक विवरण श्री गिबन्स के नोट में देखे जा सकते हैं।

मुजफ्फर जिले में निम्नलिखित तीन सभाएँ कार्यरत थीं

(१) सीतामढ़ी (जहाँ दरभंगा में मधुबनी सभा की शाखा होने पर भी इसकी बैरागनिया में अपनी संबद्ध ग्राम सभा भी थी।)

(२) हाजीपुर

(३) लालगंज

ये सभी सभाएं विगत मार्च के पश्चात् स्थापित हुई थीं। सीतामढ़ी की सभा की स्थापना दरभंगा के महाराजा के फुफेरे भाइयों - बाबू दुर्गादत्त सिंह एवं बाबू हकधारी सिंह के प्रभाव से हुई थी। लोगों का मानना है कि सीतामढ़ी सभा के प्रबंधक पंडित राम अनुग्रह त्रिवेदी हाजीपुर की सभा के संस्थापक थे। इन सभाओं का एक दूसरे के साथे थोड़ा बहुत सम्बन्ध अवश्य था। इन सभी ने गोशालाएँ खोलीं तथा सभी हिन्दुओं से नियमित रूप से चंदा इकट्ठा किया। सीतामढ़ी सभा के नीतिनियमों की एक प्रति प्राप्त की गई जिसे खुफिया विभाग के १८७७ की पुलिस रिपोर्ट में एक अनुच्छेद के रूप में देखा जा सकता है।

इस जिले में किसी भी तरह की अशान्ति व्याप्त नहीं हुई थी, लेकिन एक अफवाह अवश्य फैली कि १५ सितम्बर, शुक्रवार को जामा मस्जिद की नमाज के समय आक्रमण किया जाएगा। उन्होंने तदनुसार पूरी संख्या बल के साथ तैयारी की तथा अपनी रक्षा हेतु सभी प्रयास किए लेकिन मजिस्ट्रेट द्वारा एहतियात के तौर पर समस्त आवश्यक प्रबंध पहले से किए जाने के कारण कोई भी अप्रिय घटना नहीं घटी। वास्तव में यह अफवाह झूठी थी।

रामचरन पाट (असली नाम चुन्नीलाल बनिया) अपने तीन सम्बद्ध उपदेशकों के साथ मुजफ्फरपुर में दिखाई दिया। उन्होंने छपरा गोरक्षिणी सभा की एक सम्बद्ध शाखा स्थापित करने के लिए चंदा एकत्रित किया। उसकी पुस्तकों, चंदा एकत्रित करने वाली पेटियों, तथा झंडे को जब्त कर लिया गया। वहाँ के प्रख्यात हिन्दुओं से थोडा-सा प्रोत्साहन पाकर वह जिले से चला गया। इस आन्दोलन के सर्वाधिक सबल समर्थकों में एक धनाढ्य जमींदार बाबू नंदनलाल एवं समस्त प्रख्यात मारवाडी लोग थे।

पटना में दो सोसाइटियाँ कार्यरत हैं। इनमें से शहर की बड़ी सोसाइटी के मंत्री जवाहरमल हैं। इसको चलाने का कार्य बाबू जय नारायण बाजपेयी, राय राधा किशन, मनसुख राय, छोटेलाल, जज राजबहादुर एवं अन्य धनाढ्य मारवाडी लोग करते हैं। इसकी स्थापना करीब पाँच वर्ष पूर्व की गई थी। इसने अपनी एक बड़ी गोशाला भी बनाई है जिसका यह अनुरक्षण भी करती है। एक अन्य सभा विक्रम थाना के अंतर्गत पालीगंज में कार्यरत है जिसे वहाँ के एक जमींदार बाबू रघुनाथ प्रसाद सँभालते हैं। वहाँ इसकी कोई गोशाला नहीं है।

पशु हत्या के विरोध में यह आन्दोलन बहुत पुराना बताया जाता है लेकिन बनारस से प्रभावित होकर १८८८ से इसने अपनी गतिविधियाँ दुगुनी कर दी हैं। इसे मुख्य रूप से उन बनियों और कैथों का समर्थन प्राप्त है जो अन्य मामलों में अपनी शिथिलता (विधवा पुनर्विवाह एवं शराबबाजी) को इस तरह से दूर करने की उम्मीद करते हैं।

आन्दोलन के फलस्वरूप पैदा हुए मामले इस प्रकार हैं : १८९१ में, हिन्दुओं को मस्जिद के पास से रथयात्रा निकालने की अनुमति के कारण फुलवारी में एक दंगा हुआ था दूसरा मुहर्रम के दौरान पटना में हुआ था। उसके भड़कने का सम्भवित कारण धार्मिक नहीं था क्योंकि दोनों समुदायों के लोगों ने जुलूस में भाग लिया था।

१८९२ में, फतुहा के पास एक गाय की बकरीईद के दिन हत्या करने की तैयारी का पता चलते ही हिन्दुओं की भीड़ ने उस मकान पर हमला किया था। उस मुसलमान के मकान को तोड़कर उसमें घुसकर वे उस गाय को मुक्त करा कर ले गए थे। बाद के उपमंडल अधिकारी द्वारा इस मामले में पाँच लोगों पर मुकद्दमा चलाया गया।

अप्रैल १८९३ में मशौरडी गाँव में कुछ लोगों ने उन कसाइयों पर हमला किया

जो सेना रसद विभाग, दीनापुर को पशुओं की आपूर्ति करने जा रहे थे। उन्होंने कसाइयों के चंगुल से उन पशुओं को मुक्त कराया था।

जून में बकरीईद के अवसर पर हिल्सा में गम्भीर दंगा भड़क उठा। इन दोनों मामलों की विशेष रिपोर्ट सरकार को भेजी गई थी।

यह आन्दोलन दरभंगा में १८८५ से आरम्भ हो चुका था, लेकिन कोई अशान्ति इससे नहीं फैली थी। इस आन्दोलन ने यहाँ अपनी मजबूत पकड़ बनाई। यह अन्य जिलों में भी व्यापक स्तर पर फैला लेकिन इसकी पहुँच से गया बच गया।

इस आन्दोलन का निम्नलिखित रूप में एक अत्यन्त संक्षिप्त विवरण है :

श्री विलियम की रिपोर्ट के साथ श्री मलिक, उप मंडल अधिकारी द्वारा मधुबनी सभा पर तैयार किया गया एक रोचक नोट संलग्न है।

जनवरी १८८५ में कोई बिहारी पाठक ने गोसंरक्षण हेतु सहायता प्राप्त करने के लिए राज प्रेस से छपवाकर एक परिपत्र जारी किया। तथापि, बिहारी पाठक एवं उसके भाई दरबारी दोनों नगरपालिकाओं के आयुक्त थे तथा इस आन्दोलन के सूत्रधार थे। ये लोग प्रतिष्ठित भी थे जिसकी वजह से यह आन्दोलन चलता रहा। लेकिन १८८८ में यह मंद पड़ गया उस समय इसे पंडित जगत नारायण ने पुनर्गठित किया था। इस हेतु पत्र भेजे गए तथा भाषणों के आयोजन किए गए जिनसे पर्याप्त मात्रा में सहायता मिली। परिणाम स्वरूप दो वर्ष में मुजफ्फरपुर में लालगंज, हाजीपुर और सीतामढ़ी तथा दरभंगा में तेजपुर, मधुबनी, रोसेरा एवं दल सिंह सराय में सभाओं ने कार्य करना आरम्भ कर दिया। इनमें से अन्तिम चार अभी तक कार्यरत हैं तथा अपनी शाखाओं के माध्यम से कार्य को और बढा रही हैं सीतामढ़ी शाखा इसी तरह से कार्यरत मधुबनी सभा की एक शाखा है। इन सभाओं के उद्देश्य पूर्णतः वैध एवं सुस्पष्ट हैं वे किसी को भी हानि पहुँचाने वाले नहीं है। सभी ने अपनी-अपनी गोशालाएँ चलाई हैं। दरभंगा की सभा के पास दरभंगा की गोशाला के अतिरिक्त एक अन्य सम्बद्ध गोशाला राकबेरिया में भी चलाई जा रही है जिसमें से प्रत्येक में २०० से ३०० पशु हैं। आरम्भ से ही सभाओं ने उपदेशकों की नियुक्तियाँ की हैं। विशेषरूप से मधुबनी सभा द्वारा, परिपत्र जारी किए गए थे। यह भी यहाँ उल्लेखनीय है कि इनमें से दूसरी सभा दरभंगा में अपनी स्थापना की बात को नकारती है। वह दावा प्रस्तुत करती है कि इसकी स्थापना १८८८ में कुछ विद्यालयीन छात्रों द्वारा सोनपुर के मेले में गो उद्धारकों के भाषण को

सुनकर उनके लौटने पर की गई थी। यह निश्चित रूप से दरभंगा-सभा के हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं करती जबकि नागपुर सभा का आधिपत्य स्वीकार करती है एवं प्रायः वहीं से सलाह प्राप्त करती है।

दरभंगा सभा के अध्यक्ष महाराजा हैं। हाल ही में नागपुर सभा ने उन्हें अनुरोध किया है कि वे बिहार, उत्तर-पश्चिम एवं मध्य सूबों की सभी सभाओं की अध्यक्षता स्वीकार करें, लेकिन अभी तक यह मामला स्थगित है। महाराजा शक्ति सम्पन्न हैं। वे प्रति वर्ष ६०० रू. का अंशदान देते हैं। उनके निजी कार्यालय में प्रायः बैठकें आयोजित होती हैं। उनके निजी सचिव बाबू तलपति सिंह उसके उपाध्यक्ष हैं। तलपति सिंह के भाई (भूतपूर्व उपाध्यक्ष) २०० रू. प्रति वर्ष अंशदान देते हैं। इसके सचिव अभी तक बाबू कालीपद बेनर्जी डेल्टन विद्यालय के मुख्याध्यापक थे। सहायक सचिव डाकघर में कार्यरत एक लिपिक लाल सिंह था जो इस सभा का लगभग समस्त कार्य करता था। तथापि, अगस्त में, पहले व्यक्ति ने इस्तीफा दे दिया तथा दूसरे व्यक्ति का स्थानांतरण हो गया। बाबू राम धनी लाल, सहायक सरकारी वकील, एवं सभा के पुराने उत्साही समर्थक ने हाल ही में इस सभा में सक्रिय भूमिका निभाना बंद कर दिया है।

नलसिंह सराय में स्व. नरहन जमींदार ५० रू. वार्षिक अंशदान दिया करते थे, रोसेरा में नगरपालिका के उपाध्यक्ष इसके अध्यक्ष हैं तथा एक अन्य व्यापारी सचिव है लेकिन इसके असली नेता विशेश्वर मारवाड़ी हैं। तेजपुर शाखा को समस्तीपुर के व्यापारियों से प्राप्त अंशदान से अत्यधिक ऊर्जाबल प्राप्त होता है।

मधुबनी सभा के अध्यक्ष बाबू दुर्गादत्त सिंह एवं हरखधारी सिंह, दोनों जमींदार हैं। इसका समस्त कार्य दो सचिवों - लाल बिहारी लाल, मुख्तियार, एवं महावीर प्रसाद मिडिल वर्नाक्यूलर स्कूल के द्वितीय शिक्षक द्वारा किया जाता है। इन सचिवों में से दूसरा व्यक्ति अधिकांश कार्य संपन्न करता है। इसे अत्यन्त कुशल एवं योग्य व्यक्ति कहा जाता है। यह व्यक्ति सभा के कार्यों को व्यवसाय की भाँति ही करता है। सीतामढ़ी के अतिरिक्त मधुबनी सभा की एक शाखा भागलपुर में परताबगंज में भी है। इसकी एक शाखा पंडोअल में भी खोली गई थी लेकिन चल नहीं पाई। एक अन्य शाखा फूलप्रास में खोलने के लिए पूरे प्रयास किए जा रहे हैं। दलसिंह सराय ने भी अपनी एक शाखा मउ में खोलने की कोशिश की, लेकिन सफलता प्राप्त नहीं हुई।

जो सेना रसद विभाग, दीनापुर को पशुओं की आपूर्ति करने जा रहे थे। उन्होंने कसाइयों के चंगुल से उन पशुओं को मुक्त कराया था।

जून में बकरीईद के अवसर पर हिल्सा में गम्भीर दंगा भड़क उठा। इन दोनों मामलों की विशेष रिपोर्ट सरकार को भेजी गई थी।

यह आन्दोलन दरभंगा में १८८५ से आरम्भ हो चुका था, लेकिन कोई अशान्ति इससे नहीं फैली थी। इस आन्दोलन ने यहाँ अपनी मजबूत पकड़ बनाई। यह अन्य जिलों में भी व्यापक स्तर पर फैला लेकिन इसकी पहुँच से गया बच गया।

इस आन्दोलन का निम्नलिखित रूप में एक अत्यन्त संक्षिप्त विवरण है :

श्री विलियम की रिपोर्ट के साथ श्री मलिक, उप मंडल अधिकारी द्वारा मधुबनी सभा पर तैयार किया गया एक रोचक नोट संलग्न है।

जनवरी १८८५ में कोई बिहारी पाठक ने गोसंरक्षण हेतु सहायता प्राप्त करने के लिए राज प्रेस से छपवाकर एक परिपत्र जारी किया। तथापि, बिहारी पाठक एवं उसके भाई दरबारी दोनों नगरपालिकाओं के आयुक्त थे तथा इस आन्दोलन के सूत्रधार थे। ये लोग प्रतिष्ठित भी थे जिसकी वजह से यह आन्दोलन चलता रहा। लेकिन १८८८ में यह मंद पड़ गया उस समय इसे पंडित जगत नारायण ने पुनर्गठित किया था। इस हेतु पत्र भेजे गए तथा भाषणों के आयोजन किए गए जिनसे पर्याप्त मात्रा में सहायता मिली। परिणाम स्वरूप दो वर्ष में मुजफ्फरपुर में लालगंज, हाजीपुर और सीतामढ़ी तथा दरभंगा में तेजपुर, मधुबनी, रोसेरा एवं दल सिंह सराय में सभाओं ने कार्य करना आरम्भ कर दिया। इनमें से अन्तिम चार अभी तक कार्यरत हैं तथा अपनी शाखाओं के माध्यम से कार्य को और बढा रही हैं सीतामढ़ी शाखा इसी तरह से कार्यरत मधुबनी सभा की एक शाखा है। इन सभाओं के उद्देश्य पूर्णतः वैध एवं सुस्पष्ट हैं वे किसी को भी हानि पहुँचाने वाले नहीं है। सभी ने अपनी-अपनी गोशालाएँ चलाई हैं। दरभंगा की सभा के पास दरभंगा की गोशाला के अतिरिक्त एक अन्य सम्बद्ध गोशाला राकबेरिया में भी चलाई जा रही है जिसमें से प्रत्येक में २०० से ३०० पशु हैं। आरम्भ से ही सभाओं ने उपदेशकों की नियुक्तियाँ की हैं। विशेषरूप से मधुबनी सभा द्वारा, परिपत्र जारी किए गए थे। यह भी यहाँ उल्लेखनीय है कि इनमें से दूसरी सभा दरभंगा में अपनी स्थापना की बात को नकारती है। वह दावा प्रस्तुत करती है कि इसकी स्थापना १८८८ में कुछ विद्यालयीन छात्रों द्वारा सोनपुर के मेले में गो उद्धारकों के भाषण को

सुनकर उनके लौटने पर की गई थी। यह निश्चित रूप से दरभंगा-सभा के हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं करती जबकि नागपुर सभा का आधिपत्य स्वीकार करती है एवं प्रायः वहीं से सलाह प्राप्त करती है।

दरभंगा सभा के अध्यक्ष महाराजा हैं। हाल ही में नागपुर सभा ने उन्हें अनुरोध किया है कि वे बिहार, उत्तर-पश्चिम एवं मध्य सूबों की सभी सभाओं की अध्यक्षता स्वीकार करें, लेकिन अभी तक यह मामला स्थगित है। महाराजा शक्ति सम्पन्न हैं। वे प्रति वर्ष ६०० रू. का अंशदान देते हैं। उनके निजी कार्यालय में प्रायः बैठकें आयोजित होती हैं। उनके निजी सचिव बाबू तलपति सिंह उसके उपाध्यक्ष हैं। तलपति सिंह के भाई (भूतपूर्व उपाध्यक्ष) २०० रू. प्रति वर्ष अंशदान देते हैं। इसके सचिव अभी तक बाबू कालीपद बेनर्जी डेल्टन विद्यालय के मुख्याध्यापक थे। सहायक सचिव डाकघर में कार्यरत एक लिपिक लाल सिंह था जो इस सभा का लगभग समस्त कार्य करता था। तथापि, अगस्त में, पहले व्यक्ति ने इस्तीफा दे दिया तथा दूसरे व्यक्ति का स्थानांतरण हो गया। बाबू राम धनी लाल, सहायक सरकारी वकील, एवं सभा के पुराने उत्साही समर्थक ने हाल ही में इस सभा में सक्रिय भूमिका निभाना बंद कर दिया है।

नलसिंह सराय में स्व. नरहन जमींदार ५० रू. वार्षिक अंशदान दिया करते थे, रोसेरा में नगरपालिका के उपाध्यक्ष इसके अध्यक्ष हैं तथा एक अन्य व्यापारी सचिव है लेकिन इसके असली नेता विशेश्वर मारवाड़ी हैं। तेजपुर शाखा को समस्तीपुर के व्यापारियों से प्राप्त अंशदान से अत्यधिक ऊर्जाबल प्राप्त होता है।

मधुबनी सभा के अध्यक्ष बाबू दुर्गादत्त सिंह एवं हरखधारी सिंह, दोनों जमींदार हैं। इसका समस्त कार्य दो सचिवों - लाल बिहारी लाल, मुख्तियार, एवं महाबीर प्रसाद मिडिल वर्नाक्यूलर स्कूल के द्वितीय शिक्षक द्वारा किया जाता है। इन सचिवों में से दूसरा व्यक्ति अधिकांश कार्य संपन्न करता है। इसे अत्यन्त कुशल एवं योग्य व्यक्ति कहा जाता है। यह व्यक्ति सभा के कार्यों को व्यवसाय की भाँति ही करता है। सीतामढ़ी के अतिरिक्त मधुबनी सभा की एक शाखा भागलपुर में परताबगंज में भी है। इसकी एक शाखा पंडोअल में भी खोली गई थी लेकिन चल नहीं पाई। एक अन्य शाखा फूलप्रास में खोलने के लिए पूरे प्रयास किए जा रहे हैं। दलसिंह सराय ने भी अपनी एक शाखा मउ में खोलने की कोशिश की, लेकिन सफलता प्राप्त नहीं हुई।

खंड ख : सभाओं की गतिविधियाँ, उनके दूत या उपदेशक, चित्रों एवं पुस्तिकाओं का वितरण, निधियों की प्राप्ति एवं वितरण

ये सोसाइटियाँ सारन, दरभंगा एवं शाहाबाद में अत्यन्त सक्रिय रूप से कार्यरत बताई गई हैं। मुजफ्फरपुर एवं मोतिहारी में कोई सोसाइटी नहीं है। पटना में कोई भी सभा कभी सक्रिय नहीं रही। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, गया में यह आन्दोलन लगभग समाप्त हो चुका है। सर्वाधिक शक्तिशाली सभाएँ छपरा, दरभंगा, मधुबनी एवं सीतामढ़ी की सभाएं हैं जो अपने उद्देश्य से भी अधिक कार्य सिद्ध करती हैं।

जहाँ तक जासूसों एवं उपदेशकों का सवाल है, ये प्रत्येक जिले में बाह्य आन्दोलनकारियों के रूप में, मुख्यतः बनारस से तथा उसके आसपास से भ्रमणशील साधु हैं वे कभी कभी सौ या उससे भी अधिक संख्या में होते हैं ये लोग गोहत्या एवं पशुहत्या के विरोध में अपने धर्म सिद्धांतों के अनुसार भाषण देते हैं तथा उस उद्देश्य के लिए चंदा वसूलते हैं। ये लोग स्थानीय गोरक्षिणी सभाओं के प्रत्यक्ष आदेशों के आधीन कार्यरत नहीं होते हैं, क्योंकि इनमें अपने वेतनभोगी उपदेशक (ब्राह्मण लोग) तथा चंदा प्राप्त करनेवाले लोग होते ही हैं।

गया में १८८९ में मुख्यरूप से बाहर से अतिथि श्रीमन स्वामी, १८९१ में हंस स्वरूप स्वामी, १८९२ में पंडित जगत नारायण तथा १८९३ में गोपालानंद स्वामी (आन्दोलनकारी गया में बकरीईद से थोड़े समय पहले आये लेकिन जैसे ही उनकी पहचान कर ली गई, गोरक्षिणी सभा ने स्वयं उन्हें वहाँ से चलता कर दिया।) स्थानीय मुख्य उपदेशकों में औरंगाबाद के पंडित अयोध्या मिश्र, भानूभगत तथा गोपी भगत अहीर शामिल हैं। श्री मैकपर्सन की रिपोर्ट मूल रूप में परिशिष्ट-बी में शामिल है। सारन में बाहर के उपदेशकों में १८८८ में तथा उसके पश्चात् प्रत्येक वर्ष जगत नारायण, १८९० में इलाहाबाद के किशोरीलाल थे। १८९३ में बलिया जिले के सिकंदरपुर के राम गुलाम पंडित, गोरखपुर के सलीमपुर के पिंडी पुलिस थाना के अमरपथ, बलिया में नगरा के जगदेव बहादुर, हरिद्वार के हेमनाथ पंडित, गोरखपुर के महावीर उपाध्याय, तथा गोरखपुर में बैकुंठपुर के गोविंददास उर्फ पोवारी बाबा बाहर के उपदेशक थे। जिला पुलिस अधीक्षक ने मुख्य साधुओं की एक सूची पुलिस महानिरीक्षक के पास भेजी है। मुख्य स्थानीय लोगों में शामिल हैं : नोन सिंह चौबे,

किसनपाली के तारपिसिर मिसिर, दरौली के सुबतपथ पंडित, हर किसय सिंह, बलदेव सिंह, देवनारायण सिंह, तथा किशनपाली के रामेश्वर सिंह तथा रामचरन पारे या चुन्नीलाल का नाम का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है।

निम्नलिखित लोगों को बाहर के उपदेशकों के रूप में लाया गया : बाबा दुर्गाप्रसाद, पूर्व सरकारी वकील, जानकी प्रसाद और गोविंद प्रसाद, मेड्वा के जमींदार, तथा मझौली की रानी।

छपरा में जिलाधीश के कार्यालय में सरिश्तदार के पद पर कार्यरत व्यक्ति भी इन उपदेशकों की आवभगत करता हुआ बताया जाता है। शाहाबाद में बाहर के आन्दोलनकारी मात्र गोपालानंद स्वामी एवं बलिया सभा के वेतनभोगी देवकीनंदन तिवारी हैं। यह भी पता चला है कि मुजफ्फरपुर के हंस स्वरूप भी जगदीशपुर आए थे तथा उन्होंने लगभग तीन माह पूर्व भाषण दिए थे। किसी भी स्थानीय उपदेशकर्ता का नाम प्राप्त नहीं हुआ है। यह आन्दोलन पत्र भेजकर तथा उन्हें हाथोंहाथ परिचालित करके मुख्यरूप से चलाया जाता है। जगदेव बहादुर को हाल ही में दुमराउ के आसपास देखा गया लेकिन उसे तुरन्त दीवान के सहायक ने गिरफ्तार कर लिया तथा उत्तर पश्चिमी सूबों के प्राधिकारियों को सोंप दिया।

श्री गिबन ने जिन नामों के सम्बन्ध में रिपोर्ट में उल्लेख किया है उनमें चम्पारन में मुख्यतः श्रीमन स्वामी (१८८८) तथा गोरखपुर में बैकुंठपुर के पौवारी बाबा तथा हाल ही में गंगा नारायण भट्टाचार्य (जो फिर भी, स्वयं को धार्मिक मामलों से अलग बताता था) और बलिया के रूप नारायण पांडे शामिल हैं। इस व्यक्ति को बैरा गाँव के बाबुओं और बेतिया में डोमरिया लोगों बुलाया था। यह व्यक्ति अब अपने चाचा आदित पांडे के साथ पुलिस पर्यवेक्षण में रह रहा है। विगत छह सप्ताह में राम चरन पारे उर्फ चुन्नी लाल (सारनवासी) भी दिखाई दिया लेकिन उसके वहाँ होने में तथा उसकी गतिविधियों में कुछ भी संदेहास्पद नहीं लगा। हाल ही में, वहाँ कसाइयों तथा दूसरे लोगों को अपने पशु बेचने के खिलाफ पुस्तिकाएँ असामान्य रूप से परिचालित की जा रही थीं। मुजफ्फरपुर में मुख्यरूप से बाहर से आनेवालों में रामचरन पारे तथा शिव गोविंद उपाध्याय - दोनों उपदेशक, बलदेव पारे, अंशदान संग्राहक, तथा सरत तिवारी, ग्वाला - ये सभी सारन के रहे हैं। स्थानीय उपदेशकों के मुखिया विंध्याचल प्रसाद उर्फ हंस स्वरूप स्वामी हैं (देखें परिशिष्ट-सी) यह नहीं पता चला कि इन्हें

आश्रय कौन देता है। रामचरन और उनके साथी धर्मशाला में ठहरते हैं।

पटना में कोई भी बाह्य आन्दोलनकारी व्यावसायिक रूप में नहीं पाया गया है। शहर की सभा ने निम्नलिखित वेतनभोगी उपदेशकों को नियुक्त किया है : पटना के छोटा लाल, आरा के महावीर पारे, बनारस के गणेश दास तथा एक गया का ब्राह्मण जिसका नाम अज्ञात है।

दरभंगा आनेवाले मुख्य लोग निम्नलिखित हैं

(१) अलाराम स्वामी जो जिले में कई बार आए तथा प्रायः सड़क चुंगी मुख्य लिपिक के घर रहे।

(२) जगत नारायण जो प्राय कालियास्थान के महाजनों के यहाँ रुके।

(३) अंबिका दत्त व्यास, भागलपुर के एक विद्यालय के पंडित।

(४) मदनमोहन मल्लानी, हाईकोर्ट के वकील, इलाहाबाद।

(५) कुमार क्रिष्ट प्रसन्न सेन, संन्यासी।

(६) विंध्याचल प्रसाद उर्फ हंसस्वरूप स्वरूप स्वामी, मुजफ्फरपुर (जिनके सम्बन्ध में विवरण परिशिष्ट-सी में देखा जा सकता है)

(७) मकसूदन अचारी, छपरा, जो हाल ही में जिले में आए थे लेकिन उन पर बहुत ध्यान नहीं दिया गया।

दरभंगा सभा ने उपदेशकों को नियुक्त करना विगत दो वर्षो से बंद कर दिया था लेकिन हाल ही में इसने एक उपदेशक को ३० रूपये प्रति माह पर रखने के लिए विज्ञापन दिया है। इस हेतु केवल एक आवेदन पत्र आजमगढ के शेर अली नामक मुसलमान से प्राप्त हुआ है। तथापि, इस सभा के कस्बे के प्रत्येक मुहल्ले में रामायण और भागवत के पाठक कार्यरत हैं।

ऐसा लगता है कि उपर्युक्त उपदेशकों को प्रत्येक बार आने की एवज में ५० से ६० रू. मिलता है (मात्र अलाराम स्वामी को छोड़कर, जो कोई भी भुगतान नहीं लेते) उनका अत्यन्त प्रभाव है। स्थानीय मुख्य आन्दोलनकारियों में मधुबनी के पंडित राम अनुग्रह त्रिवेदी (जो सीतामढ़ी सभा के अध्यक्ष भी हैं) तथा बंगवासी के संवाददाता एवं वकील भुवनेश्वर मिसिर शामिल हैं।

चित्रों एवं पुस्तिकाओं का वितरण नियमित उपदेशकों एवं सभा के कर्मचारियों द्वारा व्यापक स्तर पर किया जाता है। साधू संन्यासी भी चित्रों को अपने साथ ले जाते

हैं तथा विज्ञप्तियों को परिचालित करते हैं। इसमें पत्र या चिट्ठियाँ भी समाहित हैं जो कि हाथोंहाथ वितरित किए जाते हैं प्रत्येक प्राप्तकर्ता को इनकी निर्धारित प्रतियाँ (प्रायः पाँच) तैयार करके आगे कई गाँवों में भेजना होता है।

गया में काफी संख्या में पुस्तिकाएँ परिपत्रित की गईं जो बनारस और नागपुर में मुद्रित की गई थीं। ये न तो उत्तेजक भाषा में थीं और न इनमें कुछ भी बात आपत्तिजनक ही थी। एक गाय के समस्त शरीर पर हिन्दू देवताओं के चित्र के साथ एक तस्वीर बकरीईद के तुरन्त पहले प्राप्त हुई। (यह दरभंगा एवं मोतिहारी में प्राप्त तस्वीरों के समान ही थी।) यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि १८६७ अधिनियम ३ धारा २५ के अनुसार मुद्रण स्थल का नाम इस पर अंकित नहीं है। चिट्ठियों पर भी कोई उल्लेख नहीं है। सारन में परिपत्रित की गई दो पुस्तिकाएँ परिशिष्ट-ई में दी गई हैं। इस जिले में असंख्य चिट्ठियाँ भी परिपत्रित की गईं जिनमें से एक के अनुवाद को पहले ही प्रस्तुत किया गया है। इसके अनुसार हिन्दुओं को मुहर्रम में भाग लेने तथा मुसलमानों को तेलियों या गोंडो द्वारा आपूर्ति करने के लिए मनाही की गई है।

शाहाबाद में कोई भी पुस्तिका या तस्वीर नहीं पाई गई लेकिन बलिया तथा उसके समीपवर्ती गाँवों में बहुत बड़ी संख्या में चिट्ठियाँ घुमाई गईं। भाबुआ थाने में जब्त की गई इनमें से दस चिट्ठियों का सारानुवाद मैं इसके साथ संलग्न कर रहा हूँ।

चम्पारन में रूपनारायण पांडे से पाँच पुस्तकें जब्त करने की रिपोर्ट प्राप्त हुई है। ये पुस्तकें सामान्य हैं लेकिन एक चित्र में एक गाय के सम्पूर्ण शरीर पर हिन्दू देवताओं के चित्र अंकित हैं तथा इसमें एक मुसलमान को गाय की हत्या करते हुए दिखाया गया है तथा हिन्दूलोग उसे ऐसा करने से रोकते हुए दिखाए गए है। बहुत सी चिट्ठियों के घुमाए जाने की बात का भी अंदेशा है लेकिन इनमें से किसी को भी जब्त नहीं किया गया हैं, साथ ही, इनके लिखनेवालों का या इनके मूल स्रोत का कुछ भी पता नहीं चला है।

मुजफ्फरपुर या पटना में कोई भी उत्तेजना फैलानेवाली पुस्तक, पुस्तिकाएँ या तस्वीरें परिचालित नहीं की गई हैं।

दरभंगा में इस तरह का साहित्य पर्याप्त मात्र में परिचालित किया गया है जो मधुबनी सभा द्वारा जारी किया गया है या बाँकीपुर, गया और बनारस के मुद्रणालयों से छपवाकर मँगाया गया है जहाँ मुद्रणालयों को थोड़ी अधिक स्वतंत्रता दी गई है।

हिन्दुस्तान एवं गणसेवक समाचारपत्र भी कुछ हद तक इन्हें परिचालित करते हैं। प्रभुदयाल द्वारा प्रकाशित पत्र को उत्तेजक एवं विवादास्पद करार दिया गया है जिसमें मुसलमानों के गोहत्या विरोधी विचारों को द्धृत किया गया है तथा सूअरों की हत्या का विरोध करने के लिए मुसलमानों को सलाह दी गई है। चम्पारन एवं गया में प्राप्त चित्र के समान गाय के एक बड़े चित्र को भी इसके साथ परिचालित किया गया है जिसे मुजफ्फरपुर में रंगीन प्रति के रूप में श्री लेमेसुरियर ने भी देखा था। इस मामले की जाँच की जा रही है। दरभंगा में भी दो मुद्रणालय हैं : (१) राज, एवं (२) संघ। पहला मुद्रणालय दरभंगा सभा का कार्य करता है। लेकिन यह अपेक्षाकृत अत्यन्त छोटा मुद्रणालय है। दूसरे का मालिक जिला बोर्ड का अधिकारी है, जिसने दरभंगा एवं सीतामढ़ी सभाओं के प्रकाशित परिपत्रों की एक सूची भेजी है, जिनमें कुछ उत्तेजक प्रकृति के हैं। इनके नमूने परिशिष्ट में संलग्न किए गए हैं। मधुबनी में मधुबनी के बाबुओं के लिए एक पंडित ने बहुत सी पत्रिकायें कंपोज की हैं जिसमें से एक का अनुवाद श्री मलिक के नोट के साथ परिशिष्ट में रखा गया है जो पढ़ने पर निश्चित रूप से आपत्तिजनक लगता है।

मेरा ध्यान इस ओर भी आकर्षित किया गया है कि इनमें से कुछ परिपत्रों एवं पत्रिकाओं पर १८६७ के अधिनियम XXV की धारा ३ का अनुपालन करते हुए आवश्यक सूचना अंकित नहीं की गई है। मैं इस विषय पर जिला अधिकारियों को एक परिपत्र जारी करनेवाला हूँ।

निधिसंग्रह एवं वितरण : सभी मामलों में इस सम्बन्ध में समान पद्धति अपनाई गई है। मूलतः चंदा देना स्वैच्छिक दिखता है, लेकिन जैसे जैसे ये सभाएं दृढतापूर्वक स्थापित हो जाती हैं, सभी हिन्दुओं से नियमित रूप से चंदा एकत्रित किया जाता है। हिन्दु परिवार के प्रत्येक मुखिया ने घर के प्रत्येक सदस्य के प्रत्येक भोजन के हिसाब से एक चुटकी भोजन के बराबर अन्न एक तरफ रख देना होता है, व्यापारियों को अपने व्यापार से प्रति सैंकड़ा के हिसाब से एक पैसा अलग रख देना होता है, तथा विवाह, भोजन समारोहों या किसी मामले के जीतने पर इस हेतु दान देना आवश्यक होता है। कुछ जिलों में इन अधिकारियों को सभासद, तो कुछ में मुहर्रिर, तहसीलदार या यादा नाम से जाने जाने वाले अधिकारी यह चंदा एकत्रित करते हैं। यदि कोई चंदा देने से इन्कार करता है तो उसे धार्मिक जुर्माने के रूप में दंडित किया जाता है और

उसे गोमाँस भक्षण करने का पाप लगता है। इसके अतिरिक्त, बड़े बड़े जमींदारों से चंदा एकत्रित किया जाता है, (इस राशि को प्रायः सीधे सभा में जमा किया जाता है), साथ ही, उपदेशकों द्वारा श्रोताओं से चंदा वसूल करके लाया जाता है। गाय के चित्र युक्त टिन के बक्सों को दान एकत्रित करने के लिए विभिन्न विशिष्ट जगहों, बाजारों, डाकघरों, बनियों की दुकानों एवं ऐसे ही अन्य स्थानों पर भी रख दिया जाता है।

इसके अतिरिक्त, साधू भी चंदा इकट्ठा करते हैं। लेकिन ऐसा माना जाता है कि उनके द्वारा एकत्रित रूपयों में से अधिकांश भाग का या तो गबन हो जाता है या फिर किसी अज्ञात व्यक्ति को प्रेषित कर दिया जाता है। वास्तव में, आजमगढ़ एवं समीपवर्ती जिलों में इस आन्दोलन के एक नेता जगदेव बहादुर ने हाल ही में पुलिस को दिए अपने बयान में गबन की बात स्वीकार की है। अतः स्थानीय गोरक्षिणी सभाएँ इस स्रोत का इस प्रकार से खूब उपयोग करती हैं। गोशालायें खाद की बिक्री एवं बैलों की सेवाओं के प्रभार (पटना में चार आना) से कुछ आय प्राप्त करती हैं।

अधिकारियों का भी यही कहना है कि इस प्रकार से चंदा एकत्रित करने से उसका खूब दुरुपयोग, खूब गबन किया जाता है। गया सभा का आकलित व्यय ३७० रू. प्रति मास है जब कि शाहाबाद की चार सभाओं में से प्रत्येक की वार्षिक आय लगभग ३००० रू. है। छपरा, बेतिया या पटना की सभाओं के सम्बन्ध में आँकड़े प्राप्त नहीं हुए हैं लेकिन इनके प्रसार एवं गोशालाओं की विशालता को देखते हुए अवश्य ही खूब आय होगी। मुजफ्फरनगर के मजिस्ट्रेट को पता चला कि सीतामढ़ी की सभा का व्यय ९०० रू. है। उन्होंने यह भी टिप्पणी की है कि वेतन पर पशुओं के रखरखाव से अधिक व्यय किया जाता है। कुल मिलाकर अनुमान किया जा सकता है कि इन सभाओं की आय व्यय से अधिक है, इनके वेतनभोगी कर्मचारियों एवं अनियमित साधुओं की संख्या भी बहुत अधिक है। अतः इन्हें सभाओं के निहित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए वांछित रकम से कहीं अधिक रकम प्राप्त होती है। वास्तव में, सारन के मजिस्ट्रेट ने एक रिपोर्ट भेजी है कि छपरा सभा की हाल ही की बैठक में यह घोषणा की गई कि मवेशी मुक्त करने के मामलों में अभियुक्त व्यक्तियों की पैरवी करने एवं मुकद्दमा जीतने के लिए इस धन से खर्च किया जाएगा। इस हेतु पर्याप्त मात्रा में रकम भी खर्च की गई। स्थानीय भाषाओं एवं अन्य समाचार पत्रों में इस सम्बन्ध में आलेख आदि प्रकाशित कराने के लिए भी धन व्यय किया गया। यह भी कहा जाता है कि

इलाहाबाद की केंद्रीय समिति को भी अंशदान भेजा जाता है जैसा बेतिया के पूर्व महाराजा के द्वारा दिए गए २००० रू. के दान के सम्बन्ध में हुआ था। यद्यपि इस विषय में कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है। दरभंगा के मेजिस्ट्रेट ने सदर एवं मधुबनी सभाओं की आय व्यय का बिल्कुल सही विवरण प्राप्त किया है। इनमें से सदर सभा की आय ४०५८ रू. थी जो १८९१ के वर्ष में गिरकर १०४७ हो गई। परन्तु व्यय, आय से अधिक नहीं हुआ तथा पर्याप्त मात्रा में जमाशेष को निवेशित किया गया। इस सभा एवं मधुबनी की सभा (आय १२०० रू., व्यय ६२० रू. , जमाशेष निवेशित रू. १५००) का अत्यन्त कुशलता के साथ प्रबंध किया जाता था। यह प्रबंधन इसके तत्कालीन सचिवों द्वारा बिल्कुल व्यावसायिक पद्धति से ही किया जाता था। सभी जिलों में इसी पद्धति से कार्य होता था। इसकी एक अन्य विशेषता पर टिप्पणी करने की भी अत्यन्त आवश्यकता दिखाई देती है। वह यह है कि सरकारी कार्मिकों ने इस आन्दोलन में अपना समर्थन दिया है। इस प्रकार गया में उपजिलाधीश एवं मुंसिफ इसके क्रमशः उपाध्यक्ष रहे। छपरा में जिलाधीश के कार्यालय का सरिस्तदार उपदेशकों की आवभगत करता है तथा कार्यालय का मुहर्रिर चंदा पेटियों के चंदे को निकालकर जमा करता है, जब कि मधुबनी में रू. १८-१३ के कुल चंदे में से १० रू. से अधिक का चंदा उपमंडलीय कार्मिकों द्वारा दिया जाता है। शिक्षा और डाक विभागों के अधीनस्थ कर्मचारी इस आन्दोलन में बढचढकर भागीदारी करते हैं। लगभग सभी जिलों में सरकारी वकील इनमें सबसे पहले भागीदारी करते हैं।

खंड क : परिपत्र के अनुच्छेद ३ का उत्तर

पिछले हिल्सा मामले में अपने सहधर्मियों के खर्चे को वहन करने के लिए मुसलमानों द्वारा चंदा इकट्ठा करने के इस एक मामले को छोड़कर उनकी ओर से किसी भी संगठन द्वारा पशु हत्या विरोधी आन्दोलन के सम्बन्ध में अन्य कोई मामला मेरे ध्यान में नहीं आया है।

समाधान हेतु पंचायतें (परिपत्र का अनुच्छेद ५) : मुझे प्राप्त हुई सभी रिपोर्टों के अनुसार सभी इस विचार के प्रतिकूल हैं। यह मुद्दा उठाया गया है कि सिद्धांत के विषय में हिन्दू कभी झुकेंगे नहीं। वे इस बात को कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे कि पशु हत्या होती रहे। मुसलमान (कम से कम शिक्षित वर्ग के मुसलमान) हिन्दुओं से इस

पर समझौता करने के लिए तैयार हैं तथा इस विवाद पर आम बूचड़खाने के सम्बन्ध में भी बात करने को राजी हैं परन्तु वे पशुहत्या के अपने धार्मिक विधि विधान तथा माँस भक्षण करने के अधिकार का त्याग नहीं करेंगे। अतः इन मिश्रित पंचायतों का एकमात्र परिणाम शून्य है। ये दोनों समुदायों में कटुता ही बढाएँगी। मैं इस सम्बन्ध में श्री हेर की निम्नलिखित टिप्पणी को उद्धृत कर रहा हूँ, "मैं नहीं मानता कि इस जिले में पंचायतों की रचना करना किसी भी दृष्टि से उपयोगी होगा, निश्चित रूप से उन गाँवों तो बिल्कुल भी नहीं, जहाँ मुसलमान अत्यन्त अल्पसंख्यक है। अतः इस सम्बन्ध में इस जिले में नियमन हेतु प्रत्यक्ष ध्यान देना आवश्यक नहीं है... मेरा विचार है कि यदि हिन्दू इस मुद्दे पर अपनी माँगे सीमित करना चाहें तो यह आन्दोलन किसी भी दृष्टि से घातक नहीं हो सकता। मेरा विश्वास है कि वे इतना खुलकर बहुत अधिक नहीं कहेंगे लेकिन वे पशुहत्या को पूर्ण रूप से बंद करने को छोड़कर और किसी बात का स्वीकार नहीं करेंगे।

इस सम्बन्ध में मेरे अपने विचार जिला अधिकारियों के विचारों के अनुरूप ही है। मेरा मानना है कि तनाव की वर्तमान स्थिति में दोनों पक्षों को किसी सौहार्दपूर्ण ढंग से समझौता करने के लिये प्रेरित करने की दिशा में किया गया कोई भी सामान्य प्रयास खतरनाक सिद्ध होगा। साथ ही, मेरा मानना है कि सरकारी परिपत्र के अनुच्छेद ५ के (ए), (बी) और (सी) ३ खंडों में उल्लिखित मामले में सरकार द्वारा आम अभिव्यक्ति हेतु ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। इस हेतु जिला अधिकारियों को फौजदारी कार्यवाही कोड की धारा १४४ के तहत कार्यवाही करने के निर्देश देने की भी आवश्यकता है। जब भी ऐसी स्थिति पैदा हो, वे इस धारा के अनुसार कार्यवाही करेंगे तो सम्भवतः इसका विधायक प्रभाव पडेगा। जब मजिस्ट्रेट दोनों पक्षों के स्थानीय नेताओं की राय लेकर ऐसे मामलों का निपटारा करना चाहेंगे तो इसमें किसी भी प्रकार से बिना प्रत्यक्ष रूप से उलझे तथा बिना दोनों पक्षों की टकराहट से सरकार के उद्देश्य की सिद्धि होगी।

खंड घ : आम शान्ति बनाए रखने के लिए अपनाए गए या अपनाए जानेवाले विशेष उपाय : (सरकार के पत्र का अनुच्छेद ६)

अब यह नियमित और निरपवाद बात हो गई है कि चाहे कहीं भी गोहत्या की घटना हो या धार्मिक दंगा, सम्बन्धित गाँवों में १८६१ के अधिनियम ५ की धारा १५

के तहत अतिरिक्त पुलिस को लगा दिया जाता है। इस प्रकार की कार्यवाही गया में १० मामलों में, पटना में दो मामलों में तथा हाल ही में शाहाबाद के कोठ में एक मामले में की गई। बसन्तपुर में पुलिसबल लगाए जाने के प्रस्ताव को सरकार के पास विचारार्थ भेजा ही गया है। मैं इस बात से पूर्णतः सहमत हूँ कि इस प्रकार की कार्यवाही के परिणाम स्वरूप शीघ्र ही शान्ति स्थापित होती है। दण्डात्मक अभियोजनों को पकड़ने के लिए ऐसा करना अपरिहार्य हो जाता है। अन्यथा ऐसी स्थिति से यथासम्भव मेरे विचार से, बचना ही चाहिए। ऐसी स्थिति परिणाम के विषय में अनिश्चित होती है, दण्डित अपराधी इसके परिणाम स्वरूप शहीद घोषित हो जाते हैं, आग में घी डालने के प्रयास होते हैं तथा इससे आन्दोलन और अधिक तेज होने लगता है। मैं मानता हूँ कि सरकार को ऐसी स्थिति में अपनी शक्ति का प्रदर्शन इस रूप में करना चाहिए कि प्रतिवादी अदालत की परिधि में ही रहकर चुनौती दे सके क्योंकि आम जनता के साथ संघर्ष करके राजद्रोही करतूतोंवाले लोगों के खिलाफ कानूनी साक्ष्य के रूप में प्रायः कुछ भी नहीं लाया जा सकता।

उपर्युक्त कदम उठाए जाने के अतिरिक्त दूसरे जिलों से पुलिस की अतिरिक्त कम्पनियां वहाँ लगा देनी चाहिए तथा इसी के अनुरूप निम्नलिखित जिलों - गया, शाहाबाद, चम्पारन, सारन और मुजफ्फरपुर - में ५० अतिरिक्त सशस्त्र जवानों का दल विशेष रूप से प्रत्येक जिले में तैनात किया गया है तथा सेनापुलिस की एक कम्पनी को भागलपुर से बाँकीपुर में स्थानांतरित किया गया है। सभी स्थानों से प्राप्त रिपोर्टों के अनुसार प्राधिकारियों की ओर से सर्वत्र चौकसी बरतने की पर्याप्त तैयारी प्रदर्शित होती है इसे पूर्ण रूप से गोपनीय भी रखा गया है। इसका प्रभाव अत्यन्त अनुकूल रहा है। आम शान्ति बनाए रखने के लिए कानूनी रूप से कदम उठाए जाने की भी अत्यन्त आवश्यकता होती है जिसकी बात मैंने भेजी हुई गोपनीय रिपोर्ट में भी कही गई है।

खंड ई : सार : पूर्वोल्लिखित तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि गोसंरक्षण सोसाइटियों का सर्वप्रथम आरम्भ १८८५ (दरभंगा) में हो गया था तथा ऐसी ही सोसाइटियाँ गया एवं छपरा में वास्तव में १८८७ में आरम्भ हुई थीं। फिर भी, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वर्ष १८८८ का रहा क्योंकि लगभग सभी जिलों में या तो श्रीमन स्वामी या पंडित जगत नारायण का या फिर अलाराम स्वामी का आगमन इस वर्ष हुआ था। इस हेतु सोनपुर के मेले में इस विषय पर दिए गए भाषणों से भी लोगों के उत्साह

में वृद्धि हुई थी तथा उसका भी लाभ प्राप्त हुआ था। परिणामतः कई जिला मुख्यालयों में नई सभाएँ बनीं तथा पुरानी सभाएँ अपने स्वैच्छिक उद्देश्य से हटकर लोगों से अनधिकृत रूप से चंदे वसूल करने या कर लगाने जैसे कार्य अधिकारपूर्वक करने लगीं। सभी हिन्दू इनके जातिगत जुर्मानों से आतंकित होने लगे। इस निधि से गोशालाएं बनाई गईं, उपदेशकों को नियुक्त करके उन्हें विज्ञप्तियां एवं पावती पुस्तिकाएँ देकर उनके माध्यम से निधि एकत्रित की गई एवं सभाओं की अन्य शाखाएँ आरम्भ की गईं। इस हेतु आगे के उनके प्रयास मुख्य रूप से गया, दरभंगा एवं मुजफ्फरपुर में पूर्ण रूप से सफल सिद्ध हुए। इसी वर्ष गोउपदेशक साधुओं के बडे समूह पहली बार दिखाई देने लगे। इनके द्वारा अब इस आन्दोलन को मुख्य रूप से हवा दी जाती रही है। इनके इकट्ठे होने के परिणाम स्वरूप इस दिशा में होने वाले व्यापक प्रसार से भाग्य किस ओर पलटता है, यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा जा सकता।

बाद के वर्ष तथा १८९० के वर्ष में गतिविधियाँ कुछ कम होने लगीं। तथा कई मामलों में (मुख्यतः गया में) सोसाइटियों का पुनर्गठन किया गया तथा नए पदाधिकारियों की नियुक्तियां की गईं।

१८९१ के आरम्भ में शाहाबाद में ब्रह्मपुर में गोमुक्ति हेतु दंगा हुआ। कुछ ही समय पश्चात् गया कस्बे में भी दंगा भड़का। इस वर्ष तथा पूर्ववर्ती वर्ष में हंस स्वामी उर्फ विंध्याचल प्रसाद पशु हत्या विरोधी आन्दोलनकारी के रूप में लोगों का ध्यान आकर्षित करते हुए देखे गए। गया के आसपास के प्रदेशों में कई ग्रामीण सभाओं का श्री गणेश हुआ था।

वर्ष १८९२ कुछ शान्तिपूर्ण बीता। केवल पटना में फातुहा में एक छिटपुट दंगा हुआ था। बकरईद के दौरान गया में दो या तीन पशुमुक्ति के मामले प्रकाश में आए थे। लेकिन दुर्भावना व्याप्त रही ही थी।

१८९३ के आधे भाग में पटना जिले में मशौरधी के पास भीषण दंगा हुआ था। इसके पश्चात् गया जिले में सात से आठ अत्यन्त भीषण दंगे हुए थे। तत्पश्चात्, बकरईद के अवसर पर हिल्सा के दंगे हुए। अगस्त के अंत में, शाहाबाद के कोठ में एक दंगा हुआ था। इसके एक सप्ताह पश्चात् बाला का दंगा हुआ था तथा सारन में बसन्तपुर थाना पर हमला हुआ था।

इन मामलों में, मुख्यतः गया और बसन्तपुर में, यह बात साफ तौर से

प्रस्थापित हो गई थी कि गोरक्षिणी सभाओं के दूत एवं उपदेशक और साधु जनमानस में उत्तेजना फैला रहे थे और इस प्रकार जनमानस लोगों को उकसा रहे थे। इसी तरह का प्रभाव वे सोसाइटियों द्वारा प्रकाशित साहित्य, मुख्यतः मधुबनी की सभा द्वारा प्रकाशित साहित्य का वितरण करके लोगों पर डाल रहे थे जिसके परिणाम स्वरूप हिन्दु पशुओं को कसाइयों के चंगुल से बलपूर्वक मुक्त कराने के लिए प्रत्यक्ष रूप से उत्तेजित हो रहे थे। चिट्ठियों या पत्रों ने भी इसी तरह का काम किया था। गोरक्षिणी सभाओं के प्रख्यात नेता इन्हें जारी कर रहे थे तथा बहुत बड़ी संख्या में इनका परिचालन इस उद्देश्य से किया जा रहा था कि हिन्दू अपरिचित लोगों को अपनी मवेशी न बेचें, मुहर्रम में न जाएँ तथा चूँकि मुसलमान गायों के हत्यारे हैं, उनसे किसी भी प्रकार का व्यवहार न करें, उनका बहिष्कार करें। कुछ मामलों में तो सभाएँ दंगे भड़काने के जुर्म में गिरफ्तार लोगों की पैरवी करने तथा उन्हें छुडाने हेतु चंदा एकत्रित कर रही थी।

इस मंडल में कार्यरत सभाओं की कुल संख्या २३ है जो निम्नानुसार है :

गया - ८, मुजफ्फरपुर - ३ , शाहाबाद - ४, सारन - १, चंपारन - १, पटना - २, दरभंगा - ४

इनमें गया की सभाओं को छोड़ बाकी अस्थाई तौर पर मृतप्राय हो गई थीं। अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं सक्रिय सभाएं थी - शाहाबाद में सासाराम, सारन में छपरा, मुजफ्फरपुर में सीतामढ़ी तथा दरभंगा में मधुबनी और दरभंगा की।

इन सभाओं के द्वारा, या प्रवासी साधुओं के द्वारा या चिट्ठियों या पत्रों के द्वारा परिचालित साहित्य के नमूने साथ में संलग्न हैं।

यह पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि इन सभाओं के लिए एकत्रित किए जाने वाला चंदा स्वैच्छिक रूप से नहीं बल्कि इस प्रकार दिया जाता था जैसे भारी जुर्माना भरने के लिए कर लगाया गया हो। अतः यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इन सभाओं की आय बहुत अधिक थी। इन सभाओं के कार्य एवं हिसाब-किताब की जाँच करने का कानूनी अधिकार मेजिस्ट्रेटों को होने पर भी तथा प्रयास किए जाने पर भी किसी भी सभा या उसकी शाखा का सही तरह से हिसाब-किताब एवं आय-व्यय विवरण की जाँच करवाना सम्भव नहीं हुआ। बहुत ही कम मामलों में हिसाब-किताब तथा लेखा उपलब्ध हुए। उनकी छानबीन करने से पता चला कि सभाओं की आय व्यय से कहीं

बहुत अधिक थी तथा इसमें भी अत्यन्त अनियमितता और अटकलबाजी थी। प्रश्न उठता है कि इस अतिरिक्त आय का उपयोग कहाँ किया जाता था। परन्तु इस सम्बन्ध में आगे कोई भी जानकारी नहीं मिलती। साधुओं के द्वारा एकत्रित धनराशि में तो और भी अधिक धाँधली हुई थी।

सभाओं के दूतों एवं उपदेशकों के नाम रिपोर्ट में दिए गए हैं। मुख्य आयोजकों में श्रीमन स्वामी, अलाराम स्वामी, पंडित जगत नारायण एवं हंस स्वरूप स्वामी के नाम लिए जा सकते है जबकि गोपालानंद स्वामी एवं जगदेव बहादुर के नाम सामान्यतः दंगे के अग्रसर के रूप में दिखाई देते है।

भ्रमणशील साधुओं के सम्बन्ध में मैं समस्त जानकारी एकत्रित करना चाहता था, परन्तु कर नहीं पाया। श्री मैक मीसूरियर को विशेष रूप के इस कार्य में लगाया इस लिये मैं मानता हूं कि इस सम्बन्ध में आगे वे और जानकारी प्राप्त करेंगे। विश्वास है कि ये लोग किसी अज्ञात एजेंसी के लिए उसके इशारे पर कार्यरत थे यद्यपि इनके कार्य निस्संदेह धार्मिक निस्सारता के सम्बन्ध में थे तथा इनकी इन गतिविधियों से धन प्राप्त करने की इच्छा भी शामिल थी। जहाँ भी दंगे भड़के, वहां इनके कार्यों में एकरूपता देखी गई जो इस सिद्धांत की संभाव्यता की ओर संकेत करती है कि ये किसी आयोजक के हाथ की कठपुतली की तरह कार्यरत थे। बसन्तपुर के दोनों दंगों के कारण बलिया के दोनों दंगों के समान ही थे। इसकी घोषणा गोरखपुर में बैकुंठपुर के महान पौहारी बाबा के अनुयायी साधुओं ने की थी। उन्होंने कहा था कि जब तक पशुओं को मुक्त नहीं कराया जाता, वे अन्नजल नहीं लेंगे। इस सम्बन्ध में यह भी दृष्टव्य है कि पूर्वनियोजित रूप से दंगा भड़काने के लिए बाजार वाले दिन का चयन किया जाता था। कोठ और बसन्तपुर में यही तरीका कारगर रहा। बाजार में दंगा भड़काने वाले लोग अवैध रूप से एकत्रित होते थे। उनकी उपस्थिति उनके पकडे जाने के लिए संभाव्य कारण बन सकती थी। बाजार में आनेवाले लोगों को इस आन्दोलन में भर्ती करने हेतु इसके आयोजक उत्सुक रहते थे। लेकिन बसन्तपुर के मामले में यह सिद्धांत लागू नहीं होता।

सोसाइटी के नियमों को भंग करने पर किसी भी दोषी पर सोसाइटी की अदालत में मुकद्दमा चलने का कोई भी साक्ष्य मैं नहीं जुटा पाया। लेकिन जैसी कि मैंने पहले ही टिप्पणी की है ये सभाएँ अब स्वैच्छिक सभाएं नहीं रह गई थीं क्योंकि इनके

लिए चंदा स्वैच्छिक रूप में इकट्ठा न किया जाकर कर के रूप में धार्मिक अभित्रास देकर एकत्रित किया जाता था और इसमें स्वेच्छा की भावना नहीं थी। ऐसा भी दिखेगा कि गलती करनेवाले बंधुओं पर मुकद्दमा चलाने के लिए पंचायत बुलाने की और उन्हें जुर्माना भंरने के लिए दंडित करने और जुर्माना न भरने पर जाति से बहिर्गत करने की भी सत्ता उनके पास थी। फिर भी, सरकारी वार्ड में मवेशी न भेजने की उनकी निषेधाज्ञा लागू होते हुए नहीं देख पाया। (फिर भी, मेरा मानना है कि वार्ड के राजस्व में सामान्य रूप से कमी आ गई थी अतः ऐसा हुआ होगा।)

यहाँ यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि उत्तर पश्चिमी सूबों की पुलिस द्वारा बलिया में कागजात जब्त करने के उपरांत पता चला था कि अन्य सभी सभाओं के अभिलेख नष्ट किए जा रहे थे। हमारे पास इसकी जानकारी बहुत ही कम है लेकिन यह कार्य और अधिक व्यापक स्तर पर किया जा रहा होगा।

विशेष सूचना : मैं इसके साथ निम्नलिखित संलग्नक अग्रेषित कर रहा हूँ :

(अ) श्री गिब्सन का नोट (देखिए, पृ. ४०८)

(आ) श्री मैकफर्सन की रिपोर्ट (संलग्नक श्री हैरिस की रिपोर्ट)

(इ) श्री विलियम्स की रिपोर्ट (मधुबनी सभा विषयक श्री मलिक के नोट समेत)

(ई) हंस स्वरूप स्वामी उर्फ विंध्याचल प्रसाद के जीवनवृत्त विषयक विवरण

(उ) गोरक्षिणी साहित्य के नमूने (१) दरभंगा से (२) सारन से

(३) शाहाबाद में परिचालित पत्रों के सारानुवाद

संलग्नक (१)

गया, ८ अक्टूबर १८९३

प्रेषक : डी. जे. मैकफर्सन, मजिस्ट्रेट, गया।

सेवा में, आयुक्त, पटना मंडल, बाँकीपुर।

बंगाल सरकार के गोपनीय परिपत्र सं. ६७ जे.डी., दिनांक गत मास ८ के सन्दर्भ में, जो आपके अर्धसरकारी पत्र दिनांक गत मास १२ के साथ अग्रेषित किया गया था, मैं आपको एक रिपोर्ट संलग्न करके भेज रहा हूँ जो मुझे जिला पुलिस अधीक्षक से प्राप्त हुई है और जिसमें पशु हत्या विरोधी आन्दोलन एवं गया में गोरक्षिणी

सभाओं की स्थापना के सम्बन्ध में विवरण दिए गए हैं। यह जानकारी उपमेजिस्ट्रेट बाबूराम अनुग्रह नारायण सिंह द्वारा प्राप्त की गई है। ये पहले आन्दोलन के वैध उद्देश्यों की प्राप्ति में हाल ही में महत्त्वपूर्ण सेवा दे रहे थे।

गया में आन्दोलन एवं गया गोरक्षिणी सभा का इतिहास।

निधि की प्राप्ति एवं व्यय।

२. गया में १८८७ में गोरक्षिणी सभा की स्थापना गया के अधिवासी बंगाली जमींदार बाबू भिखारी शंकर भट्टाचार्य द्वारा की गई। इस के साथ इस जिले में आन्दोलन की शुरुआत हुई। परन्तु काफी समय तक इस ओर बहुत कम लोगों का ध्यान गया। उस समय, इसके उद्देश्य पूर्णतः वैध एवं यथार्थ रूप में मानवीय एवं प्रशंसनीय थे। १८८९ के आरम्भ में श्रीमन स्वामी के इस जिले में आगमन से इस आन्दोलन को अत्यन्त वेग प्राप्त हुआ। इस आन्दोलनकारी ने बहुत सारे भाषण दिए तथा गाय की स्तुति में धार्मिक दृष्टि से ही नहीं, अपितु आर्थिक दृष्टि से भी गुणगान किया। उसके सम्बोधन का स्वर इस सम्बन्ध में कुछ बदला बदला सा था। एक मुसलमान मौलवी कमरुद्दीन, जो अभी जीवित है, ने कुछ हद तक इस आन्दोलन के प्रति अपनी रुचि दिखाई। परिणाम स्वरूप १५ अक्टूबर, १८८९ को टिकारी के पूर्व राजा राम बहादुर सिंह द्वारा दान में दी गई भूमि पर गया से नदी के दूसरे किनारे के पास गया गोरक्षिणी सभा के प्रबंधन में एक विशाल गोशाला की स्थापना की गई। तत्पश्चात् गायों की देखभाल करने, उन्हें कसाइयों के हाथों न बेचने तथा गया की गोशाला के लिए चंदा एकत्रित करने के लिए जिले के विभिन्न भागों में भेजने के लिए कार्यकर्ताओं की नियुक्तियाँ की गईं। प्रत्येक हिन्दू परिवार के मुखिया को परिवार के सदस्यों के प्रत्येक समय के भोजन से प्रति व्यक्ति अनाज एक तरफ रख देने (वजन में एक पैसे के मूल्य का) के लिए निर्देश दिए गए। हिस्सा न निकाल कर भोजन लेने वाले को गोमाँस खाने के बराबर पाप लगने का भागी घोषित किया गया। व्यापारियों एवं दुकानदारों को उनकी बिक्री से प्रति रुपया एक पैसा तथा नौकरी करने वालों को उनके वेतन का हिस्सा देने के लिए कहा गया। परिवार में आनंद के अवसर पर या किसी व्यक्ति द्वारा अदालत में मुकद्दमा जीतने पर दो या तीन रु. गोरक्षिणी सभा को

दान स्वरूप देने होते थे। साहूकार लोग प्राप्त ब्याज की कुछ प्रतिशत रकम गोरक्षिणी सभा को देते थे। लोग इकट्ठा होने वाले स्थानों पर छोटी छोटी दानपेटियाँ दुकानों आदि स्थानों पर रख दी जाती थीं। मुख्य जमींदार लोग भी थोडा बहुत अंशदान इन सभाओं को देते थे। गोरक्षिणी सभा के प्रवासी कार्यकर्ताओं द्वारा चंदा एकत्रित किया जाता था। इसका हिसाब करके उन्हें सभा में या गोशाला के प्रबंधक के पास जमा कर देना होता था। लेकिन १८९० में निधि में बहुत घोटाले किए गए। यह भी पता चला कि उसमें गबन किया गया था। तदुपरांत गया गोरक्षिणी सभा का पुनर्गठन वकील बाबू बलदेव लाल के तत्त्वावधान में किया गया। उन्हें सभा का उपाध्यक्ष नियुक्त किया गया था। उस कार्यालय में उन के पूर्वाधिकारी बाबू इन्द्र नारायण चक्रवर्ती, कनिष्ठ सरकारी वकील बाबू राज किशोर नारायण सिंह, उपजिलाधीश, तथा बाबू बृज मोहन प्रसाद, मुंसिफ थे जिन्होंने सभा के मामलों में सक्रिय रूप से बहुत कम प्रतिभागिता की थी। बाबू बलदेव लाल की नियुक्ति के समय ही नियमित रूप से हिसाबकिताब रखा गया। १८९१ एवं १८९२ में मासिक आय एवं व्यय लगभग ३०० रू. था या फिर यह पिछले वर्षों की आय से तिगुना हो गया था। चालू वर्ष में यह बढ़कर ३७० रू. हो गया था। गोशाला में बड़ी संख्या में पशु होने के कारण भी आय बढ़ गई थी। इस आय को मवेशी की देखभाल तथा कर्मचारियों पर तथा वार्षिक गोपाष्टमी समारोहों पर भी खर्च किया गया। सभाने १८९१ में या चालू वर्ष में अपनी निधि से अदालतों में चल रहे मामलों की पैरवी के लिए खर्च नहीं किया था। अतः इस निधि में खूब वृद्धि होती रही। सभा का लेखाकार एवं गोशाला का प्रबंधक एक ग्रामीण ब्राह्मण महाबली वाजपेयी है।

आन्दोलन में वृद्धि

३. जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, १८८९ के आरम्भ में श्रीमन स्वामी के भाषण के कारण इस आन्दोलन को अत्यन्त वेग मिला था। उसी वर्ष बकरईद के दौरान टिकारी थाना के काबर के ब्राह्मणों ने अपने पड़ोसी मुसलमान द्वारा हत्या किए जानेवाली गाय को मुक्त कराने का एक छिटपुट प्रयत्न अवश्य किया, लेकिन प्रमुख हिन्दुओं की विशेष सिपाहियों के रूप में नियुक्ति करने से यह मामला दब गया। आन्दोलनकारियों ने इस सम्बन्ध में विशेष कुछ नहीं किया। १८९१ में बकरईद के अवसर पर गया में एक भीषण दंगा भड़क जाने के कारण यह प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण

बन गया। जिला पुलिस अधीक्षक ने इसका उल्लेख करते हुए लिखा है कि मैना पंडित ने अपने मुसलमान पड़ोसी के घर में गाय की हत्या किए जाने की मंशा पर आपत्ति की इसलिये यह दंगा भड़का। लेकिन इस दंगे के भड़कने का कारण दूसरा था। कुछ दुष्ट प्रकृतिवाले मुसलमान एक गाय को हत्या करने के उद्देश्य से सजाकर हिन्दुओं के घरों के सामने से ले गये। हिन्दुओं ने इसका कड़ा विरोध किया। वहाँ से एक मुस्लिम उप मजिस्ट्रेट ने उस गाय के बदले में बकरियों की कुर्बानी देने के लिए उन्हें मनाया तथा गाय को पड़ोसी पंडित को दिलवाया तभी दंगा शान्त हुआ। मैंने इस मुद्दे का उल्लेख इस लिए किया कि इस प्रकार की घटना रिवाजी तौर पर किए गए कार्य में सबल पक्ष द्वारा विरोध करने के कारण पैदा होती है तथा हस्तक्षेप करने से दंगे के भड़कने की सम्भावना बनी रहती है। इस पर यदि समय रहते समझौतापूर्ण रवैया न अपनाया जाए तो भंग होने का खतरा पैदा हो सकता है। इसे यदि रोका न जाए तो इससे अत्यन्त अनिष्ट की सम्भावना पैदा हो जाती है और इसे दबाने के लिए आन्दोलन आरम्भ हो जाते हैं। इस मामले में दो समुदायों के बीच तनाव की स्थिति पैदा होने से दंगा भड़कने का भय था और यह भय उस समय तक नहीं शान्त हुआ जब तक दोनों समुदाय के नेता एक आम समझौते पर नहीं पहुँचे। इसके तहत उस गाय को बहुत अधिक कीमत चुकाकर खरीद लिया गया तथा उसे गया की गोशाला में भेज दिया गया। हालाँकि मैना पंडित की आपत्तियों से तनाव बढ़ने की सम्भावना थी लेकिन गोरक्षिणी सभा ने उस गाय को खरीदने के कारण कुख्यात लोगों को मौका ही नहीं मिल पाया। प्रमुख नागरिक एक आम सहमति पर पहुँचे इस लिये शान्ति बनी रही। लेकिन १८९१ की इस घटना से पशुहत्या विरोधी आन्दोलन ने और अधिक जोर पकड़ा। गरीब मुसलमानों को अपने शिकंजे में कसने के प्रयास किए गये। वे तो सस्ता होने के कारण बकरे की बजाय गोमाँस खाते थे। परन्तु इसकी वजह से गरीब तबके मुसलमानों को ऊँची कीमत का भोजन लेने के लिए बाध्य होना पड़ा। १८९२ में लोगों के दिमाग में यह बात घर करने लगी कि इस वर्ष की बकरईद पर शान्ति भंग होने की सम्भावना बनी रहेगी। लेकिन भागलपुर से सेना पुलिस बुलाकर वहाँ तैनात करके एहतियात के तौर पर कदम उठाए जाने के कारण तथा लोगों को सचेत करने के कारण कि थोड़ी सी भी अशान्ति फैलने पर दण्डात्मक अतिरिक्त पुलिस बल शहर पर लगा दिया जाएगा, नगर में शान्ति बनी रही, लेकिन जिले के विभिन्न भागों में हस्तक्षेप करने के

दो या तीन मामले अवश्य हुए। फिर भी, इनसे किसी भी प्रकार की अशान्ति नहीं फैली। इससे सभी को ऐसा लगा कि इसके पश्चात् आन्दोलन ठंडा पड़ जाएगा, परन्तु इस वर्ष के मार्च की समाप्ति पर यह अचानक पुनः व्याप्त हो गया। अशान्त भागों में अतिरिक्त पुलिस बल तैनात किए जाने पर ही यह शान्त हुआ। सभाओं के छुटभैये कार्यकर्ताओं द्वारा उत्तेजक भाषा का उपयोग करने के परिणाम स्वरूप यह हुआ। वे चंदा एकत्रित करने तथा हिन्दुओं को मुसलमानों को अपनी मवेशी न बेचने के लिए कहने के लिए मेले में गए थे। परिणामतः जिले के पश्चिमी आधे भाग में सुदूरवर्ती स्थानों पर छोटीछोटी सभाओं की स्थापना हुई। लोगों की धर्मांधता एवं कट्टरता के कारण से ऐसी घटनाएँ घटित होने की सम्भावना बनी रहती है। मुझे जानकारी दी गई कि जिले के पश्चिमी भागों में व्यापक स्तर पर सभाओं की स्थापना राँची जिला विद्यालय के एक पंडित द्वारा लगभग दो वर्ष पूर्व व्यापक रूप से भाषण देने के परिणामस्वरूप हुई थी। वे गया सभा से बिलकुल स्वतंत्र थी।

आन्दोलन की वर्तमान संख्या

४. जैसे ही यह पता चला कि यह आन्दोलन खतरनाक रूप लेता जा रहा है। इसमें विविध गोरक्षिणी सभाओं का हाथ है। इसके लिए उन्हें पूरी तरह से जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। उसके द्वारा किए गए अतिवाद का भी यह परिणाम है। अतः गया सभा के समस्त पदाधिकारियों ने अपना अपना इस्तीफा प्रस्तुत कर दिया तथा गोशाला का अनुरक्षण एक लेखाकार गोशाला प्रबंधक महाबली बाजपेयी तथा उन बनिया लोगों द्वारा किया जाने लगा जिन्होंने निधि हेतु बड़ी मात्रा में धन दिया था। इसके नए पदाधिकारियों का अभी भी चुनाव नहीं हुआ है। जैसा कि जिला पुलिस अधीक्षक की रिपोर्ट से ज्ञात होता है इस समय सभा पूर्णतः निष्क्रिय है। एक माह पूर्व एक कसाई के चंगुल से मुक्त कराकर लाई गई एक गाय तथा एक बैल को इस गोशाला ने रखने से इन्कार कर दिया था। दूरवर्ती इलाकों की सभाओं में भी इसी तरह पदाधिकारी थे लेकिन कुछ समय पूर्व इन सभी ने अपने नाम वापस ले लिए और अब सभाओं को अधिक लोगों का समर्थन नहीं मिल रहा है। इस समय गया जिले में कोई भी आन्दोलन नहीं हुआ है लेकिन आशंका है कि अन्यत्र इसका प्रभाव बरकरार है और उसका प्रभाव इस जिले पर फिर पड़ सकता है। फिर भी, इस आन्दोलन को इस

जिले में उच्चवर्ग द्वारा हवा नहीं दी जा रही है। हिन्दुओं को भी चेताया जा रहा है कि उनका कोई भी मूर्खतापूर्ण प्रयास खतरनाक सिद्ध हो सकता है। साथ ही, मुसलमानों को भी चेतावनी दी गई है कि इस मामले पर अन्य समुदाय की भावनाओं को ठेस पहुँचाने के किसी भी प्रयास के लिए दण्ड भुगतना पड़ेगा।

मुसलमानों में प्रतिकारात्मक आन्दोलन

५. इस जिले में मुसलमानों की ओर से किसी भी प्रतिकारात्मक आन्दोलन के छेड़ने के कोई भी प्रयास नहीं देखे गये। लेकिन कोई भी तीव्र एवं गम्भीर हस्तक्षेप किए जाने से मुसलमानों के निचले तबके पर अवश्य असर पड़ता था। यह असर उनके लिए गोमाँस की आपूर्ति के ठप्प हो जाने के कारण पड़ता था। मैं नहीं जानता कि इस संभाव्यता की स्थिति में उन्हें मुल्लाओं के अतिरिक्त और कौन प्रोत्साहन दे सकता था।

गोरक्षिणी सभाओं का गठन और संख्या

६. गोरक्षिणी सभाओं के गठन और उनकी संख्या के सम्बन्ध में जिला अधीक्षक ने जानकारी दी है लेकिन जिन प्रमुख लोगों के नामों का उन्होंने उल्लेख किया है वे इस आन्दोलन के साथ और अधिक वैध रूप में सहानुभूति रखते थे।

उपदेशक एवं दूत

७. उपदेशकों एवं दूतों के सम्बन्ध में जिला अधीक्षक ने १८८९ के आरम्भ में श्रीमन स्वामी के आगमन का तथा १८९२ में श्रीमन जगत नारायण के आगमन का उल्लेख किया है, साथ ही, गोपालानंद स्वामी भी इस वर्ष बकरईद से कुछ समय पूर्व छद्मवेश में यहाँ आए थे लेकिन जैसे ही उनकी पहचान कर ली गई वे जिस गोशाला में ठहरे हुए थे, वहाँ के प्रबंधकों ने उन्हें जिले से बाहर भेज दिया। हालाँकि वे वहाँ मात्र एक सप्ताह ही ठहरे थे तथा उन्होंने कहीं कोई भाषण भी नहीं दिया था। श्रीमन स्वामी को सभी इस आन्दोलन का मूल स्रोत मानते हैं। उनके भाषण उत्तेजना फैलाने वाले बताए जाते हैं। गोपालानंद स्वामी को भी खतरनाक प्रकृति का बताया जाता है। पंडित जगत नारायण (बनारस से प्रकाशित गोसंरक्षण पत्र के सम्पादक) एवं हंस स्वरूप स्वामी (मुजफ्फरपुर में चंद्रवारा के विंध्याचल प्रसाद नामक कायस्थ) जोशीले भाषण

देते हैं लेकिन इनके समान आग भड़काते नहीं हैं। स्थानीय मुख्य उपदेशकों में क्रमशः औरंगाबाद के जम्होआ के पंडित अयोध्या मिश्र, बाराक पहाडियों (गया से १४ मील की दूरी पर) के पास रहने वाले दाहू भगत एवं गोपी भगत नामक दो अहीर एवं बाडाचट्टी (गया से दक्षिण पूर्व में २५ मील दूर) के नाम शामिल हैं। मैं ऐसे किसी भी व्यक्ति के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानता जो इन्हें बुलाते हैं तथा इस कार्य में सन्नद्ध करते हैं। मवेशी मेलों में दो अहीर अत्यन्त शरारत भरे कृत्य करते हैं। मुझे बताया गया है कि उनकी शाहाबाद जिले के पीरूथाना (लथियार गाँव) धांगेन थाना के अहीरों के साथ साठगाँठ थी। वे पहले इतने सक्रिय कभी नहीं रहे। मैंने इस सम्बन्ध में यह भी कई बार सुना है कि इन ग्वाला लोगों को भाड़े के सिपाहियों के रूप में इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु लगाया गया है। यह भी बताया गया है कि ये लोग अपनी बूढ़ी गायों से छुटकारा पाने के लिए उन्हें आश्रम में लाकर कहा करते हैं कि उन्होंने इन्हें कसाइयों के हाथों से मुक्त करने के लिये खरीदा है तथा गोशालाएँ भी उन्हें अपनी बूढ़ी एवं बेकार गायों के अनुरक्षण के खर्चे में रख लेती है।

पुस्तिकाएँ आदि

८. इस जिले में परिचालन के लिए पुस्तिकाएँ बनारस एवं नागपुर से लाई जाती हैं क्योंकि इन दोनों ही स्थानों पर गोसंरक्षण सामग्री प्रकाशित होती है। मैं अच्छी तरह से जानता हूँ कि इनमें कुछ भी आपत्तिजनक या उत्तेजनापूर्ण नहीं होता है लेकिन इनका अशिक्षित लोगों पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। बकरईद से पूर्व इस जिले में एक गाय के शरीर पर सर्वत्र देवताओं के चित्रों को प्रदर्शित करने वाली एक तस्वीर प्राप्त हुई थी लेकिन यह नहीं ज्ञात हो सका था कि वह कहाँ से आई थी।

स्थानीय तनाव की भावनाओं को कम करने की पद्धति

९. दो समुदायों के बीच व्याप्त तनाव को कम करने के उद्देश्य से मिश्रित ग्राम पंचायतों की रचना के सम्बन्ध में मैं श्री हैरिस द्वारा व्यक्त उस मत का समर्थन करता हूँ कि इनका व्यावहारिक परिणाम बहुत कम होगा। यदि किसी स्थान पर किसी व्यक्ति के द्वारा पशु हत्या की जाती है तथा उसकी याचिका प्राधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत की जाती है तो मजिस्ट्रेट द्वारा यह सलाह दी जा सकती है कि प्रत्येक समुदाय के प्रमुख

लोग मिलकर देखें कि इस मामले में क्या किया जाना चाहिए। लेकिन स्थाई संयुक्त समिति की रचना से मुझे भय है कि इससे समुदाय के सामान्य मामलों में व्यर्थ में हस्तक्षेप होने से संघर्ष पैदा होगा। मैं नहीं मानता कि इससे कुछ भी भला होगा। इससे छोटी छोटी बात पर झगड़े की स्थिति पैदा होगी। लम्बे अंतराल के बाद इससे गाँव की शान्ति पर प्रतिकूल असर ही पड़ेगा। मुस्लिम समुदाय के प्रमुख प्रभावी सदस्यों की सूची बनाना फिर भी उपयोगी हो सकता है क्योंकि वे गया में पिछले बकरईद के दो त्योहारों से अपने सहधर्मियों के बीच अनुच्छेद ५ में उल्लिखित सरकार के पत्र के सम्बन्ध में सन्तुलन बनाए रखने के लिए प्रयत्नरत हैं। लेकिन हिन्दुओं और मुसलमानों की संयुक्त समिति बनाने से इस दिशा में कुछ सकारात्मक परिणाम लाया जा सकता है। फिर भी, देश के जिन भागों में मुसलमान अल्पमत में हैं वहाँ पशु हत्या विरोधी आन्दोलन ने व्यापक असर दिखाया है। यदि यह सब उन पर छोड दिया जाता तो वे भी सिद्धांतों के अनुरूप न चलकर आडम्बर करते। कसाइयों के द्वारा हिन्दुओं के वेष में पशुओं की खरीद आदि करने की बात से उनकी हिन्दुओं के विरोध में असहाय एवं असमर्थ स्थिति ही दिखती है। इस प्रकार की प्रथा लाना उनके असन्तोष को उभारने के समान ही होगा। अनुचित हस्तक्षेप करने से स्थिति और अधिक बिगड़ेगी। उस समय उनके स्थानीय नेताओं का भी उन पर प्रभावी दबाव नहीं रहेगा। ऐसी स्थिति में सामान्यतः दोष दोनों ही पक्षों का होता है अतः ऐसी स्थिति में उनमें पारस्परिक सहिष्णुता की भावना पैदा करने के लिए उन पर अतिरिक्त पुलिस दल तैनात कर देना चाहिए। ऐसा तभी किया जाना चाहिए जब दोनों ही पक्षों को कानूनी रूप से दंडित किए जाने की आवश्यकता जान न पड़े। स्थिति पर काबू न पाने की स्थिति में यदि ऐसा लगे कि इस तरह के सभी प्रयास किए जाने के बावजूद भी उनकी उत्तेजना में किसी भी तरह की कोई कमी नहीं आ रही है तो प्राधिकारी किसी का भी पक्ष न लें। लोगों को यह नहीं लगना चाहिये कि प्राधिकारी एक का कम तथा दूसरे का अधिक पक्ष ले रहे हैं। मेरा मानना है कि ऐसी स्थिति में आन्दोलन अपने खतरनाक रूप से तुरन्त नीचे आ जाएगा। ऐसा परिणाम तभी प्राप्त हो सकता है जब सभी मामलों में बिना किसी हिचकिचाहट के समान रूप में निर्धारित नीति का पालन किया जाए। विगत बकरईद में शान्ति स्थापित करने का मुख्य कारण यह था कि उत्तेजित लोगों की चाहे कितनी ही बड़ी पहुँच क्यों न हो गाँवों में तुरन्त अतिरिक्त पुलिस बल तैनात कर दिया गया था

जिससे लोगों को मुख्य रूप से यह महसूस कराया गया था कि किसी भी प्रकार का कोई भी हस्तक्षेप बर्दाश्त नहीं किया जाएगा और यदि कोई भी व्यक्ति आम जनता के लिए बनाए गए स्थानों तथा सार्वजनिक स्थानों पर पशुओं की हत्या करने का प्रयास करेगा तो उसे लोगों की भावनाओं को भड़काने के जुर्म में दंडित किया जाएगा तथा उसके ऐसे कृत्य को दूसरे लोगों की धार्मिक भावनाओं के अपमान करने के रूप में गिना जाएगा। मैं नहीं जानता कि सरकार के पत्र के अनुच्छेद ५ के सन्दर्भ में किसी भी मामले में प्रत्येक स्थान की स्थिति के अनुसार विशेष प्रकार के कदम उठाने के लिए व्यावहारिक रूप से प्रबंध भी किए गए थे। मेरा मानना है कि लोगों की सद्भावनाओं के प्रसार में कार्य करना चाहिए तथा समुदाय के अधिकाधिक प्रबोधन हेतु प्रभाव डालना चाहिए। मेरा यह भी मानना है कि यहां हिन्दुओं में ऐसी भावना घर कर रही है कि पशु हत्या के प्रति उनका दृष्टिकोण जितना कम आक्रामक रहेगा उतना ही अधिक वे आन्दोलन के वैध उद्देश्यों को आगे बढ़ा पाएँगे। इस सम्बन्ध में दुराग्रह से प्रेरित उन मुसलमानों से अधिक हानि होने की सम्भावना है जो यह कहते फिरते हैं कि सरकारी अधिकारी उनके पक्ष में हैं और हिन्दू भी उनकी इस बात को इसलिए आसानी से स्वीकार कर लेते हैं क्योंकि ब्रिटिश भी गोमाँस भक्षी हैं। इस दुर्भावना को खत्म करने का प्रभावी तरीका यह होगा कि हिन्दू और मुस्लिम दोनों समान रूप से उनके गाँवों में तैनात अतिरिक्त पुलिस बल का सहयोग करें ताकि वहाँ शान्ति की पुनर्स्थापना हो सके। गोरक्षिणी सभाओं को भी यथासम्भव कम से कम हस्तक्षेप करके अपने वैध उद्देश्यों की प्राप्ति में लगना चाहिए। साथ ही, चंदा प्राप्त करने के लिए भी लोगों को नहीं भेजना चाहिए क्योंकि इसकी भी उत्तेजना पैदा करने में भूमिका होती है। जो लोग सभाओं के हित में कार्यरत हैं, उन्हें भी यह अच्छी तरह से समझना चाहिए कि कसाइयों से बचाई गई गायों को वे गोशाला में अवश्य रखें लेकिन इसके परिणाम स्वरूप यदि कोई तनाव पैदा होता है तो इसके लिए उनकी ज़वाबदारी होगी। यदि कोई व्यक्ति हत्या के उद्देश्य से लाए गए किसी पशु को बचाने के लिए खरीदता है तो वह उसकी स्वयं देखभाल करे तथा उसे गोशाला में न भेजे। इस सम्बन्ध में व्यक्ति द्वारा की गई कार्रवाई व्यक्तिगत रूप में ही की जानी चाहिए। सभाओं के द्वारा किए गए किसी प्रकार के हस्तक्षेप से अनर्थकारी परिणाम निकलने पर उसे इस प्रकार का प्रभाव डालने के प्रयत्न किए जाते हैं कि सरकार इस मामले में हिन्दुओं की तुलना में

मुसलमानों का अधिक पक्ष लेती है। हमें भी इस ओर ध्यान देना होगा। हमारे ध्यान पर लाई गई इस बात के प्रति और अधिक सचेत होकर कार्रवाई करनी होगी कि मुसलमान कसाई हिन्दुओं के छद्म वेष में जाकर उनसे मवेशी खरीदते हैं। इस प्रथा को बंद कराना होगा। मुसलमानों को चेतावनी दी जाए कि इस प्रकार के किसी भी कृत्य का पता चलने पर उन्हें उत्तेजना फैलाने के जुर्म में दोषी मानकर उनके खिलाफ कार्रवाई की जाएगी।

आपात् स्थिति से उबरने हेतु विशेष उपाय

१०. इस समय हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच गम्भीर तनाव की स्थिति के समाप्त होने के कारण इस जिले में किसी भी भीषण आपात् स्थिति से उबरने के लिए कोई भी विशेष प्रकार के कदम नहीं उठाए गए हैं। तथापि, श्री हैरिस द्वारा की गई सिफारिशों के अनुसार जिला आरक्षित बल में कुछ प्रशिक्षित लोग तथा हथियार अवश्य बढ़ाए गए हैं ताकि किसी भी प्रकार के भावी संकट का सामना किया जा सके। साथ ही, ऐसे प्रयास भी किए गए हैं कि भागलपुर की तरह ही, दंगा प्रभावित क्षेत्र के समीपवर्ती स्थान पर सेना पुलिस का डेरा हो ताकि आवश्यकता पड़ने पर तुरन्त उसे बुलाया जा सके। मजिस्ट्रेट द्वारा आवेदन करने पर आयुक्त को यह सत्ता हो कि वह गया कस्बे में या उसके पास वाले इलाकों में किसी भी प्रकार के दंगे के भड़कने की स्थिति में दीनापुर से विशेष रेलगाड़ी से ब्रिटिश सेना की कम्पनी को तैनात कर सके। यह स्मरण में रखना चाहिए कि गया कस्बे और उसके आसपास ८०,००० से भी अधिक की आबादी है, जिसमें हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों ही समुदाय की निचली जातियों के कट्टर गुंडे बड़ी संख्या में रहते हैं।

प्रवर्तमान कानून की उपयुक्तता

११. आन्दोलन की वर्तमान स्थिति के कारण पैदा हुई किसी भी स्थानीय अशान्ति या किसी भी आन्दोलन पर नियंत्रण पाने के लिए विद्यमान नियम मुझे लगता है पर्याप्त है। १८६१ के अधिनियम-५ की धारा १५ और १७ में प्रदत्त प्रावधानों के अनुपालन से दो समुदायों के बीच भावनात्मक रूप से पैदा हुए तनाव की स्थिति से आसानी से निबटा जा सकता है। कार्यपालक प्राधिकारियों को भी आन्दोलन पर काबू

पाने के लिए लोगों को यह आश्वासन अवश्य देना होगा कि सरकार उनके हित में कार्रवाई करके कानून की सीमा में रहते हुए ही निष्पक्ष रूप से कार्य कर रही है ताकि सरकार के प्रति उनका समर्थन प्राप्त हो। साथ ही, आपात् स्थिति से निबटने के लिए उच्चतर प्राधिकारी सत्ता को विवरण भेजकर तुरन्त हस्तक्षेप करने के लिए अनुरोध करना चाहिए।

संलग्नक (२)

सं. १८१२, गया, २७ सितम्बर १८९३

प्रेषक : एच. एन. हैरिस, जिला पुलिस अधीक्षक,गया

सेवा में : मजिस्ट्रेट, गया

सरकार के संलग्न गोपनीय परिपत्र सं. ६७ जे.डी. दार्जिलिंग, ८ सितम्बर के सन्दर्भ में, आपको दि. १४ के पृष्ठांकन के साथ अग्रेषित, पशुहत्या विरोधी आन्दोलन विषय पर मैं निम्नलिखित नोट प्रस्तुत कर रहा हूँ :

१. आन्दोलन का इतिहास

जब मैं ने इस जिले का कार्यभार ३ दिसम्बर १८८८ को सँभाला, तब यहां गोरक्षिणी सभा की गतिविधियाँ बहुत कम थीं। किसी ने भी इसका नाम शायद ही सुना हो। महानिरीक्षक के कार्यालय से जारी गोपनीय साप्ताहिक रिपोर्ट सार (जहाँ तक इस जिले का सवाल है) के प्रथम खंड में किसी भी पशु हत्या विरोधी आन्दोलन का कोई संकेत भी नहीं था। महानिरीक्षक के कार्यालय की विशेष शाखा अप्रैल १८८८ में कहीं जाकर आरम्भ हुई। परन्तु तब तक पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के छिटपुट संकेत मिलने लगे थे जिससे स्पष्ट होता है कि निचले सूबों में महानिरीक्षक के कार्यालय की विशेष शाखा खुलने से पूर्व यह आन्दोलन आरम्भ हो चुका था।

१८८९ में इस जिले में पशु हत्या के कारण कुछ अशान्ति अवश्य फैली थी। टिकारी थाना की हद में काबर गाँव में उस वर्ष बकरईद के समय जुलाई मास में यह घटना घटी थी। गाँव के कुछ ब्राह्मण मुसलमानों द्वारा ईद के अवसर पर पशुओं की हत्या करने से रोकना चाहते थे। हिन्दुओं के प्रमुख प्रभावी सदस्य विशेष पुलिस अधिकारियों के तहत कार्य कर रहे थे। अतः आन्दोलन को तुरन्त शान्त कर दिया

गया। इस शंका की कोई भी वजह नहीं थी कि यह मामला पशु हत्या विरोधी आन्दोलन का परिणाम था। यह मात्र एक छिटपुट मामला था।

१८९० में, पशु हत्या से सम्बन्धित किसी भी प्रकार की कोई भी अशान्ति व्याप्त नहीं हुई।

१८९१ में, किसी भी प्रकार की अशान्ति व्याप्त होने का कोई अंदेशा नहीं था लेकिन अचानक गया (साहिबगंज) के हिन्दुओं में बकरईद के दौरान मैना पंडित नामक ब्राह्मण की गतिविधियों के माध्यम से एक खबर फैली कि मुसलमान बकरईद के दौरान कुर्बानी देने के लिए सासाराम से एक गाय लाए है। यदि पुलिस इस सम्बन्ध में त्वरित कदम नहीं उठाती है तो वहाँ दंगा भड़क गया होता। १९ जुलाई १८९१ में घटित यह मामला अपूर्वयोजित दंगे के रूप में ही था। इससे पहले किसी को भी यह खबर नहीं थी कि गाय को हत्या करने के उद्देश्य से सासाराम से लाया गया था। जिस मुहल्ले में मैना पंडित का आवास है, वहां मुख्य रूप से मुसलमानों की बस्ती वहाँ अपने मुसलमान पडोसियों से बिना कोई झगड़ा किए वह पंडित आराम से शान्तिपूर्वक रह रहा था। यद्यपि इस सम्बन्ध में अत्यन्त सावधानीपूर्वक जाँच की गई कि मुसलमानों द्वारा पहले भी पशुओं की हत्याएँ की जाती रही थी जिन्हें कभी किसी ने नहीं रोका। लेकिन जहाँ तक मैं तथ्य का पता लगा पाया हूँ, मैं नहीं मानता कि मैना पंडित ने यह सब कुछ गया गोरक्षिणी सभा के उकसावे में आकर किया था। उसे शायद दूसरे लोगों ने भी उकसाया हो, लेकिन वास्तविक सत्य का किसी को कभी भी पता नहीं चलता कि यह व्यक्ति १८९१ में अशान्ति हेतु मुख्य आन्दोलनकारी कैसे बन गया। कहीं भी ऐसी खबर के कोई संकेत नहीं थे। मैं भी उस समय वहाँ से दूर औरंगाबाद में था। पशुओं की छीनाझपटी का कोई भी मामला इससे पहले रिपोर्ट नहीं किया गया था। जहाँ तक मुझे स्मरण है इस वर्ष पशु हत्या विरोधी आन्दोलन का कोई भी सक्रिय रूप से प्रचार भी नहीं हुआ था। इस आन्दोलन के कारण १८९१ में अन्य कोई दंगा या अशान्ति कहीं भी व्याप्त नहीं हुई थी। मैं १ सितम्बर से ८ दिसम्बर, १८९१ तक अवकाश पर था। अवकाश से वापस आने पर मैंने पाया कि अशान्ति के द्वारा पैदा हुई उत्तेजना तब तक शान्त हो चुकी थी।

जहानाबाद और औरंगाबाद उप मंडलों में मवेशी छीनने के मात्र एक या दो मामले १८९२ में प्रकाश में आए थे। लेकिन हम इसे पिछले वर्ष के दंगों का पुनः

प्रकोप मान रहे थे। शहर में यहाँ या जिले के अन्य किसी भी भाग में कहीं भी किसी भी तरह से अशान्ति फैलाने का बिल्कुल भी प्रयास नहीं किया गया।

चालू वर्ष में, हिन्दुओं द्वारा मुसलमानों से कुछ बड़े छोटे मवेशी छीनने के गम्भीर मामले दर्ज किए गए। कुछ मामलों में मवेशी को हिन्दुओं की उत्तेजित भीड़ द्वारा (लाठियों से लैस) बिना किसी बल प्रदर्शन या हिंसा के छीनकर ले जाया गया तथा कुछ मामलों में मवेशी के मालिकों के साथ हिंसापूर्ण व्यवहार भी किया गया। इस वर्ष से आज दिन तक इस तरह के मामलों की कुल संख्या १३ या १४ है (पूरे जिले में)। संख्यात्मक दृष्टि से इससे भी अधिक मामले हुए होंगे, जैसे कि, बिश्ना मेला में अलग अलग सात मामले प्रकाश में आए थे। यहाँ कहने का आशय यह है कि विभिन्न स्थानों में मामले हुए थे। ये २५ मार्च को औरंगाबाद थाना की हद में देव के पास इसरौर छत्री में घटित हुए थे जिसमें मुहम्मद सादिक नामक जमादार बुरी तरह से जख्मी हो गया था तथा २० दिन तक अस्पताल में भर्ती रहा था। मैं इस सम्बन्ध में कोई भी ठोस सूचना प्रस्तुत नहीं कर सका हूँ कि गया में मूल रूप से शुरू हुआ यह आन्दोलन औरंगाबाद उपजिलों तक कैसे फैल गया। फिर भी, यह आन्दोलन नवादा तक नहीं फैला। साथ ही, जहानाबाद एवं सदर उपमंडलो में यह अल्यल्प असर दिखा पाया था।

२. सभाओं का गठन एवं संख्या

जिले में कुल मिलाकर आठ तथाकथित गोरक्षिणी सभाएँ हैं। गया गोरक्षिणी सभा की स्थापना १५ अक्टूबर, १८८७ को हुई थी। इस सभा की स्थापना के पीछे गया के पुराने कस्बे के अधिवासी एक जमींदार बाबू भिखारी शंकर भट्टाचारजी की मुख्य भूमिका थी। उनके बड़े भाई बाबू दुर्गा शंकर सदर स्थानीय बोर्ड के अध्यक्ष थे तथा परिवार के मुखिया थे। सभा की स्थापना के समय गया (साहिब गंज) तथा पुराने कस्बे के प्रमुख हिन्दुओं का समर्थन था। ये सब सभा से जुडे हुए थे। इनमें कुछ व्यक्तियों के नाम निम्नानुसार है :

(१) राय राम नारायण सिंह, जमींदार, अध्यक्ष

(२) बाबू इन्द्रनारायण चक्रवर्ती, कनिष्ठ सरकारी वकील, उपाध्यक्ष

(३) बाबू भिखारी शंकर भट्टाचारजी, सचिव

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित व्यक्ति सभा के सरंक्षक थे :

(१) हेम नारायण गिरि (पूर्व) महंत, बोधगया
(२) बाबू छोटेलाल सेजवार, गयावाल
(३) बाबू बालगोविंद सेन, गयावाल
(४) बाबू जदूराय, व्यापारी

समिति में निम्नलिखित व्यक्ति शामिल थे :

(१) बाल गोविंद लाल, जमींदार
(२) साहिब राम बनिया, वकील
(३) केदार नाथ, वकील
(४) शाम लाल विट्ठल, गयावाल
(५) भजन लाल मारवाड़ी, व्यापारी
(६) पंडित बागेश्वरी प्रसाद त्रिवेदी, सम्पादक, शुभंकर प्रेस
(७) पंडित बलदेव मिसर, शिक्षक, सरकारी विद्यालय
(८) पंडित आद्यानन्द उपाध्याय
(९) बाबू जवाहिर लाल, बनिया
(१०) बाबू अघोरनाथ पाल, मैसर्स मित्तर रूपाल एण्ड कं. से
(११) बाबू माधोलाल आहीर, गयावाल
(१२) बाबू जय सिंह, दलाल

सदस्य गण :

(१) सकरबीघा, टिकारी थाना, बेलागंज चौकी की हद में
(२) गोपालपुर, थाना शेर घट्टी में
(३) रानीगंज, हमामगंज चौकी, थाना शेर घट्टी में
(४) औरंगाबाद कस्बा, उपमंडलों के मुख्यतः वकीलों, मुख्तियारों तथा देव के महाराजा द्वारा समर्थन प्राप्त
(५) जम्हौर, औरंगाबाद में
(६) औब्रा, औरंगाबाद में
(७) वार, औरंगाबाद में

३. इन सभाओं की गतिविधियों से सम्बन्धित सूचना

इस समय ये सभाएं सर्वथा निष्क्रिय हैं। किसी भी तरह के उत्तेजक तरीके के प्रयोग करने की स्थिति में नहीं हैं। ये सभाएँ व्यावहारिक रूप से मृतप्राय हैं।

गोशालाओं में पहले की तरह गायों को नानुकर किए स्वीकार नहीं किया जाता। साथ ही, गया के प्रतिष्ठित हिन्दू सभा के साथ अपने सम्बन्धों को खुले आम स्वीकार नहीं करते।

४. सभाओं द्वारा प्रोत्साहित दूतों या उपदेशकों का आगमन या उपस्थिति

कुछ उपदेशकों के नाम अवश्य जाने जा सके हैं लेकिन इन्हें पशु हत्या विरोधी सिद्धान्तों पर उपदेश देने के लिए ही पूर्ण रूप से नियोजित नहीं किया गया है अपितु इनका कार्य कस्बे या देशी बाजार में दुकानों के पास लटकाई गई छोटी छोटी दान पेटियों में लोगों द्वारा दान स्वरूप डाले गए रुपयों को इकट्ठा करना तथा इस पवित्र एवं निष्ठायुक्त कार्य से चंदा एकत्रित करके लाना भी है। बनारस के दो पंडितों - हंस स्वरूप स्वामी एवं श्रीमन जगत नारायण १८९१-९२ वर्ष में गया गोरक्षिणी सभा में क्रमशः आए तथा उन्होंने भाषण दिए। १८८९ के आरम्भ में श्रीमन स्वामी भी यहीं थे। जनवरी-फरवरी १८८९ में गया गोरक्षिणी सभा की ओर से जयपुर के महाराजा को समर्पित मानपत्र में उनका नाम सबसे ऊपर था। विगत पाँच वर्षों में पशुहत्या विरोधी विषय पर कभी कभी भाषण या उपदेश देने वाले अन्य लोग भी थे।

५. चित्रों एवं पुस्तिकाओं का वितरण

कुछ चित्र एवं पुस्तिकाएँ बनारस से लाई गई बताई जाती हैं जिनका सभा ने मात्र एक बार वितरण किया था। लेकिन मुझे स्मरण है कि मैंने कई बार मेलों में हिन्दी एवं अंग्रेजी में अधपन्ने एवं पुस्तिकाओं को बाँटे जाते हुए देखा था।

६. निधि प्राप्ति एवं वितरण

जहां तक निधियों के प्राप्तीकरण एवं वितरण का प्रश्न है, सही रकम का पता लगा पाना अत्यन्त कठिन है क्योंकि सभाओं द्वारा नियमित रूप में हिसाब नहीं रखे गए। साथ ही, प्राप्तिकरण केवल नकद रकम के रूप में ही नहीं किया गया अपितु

प्रत्येक घर, दुकान एवं बाजार आदि में एक निश्चित मात्रा में अनाज या वस्तु स्वैच्छिक रूप से अलग निकाल कर रख दी जाती थी (गोशालाओं की सहायता के लिए नकद चन्दे के अतिरिक्त)। इस प्रकार की वस्तु या अनाज सभाओं के कर्मी नियमित रूप से एकत्रित करते थे।

७. दूतों एवं उन व्यक्तियों के नाम जिनके लिए उन्हें काम करना होता था

मुझे ऐसे किसी भी दूत के बारे में कोई जानकारी नहीं है जो सभा में आये थे। उपदेशकों एवं व्याख्याताओं (शीर्षक-४ में नाम दिए गए हैं) के वहाँ रुकने के समय गया गोरक्षिणी गोशाला उन्हें आश्रय देती थी।

८. आन्दोलन की प्रगति एवं ताकत का मूल्यांकन

गया गोरक्षिणी सभा के ध्येयों एवं उद्देश्यों को जयपुर के महाराजा को प्रदत्त मानपत्र के अनुच्छेद ६, ७ एवं ८ तथा मैसूर के महाराजा के प्रदत मानपत्र के अनुच्छेद ४, ५, एवं ६ में दर्शाया गया है (जो कि इस फाइल में है) जब वे अन्य कार्य के सिलसिले में यहाँ आए थे। आरम्भ से ही इस आन्दोलन को हिन्दुओं के सभी वर्गो का समर्थन प्राप्त था। लेकिन मेरा मानना है कि स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा की गई भारी भूलों के परिणाम स्वरूप भीषण अशान्ति का वातावरण पनपने से विस्फोटक स्थिति पैदा नहीं हुई होती तो यह आन्दोलन थोड़ी बहुत धार्मिक उत्तेजना पैदा करके कब का समाप्त हो गया होता।

९. पशु हत्या विरोधी आन्दोलन के सम्बन्ध में मुसलमानों द्वारा स्थापित कोई संगठन या उद्दीप्त आन्दोलन

मुसलमानों की ओर से इस सम्बन्ध में पशुहत्या विरोधी कोई आन्दोलन पैदा हुआ या चलाया जाता हुआ मैंने कभी नहीं सुना। मुसलमान झगडालू किस्म के लोग नहीं हैं। उनमें बहुत से लोगों को पशुहत्या बिल्कुल भी न करने के सामान्य समझौते में शामिल होने पर कोई आपत्ति नहीं होगी।

सरकारी परिपत्र के अनुच्छेद-५ में उल्लिखित मामलों के सम्बन्ध में मैं नहीं मानता कि विवादों को हल करने में हिन्दुओं एवं मुसलमानों से मिलकर बनी सौहार्दपूर्ण

पंचायतों की कोई सकारात्मक एवं प्रभावी भूमिका होगी। यदि सरकार इन पंचायतों का निर्माण करके इन्हें विविध क्षेत्रों के लिए अर्ध अदालतों के अधिकार देने का आदेश देती है तो मैं यह कहने की हिम्मत कर सकता हूं कि ऐसी समिति पुलिस की सहायता से चल सकती है। लेकिन ऐसी समितियों की नियुक्ति से व्यावहारिक रूप से कोई अच्छा परिणाम नहीं निकल सकता। ये मतभेद ठीक हो सकते हैं लेकिन शनै शनै लोग यह भलीभाँति समझने लगेंगे कि हम अपनी स्थिति तटस्थ रखते हुए उन हिन्दुओं और मुसलमानों को दण्डित करेंगे तो आम शान्ति का भंग होगा। जहाँ तक इस जिले का सवाल है, मैं नहीं मानता कि यहाँ किसी भी प्रकार की आपात् स्थिति पैदा होने की कोई सम्भावना है। हाँ, इस सम्बन्ध में यह करना अवश्य जरूरी है कि भागलपुर के विशेष आरक्षित बल को बाँकीपुर में तैनात किया जाए ताकि आवश्यकता पड़ने पर हमें उनकी सेवाएं प्राप्त हो सकें। साथ ही, इस जिले में पुलिस आरक्षीबल को और अधिक मजबूत बनाया जाए ताकि प्रशिक्षित लोगों की उपलब्धता होने पर उन्हें गोहत्या के परिणाम स्वरूप शान्तिभंग होने की स्थिति में उस पर काबू पाने के लिए भेजने हेतु सदैव तैयार रखा जाए।

संलग्नक ३

सेवा में : महाराजा सवाई माधवसिंह, साहिब बहादुर,
ओ.सी.एस.आई., जयपुर के महाराजा, गया कैम्प

परम आदरणीय महामहिम,

हम सभी अधो हस्ताक्षरकर्ता कस्बे के शिक्षित एवं भद्रजन तथा स्थानीय गोरक्षिणी सभा के समस्त सदस्य गण आप जैसे महामहिम के इस पवित्र एवं ऐतिहासिक पुनीत शहर में आगमन का हृदयपूर्वक एवं प्रसन्नचित्त होकर स्वागत करते हैं।

२. प्राचीन सम्मानित आर्य संस्थाओं के धर्म के दृढ़तापूर्वक पालनपोषण एवं संरक्षण के लिए हम आपका अभिनन्दन करते हैं क्योंकि आधुनिक सभ्यता एवं भौतिकवाद के निरन्तर हमलों से त्रस्त, विश्व में व्याप्त विक्षोभ एवं हड़बड़ी से पादाक्रान्त होने के बावजूद भी प्रख्यात ऋषियों एवं मुनियों की आत्मा के आंतरिक आलोक की, ज्ञानध्यान की बातें आपके प्रयास से प्रसुप्त नहीं हुई हैं।

३. यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि तथाकथित सभ्यता एवं परिष्कार, भौतिकतावाद एवं संशयवाद के इस दौर में आप जैसे महामहिम के इस पुनीत नगरी में कदम पड़ने से सन्देह एवं शंका कुशंकाओं से जकड़े हुए दिमागों के लिए यह अत्यन्त सम्मोहक उदाहरण सिद्ध होगा तथा इसका लोग अनुकरण करेंगे, इसे प्रतिधारित करेंगे तथा अपने मनमस्तिष्क पर इस रूप में अंकित करेंगे कि देशभक्ति के प्रति उनकी निष्ठा सदैव बरकरार रहे।

४. आप जैसे महामहिम का दिव्य सत्य स्वरूप उस परमात्मशक्ति के प्रति प्रवर्धित जिज्ञासाभास रहा है। आंतरिक आत्मिक आलोक को विकसित करने में सहायक बनने में कई बार आपने धर्म के प्रति अटूट निष्ठा का परिचय दिया है। यह केवल भावुकता की अभिव्यक्ति नहीं है, अपितु उस सत्यस्वरूप आत्मा एवं चारित्रिक गुणों के विशुद्ध भावोद्‌गार हैं जो महामहिम के आम एवं निजी जीवन के प्रत्येक कार्य में विशेष रूप से दृष्टिगोचर होते हैं।

५. महामहिम की कृपा, दान एवं प्रेरणा से वृन्दावन एवं अन्य स्थानों पर दिल खोलकर खर्च करने से भव्य मन्दिरों का निर्माण हुआ है जो महामहिम के मनमस्तिष्क की निर्भय शक्ति के जीवन्त उदाहरण हैं। यह शक्ति इस रूप में विरलों में ही होती है।

६. हम महामहिम को गोरक्षिणी सभा के अस्तित्व की बात बताते हुए गौरव की अनुभूति कर रहे हैं, यद्यपि यह बताते हुए हमें खेद की अनुभूति भी हो रही है कि जनसमर्थन की कमी होने से यह अत्यन्त दयनीय स्थिति में है। इसे पशुओं के संरक्षण के उद्देश्य के लिए आरम्भ किया गया था। लेकिन ऐसी ही स्थिति बनी रही तो ये प्रयास असफल सिद्ध होंगे और गायों एवं बैलों की प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में निर्मम हत्याएँ की जाती रहेंगी और भारत के कृषि हित के कार्य को भारी क्षति होगी। चूँकि इससे इंग्लैंड की व्यावसायिक समृद्धि प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई है अतः साम्राज्य के राजनीतिक अस्तित्व को एवं वर्तमान और भावी हितों को गरीबी धर दबोचेगी और कृषि व्यवसाय विनाश के कगार पर पहुँच जाएगा।

७. गाय केवल पवित्रता की पुंज ही नहीं है, केवल जननक्षमता की प्रतीक ही नहीं है, अपितु वह एक पावन प्रतीक है जिसके अभाव में हिन्दुओं के देश या विदेश में, शादी-विवाह आदि मांगलिक कार्य या मृत्यु होने पर धार्मिक विधि विधान, तीर्थ स्थान या अन्य स्थल किसी भी तरह से विशुद्ध या पवित्र नहीं माने जाते।

८. अपनी बात समाप्त करने के पूर्व हम महामाहिम के ध्यान में इस पवित्र प्राणी गाय के सम्बन्ध में मात्र इतना ही कहना चाहते हैं कि यह उन सभी लोगों को भोजन देकर पोषित करनेवाली, पवित्रता की प्रतिमूर्ति एवं साम्राज्य की राष्ट्रीय समृद्धि की प्रमुख स्रोत है चाहे उसकी जाति-पाँति-रंग, वर्ण, प्रजाति या राष्ट्रीयता कुछ भी क्यों न हो।

९. हम पुनः महामहिम का इस पावन एवं ऐतिहासिक नगर में हृदयपूर्वक स्वागत करते हैं। यह नगर उस यशस्वी राजवंश के यशस्वी पुत्र की यशस्वी प्रजाति के लिए प्रख्यात है जिसमें भगवान राम ने अवतार लिया था।

हम सभी महामहिम के आनन्दपूर्ण जीवन, दीर्घ आयु एवं अच्छे स्वास्थ्य की कामना करते हैं। हम हैं आपके दर्शनाभिलाषी

(१) श्रीमन स्वामी
(२) बैजनाथ सिंह
(३) महावीर प्रसाद सिंह
(४) दृक्पाल लाल
(५) राम नारायण सिंह
(६) राजकिशोर नारायण सिंह
(७) हरिहर नाथ
(८) इन्द्र नारायण चक्रवर्ती
(९) शीतल प्रसाद
(१०) भिखारी शंकर भट्टाचार्य
(११) रामलाल विट्ठल
(१२) राम गोपाल (मारवाड़ी)
(१३) बाल गोविन्द लाल
(१४) नागवन्त सहाय
(१५) उमेश चन्द्र सरकार
(१६) गोपी नाथ माटे
(१७) अमृत लाल पॉल
(१८) अनन्त रामघोष
(१९) नन्द लाल
(२०) जोगिन्दर लाल सेन
(२१) बालगोविन्द सेन ग्यावाल
(२२) अघोर नाथ पाल
(२३) दुर्गाशंकर भट्टाचारजी
(२४) छोटे लाल सिजवार (ग्यावाल)
(२५) कनैया लाल
(२६) राजाजी ग्यावाल
(२७) गदाधर शंकर भट्टाचार्य
(२८) मौलवी कमरूद्दीन अहमद
(२९) जगेश्वर प्रसाद
(३०) राम प्रसाद
(३१) राम नारायण सेन
(३२) बिहारी लाल बरीक (ग्यावाल)

संलग्नक ४

महामहिम श्री चरण राजेन्द्र वडियार बहादुर,
ओ.सी.एस.आई. मैसूर के महाराजा को प्रदत्त मानपत्र

परम आदरणीय महामहिम के निवेदनार्थ

हम सभी गया के अधिवासी एवं गोरक्षिणी सभा के समस्त सदस्य महामहिम का इस पावन, पुनीत, प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर गया में हर्षोल्लासपूर्ण, हृदयपूर्वक स्वागत करते हैं।

२. प्राचीन सम्मानित आर्य संस्थाओं के धर्म के दृढ़तापूर्वक पालन पोषण एवं संरक्षण के लिए हम आपका अभिनन्दन करते हैं क्योंकि आधुनिक सभ्यता एवं भौतिकवाद के निरन्तर हमलों से त्रस्त, विश्व में व्याप्त विक्षोभ एवं हड़बड़ी से पादाक्रांत होने के बावजूद भी प्रख्यात ऋषिमुनियों की आत्मा के आंतरिक आलोक की ज्ञान-ध्यान की बातें आपके प्रयास से प्रसुप्त नहीं हुई हैं। यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि तथाकथित सभ्यता एवं परिष्कार, भौतिकतावाद एवं संशयवाद के इस दौर में आप जैसे महामहिम के इस पुनीत नगरी में कदम पड़ने से सन्देह एवं शंकाकुशंकाओं से जकड़े हुए दिमागों के लिए यह अत्यन्त सम्मोहक उदाहरण सिद्ध होगा तथा इसका लोग अनुकरण करेंगे, इसे प्रतिधारित करेंगे तथा अपने मनमस्तिष्क पर इस रूप में अंकित करेंगे कि देशभक्ति की भावना के प्रति उनकी निष्ठा सदैव बनी रहे।

३. आप जैसे महामहिम का दिव्य सत्य स्वरूप उस परमात्मशक्ति के प्रति प्रवर्धित जिज्ञासाभाव रहा है तथा आन्तरिक आत्मिक आलोक को विकसित करने में सहायक बनने में कई बार आपने धर्म के प्रति अटूट निष्ठा का परिचय दिया है। यह मात्र भावुकतावाद की अभिव्यक्ति नहीं है अपितु उस सत्य स्वरूप आत्मा एवं चारित्रिक गुणों के विशुद्ध भावोद्गार हैं जो महामहिम के सार्वजनिक एवं निजी जीवन के प्रत्येक कार्य में विशेष रूप से दृष्टिगोचर होते हैं।

४. हम महामहिम को गोरक्षिणी सभा के अस्तित्व की बात बताते हुए गौरव की अनुभूति कर रहे हैं, यद्यपि यह बताते हुए हमें खेद ही अनुभूति भी हो रही है कि जनसमर्थन की कमी होने से यह अत्यन्त दयनीय स्थिति में है, इसे पशुओं के संरक्षण के उद्देश्य के लिए आरम्भ किया गया था। लेकिन ऐसी ही स्थिति बनी रही तो ये

प्रयास असफल सिद्ध होंगे और गायों और बैलों की प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में निर्मम हत्याएँ की जाती रहेंगी और भारत के कृषि हित के कार्य को भारी क्षति होगी तथा चूँकि इससे इंग्लैंड की व्यावसायिक समृद्धि प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई है यह साम्राज्य के राजनीतिक अस्तित्व को एवं वर्तमान एवं भावी हितों को गरीबी धर दबोचेगी और कृषि व्यवसाय विनाश के कगार पर पहुँच जाएगा।

५. गाय केवल पवित्रता की पुंज ही नहीं है, केवल जननक्षमता की प्रतीक ही नहीं है, अपितु वह एक पावन प्रतीक है जिसके अभाव में हिन्दुओं के देश या विदेश में, शादी-विवाह आदि आमोद-प्रमोद के कार्य या मृत्यु होने पर धार्मिक विधि विधान, तीर्थ स्थान या अन्य स्थल किसी भी तरह से विशुद्ध या पवित्र नहीं माने जाते।

६. अपनी बात समाप्त करने से पूर्व हम महामाहिम के ध्यान में इस पवित्र गाय के सम्बन्ध में मात्र इतना ही कहना चाहते हैं कि यह उन सभी लोगों को भोजन देकर पोषित करनेवाली, पवित्रता की प्रतिमूर्ति एवं साम्राज्य की राष्ट्रीय समृद्धि की प्रमुख स्रोत है चाहे उनकी जाति-पाँति-रंग, वर्ण, प्रजाति या राष्ट्रीयता कुछ भी क्यों न हो।

महामहिम के आनन्द एवं खुशहाली की आकांक्षा के साथ...

हस्ता/-

भिखारी शंकर भट्टाचार्यजी

महासचिव एवं अधिष्ठाता, गोरक्षिणी सभा, गया

बलदेव लाल, बी.एल., उपाध्यक्ष

केदारनाथ, एफ.टी.एस. वकील एवं सचिव, गोरक्षिणी सभा, गया

(यह मानपत्र महामहिम महाराजा को ए.नरसिंह झेंगम, दरबार बक्षी, मैसूर द्वारा प्रदान किया गया)

संलग्नक ५

१८ अक्टूबर १८९३

प्रेषक : श्री एच. सी विलियम्स, मजिस्ट्रेट एवं जिलाधीश, दरभंगा।

सेवा में, आयुक्त, पटना मंडल।

बंगाल सरकार के मुख्य सचिव के गोपनीय परिपत्र सं० ६७ जे.डी. दिनांक विगत ८ सितम्बर के सन्दर्भ में अपने उपमंडल अधिकारियों एवं जिला पुलिस अधीक्षक

से विचार विमर्श करने के उपरान्त इस जिले की गोरक्षिणी सभाओं एवं उसके पशुहत्या विरोधी आन्दोलनो के सम्बन्ध में जो जानकारी मुझे प्राप्त हो सकी है, उसे आपकी सेवा में निम्नानुसार सादर प्रस्तुत कर रहा हूँ।

२. मैं इसे निम्नलिखित शीर्षकों में विभक्त करके प्रस्तुत कर रहा हूँ

(अ) आन्दोलन का इतिहास एवं इसके उद्देश्य
(आ) जिले में कार्यरत विभिन्न सभाएं एवं उनके नीतिनियम
(इ) आन्दोलन के मुख्य समर्थक, निधियाँ तथा आन्दोलन के साथ सन्नद्ध सरकारी कर्मचारी
(ई) उपदेशक, आन्दोलनकारी एवं उनका प्रभाव
(उ) मुद्रित साहित्य
(ऊ) सभा की वर्तमान स्थिति।

इन विविध विषयों पर संक्षिप्त चर्चा के साथ परिपत्र में वांछित अन्य विषयों पर भी मैंने अपने उत्तर में जानकारी दी है।

मुझे यह कहते हुए खेद है कि इन सूचनाओं को उतने पूर्णरूप में प्रस्तुत नहीं कर सका, जितने पूर्ण रूप में प्रस्तुत करने की मेरी मंशा थी। मधुबनी में उपमंडल अधिकारी के रूप में कार्यरत श्री मल्लिक ने उस उपमंडल के सम्बन्ध में एक पूरा का पूरा नोट इस विषय पर लिखा है जो कि बड़ा ही रोचक है। उस में बताया गया है कि मधुबनी सभा अभी भी अपनी तेजस्विता को बरकरार रखे हुए है। इस रिपोर्ट की मूल प्रति मैं इसके साथ संलग्न कर रहा हूँ तथा अनुरोध कर रहा हूँ कि इसकी प्रतिलिपि तैयार किए जाने के पश्चात् इसे मुझे वापस करने का कष्ट करें। समस्तीपुर के उपमंडल अधिकारी श्री फिल्लीमोरे ने अत्यल्प सूचना भेजी है क्योंकि वहाँ देने के लिए कुछ नहीं है। श्री फोक्स ने अपनी गोपनीय साप्ताहिक रिपोर्ट में काफी जानकारी दी है। मैंने स्वयं उसे देखा है तथा अपने नोट हेतु शामिल भी किया है। परन्तु इसकी कोई नियमित प्रति नहीं रखी गई है।

२ (अ) आन्दोलन का इतिहास

गोरक्षिणी सभाओं के अचानक पुनर्जीवित होने के मूल एवं उनके द्वारा गोहत्या विरोधी आन्दोलन अत्यन्त संदेहजनक स्थिति ही पैदा करते हैं। दरभंगा के महाराजा

ने इसके छह या आठ वर्ष पूर्व कुछ गतिविधियों के रूप में अचानक पैदा होने के सम्बन्ध में मुझे बताया था। इलाहाबाद एवं उत्तरपश्चिमी सूबों में आरम्भ होकर धीरे धीरे यह बिहार तक अपना वर्चस्व कायम करती गई। १८८५ (२३ जनवरी) में दरभंगा राज प्रेस में एक परिपत्र मुद्रित किया गया था जिसे इसके स्वयंभू सचिव बिहारी पाठक ने गायों की सहायता के लिए मदद प्राप्त करने हेतु जारी किया था। इस परिपत्र में दरभंगा के महाराजा का इसके अध्यक्ष के रूप में उल्लेख किया गया था। परन्तु परिपत्र में कुछ भी उल्लेखनीय नहीं था। जिला पुलिस अधीक्षक ने इसे विगत २४ सितम्बर को पुलिस महानिरीक्षक को अग्रेषित किया था। इस की कोई भी प्रतिलिपि मेरे पास उपलब्ध नहीं है। उस समय इसके प्रमुख प्रेरणास्रोत नगरपालिका आयुक्त बिहारी एवं दरबारी पाठक थे लेकिन इनकी उस समय कोई खास अहमियत नहीं थी। फिर भी, सभा बन तो गई। लेकिन १८८८ तक इसने बहुत ही कम प्रगति की। इसे उस समय भी आज की जैसी परिस्थिति में पुनर्जीवित करके आरम्भ किया गया था। भाषण देने के लिए बनारस के जगत नारायण इसके प्रमुख प्रेरणा स्रोत थे। उन्होंने काबस्थान नामक मंदिर में एक भाषण दिया था जहाँ महाराजा भी उपस्थित थे। उनके द्वारा एक नई सभा का आरम्भ किया गया। विशेष पत्र भेजे गए तथा लोगों से चंदा प्राप्त करने के लिए व्याख्याताओं को भेजा गया। लेकिन जहाँ तक मुझे पता चल सका है, कोई भी परिपत्र जारी नहीं हुआ था। पत्रों एवं व्याख्यानों का बहुत अधिक असर हुआ था क्योंकि आगामी दो वर्षों में सभाएँ - मुजफ्फरपुर जिले में लालगंज, हाजीपुर, और सीतामढ़ी तथा इस जिले में तेजपुर, मधुबनी, रोसेरा एवं दलसिंह सराय में आरम्भ हुई थी। जहाँ तक इस जिले का सवाल है, उस समय आरम्भ हुई सभाएँ आज भी विद्यमान हैं तथा इन्होंने थोड़ी बहुत सफलता भी प्राप्त की है। इनकी शाखाएँ भी खुली हैं। इस आन्दोलन के उद्देश्य पूर्णतः हानिरहित थे। जैसे कि : पशुओं की हत्या करना धर्म एवं आर्थिक दृष्टि - दोनों ही तरह से विरुद्ध तथा नुकुसानदेह है, अतः बीमार पशुओं के अनुरक्षण के लिए धन की आवश्यकता थी क्योंकि गरीब जनता थकी माँदी मवेशी की देखभाल करने में समर्थ न होने के कारण उन्हें बेचने को विवश होती थी। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए सभाओं ने पशुबाडे खोलने आरम्भ किए। ऐसा ही एक पशुबाड़ा बाहर की शाखाओं के पशुओं के लिए दरभंगा में खोला गया था। महाराजा द्वारा प्रदत्त भूमि पर झाँझरपुर के पास रेखवाड़ी में एक बहुत बड़ी गोशाला

खोली गई। इन गोशालाओं में गायों को प्रचुर संख्या में लाया गया। दरभंगा की गोशाला भी धीरेधीरे अपना आकार बड़ा करती गई। इस समय इसमें २०० से ३०० गायें हैं जब की मेरा मानना है कि लगभग इतनी ही गायें रेखवाड़ी की गोशाला में हैं। तेजपुर और दलसिंह सराय जैसी दूरस्थ शाखाओं से भी दरभंगा की सभा की गोशाला को गायें भेजी जाती हैं। सभाओं के आरंभिक समय से ही बड़ी संख्या में उपदेशकों को देश के विविध भागों में भेजा जाता था तथा उनके माध्यम से गायों के संरक्षण से होने वाले फायदों को लोगों के समक्ष रखा जाता था। इस जिले में कार्यरत प्रख्यात मधुबनी सभा ने तो पूरे देश में इस हेतु परिपत्र भी भेजे थे। गायों की रक्षा के लिए गाय के गुणों का बखान करने के साथ साथ गायों के हत्यारों के खिलाफ भी आवाज उठाई जाती थी। ऐसा करना सरल कार्य भी था। अतः इस सम्बन्ध में प्रकाशित कई जिलों में इसका नुकुसानदेह प्रभाव व्याप्त रहा। विश्व में आज भी वह प्रभाव व्याप्त है। दरभंगा सभा एवं इसकी सम्बद्ध शाखाओं का इस सम्बन्ध में अत्यन्त व्यापक प्रभाव था क्योंकि यह स्वयं महाराजा के नियंत्रण में थी। जैसा कि मैंने पहले भी उल्लेख किया है, इसका यहाँ से जारी कोई भी परिपत्र प्राप्त करने में हमें सफलता नहीं मिली। उपदेशक बारबार आते थे तथा बारबार भाषण देते थे। पूरे प्रान्त में उनका यह क्रम चलता रहता था। लेकिन हाल ही में यह अब नहीं हो रहा है। मधुबनी की सभा के अतिरिक्त इस जिले की अन्य सभाएं दरभंगा की सभा की अनुगामिनी मात्र बनकर रह गई हैं तथा कुछ भी चौंकाने वाला कार्य नहीं कर रही हैं। तथापि, मधुबनी सभा बहुत अधिक समय तक अग्रणी सभा नहीं रही। अपनी गतिविधियों का ब्यौरा दरभंगा सभा के अधिकार क्षेत्र में देने के लिए नकारती हैं। इससे सीतामढ़ी में एक नई सभा आरम्भ हुई है। यह अब पहले की भाँति दरभंगा सभा के नियंत्रण में नहीं है। जब, हाल ही में, मुजफ्फरपुर के जिलाधीश श्री हेरे ने सीतामढ़ी सभा के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष को त्यागपत्र देने का आदेश दिया तब उन्होंने इस प्रश्न को दरभंगा न भेजकर नागपुर भेजा। इससे प्रतीत होता है कि वह इस प्रश्न के सम्बन्ध में अधिकारी सत्ता है। वहाँ हाल ही में महाराजा से अनुरोध किया गया कि वे बिहार, उत्तर पश्चीमी सूबों एवं मध्य सूबों की समस्त सभाओं की अध्यक्षता स्वीकार करें। मेरे द्वारा उल्लिखित इस आवेदन का कोई प्रत्युत्तर प्राप्त नहीं हुआ। यह प्रश्न इस समय लगभग ठेल दिया गया है। मैं यहाँ यह भी जानकारी देना चाहूँगा कि हाल ही में नागपुर सभाने कृषि के लिए उपयोगी पशुओं की

हत्या बन्द कराने के उद्देश्य से भारत सरकार को एक स्मरण पत्र प्रदान करने का प्रयत्न किया है। जहाँ तक मुझे ज्ञात है अभी तक यहाँ से उसका कोई उत्तर नहीं दिया गया है। प्रत्येक सभा के अपने अपने जटिल नियम हैं। समितियाँ, सामान्य एवं विशेष, बनाई गई हैं। इनकी वार्षिक, त्रैमासिक तथा कई बार दैनिक बैठकें आयोजित की जाती हैं। हिसाबकिताब नियमानुसार सख्ती से रखा जाता है तथा कभी कभी इसे गोरक्षिणी समाचार पत्र में प्रकाशित भी किया जाता है। धन एकत्रित करने एवं उसमें पीछे रहनेवालों को परेशान करने हेतु तहसीलदार की नियुक्ति की गई है। संगठन व्यवस्था को नियमित रूप से समुचित रूप में रखा जाता है। वास्तव में, प्रत्येक कार्य यथासम्भव नियमित व्यावसायिक तौर पर किया जाता है। मधुबनी सभा के सम्बन्ध में पुनः मैं यह सूचना प्रस्तुत कर रहा हूँ कि इस सभाने दरभंगा की सभा के साथ अपना किसी भी प्रकार का सम्बन्ध होने से मना किया है तथा दावा प्रस्तुत किया है कि इस सभा का आरम्भ अपने ही ढंग से दिसम्बर १८८८ में उस समय हुआ था जब कुछ लड़के सोनपुर मेले में गए थे और वहाँ उन्होंने एक पंडित का प्रवचन सुना था। मूल रूप से उन्हीं लड़कों ने इस सभा की स्थापना की थी। सम्भवतः यह कथन सत्य से सर्वथा परे है। फिर भी, इस सभाने अपने आरम्भ होने से सितम्बर तक ५० बैठकें आयोजित की थीं। यह सभा अपनी वर्षगांठ भी मनाती है तथा ऐसे अवसरों पर अत्यधिक संख्या में लोग एकत्रित होते हैं।

(आ) विभिन्न सभाएँ तथा उनके नीतिनियम : जैसा कि पूर्ववर्ती अनुच्छेद में कहा गया है, दरभंगा सभा के पुनर्जीवित होने के पश्चात् निम्नलिखित सभा शाखाएँ अस्तित्त्व में थीः

मुजफ्फरपुर जिला : लालगंज, हाजीपुर, सीतामढी

दरभंगा जिला : रोसेरा, तेजपुर, दलसिंह सराय, मधुबनी

लालगंज एवं हाजीपुर की सभाओं के सम्बन्ध में मेरे पास कोई जानकारी नहीं है। सीतामढी की सभा निस्संदेह दरभंगा से आरम्भ नहीं हुई। यह मधुबनी सभा की एक शाखा थी। परन्तु, अब यह बिल्कुल अलग है। इसकी व्यवस्था बड़ी ही चतुराई से की जाती है। मधुबनी की अन्य प्रशाखा भागलपुर जिले के प्रतापगंज में है। पंडोबल में भी एक शाखा खोली गई थी लेकिन वह चल नहीं पाई। हाल ही में फूलप्रास में एक

अन्य शाखा खोलने के प्रयास हो रहे हैं। दलसिंह सराय सभा ने हाल ही में मउन में एक शाखा आंरभ करने के प्रयास किए है लेकिन सफलता नहीं मिली। इस दिशा में एक मात्र मधुबनी की सभा अत्यन्त सक्रिय है। जैसा कि मैंने पहले ही कहा है समस्त सभाओं के अपने अपने अलग अलग नीतिनियम हैं। इनमें अधिकांश अपने नीतिनियमों का कड़ाई से पालन करती हैं। दरभंगा सभा के अध्यक्ष स्वयं महाराजा हैं अतः यह सभा शक्ति का पुंज है। मधुबनी में मधुबनी सभा के बाबू दुर्गादत्त सिंह एवं बाबू दरखधारी सिंह अध्यक्ष हैं लेकिन ये वास्तविक दृष्टि से न होकर नाममात्र के हैं। फिर भी, इनकी अपनी सामाजिक स्थिति सभा के महत्त्व को बढा देती है। वास्तविक रूप में सभा का पूरा का पूरा कार्य तो सचिवो के कंधों पर ही होता है। मैं इनके सम्बन्ध में अगले अनुच्छेद में विवरण दूँगा।

(इ) आन्दोलन के मुख्य समर्थक, निधि तथा आन्दोलन के साथ सन्नद्ध सरकारी कर्मचारी

दरभंगा : इस सभा को अंशदान देने वालों की अनुमानित संख्या २००० है। इनमें प्रमुख हैं :

महाराजा	रू. ६०० (प्रति वर्ष)
लालूबाबू, भूतपूर्व उपाध्यक्ष तथा वर्तमान उपाध्यक्ष के भाई	रू. २०० (प्रति वर्ष)

उपर्युक्त अंशदान दाताओं में दूसरे सज्जन अत्यन्त तंगहाल हैं तथा सम्भवतः नाम के लिए ही चंदा देते हैं। चंदा देनेवाले अन्य सभी लोगों में जमींदार, वकील, व्यापारी शामिल हैं जो अपनी आय के मुताबिक चंदा देते हैं। यदि इस तरह से चंदा देना स्वैच्छिक रूप में होता तो भी ठीक होता लेकिन बहुत से अंशदाता अपना अंशदान इस भय से भी देते हैं कि न दिए जाने पर उन्हें जाति से बहिष्कृत कर दिया जाएगा। मारवाडी लोग इन सभाओं में विशेष रूप से अपनी जेब से चंदा देते हैं। वे अपनी वस्तुएँ ग्राहकों को बेचते समय प्रति रुपए एक पाई इस हेतु कर लगाते हैं। इस प्रकार प्राप्त रकम सभाओं के अनुरक्षण के लिए देते हैं। दुकानों पर दानपेटियाँ रख दी जाती है। पूरे जिले से इस तरह से धन संग्रह करके गायों के अनुरक्षण के लिए निरन्तर धन दिया जाता हैं। कुछ मुसलमान भी चंदा देते हुए बताए जाते हैं जिन में से कुछ इस

कस्बे के हैं तथा कुछ रेखवाडी के हैं। ये लगभग सभी महाराजा के नौकर हैं।

दरभंगा का विगत ढाई वर्ष का आयव्यय विवरण निम्नानुसार दर्शाया गया है :

वर्ष	आय (रूपयों में)	व्यय (रूपयों में)
१८९१	४०५८	२३४३
१८९२	२६२७	१४२७
१८९३ (जुलाई तक)	१०४०	७४१

महाराजा के निजी सचिव बाबू तलपति सिंह इसके उपाध्यक्ष हैं तथा सभा का हिसाबकिताब भी सँभालते हैं।

१२ अगस्त तक इसके सचिव काली पाद बेनर्जी, प्रधान अध्यापक, डाल्टन विद्यालय थे। उस समय उन्होंने इस्तीफा दे दिया था।

सभा के सहायक सचिव श्री लाल सिंह थे जो कि डाक घर में लिपिक के पद पर कार्यरत थे। ये सभा के समस्त कार्यों को सँभालते थे। उनका स्थानांतरण अगस्त माह में मुजफ्फरपुर में हो गया था। उसके पश्चात् सभा का कार्य मंद पड़ गया। रामहरि लाल, सहायक सरकारी वकील भी इस आन्दोलन के प्रखर समर्थक थे लेकिन विगत वर्ष से वे इस कार्य में बहुत ही कम सहायता कर पा रहे थे।

दलसिंह सराय में पूर्व नरहन जमींदार ने ५० रू. प्रति वर्ष चंदा प्रदान किया था। रोसेरा में नगरपालिका के उपाध्यक्ष इस सभा के अध्यक्ष हैं तथा एक अन्य व्यापारी इसके सचिव हैं। लेकिन इसकी प्रमुख रूप से व्यवस्था विसेश्वर मारवाडी नामक एक व्यक्ति सँभालता है।

समस्तीपुर का लगभग प्रत्येक दुकानदार तेजपुर की सभा के लिए चंदा देता है।

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है मधुबनी सभा के दो मधुबनी बाबू अध्यक्ष हैं। वे सभा की निधि में विपुल धनराशि देते हैं। पहले इस पद पर एक अविश्वसनीय व्यक्ति मेवालाल ठाकुर कार्यरत थे। सभा समिति में मुख्तियार, महाजन एवं दो विद्यालय शिक्षक हैं लेकिन अधिकांश कार्य दो सचिवों में दूसरे व्यक्ति द्वारा किया जाता है, जिन में से एक व्यक्ति लालबिहारी लाल, मुख्तियार है तथा दूसरा व्यक्ति मिडिल वर्नाक्यूलर विद्यालय में द्वितीय शिक्षक के रूप में कार्यरत महावीर प्रसाद है। ये दोनों ही व्यक्ति औसत से अधिक प्रतिभावान हैं। इन्हें संगठन की अच्छी खासी जानकारी है। इनमें पहला व्यक्ति भूकर सर्वेक्षण के विरोधी पक्ष का मुख्य प्रवक्ता भी है। दूसरा व्यक्ति

सभा के लेखेजोखे की अत्यन्त व्यवस्थित ढंग से देखभाल करता है, खातों की लिखापढत नियमित रूप से करता है तथा पंडितों की आन्दोलनों की दैनन्दिनियों की भी जाँच करता है। साथ ही, पत्र भी जारी करता है। श्री मलिक ने उसके सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट में ठीक ही कहा है कि वह गोरक्षिणी आन्दोलन का मुख्य आधार है। श्री मलिक की रिपोर्ट में यह बात स्पष्ट रूप से दर्शाई गई है कि सरकारी कर्मचारी इस निधि में किस तरह से और कितना अंशदान देते हैं। सभा के प्रतिमाह कुल नियमित चंदे की रकम १८-१३ रू. में उपमंडल कार्यालय के लिपिक १०-३-९ रू. प्रतिमाह चंदा देते हैं। इसके अतिरिक्त मधुबनी के बाबू लोग ४०० रू. प्रति वर्ष चंदा देते हैं। इस तरह से सभा की प्रतिवर्ष आय १२०० रू. से अधिक है। व्यय मात्र ६०० रू. ही है। इस समय उनके पास १५०० रू. जमाशेष रकम है। मैं यहाँ यह भी उल्लेख करना चाहूँगा कि दरभंगा सभा की कई बैठकें महाराजा के निजी कार्यालय में की गई थीं तथा बड़ी बड़ी सभाएँ इसके अहाते में तम्बू तानकर आयोजित की गई थीं। मधुबनी शाखा की बैठकें बाद में मधुबनी के बाबू लोगों के आवासों में की गईं।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि इन सभाओं में सरकारी कर्मचारियों का योगदान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इतना ही नहीं कि वे इनकी निधि में प्रचुर मात्रा में अंशदान देते हैं अपितु दरभंगा एवं मधुबनी दोनों में ही वे कार्य में भी हाथ बँटाते हैं। कभी कभी वे सभाओं की ओर से उपदेश भी देते हैं। मेरे विचार से यह सब तत्काल बंद करा देना चाहिए। यदि कोई भी सरकारी कर्मचारी इन सभाओं में सचिव के रूप में या अन्य किसी भी जवाबदारी का निर्वाह करते हुए पाया गया तो उसे तुरन्त बर्खास्त कर देना चाहिए। यह भी देखा गया है कि महाराजा के भाई राजा रामेश्वर सिंह दरभंगा या मधुबनी की किसी भी सभा को इसलिए चंदा नहीं देते क्योंकि वे अपनी एक छोटी सी निजी सभा चलाते हैं।

(ई) उपदेशक, आन्दोलनकारी एवं उनका प्रभाव

इस जिले में आ चुके प्रमुख उपदेशक निम्नानुसार है

इलाहाबाद से **स्वामी अलाराम** : यह प्रख्यात व्यक्ति (पुलिस की गोपनीय रिपोर्ट के अनुसार) यहाँ कई बार आए हैं। मैं नहीं जानता कि वे इस जिले से गए भी है। उन्हें पुनः उस समय नवम्बर में आने के लिए न्यौता दिया गया है जब गोपाष्टमी त्यौहार पर सभा की वार्षिक बैठक आयोजित होगी। इससे पहले कई अवसरों पर मेरे

सड़क चुंजी मुख्य लिपिक के साथ रहे थे। पिछली बार उन्होंने गोरक्षिणी सभा में भाषण दिया था। उस समय कई मुसलमान जिनमें एक कट्टर अंग्रेज विरोधी व्यक्ति मौलवी मनिरालम, मुख्तियार भी था, हिन्दू आन्दोलनकारियों के साथ उपस्थित थे।

बनारस से **जगत नारायण** : बनारस के जगत नारायण सभाओं के पुनरुद्धार कार्य में पहले से ही सन्नद्ध रहे है। वे कालियास्थान में कुछ महाजनों के साथ रहते है।

अंबिकादत्त व्यास : भागलपुर विद्यालय के पंडित

मदन मोहन मल्लानी : उच्च न्यायालय, इलाहाबाद के वकील।

कुमार क्रिस्टो प्रोसोरो सेन : एक संन्यासी

विंध्याचल प्रसाद उर्फ हंस स्वामी मूलरूप से मुजफ्फरपुर के अधिवासी थे। वे ४० रू. प्रतिमाह के वेतन पर कामटोवल महाराजा के मातहत लेखाकार के पद पर कार्यरत थे। इन्होंने एक सभा की स्थापना की जिसके उद्देश्य निम्नानुसार थे :

(अ) ज्ञान प्रदान करना (आ) गोरक्षिणी सभा को प्रवर्धित करना

(इ) गरीबों को भोजन कराना।

यह सभा दरभंगा की सभा के साथ संलग्न थी। लेकिन बताया जाता है कि उन्होंने धन का गबन किया था। तभी महाराजा ने उन्हें वहाँ से निकाल दिया था। अब वे उनको देखना भी पसन्द नहीं करते हैं। वे उसे बेईमान व्यक्ति कहते हैं। वह व्यक्ति यहाँ दूसरे दिन महाराजा के लिए श्री ए. रोजर्स, अभियंता, बंगाल उत्तर पश्चिम रेलवे का पत्र लेकर आया था। उस पत्र का सम्बोधन एवं भाषा कुछ असामान्य थी जिसका मैं अर्थ नहीं समझ सका। छपरा के मकसूदन अचारी यहाँ आए थे तथा जिले के उत्तर-पूर्व में उपदेश दे रहे थे। उसके विषय में बहुत अधिक सोचा नहीं था। दूसरे भी उपदेशक रहे होंगे लेकिन दरभंगा सभा ने पिछले दो वर्षों से किसी भी उपदेशक की नियुक्ति नहीं की है क्योंकि इसे उनसे सफलता नहीं मिली है। इसने गत वर्ष ३० रू. प्रतिमाह के वेतन पर एक उपदेशक नियुक्त करने के लिए विज्ञापन दिया था। अजमगढ़ के शेर अली नामक व्यक्ति ने इस पद हेतु अपना आवेदनपत्र भी भेजा था लेकिन अब तक इस दिशा में कुछ भी निश्चित नहीं किया जा सका है। दरभंगा में प्रत्येक मोहल्ले में, मुख्यतः स्थानीय व्यक्ति, पाठक के रूप में कार्यरत है जो भागवत एवं रामायण पढ़ते हैं। उनके उपदेश कोई भी हानि नहीं पहुँचाते। समस्तीपुर में एक व्यक्ति तेजपुर से

साप्ताहिक रूप में उपदेश देने आता है। लेकिन उसके भाषण गोहत्या विषय तक सीमित नहीं होते। उपर्युक्त उपदेशकों ने निस्संदेह इस समय अत्यधिक प्रभाव डाला है। उन्हें प्रत्येक बार आने के लिए ५० से ६० रू. का भुगतान किया जाता है। लेकिन स्वामी अलाराम इसके अपवाद हैं क्योंकि वे कोई भी भुगतान नहीं लेते। मधुबनी में राम अनुग्रह त्रिवेदी नामक एक ओजस्वी पंडित हैं जो बड़े आन्दोलनकारी हैं। वे अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्ति हैं। वे विशेष रूप से सीतामढ़ी में सक्रिय रूप से कार्यरत हैं। दरभंगा में भुवनेश्वर मिसिर नामक व्यक्ति हैं जिन्हें अत्यधिक खतरनाक व्यक्ति कहा जाता है क्योंकि वे प्रायः बंगवासी में लेख लिखते हैं। वे यहाँ बैठकें आयोजित करने के यास भी करते हैं। वे स्वंय को शान्ति व्यवस्था में विश्वास रखने वाला व्यक्ति बताते हैं लेकिन मुझे उनकी इस बात पर सन्देह है। उन्होंने वकील बनने के प्रयत्न किए लेकिन मैंने उन्हें चेतावनी दी कि यदि उन्होंने अच्छा व्यवहार नहीं किया तो मुझे इसकी रिपोर्ट करनी होगी।

(उ) मुद्रित साहित्य

इस जिले में हमें उत्तेजना पैदा करनेवाली पुस्तिकाएँ या अन्य साहित्य ढूंढ निकालने में सफलता प्राप्त नहीं हुई है तथा इस तरह की कोई तस्वीर भी नहीं प्राप्त हुई है जिसमें किसी मुसलमान को गाय का सिर धड से अलग करता हुआ प्रदर्शित किया गया हो। जो कुछ साहित्य देश के विविध भागों में विगत दो या तीन वर्षों में प्रचार हेतु, भड़काने हेतु, गलत राय कायम करने हेतु बाँटा गया है, उसी से इसका अनुमान लगाया जा सकता है। इस आन्दोलन का सामान्य रूप से ज्ञात कारक उत्तर पश्चिमी सूबों की विधान परिषद के सदस्य राजा रामफल सिंह द्वारा हिन्दी एवं अवधी में प्रकाशित दैनिक समाचार पत्र 'हिन्दुस्तान' है। इस समाचार पत्र के बहुत से अंक मैंने पढे हैं लेकिन इसमें मुझे कुछ भी चौंकाने वाला तथ्य नहीं दिखाई दिया। कोलकता का 'बंगवासी' भी प्रायः विभिन्न सभाओं के बारे में समाचार प्रकाशित करता रहता है। एक अन्य गोसेवक नामक समाचार पत्र अवश्य अत्यन्त आपत्तिजनक सामग्री प्रकाशित करता रहता है। वह बनारस से प्रभु दयाल वर्मन द्वारा निकाला जाता है। मैंने इसके ७ सितम्बर, १८९३ के अंक क्र. ४७ का अवलोकन किया है। यह समाचार पत्र एक वर्ष से प्रकाशित हो रहा है परन्तु निधि की कमी से बुरी तरह परेशान है। यह

उत्तेजनापूर्ण एवं विवादास्पद पत्र है। हालाँकि यह स्वयं को शान्ति व्यवस्था बनाए रखने का हिमायती घोषित करने का बहाना करता है। यह मुसलमानों के मतों को प्रकाशित करता रहता है कि गायों को संरक्षित रखना चाहिए। साथ ही, मुसलमानों को भी सूअरों की हत्या के खिलाफ आन्दोलन करने की राय देता रहता है। इस पत्र के साथ उसी स्थान से प्रकाशित गाय का चित्र भी दिखाई देता है जिसमें यह दर्शाया गया है कि विश्व के भिन्न भिन्न देशों में गाय की क्या क्या उपयोगिता है तथा उसके शरीर के प्रत्येक भाग में विशिष्ट गुण एवं विशेषताएँ है। जैसे कि उसकी आँखें सूरज एवं चंद्रमा, उसके पृष्ठ भाग में ब्रह्मा बिराजमान है आदि। यह लोगों को गोहत्या के विषय में सक्रिय होने के लिए भी कहता है।

दरभंगा से दो मुद्रणालयों से कभी कभार परिपत्र एवं पुस्तिकाएँ भी मुद्रित कराकर जारी किए गए थे, जैसे - (१) दरभंगा राज प्रेस, और (२) यूनियन प्रेस। मेरा मानना है कि अधिकांश सामग्री दरभंगा सभा के लिए राज प्रेस में मुद्रित हुई थी। लेकिन, जैसा कि मैं ने पहले भी कहा है, बहुत ही कम संख्या में परिपत्र जारी किए गए। इनमें से कुछ भी विशिष्ट प्रकार का साहित्य जारी नहीं किया गया। यूनियन प्रेस के स्वत्वाधिकारी, जिला बोर्ड के एक अधिकारी ने मुझे उन सभी परिपत्रों की एक सूची (उसने जो कुछ कहा, उस पर अविश्वास करने का मेरे पास इस समय कोई भी कारण नहीं है) दी है जिसे में आपकी सेवा में सूचनार्थ अग्रेषित कर रहा हूँ। दरभंगा से सम्बन्धित प्रकाशित साहित्य हानिकारक नहीं है। यह बहुत पहले छापा गया था। सीतामढ़ी से सम्बन्धित साहित्य हाल ही की तारीखों का है। यह निश्चित रूप से उत्तेजक प्रकृति का है। (सन्दर्भ सं. ५ एवं ६)। हिन्दुओं के लिए इन पुस्तिकाओं के लिए अंशदान देना तथा उन्हें क्रमशः आगे भेजना आवश्यक है। मुद्रणालय के स्वत्वाधिकारी ने इस तरह के किसी अन्य साहित्य के न छापे जाने की बात स्वीकार की है। लेकिन अब तक इस मुद्रणालय से जो कुछ छापा गया है, उसमें कुछ भी हानिकर नहीं है। अत्यन्त कटुता की भावना फैलाने वाले परिपत्र इस जिले के बाहर छपवाकर यहाँ लाए जाते हैं। छपरा, आरा और बाँकीपुर में सभी अपने निर्धारित रूप में अंशदान देते हैं। बेतिया में मधुबनी की भाँति ही काफी हद तक ओजस्विता बरकरार है। मधुबनी में पुस्तिकाओं के जारी होने के सम्बन्ध में श्री मलिक का मानना है कि इनमें बहुत सी पुस्तिकाएँ स्वयं पंडित ने मधुबनी के बाबू लोगों को समर्पित करके छापी

हैं। इस प्रकार के साहित्य से अत्यन्त घातक प्रभाव होता है। इनमें लोगों को केवल गायों को संरक्षित करने के लिए हीं नहीं कहा जाता बल्कि जो नहीं करते उनके लिये अपशब्दों का भी प्रयोग किया जाता है। क्षत्रियों एवं अन्य लोगों द्वारा गोसंरक्षण का कार्य न होने पर उन्हें कायर कहा जाता है। उन लोगों को भी विशेषरूप से जाति से बहिष्कृत किया जाता है जो इन्हें चंदा नहीं देते। अतः इसे बन्द करने के उपाय किए जाने चाहिए।

सभा की गतिविधियों की वर्तमान स्थिति

पूर्ववर्ती सूचनाओं से यह स्पष्ट हो रहा है कि इस जिले में सभाओं की स्थिति पूर्णतः भिन्न है। दरभंगा एवं उससे सम्बद्ध शाखाओं में नियंत्रक व्यक्तियों पर नजर रखी गई है। गायों के संरक्षण एवं देखभाल के अतिरिक्त इनकी अन्य कोई भी गतिविधियां नहीं देखी गईं। यहां कोई भी गतिविध जिले के अन्दर से न निकलकर मुख्यतः बाहर से लाई जाती है। सरकारी कर्मचारी इन सभाओं से कन्नी काटते हैं। इससे इन सभाओं के मूल कार्य को आगे बढ़ा पाना अत्यन्त कठिन हो गया है। मधुबनी सभा एवं उसकी शाखाओं में कार्य पर नजर रखी जा रही है। वहाँ अध्यक्षों के रूप में प्रतिष्ठित लोग है। लेकिन ये अत्यन्त क्षीण हैं। इनका कोई भी खास नियन्त्रण नहीं है। अतः सभा अत्यन्त आक्रमक स्थिति में है। अपने नियत कार्य वह दो सचिवों के माध्यम से आगे बढ़ा रही है। इनमें एक व्यक्ति महावीर प्रसाद को तत्काल हटाकर किसी दूसरे स्थान पर भेज देना चाहिए। उसे अपने मूल कार्य में दत्तचित्त होकर कार्य करना चाहिए। इस जिले में सामान्यतः सब कुछ अत्यन्त शान्ति पूर्ण ढंग से चल रहा है। मैंने मुख्य आयोजकों से मिलकर इस विषय पर बात की है। मैं ने उनसे किसी भी उपदेशक या आन्दोलनकारी के सम्बन्ध में कुछ नहीं सुना है। यहाँ निस्संदेह रूप से एक अन्तराल के बाद मवेशी के छीन कर ले जाने की कुछ घटनाएँ अवश्य घटी होंगी। लेकिन कोई गम्भीर मामला घटित नहीं हुआ है। एक या दो मामलों में मुझे विश्वास है कि उपनिरीक्षक ने गलत रिपोर्ट प्रस्तुत की होगी, और दूसरे मामले में दोनों दलों ने समझौता कर लिया होगा। ऐसी बातों से लोगों में बेचैनी पैदा करने वाली भावनाएं पैदा होती हैं। बात समाप्त हो जाती है परन्तु उपदेशक बेचैनी का प्रसार और अधिक करते हैं। अतः उपदेशकों को रोका नहीं गया तो अशान्ति की स्थिति पैदा होने से समस्या

बढ़ेगी ही। दोनों समुदायों का मानना है कि उनके बीच सम्बन्धों में तनाव की स्थिति पैदा हुई है। मुसलमान अकिंचन हैं। कई वर्षों से शान्ति बनाई हुए हैं, अतः गोहत्या विरोधी इस आन्दोलन से उनका रोष दुगुनी शक्ति के साथ फूट पडेगा। इसी बात को सोचकर आयलैंड का एक उदाहरण यहाँ निम्नलिखित रूप में देना होगा। हिन्दू अपनी प्रत्येक इच्छित वस्तु को अपने ढंग से प्राप्त करने का प्रयास कर रहे है। उनका यह भी विचार है कि सरकार सामान्यतः, और उसके कुछ अधिकारी विशेषरूप से, मुसलमानों का खुले आम पक्ष ले रहे हैं। इसके समर्थन में मैं आपको इस तथ्य से अवगत करा रहा हूँ कि बिहार में सभी स्थानीय उपमंडल अधिकारी मुसलमान हैं, हिन्दू नहीं।

३. जहाँ तक मुस्लिमों में आन्दोलन छेडने का सवाल है, इस जिले में उसकी संख्या अत्यल्प है। जैसा कि मैं ने पहले भी कहा है, वे अल्प संख्यक हैं। यदि मधुबनी में उनकी संख्या समान होती तो मुझे सन्देह है कि मधुबनी सभा के उत्तेजनापूर्ण परिपत्रों के परिणाम स्वरूप वहाँ दंगा भड़क गया होता। जिला अधीक्षक ने मुसलमानों द्वारा कस्बे में परिचालित दो भड़कानेवाले परिपत्रों का पता लगाया था। ये परिपत्र लगभग दस या अधिक दिन से वहाँ परिचालित किए जा रहे थे। लेकिन कस्बे के एक मुसलमान उपनिरीक्षक ने इनके सम्बन्ध में कोई भी सूचना नहीं भेजी। दो अग्रणी मुसलमानों से मैंने इस सम्बन्ध में परामर्श किया तब उन्होंने इन परिपत्रों को देखने के सम्बन्ध में पूर्णतः इन्कार कर दिया। उनके समुदाय के लोग इस हेतु नैमितिक रूप से एक या दो जगहों पर, लिवरपूल में मस्जिद के लिए चंदा उगाहते हुए देखे गए थे। उन्होंने हिन्दू दंगाइयों की सहायता के लिए भी चंदा एकत्रित करने के प्रयत्न किए लेकिन बताया गया कि उन्हें इस कार्य में बहुत कम सफलता प्राप्त हुई। आन्दोलन के सम्बन्ध में लोगों को प्रेरित करनेवाले प्रमुख मुस्लिमों में शामिल हैं - मुहम्मद हुसैन, मानद मजिस्ट्रेट; सखावत अली, मुख्तियार, वलायत हुसैन, फिजीशियन और कासिम अली, शिरस्तेदार, मुंसिफ की अदालत में कार्यरत।

४. हिन्दू मुस्लिम समुदायों के प्रमुख सदस्यों से निर्मित पंचायत के नीतिनिर्धारण के सम्बन्ध में मेरा विचार तो बिल्कुल स्पष्ट है कि इस जिले में किसी भी तरह से पंचायत बना पाना असम्भव कार्य ही है। बड़े बड़े कस्बों या गाँवों में दोनों समुदायों के लोग समान शर्तों पर एक दूसरे से मिलते हैं। वहाँ कुछ भी किया जा सकता है या किया जाना चाहिए लेकिन यह टिप्पणी इस जिले में कहीं भी लागू नहीं

हो सकती। सामान्यतः यहां मुसलमान अल्पसंख्यक हैं, इतना ही नहीं तो सामाजिक स्थिति में भी काफी पिछड़े हुए हैं। अतः इस परिस्थिति में यह सब कर पाना सम्भव ही नहीं है। क्योंकि यहाँ के एक प्रमुख मुसलमान व्यक्ति, सम्माननीय मुख्तियार ने मुझे बताया कि क्या आप महाराजा से आशा करते हैं कि वे पंचायत में मेरे साथ बैठेंगे, अथवा स्थिति बदल भी दी जाए तो क्या मुझे वे अपने साथ बैठने देंगे। सामान्यतः सभी मुस्लिम लघुता या निकृष्टता की ग्रन्थि से पीडित हैं। लेकिन दक्षिण के कुछ गावों में वे अत्यन्त समृद्ध हैं। वहाँ हिन्दू बहुत कम हैं और उनकी कोई गणना भी नहीं है। न तो महाराजा और न ही हिन्दू या न ही मुस्लिम यह सोचते हैं कि पंचायतों के द्वारा कोई हल निकाला जा सकेगा।

५. अब हमें इस प्रश्न के समाधान के लिए उठाए जाने वाले विशेष कदमों के बारे में विचार करना चाहिए जिससे अशान्ति दूर हो तथा तनाव कम हो। हिन्दुओं एवं मुस्लिमों के बीच इस समय निस्संदेह रूप से दुर्भावना व्याप्त है और मुझे भय है कि यह भारत के बड़े भूभाग में न फैल जाए। अगले तथ्य पर जाने से पूर्व हमें इस तथ्य को नहीं भुलाना चाहिए कि व्याप्त वर्तमान स्थिति के लिए सरकार भी काफी कुछ जिम्मेवार है क्योंकि सरकार ने ही इसे बिना किसी रोकथाम के आगे बढ़ने दिया जिससे इसने अपना इतना बड़ा राजनीतिक कद बना लिया। सरकार ने भी गोरक्षिणी सभा और उसके उपदेशकों के कार्य में बिल्कुल भी हस्तक्षेप नहीं किया। जहाँ तक मैं अनुभव करता हूँ पुलिस को भी कभी आन्दोलन के सम्बन्ध में विशेष रूप से रिपोर्ट भेजने या उन्हें रोकने के लिए आदेश नहीं दिए गए। यह समझा जाता रहा कि उच्च पदस्थ प्राधिकारियों को इन सबकी भलीभाँति जानकारी है। अतः उसने हस्तक्षेप नहीं किया और आन्दोलन को सरकार की अनुमति मिल गई। सभी स्तर के सरकारी पदाधिकारियों ने इसकी विविध प्रकार की निधि में खुलेआम अंशदान देना आरम्भ कर दिया। यूरोपीय लोगों के द्वारा उनके अनुमोदन की जाँच भी करनी आवश्यक नहीं समझी गई। इस समग्र आन्दोलन को हिन्दू धर्म के अग्रणी सदस्यों ने बिना किसी सचिव के भी अपना समर्थन दिया जैसे - बनारस, डमरौन, दरभंगा के महाराजाओं - राजा रामपाल सिंह एवं अवध के अन्य राजाओं तथा उत्तर पश्चिमी प्रान्तों के राजाओं, तथा विभिन्न सरकारों के विविध परिषदों के समस्त भद्र लोगों ने अपना समर्थन दिया। इनमें कुछ लोगों की मालिकी में निकलने वाले समाचार पत्रों तथा मुद्रणालयों ने स्वयं को सभा के कामकाज

के लिए उनके सिद्धांतो के अनुसार प्राख्यापित करना आरम्भ कर दिया। गोरक्षिणी सभाओं ने अपने धर्म सिद्धांतो एवं पंथ का स्वयं निर्माण किया। इन्हें सरल बनाया गया। वे उतने ही अहानिकर हैं जितने स्वराज्य, समाजवाद, मुक्त व्यापार या फिर अन्य कोई मोहक सिद्धांत, जो कि आगे चलकर राजनीतिक सिद्धान्त के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं और इतना अधिक अतिवादी रूप धारण कर लेते हैं जितना कि इन सिद्धांतों के स्थापकों ने कभी सोचा भी नहीं होगा। इनमें से किसी भी गोरक्षिणी सभा का कोई भी आद्यस्थापक कभी भी अध्यक्ष नहीं था। उन्होंने कभी यह भी नहीं सोचा था कि ये सभाएँ समग्र जिलों में अशान्ति फैलाएंगी और दंगे भड़कना आम बात हो जाएगी और शान्ति कायम करने के लिए सशस्त्र सेनाओं की सहायता लेनी पड़ेगी। यह सोच वैसी ही है जैसे श्री ग्लैडस्टोन आयर्लैंड के स्वराज्य के लिए सोचते हैं कि यदि इन्हें इस तरह की छूट मिली तो वह अब तक के किसी भी लोकतांत्रिक ढाँचे से अधिक इग्लैण्ड के लिए अहीक घातक सिद्ध होगी। सभाओं का इस समय तक जो भी कार्य चल रहा है, उसके सम्बन्ध में सरकार की व्यापक कार्रवाई की जानकारी उन्हें होना आवश्यक है। वह व्यावहारिक रूप में यह है कि सरकार ने इन सभाओं को अपना अनुमोदन नहीं दिया है। इससे सभाओं की वैधानिक स्थिति पर अवश्य असर पड़ेगा। आन्दोलन को प्रकार सरकार ने दो ही वर्ष पूर्व इस आन्दोलन के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करना बंद कर दिया तथा इसे बंद कर देने के लिए कहा था। इसके कारण आजमगढ़ और बलिया के उत्तर पश्चिमी सूबों के जिलों में लगभग गृहयुद्ध की स्थिति पैदा हो गई थी लेकिन बिहार के जिलों में सामान्य रूप से अशान्ति नहीं फैली थी।

अब तक मैं कोई भी विशेष कदम उठाने में असमर्थ रहा हूँ। मैं जिला पुलिस अधीक्षक को कुछ आरक्षी पुलिस दल तैयार रखने के लिए आदेश देता रहा हूँ। उनके पास मानव शक्ति की कमी होने के कारण से यह भी बहुत कम ही हो पाया है। मैं ने समय समय पर प्रमुख हिन्दुओं एवं मुसलमानों से चर्चा की है। मैं उन्हें परस्पर मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाने की आवश्यकता के लिए प्रेरित करता रहा हूँ ताकि वे इस बात का महत्त्व समझें और इस जिले में पड़ोसी जिलों के गलत उदाहरणों की पुनरावृत्ति बिल्कुल न हो। मुझे सभी ने आश्वासन दिया है (आखिर सिद्ध क्या होता है उसका पता बाद में चलेगा) कि दूर दूर तक किसी भी तरह की अशान्ति का खतरा नहीं है। सदर एवं मधुबनी उपमंडलों में दो या तीन का अपवाद छोड़कर अन्य समस्त स्वयंसेवियों ने कुछ

मास पूर्व त्यागपत्र दे दिया था, अतः यहाँ अपात् स्थिति के समय कोई भी नहीं आएगा। समस्तीपुर उपमंडल में बिहार लाईट हॉर्स का दस्ता है तथा रेलवे स्वयंसेवी भी है। परन्तु कुछ सप्ताह पूर्व, कुछ अपवादों को छोड़कर, पहले दल की बंदूकें कलकत्ता में ही हैं। अतः अब यह अत्यावश्यक है कि सरकार किसी भी क्षण कार्रवाई करने के लिए तत्पर रहे। मेरा विचार है कि निम्नलिखित बातों पर तुरन्त कार्रवाई की जानी चाहिए।

प्रथमतः दंगा भड़कने की स्थिति में ऐसे स्थलों पर भेजे जाने के लिए हमारे पास कुछ निश्चित संख्या में पुलिस बल तैयार रहे। प्रत्येक जिले के लिए वांछित पुलिस बल वास्तव में उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप अलग अलग रूप में हो। जहाँ तक दरभंगा का सवाल है, मेरा विचार है कि वहाँ ५० लोगों का एक दस्ता सदैव तैयार रहे। व्यावहारिक रूप से इस समय वहाँ केवल नाम मात्र का आरक्षित पुलिस बल है। मुझे ५० सशस्त्र पुलिस जवान वहाँ भेजने होंगे। एक अतिरिक्त अधिकारी की भी आवश्यकता होगी। एक यूरोपीय पुलिस अधिकारी वहाँ या मुख्यालय के समीप सदैव उपस्थित होना चाहिए। केवल एक जिला अधीक्षक से काम चलाना असम्भव ही होगा क्योंकि उसकी आवश्यकता कैम्प में होती ही है। उसे समग्र जिले का भी निरीक्षण करना होता है। यदि उसे कुछ ही थानों का निरीक्षण करना होता तो बात अलग होती। उसे जिले में एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना होता है। अतः अशान्ति की स्थिति पैदा होने पर उसे उस स्थल की सूचना मिलने पर पहुँचने में दो से तीन दिन लग ही जाते हैं। इसका भी ध्यान रखा जाए कि यहाँ सदर उपमंडल में केवल एक निरीक्षक है जो कि निरीक्षण के लिए बाहर गया हुआ है। शीतऋतु में मैं भी बाहर कैम्प में रहूँगा। अतः स्थल पर कोई भी यूरोपीय व्यक्ति नहीं होगा।

दूसरे, पुलिस को सख्त आदेश दिए जाएँ कि वे सभाओं के उपदेशकों एवं कार्यकर्ताओं को जिलों में कहीं भी जाने की अनुमति न दें। इस समय वे कहीं दिखाई नहीं दे रहे हैं लेकिन जब फसल कट जाएँगी तो निस्संदेह रूप से वे पुनः आ जाएँगे (यदि रोका नहीं गया तो)। वे लोगों को गलत बातों के लिए प्रेरित करेंगे। उनमें बहुत से लोग निधि के लिए चंदा उगाहेंगे तथा पता नहीं और क्या क्या करेंगे। अतः प्रत्येक थाना के प्रभारी को यह अच्छी तरह से ज्ञात करा दिया जाए कि उसके थाना के इलाके में जो कुछ भी घटित होगा उसकी पूरी की पूरी जवाबदारी उसके ऊपर होगी।

यदि उसके थाना के इलाके में किसी भी स्थान पर उपदेशकों द्वारा भाषण दिए गए और उसने इसकी रिपोर्ट नहीं भेजी तो इसे अत्यन्त गम्भीरता से लिया जाएगा।

तीसरे, मैं समस्त सरकारी कर्मचारियों को एक सामान्य आदेश जारी करके उसमें यह बात प्रस्तुत करूँगा कि यद्यपि गोरक्षिणी सभाओं के उद्देश्य अपने मूल रूप में अहानिकर हैं लेकिन आन्दोलनकारियों के उपदेशों तथा विकृत मानसिकता वाले लोगों ने दंगे भडकाने का काम किया है। जिसके कारण जानहानि हुई है। हिन्दुओं और मुस्लिमों के बीच बनी हुई सद्भावना के साथ खिलवाड किया गया है, अतः सरकारी कर्मचारियों को इनका किसी भी तरह समर्थन नहीं करना चाहिए। उन्हें किसी भी समिति में सचिव के रूप में या अन्य पदों पर कार्य नहीं करना चाहिए तथा आन्दोलन में मुख्य भूमिका निभाने से सर्वथा दूर ही रहना चाहिए।

चौथे, मैं विशेषरूप से जमींदारों के लिए एक सामान्य उद्घोषणा जारी करुँगा जिसमें विशेषरूप से बिहार के जमींदारों का ध्यान इन मुद्दों की ओर आकृष्ट करूँगा कि उनकी समझदारी के कारण सरकार उनके प्रति विशेष रूप से तरफदारी करती है अतः यदि वे विरोध में व्यवहार करते हैं तो उन्हें उनके गाँवों में अशान्ति फैलने के लिए उत्तरदायी माना जाएगा। उनके सभाओं के अध्यक्ष के रूप में कार्य न करने के बहाने को किसी भी तरह से अपवाद नहीं माना जाएगा क्योंकि उनके सभी गाँवों में करपर्दाज नियुक्त करना उनका प्राथमिक कर्तव्य है। यदि ये एजेण्ट, रैयत, पटवारी और चौकीदार खिलाफ हैं तो प्रवासी उपदेशकों को उनके गाँवों में सभाएं आयोजित करके भाषण देना अत्यन्त कठिन हो जायेगा और दंगे भड़कने की घटनाएँ अपने आप समाप्तप्राय हो जाएँगी। रैयत, पटवारियों एवं चौकीदारों को यह भी बता देना होगा कि वहाँ हुई किसी भी प्रकार की अशान्ति के लिए वे जवाबदार होंगे। ऐसी स्थिति में सरकार उन्हें उनके पद से बर्खास्त करेगी। जहाँ तक आम जनता का सवाल है उन्हें सरकार को तुरन्त सूचित करना चाहिए कि किस कारण से वहाँ अशान्ति फैलने की सम्भावना है और ऐसी स्थिति में सरकार वहाँ के मुख्य अधिकारी, विशेष सिपाहियों को तैनात करेगी। फिर भी वहाँ दंगे भड़कते हैं या अशान्ति फैलती है तो सरकार उस गाँव में दण्डात्मक पुलिस दस्ता तैनात करेगी। मैं वहाँ के सभी लोगों का ध्यान दण्ड संहिता के १२४-ए के सन्दर्भ में फौजदारी कार्यवाही संहिता की धारा ४४ की ओर आकृष्ट करुँगा। जहाँ तक मेरा मानना है, इस समय विद्यमान कानून में किसी भी प्रकार के परिवर्तन की

आवश्यकता नहीं है। ये कानून किसी भी आन्दोलन या स्थानीय अशान्ति को रोकने में सक्षम हैं।

पाँचवे, मैंने जो बात अब तक नहीं कहीं है, उसके बारे में मेरा मानना है कि सभाओं के मुख्य उपदेशकों के पीछे पीछे छाया की तरह चलने वाले जासूसों को लगाने की भी आवश्यकता है। जब ये उपदेशक एक जिले से दूसरे जिले में जाएँ तो इनकी गतिविधियों पर निगरानी रखकर जासूस जिला पुलिस को सूचनाएं देते रहें ताकि आवश्यकता पड़ने पर समय रहते समुचित कदम पुलिस द्वारा उठाए जा सकें। अभी तक इस दिशा में कुछ भी नहीं किया गया है। अभी पिछले ही सप्ताह एक अत्यन्त प्रख्यात आन्दोलनकारी एक कल्पित नाम से यहाँ आया था। जब तक मैंने नहीं बताया तब तक पुलिस को उसके बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं था कि वह कौन था।

छठे, हथियारों के परवानों पर अत्यन्त सघन पर्यवेक्षण करने की आवश्यकता है। कई मामलों में इन्हें मुक्तरूप से जारी कर दिया जाता है। जब भी दंगा भडकता है, इन परवानों को तुरन्त जमा करा लेना चाहिए। स्वच्छंदता की प्रवृत्ति का पता चलते ही संपूर्ण थाने की हथियार बन्दी कर देना चाहिए क्योंकि दोषी को सजा देते समय निर्दोष भी सजा का भागीदार न बन जाए।

सातवें, जिन जिलों में अशान्ति बनी हो उन जिलों के लिए यह उचित होगा कि उनमें शीतऋतु में कुछ दस्ते मार्च करें।

आठवें, प्रेस पर सेंसरशिप को पुनर्स्थापित करना भी कुछ हद तक आवश्यक है। उन मुद्रणालयों को बन्द कराना भी जरूरी है जो उत्तेजक, भड़कीला, देशद्रोही प्रकृति का साहित्य, परिपत्र आदि छापते हैं। प्रेस की स्वतंत्रता का व्यवस्थित ढंग से दुरुपयोग करने पर उसकी अनुमति वापस न लेने का कोई कारण मुझे नहीं दिखाई देता।

मैं यहाँ एक अन्य मुद्दे पर भी ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ, और वह है, पडोसी जिले में क्या चल रहा है इस विषय में जिलाधीश का उपेक्षाभावयुक्त व्यवहार। नियमतः यह महत्त्वपूर्ण नहीं है, परन्तु जहाँ तक आन्दोलन का सवाल है एक पडोसी को देखना चाहिए कि क्या कुछ पक रहा है, क्या कुछ साजिश रची जा रही है। इसमें निगरानी रखने के लिए निजी चिट्ठियों के अतिरिक्त समाचार पत्र देखना भी आवश्यक है। अधिकांश अधिकारी केवल इंग्लिश मैन को ही इस दृष्टि से देखते हैं लेकिन उन्हें

देशी भाषाओं के समाचार पत्रों को भी यथासम्भव अवश्य देखना चाहिए। पुलिस की गोपनीय रिपोर्ट को ही देखने से काम नहीं चलेगा —क्योंकि इसमें बहुत कम समाचार होते हैं। इस समय मुझे लगता है कि देशी समाचार पत्रों का साप्ताहिक गोपनीय सारांश मंडल के अधिकारियों के पास भेजना चाहिए।

६. अंत में, अपरिहार्य कारणों से रिपोर्ट देरी से प्रस्तुत करने के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

संलग्नक ६

मधुबनी गोरक्षिणी सभा पर टिप्पणी

१. मुझे बताया गया है कि १८८८ में मधुबनी के इमदादी विद्यालय के कुछ लड़के सोनपुर मेला देखने गए। वहाँ वे बनारस के कई पंडितों से मिले। इन पंडितों ने इन लड़कों को बहुत प्रभावित किया। गाँव लौटने पर उन युवा छात्रों ने एक गोरक्षिणी सभा की रचना करने का प्रयास किया। उन्हें मधुबनी के बाबू लोगों के तत्कालीन प्रबन्धक पंडित मेवालाल ठाकूर का ऊर्जस्वी समर्थन प्राप्त हुआ।

२. २ अक्टूबर १८८८ को इसकी प्रथम बैठक आयोजित की गई और मधुबनी गोरक्षिणी सभा का विधिवत् उद्घाटन हुआ।

३. २ दिसम्बर १८८८ से १७ सितम्बर १८९३ के बीच सभा की कुल ५० बैठकें आयोजित की गईं। इन नियमित बैठकों के अतिरिक्त सभा अपना वार्षिक स्थापना दिवस भी सामान्यतः प्रत्येक वर्ष के आरम्भ में मनाती है। इन अवसरों पर वे रिवाजी तौर पर उत्तर पश्चिमी सूबों के प्रत्येक भाग से पंडितों को आमंत्रित करते है। भाषणों का आयोजन किया जाता है। सभाओं में भाषण दिए जाते हैं। बिहार की प्रत्येक गोरक्षिणी सभा से प्रतिनिधि इसमें भाग लेते हैं। सभाओं के दृष्टिकोणों में प्रवर्धित सुधार करने के उद्देश्य से उपाय एवं साधनों हेतु विचार करने के लिए बैठकें आयोजित की जाती हैं। समस्त अतिथियों की मधुबनी सभा के खर्चे पर आवभगत की जाती है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इन वार्षिक बैठकों से सभा की निधि में खूब वृद्धि होती है।

४. स्थानीय एजेंसी के द्वारा चलाए गए समस्त आन्दोलनों के विपरीत सभा की स्थापना व्यावसायिक रूप से कार्य करने हेतु की जाती है। इस वर्ष के लिए सभा के

पदाधिकारियों का विवरण निम्नानुसार है।

अध्यक्ष : बाबू दुर्गादत्त सिंह एवं बाबू हकधारी सिंह (दोनों मधुबनी के बाबू)

संयुक्त सचिव : मुंशीलाल बिहारीलाल, मुख्तियार तथा महावीर प्रसाद, द्वितीय शिक्षक, मिडिल वर्नाक्यूलर विद्यालय।

प्रबंध समिति

१. मुंशीलाल बिहारीलाल
२. गुर्जू प्रसाद (महाजन)
३. हरनाथ प्रसाद, मुख्य पंडित, मिडिल वर्नाक्यूलर विद्यालय
४. महावीर प्रसाद
५. श्यामचन्द्र नारायण, मुख्तियार
६. तुलीराम साहू, महाजन
७. झरीलाल, महाजन
८. मुकुंदराय, महाजन
९. खूब लाल सहाय, महाजन
१०. चतुर्भुज सहाय, वकील
११. बाल मुकुंद सहाय, मुख्य अध्यापक, मिडिल वर्नाक्यूलर विद्यालय
१२. प्रसाद राम, महाजन
१३. कालीधन चौधरी, महाजन

कार्यकारिणी समिति : कार्यकारिणी समिति में उपर्युक्त १३ सदस्य तथा मधुबनी कस्बे के अन्य १८ सदस्य शामिल हैं।

कोषाध्यक्ष : गुर्जू प्रसाद, दरभंगा के एक महाजन बृज बिहारी लाल के मुनीम

५. दिसम्बर १८९१ में आयोजित बैठक के कार्यवृत्त के सन्दर्भ में मुझे पता चला कि सभा ने अपने नियम बनाए थे। उन्हीं के अनुसार उसके पदाधिकारियों को सत्ता प्राप्त होती है।

अध्यक्षों के पास वास्तव में कोई सत्ता नहीं है। वे मात्र नामधारी अध्यक्ष होते हैं।

उनका कर्तव्य है कि वे बैठकों में भाग लें और बैठकें समुचित ढंग से आयोजित हों। यदि बैठक में एक भी अध्यक्ष भाग न ले पाए तो सभा के सदस्य उस दिन

की बैठक की कार्यवाही को समुचित रूप से करने के लिए एक सभापति की नियुक्ति करते हैं।

जब मेवालाल ठाकूर १८९१ में सभा के अध्यक्ष थे, मुझे कोई सन्देह नहीं कि उन्होंने सभा के समस्त कार्यो में पूर्ण रूप से सक्रिय भागीदारी की। वर्तमान अध्यक्षों में मधुबनी बाबू लोग सभा के कार्यों में सक्रिय रूप से भागीदारी करने में अत्यन्त उदासीन हैं। वे सभा के साथ अपने प्रत्यक्ष सम्बन्ध चंदे के रूप में मोटी रकम दान करके बनाए हुए हैं। फिर भी, अप्रत्यक्ष रूप से उनका बड़ा प्रभाव है। कस्बे में उनका दबदबा तथा काश्तकारों पर उनका रौब अत्यन्त अधिक है। उनके कारण सभा की ख्याति अपेक्षा से भी अधिक बढ़ जाती है।

६. सचिव : कार्य का अधिकांश भार संयुक्त सचिवों पर रहता है। मुंशीलाल बिहारीलाल प्रमुख मुख्तियार हैं। वे अधिक समय निकाल नहीं पाते। लेकिन वे अत्यन्त मेधावी व्यक्ति हैं। उनका प्रभाव कस्बे के लोगों तथा मुफस्सल दोनों पर है। वे एक अच्छे वक्ता भी हैं। भूमिकर पंजी सर्वेक्षण के विरोध में दल के मुख्य प्रवक्ता भी हैं।

लाल बिहारी अपने दबदबे के कारण सचिव हैं लेकिन वे सभा का लिपिकीय कार्य बहुत कम करते हैं।

सचिव का समग्र कार्य वास्तव में महावीर प्रसाद करते हैं। यह व्यक्ति सरकारी इमदादी मिडिल वर्नाक्यूलर विद्यालय में कुछ वर्षों तक शिक्षक के रूप में कार्य कर चुका है। उसे अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान है, खूब अच्छी तरह से अंग्रेजी बोलता है तथा असामान्य प्रतिभा युक्त व्यक्ति है।

उसी की वजह से सभा का समग्र कामकाज अत्यन्त व्यवस्थित रूप में चलता है। कार्यवृत्त या तो वह स्वयं लिखता है या फिर उसके आदेशानुसार लिखे जाते हैं। प्रस्तावों के मसौदे भी वही तैयार करता है। किसी भी अन्य सभा के लिए कोई भी पत्र उसके हस्ताक्षर के बिना नहीं जा सकता। वह लेखा तैयार करता है। उसे एक सुव्यवस्थित व्यवसाय की भाँति तैयार करता है। कमसे कम चार बहियाँ रखता है। इन सब कार्यों के अतिरिक्त वह प्रवासी पंडितों की दैनन्दिनी की जाँच भी करता है। आन्दोलन के सम्बन्ध में उनका मार्गदर्शन भी करता है। वह गोशाला एवं गोशेड का भी निरीक्षण करता है तथा देखता है कि उनका समुचित रूप से अनुरक्षण किया जा रहा है या नहीं। ये सभी कार्य वह बिना कोई वेतन लिए अपने कर्तव्य के रूप में ही करता है। गोरक्षिणी आन्दोलन के गतिशील रहने का यही कारण है कि उसके पास इस तरह

के काल्पनिक पात्र वास्तव में हैं। गोरक्षा आन्दोलनों का सामान्य जन पर कितना प्रभाव है उसका यह प्रत्यक्ष उदाहरण है। इस प्रभाव में आकर एक हिन्दू कितना कट्टर बन सकता है।

महावीर प्रसाद गोरक्षिणी सभा का प्रमुख आधार है तथा उसे निश्चित रूप से कह देना चाहिए कि वह एक साथ अपने कर्तव्य एक शिक्षक के रूप में तथा गोरक्षिणी सभा के कार्य के रूप में नहीं कर सकता।

७. कोषाध्यक्ष : कोषाध्यक्ष का कार्य सभा के खातों को नियमित रूप से लिखना तथा सभा की निधियों का निवेश करना होता है। वह सचिवों के आदेशों के बिना न तो कोई धन प्राप्त कर सकता है और न खर्च कर सकता है। सचिव की सहमति के बिना वह निवेश भी नहीं कर सकता।

वर्तमान कोषाध्यक्ष गुर्जूप्रसाद कोई खास दबदबा रखनेवाला महत्त्वपूर्ण व्यक्ति नहीं है। वह आदेशों का पालन करनेवाला व्यक्ति मात्र है।

८. व्यवस्थापक एवं कार्यकारिणी समिति : सभा के दूसरी सभाओं के साथ सम्बन्ध रखने के समस्त कार्यों, विविध शीर्षों में धन के वितरण एवं व्यय के सम्बन्ध में कार्यकारिणी समिति समस्त प्रस्तावों को पारित करती है। यह भी आवश्यक है कि व्यवस्थापन समिति के पाँच सदस्य तथा कार्यकारिणी समिति के सात सदस्य किसी भी प्रस्ताव को पारित करने के लिए पक्ष में मतदान करें।

व्यवस्थापन समिति एक छोटी समिति होने के कारण कार्यकारिणी समिति द्वारा अनुमोदित प्रस्तावों को पारित करती है।

९. मैंने पहले ही कहा है कि सभा ने दिसम्बर १८८८ से ५० बैठकें आयोजित की हैं। इससे एक वर्ष में दस बैठकें आयोजित होने का औसत निकलता है। व्यावहारिक रूप से प्रतिमास एक बैठक आयोजित होना इससे सिद्ध होता है। इन बैठकों में उपस्थिति खूब अच्छी होती थी। इनका आयोजन व्यावसायिक रूप में किया जाता था।

१०. मैंने पूरी कार्यवृत्त पोथी पढ़ी है और पाया है कि उपस्थिति अच्छी खासी होती थी। ये बैठकें सदैव मधुबनी के बाबूओं के आवासों पर आयोजित होती थीं।

११. ३ जनवरी १८९२ की कार्यवाही : कार्य प्रकृति के उदाहरण के रूप में यहाँ सभा की ३ जनवरी १८९२ की बैठक की कार्यवाही का संक्षिप्त ब्यौरा प्रस्तुत कर रहा हूँ :

(१) दिसम्बर, १८९१ में सभा के वार्षिक स्थापना दिवस समारोह में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों के भोजन पर व्यय रू. २७-०० पारित किए गए।

(२) अध्यक्ष, कोषाध्यक्ष, सचिव एवं गोशालक को प्रदत्त सत्ता का प्रारूप पारित किया गया।

(३) दुकानों में लटकाई गई दान पेटियों से प्राप्त लोहिया पैसे कोषाध्यक्ष को भेजे गए।

(४) चंदा देने वालों को बकाया राशि देने के लिए सूचित किया गया।

(५) सभा की निधियों को ऋण के रूप में जिस व्यक्ति के पास निवेशित किया गया, उसका बॉण्ड सचिव के पास जमा करागाय गया।

(६) पंडित का वेतन बढ़ाकर १५-०० रू. तथा चपरासी का वेतन बढ़ाकर ५-०० रू. किया गया।

(७) दरभंगा गोरक्षिणी सभा का पत्र पढ़ा गया।

दरभंगा सभा का यह कहना गलत है कि मधुबनी में मवेशी की अच्छी तरह से देखभाल नहीं की जाती। कुछ प्रपत्रों को भरने का दरभंगा सभा का अनुरोध तथा सभा के कार्य की रिपोर्ट समग्रतः सभा के अधिकार क्षेत्र से बाहर है।

११. मैंने सभा की लेखा बही का निरीक्षण किया है और उन्हें समुचित पाया है । प्रत्येक शीर्ष से प्राप्त आय को स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है । चंदा देने वालों के नाम दर्ज किए गए है और उन्हें वर्गो एवं समूहों में बाँटकर भुगतान को सावधानीपूर्वक लिखा गया है । यह सभा निधि का संग्रह करने में अत्यन्त सक्रिय रूप से कार्यरत रही। बकाया चंदादाताओं को नियमित रूप से अनुस्मारक भेजे गए।

१२. निम्नलिखित कथन से सभा की आय के बारे में जानकारी प्राप्त होती है :

(१) मधुबनी कस्बे से नियत मासिक अंशदान रू. १८-१३ प्रति माह है। इसमें उपमण्डलीय कार्यालय के अमले रू० १०-३-९ अदा करते हैं। कस्बे के बनिया लोग रू० ४-४ प्रतिमाह चंदा देते हैं। शेष रू० ४ प्रतिमाह मधुबनी के अन्य लोगों द्वारा दिया जाता है।

(२) दुकानों में लटकाई गई दानपेटियों से रू. १४-०० प्रति माह प्राप्त होते हैं। इससे लगता है कि प्रत्येक दुकान में एक दानपेटी लटकाई गई थी जिसमें प्रत्येक

ग्राहक को एक पाई डालनी होती थी। इसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार रकम डाल सकता था। ऐसा लगता है कि यहां के लोग अत्यन्त धर्मपरायण हैं।

(३) पाँच बड़े अनाज व्यापारियों द्वारा एकत्रित रकम : सबसे अधिक अयोध्या राम से रू. २२-६ : विगत छह मास की औसत।

(४) पण्डितों के माध्यम से प्राप्त धन : गाँवों से अनाज एकत्रित करके उसे बेचकर इस माध्यम से धन प्राप्त होता था। अनाज मधुबनी में बेचा जाता था और धन कोषाध्यक्ष को हाथोंहाथ जमा किया जाता था।

मधुबनी के बाबू प्रत्येक वार्षिक दिवस पर रू. ४०० देते थे।

		औसत (प्रति माह)		
		रू.	आना	पाई
(५)	वार्षिक दिवस समारोह की बैठक में चंदा :	४	७	०
	सभा की स्थापना से प्राप्त धन	६०	०	०
(६)	'चट्टी' अनाज के व्यापारियों द्वारा दिया गया योगदान	१	०	०
(७)	गोशाला में दूध, गोबर आदि की बिक्री से प्राप्त आय	१	५	०

(८) इसके अतिरिक्त राम पाटिया से कभी कभी चीनी के गोला दिए जाते थे लेकिन विगत छह माह से उन्होंने कुछ भी योगदान नहीं दिया है।

१३. इन मदों से मासिक आय रू. १२१-१५ हुई। १८९२ के वर्ष में आय कुछ अस्थिर रही, वर्ष में रू. १२४३ या उससे कुछ अधिक। १०० रू. प्रति माह के हिसाब से कुछ अतिरिक्त आय हुई।

१४. **शाखा सभाएँ** : इस उप मण्डल में कोई भी शाखा सभा नहीं है। एक शाखा सभा कुछ समय पूर्व पंडौल में स्थापित की गई थी। आशा है कि इससे सभा की निधि में कुछ प्राप्त होता होगा। लेकिन कुछ समय तक थोड़ी सी राशि देने के पश्चात् यह शाखा सभा मृतप्राय हो गई।

जंधारपुर में एक गोशाला कार्यरत है लेकिन इसका प्रबंधन दरभंगा सभा करती है। इसमें उन सभी पशुओं को रखा जाता है जिन्हे दरभंगा गोशाला में स्थान नहीं मिल पाता है।

राजनगर के राजा को अंशदान देने के लिए कहा गया लेकिन उन्होंने बताया कि उनकी एक सभा राजनगर में कार्यरत है अतः वे मधुबनी सभा को योगदान नहीं कर सकते। वास्तव में, राजनगर में कोई सभा नहीं थी।

१५. **व्यय** : मधुबनी सभा द्वारा निम्नलिखित मदों पर व्यय किया जाता है :

		रुपए	
(१)	पण्डित	रू. १०	प्रतिमाह
(२)	चपरासी	रू. ५	प्रतिमाह
(३)	ग्वाला	रू. ३	प्रतिमाह
(४)	गायों के लिए चारा (अनाज, गुड़, भूसा आदि)	रू. २१५	वार्षिक
(५)	गायों की खरीद	रू. ५	
(६)	मरम्मत आदि	रू. ३	
(७)	दरभंगा के प्रतिनिधियों आदि पर अन्य खर्च	रू. ७६	वार्षिक
(८)	लिपिक	रू. ७	प्रतिमाह

१६. औसत खर्च रू. ५७ प्रति वर्ष है। १८९२ में कुल खर्च रू. ६२०-८ किया गया।

१७. सभा प्रतिवर्ष रू. ४०० से ६०० की बचत करती है। इस समय सभा के पास रू. १५०० की आरक्षित रकम है।

१८. अब मैं सभा के प्रभाव की बात पर आता हूँ। मैंने पहले भी उल्लेख किया है कि मधुबनी सभा अपने आप को स्वतंत्र निकाय घोषित करती है। किसी अन्य सभा से सम्बद्ध होने की बात नहीं स्वीकार करती। वे दरभंगा सभा से किसी भी विषय पर मार्गदर्शन तक प्राप्त नहीं करते। अन्य सभाओं की स्थापना के सम्बन्ध में इन्होंने काफी गतिविधियाँ की हैं। सीतामढ़ी गोरक्षिणी सभा जो अब स्वतंत्र है, मूल रूप से मधुबनी सभा के तत्त्वावधान में प्रारंभ हुई थी। मधुबनी सभा से राम अनुग्रह त्रिवेदी नामक एक पण्डित को सीतामढ़ी में चंदा इकट्ठा करने के लिए प्रतिनियुक्त किया गया था। आर्थिक रूप से सुदृढ़ होने पर नई संस्था स्थापित की गई थी।

१९. मैंने मधुबनी सभा के पत्राचार को अच्छी तरह से देखा है। मैंने पाया है कि उसका बिहार की प्रत्येक बड़ी सभा के साथ सीधा पत्राचार है। नागपुर की सभा प्रमुख सभा के रूप में दिखती है। पत्रों से दिखता है कि मधुबनी की सभा उस शहर

के दृष्टिकोण से काफी प्रभावित रही है। उदाहरण के लिए, मैंने पत्रों में पाया कि मुजफ्फरपुर का एक संग्राहक सीतामढ़ी में आया और गोरक्षिणी आन्दोलन के प्रति उसने अपनी असहमति व्यक्त की। परिणामतः चंदा कम हो गया। मधुबनी सभा ने इस प्रश्न को तुरन्त समस्त ब्यौरों के साथ नागपुर सभा से परामर्श प्राप्त करने के लिए भेजा। हालाँकि इस पत्र का कोई उत्तर नहीं प्राप्त हुआ।

२०. मधुबनी सभा ने पत्रों की रोचक शृंखला में प्रतापगंज, मऊ, दलसिंह सराय, बेगूसराय को पत्र लिखे हैं। मधुबनी सभा ने नागपुर की सभा को भारत का हृदय एवं हिन्दू धर्म का आधार कहा है। मिथिला को इसका अध्यक्ष बनने का अनुरोध किया है। ये पत्र सभाओं की व्यापक स्तर पर स्थापना करने के जोरदार प्रयास हैं। इनमें लिखा गया है कि हिन्दू धर्म निष्कलंक है। मवेशी का संरक्षण किया जाता है। हिन्दू धर्म भारत का प्रमुख धर्म है। इस उद्देश्य पर आगे लिखा गया है कि मधुबनी सभा अन्य सभाओं को नागपुर सभा द्वारा प्रस्तुत सिफारिश को ध्यान में लेने के लिए सूचित कर रही है कि समग्र भारत में इसके हल्के स्थापित किए जाएँ। प्रत्येक हल्के में कुछ निरीक्षकों की नियुक्तियाँ की जाएँ जिनका कर्तव्य प्रत्येक गोरक्षिणी सभा में आकर उनके हिसाब किताब की जाँच करना, उसके अनुरक्षण के लिए चंदा प्राप्त करना तथा इस संदर्भ में उठने वाले किसी भी बिन्दु पर सलाह देना होगा।

मैं यहाँ टिप्पणी करना चाहूँगा कि इस प्रस्ताव पर कुछ भी आगे नहीं हुआ क्योंकि अन्यत्र सभाएँ पूर्णतः ओजस्वी रूप में कार्यरत नहीं थी।

अब तथ्य की बात यह है कि मधुबनी सभा ने बिहार की प्रमुख सभाओं में स्थान प्राप्त कर लिया है। यह अत्यन्त खतरनाक रूप से प्रचार कर रही है।

२१. मैं इस गतिविधि को खतरनाक कहता हूँ क्योंकि भले ही मधुबनी उपमण्डल में किसी भी तरह से शान्ति भंग होने का कोई संकेत नहीं दिखाई देता, तो भी सभा के पण्डित यहाँ तथा अन्यत्र घूम घूमकर भाषण देने के दौरान अत्यधिक शरारत करते हैं। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि कृषकों में उनकी बातें दुराग्रह की भावना पैदा करती हैं। इस उपमण्डल में ऐसे बहुत कम मुसलमान हैं जो हिन्दुओं को दोष न देते हों और सावधानी न बरतते हों। लेकिन निस्संदेह रूप से मैं यह कह सकता हूँ कि यहाँ की जनता में इसी तरह से फूट डाली जाती रही होती तो यहाँ बहुत पहले अशान्ति व्याप्त हो गई होती।

२२. मैं नहीं मानता कि सभा द्वारा जारी प्रकाशन प्रत्यक्ष रूप से उनके नामों

से छपे हों। लेकिन उनकी पुस्तकें बड़ी संख्या में मधुबनी के पण्डितों द्वारा लिखी गई हैं और मधुबनी के बाबुओं को समर्पित हैं। ये अधिकांश रूप से गाय का उसके पुत्रों (हिन्दुओं) की निर्दयता के प्रति विलाप है। कुछ पुस्तकों में पवित्र धर्मग्रंथों से श्लोक उद्धृत किए गए है जिनमें गाय की महिमा गाई गई है। अन्य ग्रन्थों में महारानी विक्टोरिया से पशु हत्या पर रोक लगाने के लिए कहा गया है। इन पुस्तकों में से एक पुस्तक का मैं अनुवाद प्रस्तुत कर रहा हूँ। दूसरी रिपोर्ट में मैं गोरक्षिणी सभा के मित्रों द्वारा सम्पादित साहित्य का लेखाजोखा प्रस्तुत कर रहा हूँ। यद्यपि इनमें ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे लोग प्रत्यक्ष रूप से हिंसा करने की दिशा में उद्यत हों, लेकिन यह बात स्पष्ट है कि ये प्रकाशन अशिक्षित लोगों के दिमाग में उत्तेजना पैदा करते हैं तथा उन्हें पशु हत्या रोकने के लिए किसी भी प्रकार के संभव कदम उठाने पर विवश करते हैं। उदाहरण के लिए कुछ परिच्छेदों में, गाय क्षत्रियों का रूप धारण करके उन्हें कायर कहकर संबोधित करती है क्योंकि कसाई उनकी आँखों के सामने गायों को दो रूपये में खरीदकर ले जाते हैं।

२३. अन्त में, मैं उल्लेख करना चाहूँगा कि एक ही ऐसा मुद्दा है जिसके सम्बन्ध में गोरक्षिणी सभाएँ और विशेष रूप से मधुबनी सभाएँ अच्छा कार्य कर रही हैं। वे बूढ़ी एवं जर्जर गायों को उनसे खरीदती हैं तथा उन्हें चारा खिलाती है। गायों की सामान्यतः अच्छी तरह से देखभाल की जाती है। उनके पास खूब पोषक खुराक होती है। अनाज भी प्रचुर मात्रा में होता है। इसका श्रेय सभा को है। उनके पास लाई गई किसी भी गाय को आश्रय देने को वे तैयार रहती हैं। केवल वे इतना ही पता लगाने के लिए पूछताछ करती हैं कि उनके पास लाई गई मवेशी चोरी करके तो नहीं लाई गई है।

बी. के. मलिक
उपमण्डल अधिकारी
मधुबनी
९ अक्टूबर, १८९३

संलग्नक ७

सारन जिले के छपरा पुलिस थाना के रामपुर के बालावो सहाय के पुत्र विंध्याचल प्रसाद उर्फ हंस स्वरूप दास उर्फ परमहंसदास के कार्यों एवं पूर्ववृत्त का संक्षिप्त लेखाजोखा

यह व्यक्ति इस समय मुजफ्फरपुर कस्बे का अधिवासी है।

उसका जन्म मुजफ्फरपुर कस्बे में १८५५ में हुआ जहाँ उसके पिता जिलाधीश के कार्यालय में अमीन के पद पर कार्यरत थे। वे मुजफ्फरपुर जिले के महुआ पुलिस थाना के नारायणपुर गाँव के अधिवासी थे।

जब विंध्याचल बहुत छोटा था तभी उसके पिता का स्वर्गवास हुआ। उसके दादा विदेशीलाल ने उसका लालन पालन किया।

चार रूपये प्रतिमाह के वजीफे की वर्नाक्यूलर शिष्यवृत्ति प्राप्त करके विंध्याचल को मुजफ्फरपुर जिला विद्यालय में प्रवेश प्राप्त हुआ। १८७५ में उसने इंट्रेंस की परीक्षा दी परन्तु वह उत्तीर्ण नहीं हुआ। यहीं से उसका शैक्षणिक भविष्य अवरुद्ध हो गया और उसने पढ़ाई छोड़ दी।

१८७६ से १८८६ के बीच उसने विभिन्न पदों पर कार्य किया। वह मुजफ्फरपुर में सोसाइटी विद्यालय में शिक्षक के रूप में तथा मुजफ्फरपुर जिले के सदर पुलिस थाना की सीमा में ब्यूरियारपुर विद्यालय में शिक्षक के पद पर और दरभंगा राज के कार्यालय में लिपिक के पद पर कार्यरत था लेकिन इस पूरे समय में उसने अपने खाली समय में योग का ज्ञान प्राप्त किया। अंततः १८८७ में वह नियमित रूप से योगी बन गया। उसने नौकरी छोड़ दी।

वह अपने गुरु तुद्रदास के पास नेपाल गया जिन्होंने उसे हंस स्वरूप नाम दिया।

मार्च १८८७ में उसने मुजफ्फरपुर में चंद्वारा मुहल्ले में एक सभा स्थापित की जिसका नाम तिरकुटी महल रखा जो मानव की तीन योगिक नाडियों - इंगला, पिंगला और सुषुम्ना की प्रणाली की आध्यात्मिक शिक्षा प्रदान करती थी। तिरकुटी महल की शिक्षा के विवरण पत्र की एक मुद्रित प्रति इसके साथ संलग्न की गई है।

सभा के तथाकथित उद्देश्य निम्नानुसार हैं :

१. मानव सृष्टि के रहस्यों का उद्घाटन करना ।

२. लोगों के मन में इस तथ्य के प्रति विश्वास पैदा कराना कि हम क्या हैं, हम

क्यों हैं तथा हमें क्या बनना है तथा मृतोत्थान के दिन हमारे पास क्या खजाना होना चाहिए?

ईसाई मिशनरियों का अनुक़रण करते हुए उपदेशकों की नियुक्तियाँ सभा की ओर से सभा के सिद्धांतो का प्रचार-प्रसार करने के उद्देश्य से की जाती हैं। विंध्याचल उर्फ हंस स्वरूप उपर्युक्त विषयों पर भाषण देने के लिए पूरे देश में जाता है जिनमें वह पशुओं के संरक्षण के पक्ष में प्रबल तर्क देकर अपनी बात बलपूर्वक प्रस्तुत करता है।

विंध्याचल स्वयं इस सभा का अध्यक्ष है। भगवती चरण, बी.ए., एल.एल.बी., एक वकील इसके उपाध्यक्ष हैं। मुजफ्फरपुर जिले के कटरा पुलिस थाना के जिरांग के जमींदार बाबू देवी प्रसाद सभा के सचिव हैं।

इस सभा का अपना एक स्थायी कार्यालय है जिसमें दो लिपिक कार्यरत हैं। एक लिपिक विंध्याचल का भाई है, एक चंदा संग्राहक है, मिशनरी लोग हैं, एक चपरासी है। इस पर कुल ९९ रू. प्रतिमास व्यय होता हैं। यह भी बताया जाता है कि सभा का जमाशेष २००० रू. है जो मुजफ्फरपुर के साहूकार लक्ष्मीराम मारवाड़ी के पास जमा है।

स्वयं विंध्याचल द्वारा दिए गए भाषण इतने रोचक एवं आत्मा तक को झकझोर देने वाले होते हैं कि उसके शिष्यों की संख्या काफी अधिक है। ये सभी उसे अपना भरपूर सहयोग प्रदान करते हैं। कई महाराजा और राजा इस सभा को दान देते हैं जिन में से कुछ हैं :

देव के महाराजा	दुमराउ के महाराजा
अयोध्या के महाराजा	शिवहर के राजा
गिधौर के महाराजा	खैरा के राजा
बर्दवान के महाराजा	रजौली के बाबू

इसके अतिरिक्त कई अज्ञात जमींदार एवं अन्य भी इसमें शामिल हैं।

विंध्याचल के निम्नलिखित ख्यात शिष्य हैं :

१. गया में औरंगाबाद के भगवती सबाई।
२. गया में औरंगाबाद के वकील ठाकुर प्रसाद।
३. पलामू में डाल्टनगंज के ईश्वर नारायण।
४. पूर्णिया में कटिहार के महादेव प्रसाद।
५. फैजाबाद में अफीम विभाग के मुख्य लिपिक देबी प्रसाद।

६. फैजाबाद के अफीम विभाग के श्री गोपाल शंकर तथा अन्य कई लोग जो कि उनके शिष्यों की संख्या में शामिल नहीं हैं परन्तु उनके अनुयायी हैं। उनके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से नियुक्त उपदेशकों के नाम इस प्रकार हैं :

१. हजारी बाग जिले में गिरिडीह में तैनात नीलकंठ तिवारी
२. मुजफ्फरपुर जिले के सीतामढ़ी उपमण्डल में शिवहर में तैनात कुसाबर तिवारी
३. रघुनंदन मिश्र जो सामान्यतः विंध्याचल के साथ सभी जगह जाते हैं।

विंध्याचल ने चार पुस्तकें लिखी हैं। मनुष्य का एक चित्र बनाया है। मैं उनकी प्रतियां इसके साथ भेज रहा हूं।

इनका पशुहत्या से कोई सम्बन्ध नहीं है।

१८९०

इस व्यक्ति का नाम पहली बार १८९० के संक्षेप सं.१० के अनुच्छेद ३०८ में खुफिया विभाग के गोपनीय सार संक्षेप में दिखाई देता है। उसमें उसका उल्लेख पशुहत्या विरोधी आन्दोलनकारी के रूप में किया गया है। उसने १३ मार्च १८९० में मुजफ्फरपुर से गया के लिए प्रस्थान किया। वह न्यायमूर्ति की अदालत के शिरस्तेदार तुलसी प्रसाद के साथ रुकना चाहता था।

१९ मार्च को वह मुजफ्फरपुर लौट आया। उसने कहा कि वह दुमराऊ में था। गया के जिला पुलिस अधीक्षक ने भी इस बात से इन्कार किया कि वह गया आया था।

२१ मार्च को उसने लखनऊ के लिए प्रस्थान किया। वहाँ से वह ५ अप्रैल को लौट आया। ७ अप्रैल को वह दरभंगा गया और ९ अप्रैल को लौट आया। १३ अप्रैल को वह गया गया। गया के जिला पुलिस अधीक्षक ने अपनी डायरी में २० अप्रैल, १८९० को उसके गया में आगमन की बात रिपोर्ट की है। लिखा है कि वह कायस्थों के मूल स्रोत पर भाषण दे रहा है।

दरभंगा के जिला पुलिस अधीक्षक ने अपनी डायरी में २६ अप्रैल को दर्ज किया है कि पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के लिए एकत्रित की गई धनराशि का विंध्याचल प्रसाद ने गबन किया है·- इस तरह की अफवाएँ फैलीं लेकिन कोई भी शिकायत दर्ज नहीं की गई। यह दो वर्ष पूर्व (१८८८) घटित हुआ था जब वह दरभंगा जिले में सीमा चौकी ताले के कामतोल में सभा के दायित्व का निर्वाह कर रहा था।

४ मई को वह गया से लौटा और वह ६ मई को दरभंगा गया जहाँ से वह २२ मई को वापस आया।

१ से ६ जून तक वह सारन में था। ७ जून को वह मुजफ्फरपुर लौटा और १२ जून को वह लखनऊ के लिए रवाना हुआ।

तदुपरांत वह सीवान भाषण देते हुए देखा गया। जिसका उल्लेख सीवान के जिला पुलिस अधीक्षक की १२ जुलाई, १८९० की डायरी में मिलता है। वहाँ से ४ अगस्त को मुजफ्फरपुर लौटा तथा १२ अगस्त को शाहाबाद में बसर के लिए गया।

उसकी वापसी की तिथि का पता नहीं चलता लेकिन वह १५ नवम्बर को मुजफ्फरपुर से मोतिहारी के लिए रवाना हुआ।

आगे पुनः उसके लौटने की तिथि का पता नहीं चलता लेकिन १५ दिसम्बर, १८९० में वह मुजफ्फरपुर से बिहार के लिए पशुहत्या के विरोध में भाषण देने के लिए रवाना हुआ जहाँ से वह २६ दिसम्बर को वापस आया।

१८९१

९ जनवरी को वह इसी उद्देश्य से मुजफ्फरपुर से बक्सर के लिए रवाना हुआ।

२६ जून तक कोई उल्लेख नहीं मिलता। वह मुजफ्फरपुर से पूर्णिया को अपने साथ वकील नानक प्रसाद को लेकर पशु हत्या के विरोध में भाषण देने के लिए रवाना हुआ।

२ अगस्त की अपनी डायरी में बांकुरा के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट लिखी है कि एक व्यक्ति अपना नाम परमहंस कहता है (शायद विंध्याचल प्रसाद उर्फ परमहंस दास), वह सासऊ में बांकुरा से १८ मील उत्तर में दिखाई दिया है। वह लोगों की सहानुभूति प्राप्त कर रहा है। लोग उसके पास प्रतिदिन बड़ी भारी संख्या में आते हैं। लोगों में यह बात घर कर गई है कि वह भविष्य बता सकता है और असाध्य बीमारियों का इलाज करता है।

वह ३ अगस्त को मुजफ्फरपुर लौटा। ४ अक्टूबर को उसके गौंडा से लौटने की बात सुनाई दी लेकिन वह वहाँ गया कब था, इसका कुछ भी पता नहीं चला। फिर भी, उसके ३ अगस्त को मुजफ्फरपुर लौटने पर रिपोर्ट भेजी गई। वह पूर्णिया से गौंडा को पशुहत्या के विरोध में भाषण देने के लिए गया था।

इससे ऐसा लगता है कि ३ अगस्त से ४ अक्टूबर के बीच वह पूर्णिया के दौरे पर पुनः गया तथा वहाँ से गौंडा के लिए रूख किया।

जिला पुलिस अधीक्षक मुजफ्फरपुर ने अपनी डायरी में दिनांक २० अक्टूबर को लिखा है कि यह व्यक्ति उत्तर पश्चिमी सूबे में गोरखपुर जिले के मजौली के लिए गया और वहाँ पशु हत्या के विरोध में भाषण दिए लेकिन वहाँ से उसके लौटने की निश्चित तिथि के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं होता है। पुनः १० नवम्बर को मुजफ्फरपुर से उसने प्रस्थान किया। इस बार वह बहुत दूर नहीं गया क्योंकि १४ नवम्बर को वह सोनपुर में पवित्र स्नान के लिए मुजफ्फरपुर से गया जहाँ से वह २० नवम्बर को वापस आया।

अगली बार मुजफ्फरपुर से २६ नवम्बर को सारन जिले में सीतलपुर के लिए उसने प्रस्थान किया जहाँ उसने पशु हत्या के विरोध में उपदेश दिए। वहाँ से वह १६ दिसम्बर को वापस मुजफ्फरपुर आया।

सारन के जिला पुलिस अधीक्षक ने अपनी २१ दिसम्बर की डायरी में लिखा है कि ऐसा लगता है कि सीतलपुर में विंध्याचल प्रसाद का कहीं भी पता नहीं चल सका लेकिन लगभग इसी समय दो अज्ञात व्यक्ति जो छपरा के रहने वाले कहे जाते हैं, सीतलपुर आए थे। वहाँ भवानी राय को प्रत्येक घर से दो आना गोरक्षिणी सभा के लिए एकत्रित करने के लिए कहा गया। तथापि, यह भी बताया गया कि ऐसा किया नहीं जा सका था।

१८९२

२५ जनवरी को वह मुजफ्फरपुर से पटना के लिए पूर्व उपन्यायाधीश, मुजफ्फरपुर बाबू मुतादीन से मिलने के लिए गया।

अप्रैल में उस समय तक विंध्याचल का पुनः कोई उल्लेख नहीं मिलता जब मुजफ्फरपुर के जिला पुलिस अधीक्षक ने २५ अप्रैल को अपनी डायरी में लिखा कि वह मुजफ्फरपुर से गोरखपुर जिले के पुलिस थाना की हद में एक गाँव देवरिया गया, जहाँ वह पशु हत्या के विरोध में उपदेश दे रहा था। उसके लौटने की बात २३ मई की डायरी में की गई है, फिर भी, कोई खास तिथि का उल्लेख नहीं किया गया है।

२६ मई को वह मुजफ्फरपुर से मोतिहारी के लिए रवाना हुआ। ५ जून की तारीख के तहत चंपारन के जिला पुलिस अधीक्षक ने रिपोर्ट लिखी है :

हंस स्वरूप नामक एक साधु मुजफ्फरपुर से बेतिया आया। उसने धर्म पर भाषण दिए। इस व्यक्ति का मुख्यालय मुजफ्फरपुर में है। बताया जाता है कि इस व्यक्ति के शिष्य बड़ी संख्या में हैं जो धर्म विषयक प्रवचन देने के लिए दौरे करते हैं। सभा की ओर से चंदा प्राप्त किया जाता है।

६ जून को वह मुजफ्फरपुर में लौट आया। २ जुलाई की अपनी डायरी में शाहाबाद के जिला पुलिस अधीक्षक ने अपनी रिपोर्ट में मुजफ्फरपुर के हंस स्वरूप की धार्मिक विषयों पर भाषण देते हुए आरा में उपस्थिति की बात की है।

वह आरा से ४ जुलाई को रवाना हुआ।

शाहाबाद के जिला पुलिस अधीक्षक अपनी १६ जुलाई की डायरी में पहचान दर्ज करते हुए लिखते हैं कि हंस स्वरूप ही विंध्याचल प्रसाद है। कहते हैं कि सारन में छपरा के वकील हीरा लाल एवं बनारसी लाल भी उससे जुडे हैं।

हमें विंध्याचल प्रसाद के सम्बन्ध में उत्तर पश्चिमी सूबों में इटावा के जिला पुलिस अधीक्षक की डायरी में दिनांक २७ अगस्त को निम्नानुसार उल्लेख मिलता है : स्वामी हंसरूप का यहाँ १६ अगस्त को आगमन हुआ। उसने १७ अगस्त को ह्यूम हाईस्कूल के पास हिन्दू धर्म पर व्याख्यान दिया। उसका भाषण सुनने के लिए बड़ी संख्या में लोग आए थे। स्वामी सुशिक्षित व्यक्ति दिखाई देता है। अंग्रेजी, हिन्दी एवं संस्कृत भलीभाँति जानता है। वह जाति से कायस्थ है। बंगाल में मुजफ्फरपुर का अधिवासी है। वह अफीम विभाग के मुंशी देवी प्रसाद का मेहमान है। वह १० सितम्बर को उत्तर पश्चिमी क्षेत्र में मुत्तरा से मुजफ्फरपुर के लिए रवाना हुआ।

२३ अक्टूबर को वह मुजफ्फरपुर से गया के लिए पुनः रवाना हुआ। गया के जिला पुलिस अधीक्षक ने दिनांक ३१ अक्टूबर की अपनी डायरी में लिखा है कि, स्वामी हंस सरूप उर्फ विंध्याचल प्रसाद धार्मिक विषयों पर भाषण देने के उद्देश्य से २४ अक्टूबर को नवादा गया। वह प्रायः अपने भाषण पशु हत्या के खिलाफ उपदेश देकर समाप्त करता है। उसे सुनने के लिए कई मुसलमान भी आते हैं।

स्वामी ने ऐंट्रेंस परीक्षा उत्तीर्ण की है। (यह सूचना गलत है : वह अनुत्तीर्ण हुआ था) वह सुशिक्षित व्यक्ति दिखाई देता है। वह फारसी, संस्कृत, उर्दू एवं हिन्दी अच्छी तरह से बोलता है। २९ से ३१ अक्टूबर तक चलने वाले वार्षिक गोरक्षिणी समारोह में उसके द्वारा भाषण दिए जाने की आशा की जा रही है।

यह व्यक्ति तिरकुटिया महल, मुजफ्फरपुर का अध्यक्ष भी है।

गया के जिला पुलिस अधीक्षक ने ८ नवम्बर को लिखा है कि विंध्याचल प्रसाद हाल ही में पशु हत्या विरोधी आन्दोलन, शिक्षा एवं हिन्दू पूजापाठ पर भाषण दे रहा है। उसे एक जोड़ी धोती भेंट की गई तथा खर्चे के लिए ४० रू. भी दिए गए। वह २ तारीख को मुजफ्फरपुर को रवाना हो जाएगा।

१० नवम्बर को वह मुजफ्फरपुर पहुँच गया। १७ नवम्बर को शाहाबाद में जगदीशपुर के लिए रवाना हो गया।

१८९३

१२ जनवरी को वह शाहाबाद से वापस आया। २५ जनवरी को वह आरा के लिए पुनः गया जहाँ से ३१ जनवरी को वह वापस आया।

१० अप्रैल को वह मुंगेर के जामुई उपमण्डल में खैरिया को रवाना हुआ। वहाँ उसने मुंगेर एवं भागलपुर का दौरा किया और २८ मई को लौट आया।

११ जून को वह कोलकता गया। वहाँ से २१ जून को वापस आ गया। ५ जुलाई को जुगरनाथ के लिए निकला, ९ अगस्त को वापस आया। ३१ अगस्त को वह दुमराऊ गया तथा अभी तक वापस नहीं आया। बताया जाता है कि वह इस समय इलाहाबाद में है।

एच.एम.रामसे
जिला पुलिस अधीक्षक, मुजफ्फरपुर
२२ सितम्बर १८९३

संलग्नक ८ (अ)

दरभंगा से गोरक्षिणी साहित्य के नमूने

१.

दरभंगा धर्मसभा

महाराजा श्री लक्ष्मीश्वर सिंह बहादुर, के.सी.आई.ई. अध्यक्ष के आदेशानुसार

सेवा में,

प्रिय महोदय,

गायों की रक्षा के लिए तैयार रहना और उनके बचाव के लिए कदम उठाना हम भारतीयों के लिए महान पुण्यकार्य ही नहीं, अपितु अपरिहार्य आवश्यकता भी है। प्रिय, सम्माननीय महोदय, हमारा देश इस समय भीषण स्थिति में है क्योंकि पशुओं का पक्ष लेने में हम अत्यन्त पिछड़े हुए हैं। दरभंगा सभा की स्थापना हमारी गोमाता के दुख दूर करने के उद्देश्य से की गई है। इसे मुफस्सल गाँवों की सभाओं का पूर्ण समर्थन मिलना चाहिए। अतः मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप सभी सभा के लोगों को सूचना जारी कर के इस बात से अवगत कराइए ताकि आपके गाँव में शाखा सभा की स्थापना

हो सके। दरभंगा धर्मसभा के व्याख्याता .... इस सभा के उद्देश्यों के सम्बन्ध में आपको भलीभाँति जानकारी देंगे। आशा है कि आप अपने पड़ोसी गाँवों के लोगों को इस अत्यन्त उपयोगी महान आन्दोलन के सिद्धांतों के साथ जोड़कर गोसंरक्षण के कार्य में सहभागिता करेंगे। सभा के नियम एवं उपनियम व्याख्याताओं के पास उपलब्ध हैं।

उपाध्यक्ष

मुख्य सचिव

(मूल पत्र में व्याख्याता का नाम छोड़ दिया गया है। संपा.)

२.

दरभंगा धर्मसभा

महाराजा सर लक्ष्मीश्वर सिंह बहादुर,

के.सी.आई.ई. अध्यक्ष के आदेश से

मैं आपको विनम्र भाव से सूचित कर रहा हूँ कि गोसंरक्षण के कार्य में अत्यन्त हितैषी इस सभा की एक जनसभा दिनांक .... को .... स्थान पर आयोजित की गई है। आपसे विनम्र अनुरोध है कि आप इस सभा में उपर्युक्त स्थान पर उपस्थित रहें तथा इस पुण्यकार्य में योगदान दें। यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि लोग गोसंरक्षण के कार्य से मुँह मोड़ते नजर आने लगे हैं। नहीं, ऐसे लोग कहीं नहीं हो सकते। फिर भी, यदि लोग ऐसे पुण्यकार्य के लिए एकजुट होकर कार्य नहीं करते तथा अपने आपको सभी से अलग थलग रखते हैं, तो उनकी निंदा की जानी चाहिए। हमारे हिन्दुओं में तो ऐसा कभी भी नहीं होना चाहिए। जो कोई भी, इस नोटिस को प्राप्त करके, इसकी पाँच प्रतियाँ तैयार करके उन्हें लोगों में वितरित करेगा या पढ़कर दूसरे लोगों को सुनाएगा तथा उन्हें इस सभा में अपने साथ लाएगा वह पशुओं का बड़ा शुभचिंतक होगा। कोई व्यक्ति ऐसा नहीं करता है तो इसका अर्थ यह होगा कि वह गोसंरक्षण की तरफदारी नहीं करता।

सचिव

३.

दरभंगा धर्मसभा

महोदय, दरभंगा धर्मसभा का गोपाष्टमी मेला १८९.... को आयोजित होगा। निकटवर्ती एवं दूरवर्ती समस्त सभाओं के प्रतिनिधियों तथा विद्वान व्याख्याताओं को इस मेले की जनसभा में भाग लेने तथा धार्मिक चर्चा करने के लिए सादर आमंत्रित किया जा रहा है। उपर्युक्त उद्देश्य की प्राप्ति के लिए इस आमंत्रण पत्र को इस निवेदन

के साथ प्रेषित किया जा रहा है कि आप इस अवसर पर अपने बंधुबांधवों एवं मित्रों के साथ अवश्य पधारें।

भवदीय
उपाध्यक्ष, दरभंगा धर्मसभा

४.

दरभंगा धर्म सभा के .... माह .... वर्ष के आकस्मिक व्यय हेतु आकस्मिक आनुषंगिक बिल

तारीख	विवरण	राशि	कुल	अभ्युक्तियाँ
		रू. आ. पा.	रू. आ. पा.	
			कुल	

उपर्युक्तानुसार नकद भुगतान प्राप्त हुआ।

सचिव हस्ताक्षर
लिपिक ....

दरभंगा धर्म सभा का .... माह १८९.... वर्ष हेतु स्थापना बिल

सं.	कर्मचारी का नाम	पदनाम	प्राप्त वेतन	काटा गया वेतन	कुल राशि	वास्तविक भुगतान	अभ्यु-क्तियाँ
			रू.आ.पा.	रू.आ.पा.	रू.आ.पा.	रू.आ.पा.	

कुल.......
उपर्युक्त राशि का नकद भुगतान प्राप्त किया।
मुख्य सचिव......
हस्ताक्षर...... लिपिक......
दिनांक माह १८९.....

५.

सीतामढ़ी गोधर्म प्रचारिणी सभा

जगत, देवताओं, गायों एवं ब्राह्मणों के उपकारक कृष्ण गोविंद की वंदना
अरे ओ भारत के लोगों ! चाहे आप हिन्दू हैं, मुसलमान हैं या ईसाई, जरा

सोचो कि आपने इस देश में अपना जीवन किसकी कृपा से पाया है। आप सभी एक स्वर में घोषणा करेंगे कि यह सब गाय के प्रताप से, उसके द्वारा प्रतिदिन भोजन प्राप्त कराने से ही संभव हुआ है। अतः हम भारतीयों को धर्म एवं कर्तव्य दोनों का साथ साथ निर्वाह करके गाय के संरक्षण के लिए कार्य करने की आवश्यकता है। हमारे देश की दुर्भाग्यपूर्ण दनयीय स्थिति गोसंरक्षण के कार्य पर एकत्र न होने के कारण ही है। मधुबनी गोरक्षिणी सभा को उदाहरण के रूप में देखा जाए तो इसे गाय के दुःख की अनुभूति हुई, गाय की व्यथा से इसका हृदय द्रवित हो उठा। गोमाता किस जाति या धर्म के लिए उपयोगी नहीं है ? यहाँ भी गोरक्षिणी सभा एवं गोशाला स्थापित होनी चाहिए। उन्होंने सहायतार्थ अपील की और उनकी सभा शाखाएँ दूरदराज के गाँवों में भी स्थापित हुईं। आशा है कि सामान्य जनता का इस सभा को समर्थन प्राप्त होगा। नियमित रूप से इसके लिए सहयोग प्राप्त करने के लिए मारवाडियों ने तय किया कि व्यावसायिक समुदाय का कोई भी व्यक्ति सामान्यतः वस्तु, कपडा, अनाज, किराने के सामान आदि लाकर या भेज कर गोकर के रूप में सभा को योगदान देगा। इसके लिए निम्नानुसार नीतिनियम बनाए गए। यदि कोई भी व्यापारी इस पावन उद्देश्य के लिए भुगतान करने में किसी भी तरह की चूक करता है तो गोधर्म प्रचारिणी सभा को उससे उचित रकम वसूलने का अधिकार होगा :

(१) यह सभा गोसंरक्षण के माध्यम से देश का हित करने के लिए हरदम तैयार रहेगी लेकिन यह सभा ऐसा कोई भी कार्य नहीं करेगी जो पुरातन हिन्दू धर्म या सरकार के कानूनों के खिलाफ हो।

(२) तीन या चार कोस की दूरी पर अधीनस्थ सभाओं की स्थापना की जाएगी। इन्हें ग्राम सभा या सहायक सभा कहा जाएगा।

(३) ग्राम सभा अपनी रिपोर्ट सीतामढ़ी की मुख्य सभा को भेजेगी। मुख्य सभा उसकी कार्यवाही का पर्यवेक्षण करेगी तथा उन्हें आवश्यक निर्देश देगी।

(४) यह सभा एवं ग्राम सभाएँ अपने विवाचकों या पंचों का पडोसी गावों से चयन करेगी जिनकी संख्या तीन से कम नहीं होगी।

(५) अपनी सभा के आदेशों के तहत ये विवाचक इस बात का ध्यान रखेंगे कि कोई भी व्यक्ति शास्त्रों के प्रमाण के विरुद्ध किसी को भी गायों की बिक्री न कर पाए। ऐसी बिक्री के सम्बन्ध में वे सभाओं को अपनी रिपोर्ट भेजेंगे तथा शास्त्रों में वर्णित नियमों के अनुरूप कार्रवाई करेंगे। वे सामान्यतः लोगों को यह चेतावनी भी देंगे कि बूढ़ी एवं थकी माँदी गायों और बैलों की यदि वे देखभाल नहीं कर सकते तो वे उन्हें

सीतामढ़ी की गोशाला में भिजवा दें।

(६) प्रत्येक हिन्दू धन् आदि से सभा की सहायता करेगा। यह सभा इस धन से गोशाला में गायों के चारे आदि का प्रबंध करेगी।

(७) कोई भी व्यक्ति बाहर से वस्तुएँ मँगाने पर दो आना की दर से कर अदा करेगा। उसे अन्य व्यापारियों को बेचने पर उनसे दो आना प्रतिशत की दर से रकम वसूल करेगा तथा गोनिधि में जमा करेगा। वह किसी भी व्यक्ति को वस्तुओं की बिक्री करे, उसे सभी से दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर वसूल करना होगा जिसके लिए निम्नलिखित नियम लागू होंगे।

१० रू. से कम की बिक्री पर कोई कर नहीं, १० से १२-८ तक की बिक्री पर एक पैसा, रू. १२-८ से २५ रू तक की बिक्री पर आधा आना, रू. २५ से ५० रू. तक पर एक आना, तथा ५० रू. से ७५ रू. तक पर दो आना कर वसूल करना होगा। इसी तरह से खरीद और बिक्री दोनों पर कर लगाकर जमा धन को गोनिधि में जमा करना होगा।

(८) यदि कोई व्यापारिक एजेंट या व्यापारी अनाज या तिलहन सीतामढ़ी अनाज मण्डी से खरीदता है तो ऐसे व्यक्ति से एक आना प्रतिशत के हिसाब से वसूल करके गोनिधि में जमा किया जाएगा। यह नियम कोट, भावदेपुर, पुरानी बाजार आदि पर भी लागू होगा।

(९) यदि कोई व्यक्ति नमक आयात करता है तथा उसे किसी भी व्यापारी को बेचता है तो उसके एक पाई प्रति बोरी के हिसाब से वसूल करके गोनिधि में जमा किया जाएगा।

(१०) यदि कोई व्यक्ति मिट्टी का तेल आयात करता है तथा इसे किसी भी दुकानदार को बेचता है तो उसे प्रत्येक बॉक्स के हिसाब से एक पाई कर लगाकर गोनिधि में जमा करना होगा। वह यदि इसी को निर्यात करता है तो खरीददार से प्रति बॉक्स आधा आना के हिसाब से वसूल करके गोनिधि में जमा करेगा।

(११) यदि कोई व्यक्ति किराना का सामान मँगाता है तथा किसी भी व्यक्ति को बेचता है तो वह उसके दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोनिधि के लिए लेकर जमा करेगा।

(१२ यदि कोई व्यक्ति रुई मँगाता है तथा उसे किसी व्यापारी को बेचता है तो वह उससे दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर गाय निधि के लिए लेगा।

(१३) यदि कोई व्यक्ति काँच के बर्तन मँगाता है तथा उन्हें किसी व्यापारी को

(२२) यदि कोई व्यक्ति कटौती करने में इन नियमों को भंग करता है या व्यापारियों को ऐसे भुगतानों पर छूट देता है तो उसे जुर्माने के रूप में ११ रू. गोनिधि में भरने होंगे। यदि वह इस बात को सही बताते हुए यह कहता है कि उसने नियमों के अनुसार ही कार्य किया है तो उस व्यापारी की बहियों एवं कागजातों की जाँच की जाएगी। और यदि जाँच के बाद यह पाया गया कि उसने नियमानुसार ही कार्य किया है तो उससे रू. ११ के जुर्माने की माँग नहीं की जाएगी और यदि दोषी पाया गया तो उसे जुर्माने की यह रकम भरनी पडेगी।

(२३) सभी तरह का अनाज जो रेल से भेजा जाए या मँगाया जाए ६२ बोरियों के प्रति बैगन पर एक आना के हिसाब से गोकर भरना होगा।

(२४) कोई भी व्यापारी जो माल मँगाता है या भेजता है तो उसे ६२ बोरियों के प्रति बैगन पर डेढ़ आना के हिसाब से गोकर के रूप में भुगतान करना होगा। कोई भी व्यापारी तिलहन आदि मँगाता है या भेजता है तो उसे ६२ बोरियों के प्रति बैगन पर आधा आना के हिसाब से गोकर देना होगा।

(२५) कोई भी व्यक्ति घी मँगाता है या भेजता है तो उसे प्रति बॉक्स आधा आना गोकर के रूप में भरना होगा। यदि वह व्यापारी से घी खरीदता है, तो वह उससे दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर के रूप में लेगा।

(२६) यदि कोई व्यक्ति किसी व्यापारी से शोरा खरीदता है वह शोरा चाहे क्रिस्टल रूप में हो, कचिया हो या कथिया रूप में हो, वह उससे दो आना गोकर के रूप में लेगा।

(२७) कोई व्यक्ति यदि चीनी बेचता है तो वह व्यापारी से प्रति बोरी आधा आना गोकर लेगा और यदि वह चीनी मँगाता है तो वह स्वयं आधा आना प्रति बोरी के हिसाब से गोकर के रूप में देगा।

(२८) कोई व्यक्ति यदि शराब या गाँजा बेचता है तो वह ऐसी बिक्री पर दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर के रूप में जमा करेगा। ऐसी वस्तुएँ जिन व्यापारियों को बेची जाएँ उनसे भी दो आना प्रतिशत के रूप में गोकर लिया जाए।

(२९) सोने या चांदी की बिक्री करने वाला कोई भी व्यक्ति दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर जमा करेगा।

निम्नलिखित मारवाडियों एवं व्यापारियों ने इन नियमों को राजी खुशी से स्वीकार किया है तथा अपने हस्ताक्षर किए है।

बेचता है तो उससे दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर लिया जाएगा। ऐसी कटौती काँच की चूड़ियों और मुहरबंद लाख पर भी की जाएगी।

(१४) यदि कोई व्यक्ति पीतल या लोहे के बर्तन या लोहा मँगाता है तथा उसे किसी भी व्यापारी को बेचता है तो उसे उससे दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर के रूप में धन लेना होगा।

(१५) यदि कोई व्यक्ति खाली पटसन के बोरे किसी व्यापारी को बेचता है तो उसे उससे दो आना गोकर के रूप में लेना होगा।

(१६) विवाह या मृत्यु के समय जब ब्रह्मभोज कराया जाए तब तो नामा (मृत्यु के समय ब्राह्मण को दी जाने वाली दक्षिणा) एवं देली (शादी के समय ब्राह्मण को दी जाने वाली दक्षिणा) ब्राह्मणों को दी जाए तो पाँच नामा, पाँच दक्षिणा (ब्राह्मण को दिया जाने वाला शुल्क) तथा दो देली गायों के लिए निकाल कर अलग रख लिया जाए। तदुपरांत विधिविधान किए जाएँ।

(१७) यदि कोई व्यक्ति अपने शिशु के जन्म पर या बेटे के विवाह पर समारोह आयोजित करता है तो उसे दो रू. गोनिधि में दान करने होंगे। यदि कोई बारात सीतामढ़ी में आती है या सीतामढ़ी से बाहर कहीं भी जाती है तो उन्हें इसी भाँति गोनिधि के लिए प्रति बारात दो रूपये दान करने होंगे।

(१८) सभी कर्मचारियों एवं गुमास्ताओं (एजेंटों) जिन्हें वेतन मासिक या वार्षिक रूप में मिलता है, चाहे उन्हें रू. १०० मिलता हो या उससे कम, उन्हें एक पैसे प्रति रूपए के हिसाब से गोनिधि में देना होगा।

(१९) दलालों को उनकी आय से प्रति रूपया एक पैसा गोनिधि में देना होगा।

(२०) यदि व्यापारी समुदाय के किसी सदस्य को अपने हिसाब किताब का समाधान अन्य के साथ करने में कोई परेशानी खड़ी हो तथा उनका मामला उसी समुदाय के अन्य व्यक्तियों के पास विवाचन के लिए भेजा जाए तो ऐसे व्यक्ति उनके मामले पर निर्णय होने से पूर्व किस तरह से गोनिधि में धन दें, इसके लिए दोनों पक्ष जितना दे सकें अपनी हैसियत के अनुसार गोनिधि में सहयोग करें।

(२१) इसके अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति किसी भी समय गायों के उपयोग के लिए धन, भोजन, घास, भूमि, लकड़ी, बाँक या भूसा देना चाहे तो दे सकता है। ग्राम सभा या मुख्य सभा ऐसे दान या भेंट को धन्यवाद के साथ स्वीकार करेगी। कोई भी व्यक्ति यदि कोई पत्र या भेंट सभा को भेजना चाहे तो वह उसे सभा के सचिव के पते पर भेज सकते हैं।

(२२) यदि कोई व्यक्ति कटौती करने में इन नियमों को भंग करता है या व्यापारियों को ऐसे भुगतानों पर छूट देता है तो उसे जुर्माने के रूप में ११ रू. गोनिधि में भरने होंगे। यदि वह इस बात को सही बताते हुए यह कहता है कि उसने नियमों के अनुसार ही कार्य किया है तो उस व्यापारी की बहियों एवं कागजातों की जाँच की जाएगी। और यदि जाँच के बाद यह पाया गया कि उसने नियमानुसार ही कार्य किया है तो उससे रू. ११ के जुर्माने की माँग नहीं की जाएगी और यदि दोषी पाया गया तो उसे जुर्माने की यह रकम भरनी पडेगी।

(२३) सभी तरह का अनाज जो रेल से भेजा जाए या मँगाया जाए ६२ बोरियों के प्रति बैगन पर एक आना के हिसाब से गोकर भरना होगा।

(२४) कोई भी व्यापारी जो माल मँगाता है या भेजता है तो उसे ६२ बोरियों के प्रति बैगन पर डेढ़ आना के हिसाब से गोकर के रूप में भुगतान करना होगा। कोई भी व्यापारी तिलहन आदि मँगाता है या भेजता है तो उसे ६२ बोरियों के प्रति बैगन पर आधा आना के हिसाब से गोकर देना होगा।

(२५) कोई भी व्यक्ति घी मँगाता है या भेजता है तो उसे प्रति बॉक्स आधा आना गोकर के रूप में भरना होगा। यदि वह व्यापारी से घी खरीदता है, तो वह उससे दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर के रूप में लेगा।

(२६) यदि कोई व्यक्ति किसी व्यापारी से शोरा खरीदता है वह शोरा चाहे क्रिस्टल रूप में हो, कचिया हो या कथिया रूप में हो, वह उससे दो आना गोकर के रूप में लेगा।

(२७) कोई व्यक्ति यदि चीनी बेचता है तो वह व्यापारी से प्रति बोरी आधा आना गोकर लेगा और यदि वह चीनी मँगाता है तो वह स्वयं आधा आना प्रति बोरी के हिसाब से गोकर के रूप में देगा।

(२८) कोई व्यक्ति यदि शराब या गाँजा बेचता है तो वह ऐसी बिक्री पर दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर के रूप में जमा करेगा। ऐसी वस्तुएँ जिन व्यापारियों को बेची जाएँ उनसे भी दो आना प्रतिशत के रूप में गोकर लिया जाए।

(२९) सोने या चांदी की बिक्री करने वाला कोई भी व्यक्ति दो आना प्रतिशत के हिसाब से गोकर जमा करेगा।

निम्नलिखित मारवाडियों एवं व्यापारियों ने इन नियमों को राजी खुशी से स्वीकार किया है तथा अपने हस्ताक्षर किए है।

पहला	गंगाराम रामजस, द्वारा अर्जुनदास
दूसरा	रघुनाथ राय राम बिलास, द्वारा राम बिलास
तीसरा	जवाहिर लाल बीम राज, द्वारा घारसीराम
चौथा	मुंगेरीलाल रामेश्वरलाल, द्वारा जय नारायण
पाँचवाँ	कन्हैयालाल डूँगरमल, द्वारा राम प्रताप
छठा	शिव रामदास मनसुखराय, द्वारा गुलराज
सातवाँ	जमनादास बिहारीलाल, द्वारा बिहारी लाल
आठवाँ	भगवानदास मूँगीलाल, द्वारा मूँगीलाल
नौवाँ	श्री निवास गलराज, द्वारा केसरी चंद
दसवाँ	केदार बख्श भगवानदास, स्वयं
ग्यारहवाँ	भजन लाल लक्ष्मी नारायण, स्वयं
बारहवाँ	भवल साहू, स्वयं
तेरहवाँ	दुलार साहू शाम लाल, द्वारा ठाकुर दयाल
चौदहवाँ	शाम लाल चौधरी, स्वयं
पन्द्रहवाँ	राजा राम, स्वयं
सोलहवाँ	फूलचंद साहू बिहारीलाल, द्वारा महंत राम
सत्रहवाँ	राम लाल साहू बुधन साहू, द्वारा गुलाब चंद
अठारहवाँ	बंस लोचन साहू, द्वारा शिवदान चंद
उन्नीसवाँ	बालरूप साहू द्वारका लाल, द्वारा महावीर राम
बीसवाँ	मोतीचंद महादेव प्रसाद, द्वारा महावीर राम
इक्कीसवाँ	जोधन साहू, स्वयं
बाईसवाँ	केशी साहू जानकी साहू, द्वारा भुजलाल
तेईसवाँ	तिलकधारी साहू मन्नू साहू, स्वयं
चौबीसवाँ	कमल पत राम, स्वयं
पच्चीसवाँ	अमृतलाल दोमाराम, स्वयं
छब्बीसवाँ	राम ताहल साहू बानूराम, स्वयं
सत्ताईसवाँ	गोपीराम, स्वयं
अट्ठाईसवाँ	बाबू राम चौधरी, द्वारा शिव नारायण
उन्तीसवाँ	लाखम राम, स्वयं
तीसवाँ	ताप्सीराम, स्वयं

इकत्तीसवाँ शिव गोविंदराम महावीर राम, द्वारा नारायण राम
बत्तीसवाँ चतुर्गुण साहू, द्वारा अच्युतानंद
तेतीसवाँ खूब लाल चौधरी, स्वयं
चौंतीसवाँ जनप्रसाद, द्वारा मेवाराम
पैंतीसवाँ सुम्हार साहू, सूबा राम
छत्रीसवाँ अतिल राम कलवार
सैतीसवाँ भगवान राम काँधू
अड़तीसवाँ बालगोविंद साहू, बाबूलाल
उन्तालीसवाँ महावीर साहू

प्रबंधक, राम अनुग्रह त्रिवेदी, मुख्य व्याख्याता, गोरक्षिणी सभा, मधुबनी

सचिव - **राम बहादुर सिंह, मुख्तियार**

६.

सीतामढ़ी गोरक्षिणी सभा

सुनो, बंधुओं, चूँकि अब गोमाता की हत्या की जा रही है, अतः अब बिल्कुल भी विलंब मत करो, गोशाला के लिए भवन बनाओ, ताकि गोमाता को उसमें रखकर बचाया जा सके।

मैं मिथिला की गरीब गाय हूँ। चूँकि कसाई मुझे दिन रात काटकर मेरी हत्या करते हैं, इसलिए फूट फूटकर रो रही हूँ। अरे, ओ हिन्दुओं, मेरी रक्षा करो।

मैं आपको विनम्रभाव से बताना चाहती हूँ कि एक अत्यन्त परोपकारी गोहितैषी सभा द्वारा दिनांक .... को .... पर गोसंरक्षण हेतु पहुँच कर सभा की इस बैठक में अवश्य भाग लें और इस तरह इस पुण्य कार्य में अपनी भागीदारी दें। कितने दुःख की बात है कि इस जगत में ऐसे भी लोग हैं जो गोसंरक्षण के कार्य को आगे बढ़ाने से बचना चाहते हैं। नहीं, ऐसे लोग नहीं हो सकते। फिर भी, यदि कोई व्यक्ति ऐसे पुण्य कार्य के लिए आयोजित इस सभा में भागीदारी नहीं करता तो वह जानबूझकर अपने आपको ऐसे पावन पुनीत कार्य में सहयोग करने से बचना चाहता है। ऐसे भावशून्य लोग विश्वासघाती होते हैं जो कि निंदा के पात्र हैं। ये हमारे हिन्दू बन्धु नहीं हो सकते। जिस किसी को भी यह सूचना प्राप्त हो वह इसकी पाँच प्रतियाँ तैयार करके उन्हें वितरित करे या इस सूचना को लोगों के बीच जाकर पढ़कर सुनाए और उन्हें अपने साथ इस सभा में लेकर आए। इस तरह वह गाय की सेवा करके पुण्य का भागी

होगा। यदि कोई व्यक्ति ऐसा नहीं करता है तो इसका अर्थ यह लिया जाएगा कि उसे गोसंरक्षण का विचार ही पसंद नहीं है। पण्डित राम अनुग्रह त्रिवेदी, मधुबनी सभा के मुख्य व्याख्याता इस जनसभा में भाषण देंगे।

राम बहादुर सिंह, मुख्तियार
सचिव

७.

मधुबनी गोरक्षिणी सभा

सब काम त्यागो, और आओ। गोसंरक्षण कार्य में स्वयं को समर्पित करो।

बाबू दुर्गादत्त सिंह एवं बाबू हर्षधारी सिंह, अध्यक्षद्वय के आदेश से।

एतद्द्वारा घोषित किया जाता है कि इस सभा का चतुर्थ वार्षिक दिन समारोह १९ मार्च १८९३ रविवार से २० मार्च १८९३ सोमवार तक आयोजित किया जाएगा। अतः आपसे अनुरोध है कि आप इन दिनों में स्वयं तथा अपने मित्रों एवं रिश्तेदारों के साथ पधारकर इस समारोह की शोभा में अभिवृद्धि करें।

किए जानेवाले कार्य

१. १९ मार्च, रविवार की प्रातः वेला में हवन में आहुति दी जाएगी। गोशाला में ब्रह्मभोज दिया जाएगा। तत्पश्चात् गायों की एक भव्य शोभायात्रा निकाली जाएगी। अपराह्न १-०० बजे अध्यक्ष के आदेश से वार्षिक रिपोर्ट का पठन किया जाएगा। उसके बाद कुछ स्थानीय पण्डित लोग गोसंरक्षण विषय पर भाषण देंगे। अंत में, बनारस के पण्डित जगत नारायण शर्मा कुरान, पुराण, वेदों और अन्य धार्मिक कार्यों के माध्यम से गोसंरक्षण के सिद्धांतो को सिद्ध करेंगे।

२. २० मार्च, सोमवार को २-०० बजे देवताओं का पूर्ण आवाहन किया जाएगा। तत्पश्चात् महारानी साम्राज्ञी विक्टोरिया को प्रस्तुत गोसंरक्षण हेतु स्मरणपत्र का वाचन किया जाएगा। इस अवसर पर उपस्थित होनेवाले अन्य सभाओं के उपदेशकों के व्याख्यान प्रस्तुत किये जाएंगे।

लाल बिहारी लाल
सचिव

८.

श्री गोपाल, दैनिक कार्य के प्रबंधक, पण्डित

हस्ता

सचिव

राम अनुग्रह त्रिवेदी, मुख्य व्याख्याता

गोधर्म प्राचरिणी सभा, मधुबनी

हस्ता

दिन तारीख महीना से आरम्भ	स्थल जहाँ गए	चंदा स्थल एकत्रित किया रू. आना पैसे	कार्य	अभ्युक्ति

हस्ता
राम अनुग्रह त्रिवेदी
मुख्य व्याख्याता, गोधर्म प्रचारिणी सभा,
मधुबनी

इस समय ठहरने का स्थल........ परगना........ थाना......... जिला........

९.

गोप्रार्थना का अनुवाद (मधुबनी)

हे ईश्वर, गोसंरक्षक, गोपरिरक्षक, क्या आपने मुझे विसार दिया ? कसाई मेरी हत्या कर रहे हैं, त्राहिमाम्।

आप सदैव गोसंरक्षक रहे हैं। अब आपका वह न्याय कहाँ गया ? मेरा ऐसा आखिर क्या दोष है जिसके लिए कसाई मेरी हत्या कर रहे हैं ? भगवान विष्णु गोसंरक्षण हेतु कृष्ण के रूप में अवतार लेते हैं। वे असुरों की हत्या करके मुझे वचाते हैं। आज सभी ने अपने सिर पर शिखा (हिन्दुओं ने) तो धारण की हुई है लेकिन अपने कर्तव्यों को भुला दिया है और इधर उधर अंधकार में भटक रहे हैं। जजमान ब्राह्मणों को गाय दान में देते हैं इसके लिए वे उन्हें आशीर्वाद देते हैं। इस समय एक जजमान ने एक ब्राह्मण को बूढ़ी गायें दान स्वरूप दीं। ब्राह्मणों ने उन्हें अनुप़योगी समझकर चारा नहीं खिलाया। ब्राह्मण उन गायों को लेकर अपने घर गए। वहाँ ब्राह्मण पत्नियों ने सोचा

कि गायें बिल्कुल बूढ़ी हैं अतः लोगों को ऐसा करने के लिए खूब कोसा। ब्राह्मण अपनी पत्नियों द्वारा कोसे जाने पर उन गायों को लेकर बाजार में बेचने के लिए गए। कसाइयों ने उन गायों की दो या तीन रू. कीमत चुकाई और ब्राह्मणों, क्षत्रियों और शूद्रों के सामने अपने घरों को ले गए। इन लोगों ने अपने धर्म का पालन नहीं किया तथा गोमाता की देखभाल करना बिसार दिया। भारत का रोज विनाश हो रहा है, अब इसमें कोई वीर पुरुष शेष नहीं रहा है। क्षत्रिय अब केवल डींगें हाँकते हैं। अब वे अपना धर्म भूल गए हैं। इस समय, हिन्दू भी माँस-मदिरा पान करने लगे हैं तथा वेश्यागामी हो गए हैं। वहाँ सबके साथ ऐसे घुलमिल गए हैं कि गोहत्या होने दे रहे हैं। भारतीय मूर्खों जैसा व्यवहार कर रहे हैं। अपना धर्म भूल गए हैं और अपना धन वेश्याओं, पिछलगुओं और भाटों पर उड़ा रहे हैं। इस तरह वे हजारों रूपए फूँक रहे हैं लेकिन हम (गायों) पर एक धेला भी खर्चना नहीं चाहते। हे राम! हे लक्ष्मण ! गायों के संरक्षक भीम, दिलीप, और वसिष्ठ कहाँ गए। इसके लेखक (राम अनुग्रह) कहते हैं कि आप दोनों कहाँ चले गए? आपके वंशज गायों की हत्या होते हुए देखते हैं ? सभी शास्त्रों में गोसंरक्षण को सर्वोत्तम कार्य कहा गया है। जब भारतीयों के बेटों के विवाह होते हैं तब वे समांरोहों पर खूब पैसा उड़ाते हैं। नर्तकियों को भी खूब धन देते हैं। लेकिन गोसंरक्षण सभा को चंदा देना नहीं चाहते। उन्हें गोहित में कुछ भी दान देने में दर्द होता है परन्तु इस तरह गलत कार्य करते हैं। गाय उनके इस कृत्य पर कहती है शर्म करो !! शर्म करो !! शर्म करो !! कब तक भारत माता के सपूत गोमाता की हत्या होते हुए देखते रहेंगे। जब वैश्यों ने ही अपना धर्म त्याग दिया तो फिर शूद्रों का तो क्या कहने। जब सेठों को गोसंरक्षण सभा के लिए अंशदान करने के लिए कहा जाता है तो उनके चेहरे का रंग उड़ जाता है। जो लोक गोहित के कार्य में रुचि लेंगे वे अंततः सीधे वैकुंठ लोक जाएँगे।

हम (गायें) ईसाइयों और मुसलमानों को भी करबद्ध प्रार्थना करती हैं कि वे हम पर रहम करें तथा हमारे प्रति भेदभाव को त्याग दें।

जो लोग गोहत्या करते हैं, मदिरापान करते हैं, फलदार वृक्षों को काटते हैं तथा सूर्य उगने के पश्चात् भी सोते हैं, वे नर्क में जाएँगे। उन्हें क्षमादान नहीं मिलेगा। अतः सभी को यथासंभव गोसंरक्षण करना चाहिए। जो गाय की हत्या करते हैं वे सदैव नर्क में जाएँगे। गोसंरक्षण क़रनेवाले लोग मृत्यु के बाद स्वर्ग में जाएँगे। उन्हें देवताओं के समक्ष स्थान मिलेगा। लेखक का कहना है कि उसने गाय के गुणों का वर्णन अपनी बुद्धि के अनुसार अत्यन्त सीमित रूप में किया है। सभी यह बात अवश्य गाँठ में बाँध

लें कि गायों की समुचित देखभाल के बिना कोई भी पुण्यफल नहीं मिल सकता। जो लोग इसकी ओर ध्यान देंगे उन्हें इसका पुण्यफल प्राप्त होगा तथा वांछित स्वर्गलाभ मिलेगा। हे ईश्वर, आप दुष्टों के संहारक हैं तथा सभी के रक्षक हैं। गाएँ इस समय भीषण संकट की स्थिति में हैं अतः तुरन्त आओ और उसकी रक्षा करो। मेरा भी वैसा ही कल्याण करो जो आप दूसरों का करते हैं। दिन रात कष्ट में अभिवृद्धि हो रही है। कृपया लेखक की विनती सुनो और आओ, मेरी सहायता करो।

हे देव ! जब भी हम पर संकट आया है, आप आए हैं तथा हमें उबारा है, अतः कृपया हमें इस संकट से भी उबारो तथा हमें इस अंधकूप से बाहर निकालो। हे कृष्ण, आप की छबि गोरक्षक की है। चारों वेदों में आपके गुणगान हैं। ब्राह्मणों और गायों के कल्याण के लिए आपने कृष्ण के रूप में अवतार लिया। कृपया जल्दी आओ और हमें बचाओ। आप दयावान हैं। गाय कहती है, है ईश्वर! मुसलमानों को माँस प्राप्त करने के लिए मुझे मारते हुए आप देख रहे हैं। इस तरह वह अपनी मृत्यु समीप समझ कर जमीन पर गिर पडती है। अब यह सब असह्य है, अब आओ और उसकी देखभाल करो। हमारी सहायता करने के लिए अब कोई नही बचा है। अब आप उसी तरह से आकर हमारी रक्षा करो जिस तरह से पहले करते रहे हैं।

१०.

बाबू ब्रह्मदेव नारायण सिंह, नरहन के बहादुर, के गायों के समर्थक एवं उसके गुणों के चाहक, के प्रति धन्यवाद पत्र

दलसिंह सराय की गोधर्म प्रचारिणी सभा

बड़ी ही बधाई का विषय है कि कथित बाबू की सम्पदा के प्रबंधक इस स्थान पर १७ अप्रैल, १८९३ को पधारे थे तथा उस समय स्थानीय सभा के ऊर्जस्वी प्रबंधक बाबू बलाकी लाल ने उनका साक्षात्कार किया तथा उन्हें गोरक्षिणी सभा का प्रपत्र एवं नियमों की एक प्रति दी और दान देने एवं गोनिधि हेतु चंदा देने का अनुरोध किया। सभा के कामकाज से उन्होंने संतोष व्यक्त किया तथा ५० रू. राजा की ओर से तथा १० रू. अपनी जेब से उन्होंने दिए। ५ रू. मुंशी जगदम्बी सहाय, राज के सरिश्तदार की ओर से दिए। इस तरह से उन्होंने भारत के लोगों का गोरी चमड़ीवालों के आगे गौरव बढ़ाया। हमें आशा है कि अन्य आंग्ल-भारतीय लोग भी इन प्रवंधक के इस उदाहरण से सीख लेंगे तथा हमारे देश का हित सोचेंगे। उपर्युक्त उल्लिखित राशि

राजा द्वारा सभा को वार्षिक रूप में दी जाती है। हम ईश्वर से हृदयपूर्वक प्रार्थना करते है कि वह राजा एवं उनके प्रबंधक को लम्बी आयु दे।

कथित जागीर के प्रबंधक
कस्तूरी लाल, सचिव, गोधर्म प्रचारिणी सभा
दलसिंह सराय,
जिला दरभंगा

संलग्नक ८ (आ)

सारन से गोरक्षिणी साहित्य के नमूने

१.

कृष्ण या गोविंद के श्रीचरणों में सादर वंदन जो कि इस अखिल विश्व, देवताओं, गायों और ब्राह्मणों के रक्षक है

छपरा गोरक्षिणी सभा की वर्षगाँठ

छपरा सनातन धर्म प्रचारिणी सभा द्वारा १८८७ में स्थापित छपरा गोरक्षिणी सभा की अब तक कोई भी वर्षगाँठ नहीं मनाई गई। अतः यह निश्चित किया गया है कि इस सभा का वार्षिक दिवस प्रतिवर्ष जनवरी में मनाया जाए। अतः जनता को इस नोटिस द्वारा सूचित किया जाता है कि छपरा गोरक्षिणी सभा की प्रथम वर्षगाँठ अधोलिखित स्थान पर १ एवं २ जनवरी १८९० को मनाई जाएगी। अतः विनम्र भाव से सूचित किया जा रहा है कि प्राचीन वैदिक धर्मपरायण लोग, साथ ही, मुसलमान, ईसाई एवं अन्य धर्म के लोग इस अवसर पर उपस्थित रहकर इस समारोह की शोभा में श्रीवृद्धि करें।

किए जाने वाले कार्य

एक जनवरी, बुधवार की प्रातः वेला में पण्डित देवीदत्त वैदिक मंत्रोच्चार के साथ बाबा धरमनाथ मंदिर में हवन पूजा आदि विधिविधान संपन्न करेंगे। इसी दिन इसी स्थान पर एक बजे अपराह्न को सभा आयोजित होगी जिसमें सर्वप्रथम प्रबंधक खर्च का ब्यौरा प्रस्तुत करेंगे। तदुपरांत पण्डित जगत नारायण वेदों, स्मृतिग्रंथों, कुरान, बाइबल तथा अन्य धर्मग्रंथों के उद्धरण प्रस्तुत करके गोसंरक्षण के धर्मसिद्धांत को सिद्ध करेंगे तथा पण्डित किशोरी लाल गोस्वामी गाय के शास्त्र सम्मत गुणों एवं महानता का

गुणगान करेंगे। राजकुमार विक्टर की भारत यात्रा के सम्बन्ध में धन्यवाद व्यक्त करने के लिए इंग्लेंड को तार भेजने के प्रश्न पर भी विचार विमर्श किया जाएगा।

२ जनवरी, गुरुवार की शाम ५-०० बजे पण्डित विशेश्वर झा और बाबा हरनारायण दारु गोविषयक व्याख्यान प्रस्तुत करेंगे। बिहार में प्रतिनिधि गोरक्षिणी सभा की स्थापना करने के प्रश्न पर भी तदुपरांत विचार विमर्श किया जाएगा तथा उसके बाद पण्डित जगत नारायण समग्र भारत में स्थापित विभिन्न गोरक्षिणी सभाओं के सम्बन्ध में विवरण प्रस्तुत करेंगे।

छपरा गोरक्षिणी सभा
अवध बिहारी सरन मिश्र
मुख्य प्रबंधक
२६ दिसम्बर १८८९

२.

श्री हरि

आप सभी लोगों को गोसंरक्षण करने एवं गोशाला का भवन बनाने के लिए प्रयास करने चाहिए। जिससे समस्त लोगों को संतोष की अनुभूति होगी। भारतीय गोसंरक्षण सभाओं के उपदेशकों और व्याख्याताओं के सम्बन्ध में वार्षिक रिपोर्ट इसके साथ संलग्न करके भेजी जा रही है।

हे अकाल। गायों पर रहम कर। मात्र तू ही गायों और ब्राह्मणों का कल्याण कर सकता है।

दल के आदेशों के तहत बाबू ज्वाला सिंह द्वारा सदस्यों के नाम, व्याख्याताओं के दलों के समर्थकों के नाम, गोनिधि खाता, आय व्यय विवरण प्रकाशित किया गया है।

अमरप्रेम, दशाश्वमेघ घाट, बनारस में मुद्रित।

अपील

सज्जनों, खर्च से परेशान होने की आवश्यकता नहीं। यह पहला ही वर्ष है, अतः समस्त सम्बन्धित सामग्री आदि उपलब्ध कराना आवश्यक था। यदि लोग सेठ जदू राय, जवाहिरमल द्वारा प्रस्तुत उदाहरण का अनुकरण करें जिन्होंने दो मन आटा दिया, तथा इससे अन्य गोप्रेमी लोग भी प्रभावित हों तो जिस तरह धार्मिक स्थानों पर

ब्राह्मणों की सहायता लोग करते है, उसी तरह से उपदेशक एवं व्याख्याताओं की भी सहायता करें तो वे अपने कार्य को और अधिक व्यापक ढंग से कर सकेंगे। इस सभा ने १९ गायों की प्राण रक्षा की है तथा ७ गायों को भेंट स्वरूप प्राप्त किया है। गायों के दाताओं के नाम सभा की रसीद वही में दर्ज संख्या के अनुसार निम्नानुसार हैः

१. यह गाय आरा जिले के कैथी गाँव के साखी पानरे द्वारा ब्रह्मपुर मेले से दी गई।
२. यह बैल कैथी गाँव के रामधन राय द्वारा मेले से दिया गया।
३. यह गाय करसैया गाँव के कुल्ली खान द्वारा मेले से दी गई।
 भगवान सभी मुसलमानों को ऐसी ही सद्बुद्धि दे। अरे ओ हिन्दुओ। शर्म करो।
४. यह गाय धारखर गाँव के इंद्रदयाल पाठक द्वारा मेले से दी गई।
५. यह बैल पटना जिले के नवाँपुर थाना के रुस्तमगंज गाँव के घोषी बनिया नोनीवार द्वारा मेले से दिया गया।
६. यह बैल ब्रह्मपुर गाँव के रंगू कोइरी द्वारा मेले से दिया गया।
७. यह बैल ब्रह्मपुर गाँव के मंगरू अहीर द्वारा दिया गया।

भगवान ऐसी सद्बुद्धि सभी लोगों को दे। इस सबका श्रेय बाबा जड्डू सिंह को जाता है।

गोरक्षा पुस्तकालय

इस ग्रंथालय में बनारस की समस्त पुस्तकें एवं वस्तुएँ सुरक्षित रखी गई है। यहाँ से जो भी लाभ प्राप्त होता है उसे या तो गोसंरक्षण आन्दोलन के व्याख्याताओं को दिया जाता है या गोशाला निधि में दिया जाता है। जो भी यहाँ से कुछ भी प्राप्त करने का इच्छुक है, तो वह अधोहस्ताक्षरकर्ता को निम्नलिखित पते पर संपर्क करेः

प्रबंधक, गोरक्षा पुस्तकालय, दशाश्वमेघ, बनारस।

गोरक्षा व्याख्याताओं की भारतीय परिषद के प्रथम वर्ष के कार्य का ब्यौरा

गोरक्षा व्याख्याताओं की भारतीय परिषद के मूल स्रोत का ब्यौरा समस्त लोकहितैषी सज्जनों की सूचना के लिए प्रकाशित किया गया है। अरे ओ गायों के चाहकों, इश्वर की कृपा से तथा इस ब्रिटिश सरकार के समर्थन से एवं गोपूजक लोगों के प्रयासों से लगभग सौ गोशालाएँ गोरक्षिणी सभाओं ने स्थापित की हैं। आगे भी ये प्रयासरत हैं। लेकिन यह बड़े दुख की बात है कि गायों की हत्याएँ अभी बंद नहीं की गई हैं। कसाई रोज हजारों गायों और बैलों को इस हेतु ले जाते हैं। इसका कारण यह

है कि गाँव के लोगों को ये कसाई चकमा देकर उनसे गायें खरीद लेते हैं। वे सामान्य रूप से धन प्राप्त करने के लिये जानबूझ कर गायें उन्हें नहीं बेचते हैं। उपदेशकों की कमी इसका सबसे बड़ा कारण है। यदि वहाँ समुचित संख्या में उपदेशक हों तो ऐसे दृश्य नहीं दिखाई देंगे। वे कस्बों और गावों में जाकर गोहत्या के दोषों तथा गाय के गुणों के बारे में लोगों को जानकारी दें। ओ मित्रों, जब तक ये बातें गाँव के लोगों को समझाई नहीं जातीं तब तक गोहत्या पर रोक नहीं लगाई जा सकती। फिर भी, यह अच्छी बात है कि कुछ सद्भावी लोगों ने इस भारी कष्ट की अनुभूति की है। ईश्वर उनकी इच्छाएँ पूरी करे।

गोरक्षा व्याख्याताओं की भारतीय परिषद का प्रथम दौरा

प्रिय महाशयों, इस दल की प्रथम बैठक हरिहर क्षेत्र में हुई थी। १८८८ के आठवें महीने में हरिहरनाथ के मंदिर के पास मही नदी के तट पर विशाल शामियाने लगाए गए थे। इसे झंडों एवं सुगंधित फूलों और पत्तियों से सजाया गया था। जमीन पर सुंदर दरी बिछाई गई थी और उस पर कुर्सियां और मेजें लगाई गई थीं। व्याख्याताओं ने अपना कार्य आरम्भ किया। गोरक्षिणी सभाओं को पहले से ही पत्र प्रेषित कर दिए गए थे लेकिन निम्नलिखित सज्जन ही वहाँ पधारे थे : बनारस से पण्डित जगत नारायण, पण्डित रेवा शंकर गौरजी, बाबू ठाकुरदास, बाबू रामदास, बाबू चुन्नीलाल, तथा बाबू ज्वालासिंह, आरा से बाबू रूपसिंह, पण्डित महावीर प्रसाद, पण्डित हरगुन पानरे, पण्डित शुक्ल नारायण, पण्डित संसारनाथ पाठक तथा पण्डित सत्य नारायण, पटना से महंत ईश्वर सिंह, छपरा से बाबू बासदेव नारायण, बाबू भगवती प्रसाद, तथा बाबू बिहारी सिंह, तथा अन्य गोप्रेमी ब्राह्मण।

सर्वप्रथम, पण्डित जगत नारायण ने ईश्वर से प्रार्थना की तथा महारानी विक्टोरिया को धन्यवाद ज्ञापित किया। तत्पश्चात् पण्डित महावीर प्रसाद पानरे ने गोहत्या के दुष्परिणामों की जानकारी दी। पण्डित हरगुण पानरे ने उस विकट स्थिति की चर्चा की कि गोहत्या के कारण कृषिक्षेत्र की स्थिति विकट हो गई है। पण्डित शुक्ल नारायण ने गोसंरक्षण के सम्बन्ध में धर्मशास्त्रों से साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए अपनी बात बलपूर्वक प्रस्तुत की। अरे, दोस्तों! यह सज्जन अभी बिल्कुल युवक ही है लेकिन उनका व्याख्यान उनसे बहुत अधिक बड़े व्याख्याताओं के व्याख्यानों से भी श्रेष्ठ है। ईश्वर उन्हें दीर्घायु करे। पण्डित संसारनाथ पाठक ने भोजपुरी कविताएँ, ताओनी, दोहे और चौपाइ सुनाईं। उनके उपदेश से ग्रामीण लोग अत्यन्त प्रभावित हुए। वे गाय के

समर्पित पूजक हैं। ईश्वर उनके समर्पण भाव को प्रतिदिन और अधिक गहन बनाए। इस मेले में छह मुसलमानों ने भविष्य में कभी भी गोमाँस न खाने की शपथ ली। ईश्वर अन्य मुसलमानों को भी इसी तरह की अनुभूति कराए। इन मुस्लिम सज्जनों के नाम इस प्रकार हैं -

(१) मुंशी अबू हसन (२) मौलवी लतीफ खान (३) नूर मुहम्मद (४) दीन मुहम्मद (५) हुसैन बख्श (६) नबी बख्श

व्याख्याताओं की परिषद के लिए दान देनेवाले व्यक्तियों के नामों की सूची

	नाम	रूपए
१.	पण्डित जगत नारायण	५०
२.	सेठ राम निरंजन, रईस, पटना	२५
३.	पण्डित रेवा शंकर गौरजी	५
४.	बाबू ठाकुर दास, रईस, बनारस	५
५.	बाबू रामधारी सहाय, रईस, बक्र मुजफ्फरपुर	२
६.	बाबू रूपसिंह, रईस, अमृतसर	२
७.	हरिहरनाथ के महंत	२
८.	चम्पारन के रामनगर के राजा के आध्यात्मिक गुरु पण्डित विश्वनाथ	२
९.	चम्पारन के रामनगर के राजा के फौजदार बाबू देवीप्रसाद एवं बाबू सिद्धिप्रसाद	२
१०.	बाबू बासदेवनारायण, रईस, छपरा	१
११.	बाबू राणा तेज बहादुर, चम्पारन के रामनगर के महाराजा के निजी सचिव	१
१२.	बाबू रंग लाल, रामनगर, चम्पारन	१
१३.	पण्डित बनमाली, रामनगर, चम्पारन	१
१४.	बाबू भगवत प्रसाद, मुजफ्फरपुर	१
१५.	बाबू रामबिहारी लाल, मुजफ्फरपुर	१
१६.	सेठ बालासीराम, रईस, पटना	१

१७.	बाबू शिवदयाल शामलाल, बनारस	१
१८.	पण्डित कृपाराम, आर्यसमाज, बनारस	१
१९.	बाबू ज्वालासिंह, बनारस	१
२०.	व्याख्याताओं की परिषद की दानपेटी से प्राप्त धनराशि	१०
२१.	फर्निचर की बिक्री से प्राप्त धनराशि	३
	कुल रूपए	११८

व्याख्याताओं की परिषद उपर्युक्त उल्लिखित सज्जनों का हृदयपूर्वक धन्यवाद व्यक्त करती है। परिषद के व्याख्याताओं के भोजन के लिए दो मन आटा देने के लिए सेठ जादू राय, जवाहिर मल के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती है। व्याख्याताओं को एक दिन का भोजन करवाने के लिए राय गूदुर सहाय का भी धन्यवाद। ईश्वर ऐसी ही भावना सदैव बख्शे।

इस मेले में ११८ रू. की धनराशि एकत्रित हुई।

व्याख्याताओं के दल पर व्यय

	रू.	आना	पैसा
शामियाना	४९	०	०
शामियाने के लिए बाँस	५	०	०
चटाइयाँ	२	८	०
व्याख्याताओं के भोजन पर खर्च	१०	०	०
तेल तथा मोमबत्तियाँ	०	१०	०
चार स्टूल	२	०	०
पटना से मेले में			
शामियाने एवं फर्नीचर लाने के लिए नाव भाड़े पर ली	१	१२	०
व्याख्याताओं को भेजे गए पोस्ट कार्ड	१	८	०
शामियाने के लिए रस्सियाँ	५	०	०
खूंटों की कीमत	१	०	०
भूसा	०	६	०
दो लैम्प	१	०	०

महा नदी को पार करने के लिए नाव का			
१५ दिन का किराया	१	०	०
राँची के पण्डित गनपति मिश्र, अमृतसर के			
बाबू गोविंदसिंह को			
भेजे गए प्रत्येक एक तार की कीमत	१	०	०
नियम, चार रसीदबहियां, नोटिस			
लेखावहियां तथा एक रिम कागज	१३	४	०
बनारस के लिए शामियाना ले जाने के			
लिए नाव का किराया	१	१२	०
पुस्तकों का वितरण	५	०	०
हरगुण पानरे का रेल का किराया	२	०	०
पण्डित जगत नारायण और चपरासी का			
रेल का किराया	९	०	०
कहार का वेतन	१	०	०
चपरासी का वेतन	५	०	०
पण्डित महावीर प्रसाद का रेल का किराया	४	०	०
फुटकर खर्चा	१	०	०
कुल	**१२३**	**००**	**०**

फाल्गुन के महीने में आरा जिले में ब्रह्मपुर में आयोजित मेला

१ मार्च १८८९ को आमंत्रण पत्र जारी किए गए

बनारस से पण्डित जगत नारायण एवं पण्डित हर नारायण (चिकित्सक) आए, आरा से बाबू गोविंद सिंह, बाबू रूप सिंह, पण्डित महावीर प्रसाद, पण्डित हरगुन, पण्डित शुक्ल नारायण अपने दो शिष्यों के साथ, पण्डित संसारनाथ पाठक, तथा पण्डित मणीश्वर आए, कुरांतडी से पण्डित दुर्गादत्त, पं. रघुनाथ प्रसाद उपाध्याय, बाबू बिसेश्वर लाल, बाबू हरिहर प्रसाद, बाबू कृष्ण लाल एवं अन्य आए।

व्याख्याताओं ने पाँच या छह दिन लगातार अपना कार्य किया। आजमगढ़ जिले से पधारे एक मौलवी ने कुछ प्रश्न पूछे जिनके उत्तर पण्डित जगत नारायण ने इतने अच्छे ढंग से दिए कि वह हैरान होकर वहाँ से चला गया। इस मौलवी के संभ्रम से चार

मुसलमानों ने माँस खाना त्याग दिया। इनके नाम हैं : मुहम्मद अली, रईस, तिकतिक, अली बख्श; दुमराव; बक्सर का अली मुहम्मद और बलिया का खुदा बख्श। इस मेले में १२ गायों की प्राणरक्षा की गई।

सभा को सहायता के रूप में प्राप्त दान

	रू.	आना	पैसा
बाबू शिव प्रसन्नसिंह, रईस, ब्रह्मपुर	३	०	०
बाबू राम चरण, रामगढ, आरा	१	०	०
बाबू नाथू राम, रईस, बक्सर	१	०	०
सभा की दान पेटी से प्राप्त धनराशि	२५	०	०
बाजार की दानपेटी से प्राप्त धनराशि	१०	०	०
कुल	४०	०	०

ब्रह्मपुर मेले की परिषद का व्यय

	रू.	आना	पैसा
पांच व्याख्याताओं का रेल भाड़ा	४	११	६
शामियानों का ढुलाई खर्च	२	८	०
गाडीवालों के भोजन पर खर्च - ग्वाला और चपरासी	३	२	०
पाँच गायों और बैलों को लेने की कीमत	३	०	०
फुटकर प्रभार	१	०	०
हरनारायण का रेलवे भाडा	२	४	०
बनारस से तथा वापसी का चपरासी का रेलभाडा	२	४	०
व्याख्याताओं के भोजन पर व्यय	७	१२	०
गायों और बैलों के लिए चारा	२	०	०
गायों और बैलों की ढुलाई और चारे का खर्चा तथा आरा की गोशाला तक ले जाने के लिए दो नौकरों पर खर्च	२	८	०
गोपूजकों का रेलभाडा (पण्डित जगत नारायण, बनारस)	२	४	०
कुल	३२	१	६

अयोध्या का रामनवमी मेला

चैत्र की छठ को व्याख्याताओं का एक दल अयोध्या गया तथा पण्डित रामप्रसाद, पुरोहित एवं मानद मजिस्ट्रेट ने परिषद के कार्य के लिए पुराने विद्यालय भवन के अहाते में व्यवस्था की तथा वहाँ शामियाने लगाए गए। फिर भी, दुख की बात यह रही कि बहुत ही कम संख्या में व्याख्याता इसमें आए। बनारस से केवल पण्डित जगत नारायण एवं भाई ज्वाला सिंह आए, तथा आरा से पण्डित महावीर प्रसाद, पण्डित हरगुण और पण्डित मुनीश्वर आए। एक दिन रेवरण्ड श्री बोमन ने अपने चार पाँच चेलों चपाटों के साथ परिषद के शामियाने में अफरातफरी अवश्य मचाई। उन्हें पहले तो वहाँ से चले जाने के लिए कहा गया लेकिन प्रतिवाद करने का कोई भी परिणाम न निकलने पर पण्डित जगत नारायण ने बाइबल की एक प्रति हाथ में ली तथा उसमें से माँसाहार त्याग के आधार गिनाते हुए उपदेश देना आरम्भ किया। तत्पश्चात् मिशनरियों से विचार विमर्श हुआ।

पादरी : माँसाहार करने से क्या हानि होती है?

पण्डित : माँसाहार मानव का भोजन नहीं है।

पादरी : ईसु ने पशुओं को मानव भोजन के लिए ही तो पैदा किया है।

पण्डित : ईश्वर ने मानव के भोजन के लिए पुष्पों, फलों, एवं सब्जियों को पैदा किया है। ध्यान दीजिए - ईश्वर ने कहा है - मैं आपको पृथ्वी पर सब्जियाँ पैदा करने के लिए बीज देता हूँ। प्रत्येक वृक्ष पर फल लगते हैं और उन फलों से बीज निकलते हैं। इन्हें तुम खाओ। बाइबल, अध्याय-१, अनुच्छेद-१९, कृपया बताइए कि ईश्वर ने कहाँ माँस भक्षण की अनुमति दी है।

पादरी : पशुओं को सब्जियों में शामिल किया जाता है।

पण्डित : आप जीवित प्राणियों की सब्जियों के अंदर गणना करके वास्तव में बुद्धिमत्ता का परिचय दे रहे है।

पादरी : आप पानी पीने में भी तो हजारों जीवों को निगल जाते है।

पण्डित : इसके लिए कहा गया है - आपको पानी को छानकर पीना चाहिए। अदृश्य जीवों के विनाश के लिए हम उस परम कृपालु से प्रायश्चित स्वरूप क्षमायाचना करते हैं जो हमने जानबूझकर नहीं किया है। लेकिन भोजन के लिए पशुओं की हत्या जब हम नित्यप्रति जानबूझकर करते हैं, तो ईश्वर इसके लिए कैसे माफ करेगा ?

पादरी : हम पशुओं की हत्या नहीं करते, हम तो मात्र वही खाते हैं जो खानसामा

हमारी मेज पर हमें परोसता है।

पण्डित : ठीक है, महोदय, आप मात्र खानसामा द्वारा मेज पर परोसे गए भोजन को खाते हैं, मान लीजिए कि वह मेज पर जहर आपको परोसे तो क्या आप उसे भी खा जाएँगे?

तत्पश्चात् वह पादरी वहाँ से चला गया क्योंकि सत्य की हमेशा विजय होती है। कुछ देर बाद पादरी के दो शिष्य मानम सिंह और हेनरी वहाँ आए और उन्होंने कभी भी गोमाँस न खाने की प्रतिज्ञा ली। इसके पश्चात् लखनऊ के हुसैन बख्श, रहीम खान, करीमुद्दीन एवं फैजाबाद के मौला बख्श ने गोमाँस खाना त्याग दिया। वहाँ चारों ओर मेले में यह अफवाह फैल गई कि बनारस से पण्डित आए हैं और उनका उपदेश सुनकर मुसलमान और ईसाई गोमाँस खाना त्याग रहे हैं। इस समाचार की भनक बाबा रघुनाथ दास के शिष्य बाबा जगन्नाथ दास के कानों में पहुँची। उन्होंने एक संन्यासी को भेजकर पण्डित जगत नारायण को आमंत्रित किया। उन्होंने पण्डित के साथ काफी देर तक विचार विमर्श किया। तत्पश्चात् उन्होंने उनसे कहा, आप रामचंद्र के भक्त बाबा रघुनाथ के पास आए हैं अतः यह खबर भगवान के कानों में पहुँच गई समझो। उन्होंने रामायण की भविष्यवाणी पूरी की। भगवान राम गाय, ब्राह्मण, देव और साधुओं के उद्धारक हैं, वे दया के सागर हैं भगवान राम अब शीघ्र ही अवतार लेंगे और गाय के कष्टों को हरेंगे। तत्पश्चात् उन्होंने समस्त साधुओं को वहाँ एकत्रित किया तथा गोसंरक्षण के मत का सर्वत्र प्रसार करने के लिए उनसे कहा। उसके बाद उन्होंने पण्डित जगत नारायण को गोरक्षाचार्य की उपाधि से विभूषित किया। पण्डित ने भी अत्यन्त वाक्पटुतायुक्त व्याख्यान दिया जिससे वहाँ उपस्थित साधुओं की आँखें आँसुओं से नम हो गईं। तत्पश्चात् उन्होंने वहाँ पुस्तकें वितरित कीं। वहाँ से वे उस स्थान पर गए जहाँ रामाणयी बाबा साधनारत थे। यहाँ भी उन्होंने भाषण दिया तथा पुस्तकों का वितरण किया। मेले के समापन तक उन्होंने वहाँ अपना समय बड़े ही अच्छे ढंग से व्यतीत किया।

सभा को सहायतार्थ प्राप्त दान

	रू.	आना	पैसा
बाबा जीवन सिंह पंजाबी	१	०	०
रामायणी बाबा	१	०	०
सभा की धर्मादा दानपेटी से प्राप्त धनराशि	१८	०	०
बाबा रघुनाथ दास के शिष्य बाबा जगन्नाथ दास	२	०	०
कुल	२२	०	०

सभा का व्यय

	रू.	आना	पैसा
बनारस से अयोध्या तथा वापस	३	८	०
शामियाने लाने का किराया	७	४	०
पण्डित महावीर प्रसाद एवं पण्डित हरगुण का आरा से अयोध्या का किराया	७	४	०
पुस्तकों का वितरण	४	०	०
खूंटों की कीमत	०	१२	०
व्याख्याताओं के भोजन पर व्यय	७	०	०
मिट्टी का तेल	०	८	०
पण्डित जगत नारायण तथा उनके एक नौकर का रेलवे का किराया	६	४	०
नौकर का वेतन	४	०	०
नोटिसों की छपाई, कागज की कीमत के साथ	५	०	०
फुटकर	०	८	०
कुल	३८	०४	०

बैशाख में आयोजित ब्रह्मपुर का मेला

२५ अप्रैल १८८९ को उपदेशकों का एक दल ब्रह्मपुर के मेले में गया। तट के उत्तरी किनारे पर उन्होंने अपने तम्बू ताने तथा उपदेश देना प्रारम्भ किया। मेले में बनारस से पण्डित जगत नारायण, पण्डित किशोरी लाल, कवि, पण्डित हर नारायण, चिकित्सक आए, आरा से पण्डित महावीर प्रसाद, पण्डित हरगुण, पण्डित शुक्ल नारायण, पण्डित संसार नाथ, बाबू रूप सिंह तथा उनके दो विद्यार्थी आए तथा सलीमपुर से पण्डित जादू शेखर आए। मेले के समापन तक भाषण बड़ी ही अच्छी तरह से दिए जाते रहे : हे मित्रों! यही वह मेला है जिसमें हजारों गाएँ कसाइयों को बेची जाती हैं। इस मेले में सात गायों एवं बैलों की प्राणरक्षा की गई।

सभा को सहायता स्वरूप प्राप्त दान

	रू.	आना	पैसा
बाबू नरोत्तमसिंह, आरा के रईस	१	०	०
बाबू पंच कौड़ी लाल, रईस, (जमींदार) आरा में बाभड़ के	१	०	०
बाबू शिव बालक लाल, आरा के बाभड़ के रईस	१	०	०
पण्डित राम प्रकाश तिवारी, आरा	१	०	०
बाबू फक्कड़ चंद, पटना में धाली के रईस	१	०	०
सभा की धर्मादा दान पेटी से प्राप्त धन राशि	१५	०	०
बाजार की धर्मादा दान पेटी से प्राप्त धन राशि	१०	४	३
कुल	३०	४	३

सभा का व्यय

	रू.	आना	पैसा
बनारस से मेले तक शामियाना लाने का भाड़ा	१	६	०
गायों और बैलों के लिए चारा	१	१२	०
तीन व्याख्याताओं का बनारस से मेला तथा वापसी का किराया	७	१२	०
आरा के लिए शामियाना लाने का भाड़ा	७	१२	०
मवेशी को खिलाने तथा उनको लेकर आरा गोशाला तक आने के लिए तीन नौकरों का खर्चा	२	८	०
व्याख्याताओं के भोजन का खर्च	८	८	०
आरा से मवेशी लाने के लिए रक्षार्थ एक सिपाही पर खर्च	३	०	०
आरा तक पाँच व्याख्याताओं का रेल किराया	२	८	०
कसाई के हाथों से एक गाय और एक बैल की रिहाई	२	९	०
कुल	३०	१२	३

बनारस में रथ यात्रा मेला

३ जून को सेठ जानी मल खान द्वारा व्यवस्था हेतु दी गई जगह पर तम्बू ताने गए। व्याख्याता वहाँ इकट्ठे हुए तथा व्याख्यान देने के लिए गए। हे दोस्तों! जब हमारे समर्थक ही हमारे कार्यों में रोड़े डालते हैं तो हम दूसरों से क्या अपेक्षा करें। इस मेले में पण्डित ने ऐसी स्थिति खड़ी कर दी कि हमें अपनी सहायता के लिए पुलिस बुलानी पड़ी। दुख है कि जब हमारे पण्डितों का चरित्र ही ऐसा है तो हम गाय के प्रश्न का समाधान कैसे लाएँ। फिर भी, हमें भगवान से बिनती करनी चाहिए कि वह इन पण्डितों की आँखों से परदा हटाए ताकि वे भविष्य में पुनः कभी गोमाता के प्रश्न पर बीच में टाँग नहीं अड़ाएँ। कोतवाल के उद्धत व्यवहार को देखकर (नाम लेना आवश्यक नहीं) शहर के तहसीलदार और थानेदार वहाँ दौड़े चले आए तथा उसे वहाँ से ले गए। आरा के पण्डित महावीर प्रसाद उस समय भाषण दे रहे थे। उन्हें सुनकर उपर्युक्त तीनों पदाधिकारी अत्यन्त तुष्ट हुए। हालाँकि वे सभी मुसलमान थे। जब तहसीलदार एवं कोतवाल वहाँ से गए, नायब तहसीलदार युसुफ खान ने पण्डित महावीर को बुलाया तथा गोसंरक्षण विषय पर उनके साथ काफी लम्बे समय तक बात की। तत्पश्चात् पण्डित उस स्थान पर गए जहाँ वे भाषण दे रहे थे।

सभा के सहायतार्थ दान

	रू.	आना	पैसा
बाबू बैजनाथ, रईस (जमींदार), बनारस	२	०	०
पण्डित रेवा शंकर गौड़	३	०	०
चुनार के बाबू जय कृष्ण दास	१	०	०
सभा की धर्मादा दानपेटी से प्राप्त धनराशि	१	०	०
कुल	७	०	०

सभा का व्यय

	रू.	आना	पैसा
आरा से बनारस तक शामियाने का भाड़ा, ढुलाई का खर्चा	१	८	०
व्याख्याताओं का भोजन खर्च	२	४	०
दो व्याख्याताओं का आरा से तथा आरा तक का रेल किराया	५	१२	०
कुल	१०	०८	०

समग्र वर्ष का आय-व्यय विवरण

मेला	आय			व्यय		
	रू.	आना	पैसा	रू.	आना	पैसा
हरिहर क्षेत्र	११८	०	०	१२२	०	०
ब्रह्मपुर	३०	५	०	३०	१५	०
	४०	०	०	३२	१	६
रथ यात्रा बनारस	७	०	०	१०	८	०
अयोध्या	२३	२	०	३८	४	०
कुल	**२१८**	**७**	**०**	**२३३**	**१२**	**६**

सभा अपने समर्थकों एवं व्याख्याताओं का हृदय से धन्यवाद व्यक्त करती है। वाचकों में सभा के समर्थकों के दो वर्ग हैं - व्याख्याता एवं वे लोग जो धन प्रदान करके मदद करते हैं। जो लोग सभा के किसी भी वर्ग के समर्थक बनने के इच्छुक हों वे निम्नलिखित नियमों को पढ़ लें तथा स्वीकार कर लें। हमारे साथ इस विषय पर संपर्क करें। तब उनके नाम सभा के समर्थकों एवं संरक्षकों की सूची में जोडे जाएँगे।

गोरक्षा व्याख्याताओं की भारतीय परिषद के नियम

१. इस परिषद को गोरक्षा के व्याख्याताओं की परिषद के नाम से अभिहित किया जाएगा।

२. इस परिषद का उद्देश्य गोसंरक्षण से होने वाले सार्थक परिणामों के सम्बन्ध में जनता में जानकारी फैलाना तथा उनकी हत्या करने के परिणाम स्वरूप होने वाले घातक परिणामों से चेताना होगा।

३. परिषद बैठक में कोई भी धार्मिक विवाद की स्थिति नहीं खड़ी करने दी जाएगी तथा ऐसे किसी भी विषय की चर्चा नहीं की जाएगी जिससे कटुता पैदा हो।

४. यह परिषद ऐसा कोई भी कार्य नहीं करेगी जिससे गोसंरक्षण, गोशाला या गोरक्षिणी सभा को कोई भी नुकसान हो।

५. परिषद का यह कर्तव्य होगा कि वह गाँवों में उपदेश दे लेकिन यह सब कुछ परिषद द्वारा वेतनभोगी व्याख्याताओं से कराना होगा। परिषद का कोई व्याख्याता स्वैच्छिक रूप से गाँवों में जाकर भाषण देना चाहता है तो उसे ऐसा करने की पूरी छूट रहेगी।

६. किसी भी जाति के लोग परिषद के सदस्य बन सकते हैं, बशर्ते वे निम्नलिखित वचन का पालन करें। शपथ इस प्रकार है : मैं ईश्वर को साक्षी रखकर शपथ लेता हूँ कि मैं कभी भी किसी भी पशु का माँस भक्षण नहीं करूँगा और शराब भी कभी नहीं पीऊँगा। मैं लोगों को भी इनका उपयोग करने के लिए मना करूँगा। सदैव गोमाता के लिए अच्छी स्थिति पैदा करने के लिए उपदेश दूँगा।

७. कोई भी व्यक्ति इस परिषद के उद्देश्यों के विरोध में कार्य करेगा तो उसे न तो गाय का शुभचिंतक समझा जाएगा और न उसे परिषद का सदस्य ही माना जाएगा।

८. परिषद के प्रत्येक सदस्य को कम से कम एक रू. प्रति वर्ष देना होगा। यदि कोई सदस्य इससे अधिक रकम देना चाहे तो दे सकता है। सदस्यों की प्रबंध समिति किसी भी सदस्य को चाहे तो चंदा भरने में छूट दे सकती है।

९. परिषद का सामान्य प्रबंधन प्रबंध समिति द्वारा किया जाएगा जिसमें अधिक से अधिक दस तथा कम से कम सात सदस्य होंगे।

१०. परिषद के व्याख्याताओं के माध्यम से प्राप्त समस्त दान उन गोशालाओं को दे दिए जाएँगे जिन्हें धन की आवश्यकता होगी या फिर उन गोशालाओं को दिए जाएँगे जिन्हें सदस्य देना निश्चित करें। परिषद को अपने समस्त सदस्यों की सहमति से इन नियमों में परिवर्तन करने की शक्ति होगी।

इस परिषद का सदस्य बनने का इच्छुक कोई भी व्यक्ति अधोहस्ताक्षरकर्ता से संपर्क कर सकता है।

पण्डित जगत नारायण
भारतीय गोरक्षा व्याख्याता परिषद,
दशाश्वमेध, बनारस

संलग्नक ८ (ई)

शाहाबाद में परिचालित पत्रों का सारानुवाद

१. जगदेव बहादुर सिंह की गोसंरक्षण हेतु समस्त हिन्दुओं से प्रार्थना है।

गाजीपुर में हाल ही में घटित घटना को देखते हुए कोई भी हिन्दू किसी भी मुस्लिम वकील, मुख्तियार, मौलवी को किसी भी मामले में न रखे। जो उन्हें अपने मामलों में रखेंगे उन्हें जाति से बहिष्कृत कर दिया जाएगा। इस पत्र को पढ़ने के उपरांत इसकी प्रतियाँ बना ली जाएँ तथा उन्हें पाँच गाँवों में परिचालित की जाएँ अन्यथा उन्हें पाप का भागी बनना होगा।

२. मेरी सभी हिन्दुओं से प्रार्थना है कि वे अपनी गायों को मुस्लिमों को न बेचें। चूँकि वे बकरईद के अवसर पर गायों की हत्या करते हैं अतः उन्हें न बेचे जाने पर वे निराश होंगे।

३. १ के समान

४. १ के समान

५. जगदेव बहादुर सिंह एवं मोती सिंह की प्रार्थना है कि हिन्दू अपने मामलों आदि में मुसलमान वकील आदि न रखें या फिर उनसे पैसे का किसी भी तरह का लेन देन न करें।

६. २ के समान । इसमें केवल इतना जोडा किया गया है कि अवसर पर हिन्दू मुसलमानों के साथ तीखा व्यवहार करें।

७. ६ के समान।

८. ६ के समान।

९. २ के समान।

१०. १ के समान।

एच.ली.मैसुरियर
(प्रतिनिधि)

२४ अक्टूबर १८९३
एच.पी. एवं सी.ई.जी. पंजी.सं.५३१८
सी-१७६-२३-११-९३

पटना मण्डल के आयुक्त ए.फॉर्ब्स को टी.एम.गिब्बन का पत्र

बेतिया, १ सितम्बर १८९३, अर्धसरकारी
प्रेषकः टी.एम.गिब्बन, सी.आई.के.
सेवा में : एफ.फॉर्ब्स

आपके दि. १२ के नोट के साथ सरकार का आठ तारीख का गोपनीय परिपत्र एक या दो दिन पहले मिला। मैं इस विषय पर मेरे विचार आपको भेज रहा हूँ। मेरा मानना है कि ये आपके लिए कुछ-न-कुछ उपयोगी होंगे।

२. मैं इस बात को अच्छी तरह से समझ गया हूँ कि आन्दोलन के नेता विशुद्ध एवं पूर्णरूप से राजनीतिक उद्देश्यों से प्रेरित होकर कार्यरत हैं। उनका अंतिम उद्देश्य

लोगों को ब्रिटिश सत्ता को उखाड़ फैंकने के लिए उत्तेजित करना है। आपने मुझसे पुष्टि हेतु साक्ष्य भी माँगे हैं परन्तु उन्हें देने में मैं पूर्ण रूप से असमर्थ हूँ। देशी लोगों के साथ मेरे काफी लम्बे समय तक घनिष्ठ सम्बन्धों से भी मुझे ऐसा लगता हो या उनके द्वारा कही गई बातों से मेरे दिमाग पर इस तरह की छाप पड़ी हो। मेरी धारणा इस सम्बन्ध में फिर भी यही है।

३. यदि मैं सोचूँ कि उनके नेता विशुद्ध धार्मिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य कर रहे हैं तो भी उनके द्वारा लोगों को आकर्षित करने के लिए अपनाए गए तरीके के प्रति मेरा मत अलग है। फिर भी, इसके परिणामों से मैं थोड़ा कम चिंतित हूँ।

४. क्या मैं यह भी मानूँ कि इस योजना के अभिकल्पक सभी पुरातनपंथी हिन्दू और मुसलमान हैं और तथाकथित हिन्दू पूर्वनियोजित तैयारी के अनुसार कार्य नहीं कर रहे हैं। मैं ऐसा इसलिए गंभीरतापूर्वक नहीं सोचता क्योंकि मैं खतरे से वाकिफ हूँ, प्रशासकों के प्रति खतरे से सचेत हूँ।

५. कई वर्ष पूर्व मेरा मानना था कि अशांत चित्त परन्तु कुशल लोग हमारे शासन के खिलाफ साजिश रच रहे हैं लेकिन क्या वे हमारे कृषि सम्बन्धी सुधारों का विरोध करने के लिए सिर उठा रहे हैं या धार्मिक युद्ध छेड़ रहे हैं या हमें देश से बाहर खदेड़ने के लिए प्रत्यक्ष कदम उठा रहे हैं, इस सम्बन्ध में मैं कोई निश्चित राय नहीं बना पाया था। अब क्या हमें इन तीनों प्रयासों को इकट्ठा होने के दिन की प्रतीक्षा करने के लिए जीना होगा।

६. पिछले कुछ वर्षों में बेतिया में मुस्लिम सज्जन, हिन्दू विद्वान, दक्षिण भारत के सज्जन, दक्षिणी ब्राह्मण और मिश्र देश के यात्री आए हैं। वहाँ क्यों आए? इसंसे पूर्व तो बेतिया उनके लिए आकर्षण का केन्द्र कभी नहीं था। इनमें से कुछ लोग उच्चपदस्थ अधिकारियों के पत्र लेकर भी हमारे पास परिचय हेतु आए। दूसरे लोग भी स्थानीय लोगों के नाम पत्र लाए थे जिन्होंने हमारा परिचय कराया तथा अन्य से भी कराया।

७. इनमें से कुछ लोगों को भारत के बारे में, यहाँ के राजकुमारों आदि के बारे में इतना गहन ज्ञान है कि हमारे विश्वकोश भी उनके ज्ञान के समक्ष फीके पड जाएँ। एक मुस्लिम व्यक्ति कुछ महीने पूर्व ही मुझसे मिला। उसने कहा कि वह पहले कई वर्षों तक बेतिया में नहीं आया था, फिर भी वह किसी भी पुराने अधिवासी की तरह मृत लोगों एवं वहाँ के लोगों के बारे में पूछताछ कर रहा था।

८. यद्यपि मैं आज तक उनकी किसी योजना या उनकी समग्र भूमिका समझने में असमर्थ रहा हूँ लेकिन, मैं इतना अवश्य अनुभव करता हूँ कि उनके यहाँ आने जाने

से हमारा कोई हित नहीं होगा।

९. बेतिया के पूर्व महाराजा के निवास पर मेरी उनसे भेंट हुई होती तो मैं उनके इस आवागमन को खोजयात्रा भी कह सकता था। लेकिन ऐसा भी नहीं हुआ। महाराजा चाहे सेगोवली या कोलकता में हों, वे बेतिया आते थे।

१०. दक्षिण भारत से एक व्यक्ति पिछले कुछ वर्षों में कई बार हमारे पास आया। सचमुच कितनी बार आया, यह मैं नहीं बता सकता। यह व्यक्ति पहले नेपाल से परिचय पत्र लेकर आया। पहली बार वह व्यक्ति धर्मादा संस्थान के लिए निधि प्राप्त करने के प्रत्यक्ष उद्देश्य से हमारे पास आया। पिछली बार तो पहली मुलाकात होने से मैं ने इसे आनंद की बात समझी थी। या फिर इसलिए कि वह मेरे किसी पुराने मित्र की तरह पेश आ रहा था। मैंने देखा, कि वह सज्जन बेतिया में छद्मवेश में रेलगाड़ी में बैठा हुआ है। मैंने पुनः उसे सेगोवली से रेलगाड़ी से जाते समय भी देखा। तीसरी बार सेगोवली के महाराजा से मिलते समय वह मुझसे मिला लेकिन मिलने का उद्देश्य क्या था मैं समझ नहीं पाया।

११. कुछ वर्ष पूर्व, शायद १८८९ में शेरपुर के युवराज से मेरा मिलना हुआ। उसने मुझे अत्यन्त उच्च पदस्थ अधिकारियों द्वारा उसे भेजे गए पत्र, उसकी सम्मानसूचक हैसियत का अहसास कराने के लिए दिखाए। लेकिन मेरी शिकायत यह है कि वह मुझे पक्का बदमाश लगा। वह मुझे यह बताते हुए बिल्कुल भी नहीं हिचकिचाया कि उसके पिता बल्गेरिया में रूसी वेतन भोगी नुमाइंदे हैं। जब हमने सिक्किम पर अधिकार किया तब हमने अपनी सरकार से उसके पिता के साथ पत्राचार करने में अवरोध उपस्थित कराए।

१२. कुछ समय पूर्व मुझे एक मुसलमान व्यक्ति मिलने आया। उसने मुझे बताया कि उसने मौज के लिए पूरे विश्व की यात्रा की है, वह एशियाई टर्की में पैदा हुआ था लेकिन रूसी भाषा का एक वाक्य ही जानता था। वह भारत में, बेतिया में मौज के लिए घूमने आया था। लेकिन उसने यह नहीं बताया कि उसकी मौज आखिर क्या थी ?

१३. यदि हमारी सरकार इस पर चौक्सी पूर्ण नजर रखती है तो ये दुनिया के देशी पूंजी बाजार में अपना उत्कृष्ट राजीनीतिक दबावमापी बन सकते हैं। अव यह दबाव हमारी सरकार के लिए समस्या का रूप धारण करता चला जा रहा है। प्रत्येक साहूकार को अपने उधार की पड़ी है। वह किसी भी तरह से उसे जाने नहीं देगा। हर बाजार में अविश्वास का बोलबाला है।

१४. बड़े बड़े सेठ साहूकार वायदा खिलाफी कर रहे हैं। मैंने यहाँ की सामान्य बातें ही यहाँ रखी हैं। आज अपने जिला पंजीयक से पिछले दो वर्षों या अधिक वर्षों की तुलना में इस वर्ष में एक या दो महीनों में दर्ज ऋण के आँकड़े (पुनर्नवीकरण के सिवाय) माँगकर इस बात की पुष्टि कर सकते हैं।

१५. अफगान युद्ध के दौरान मुझे लगा कि हमारे देश का पूँजी बाजार इसका जीवंत प्रतिमान है। इसी समय, सर फ्रेडरिक रॉबर्ट्स का शेरपुर में गाझियों द्वारा घेराव किया गया, बाजार में अफरा-तफरी का माहौल व्याप्त हो गया और हमारे अधिकांश ऋणदाता बनारस से यहां अपना धन वापस लेने के लिए आ धमके। मैसर्स जिलैंड, आर्बथनॉट एंड कम्पनी ने एक तार देकर मुझे सर फ्रेडरिक रोबर्ट्स की जीत की सूचना दी और उन्हें वहाँ से तुरन्त बिखेर दिया गया।

१६. इन सज्जनों का यहाँ आना जाना निरंतर बना रहा। पूँजी बाजार के गिरते हुए प्रतिमान से मुझे यह समझने के लिए विवश होना पड़ा कि कुछ समय से इनकी शरारत के परिणाम स्वरूप ही यह स्थिति पैदा हुई है।

१७. प्रायः मैं बेतिया से बाहर नहीं जाता हूँ। मैं जब भी बाहर सारन, बनारस या मुजफ्फरपुर जिलों के किसी भाग के दौरे पर जाता भी हूं तो मैं पूरे के पूरे प्रयास करता हूँ कि मैं सब जगह लोगों की आम जिंदगी के बारे में उनके साथ घुलमिलकर मुक्त रूप से कुछ जानूँ।

१८. मैं नहीं मानता कि मेरे सूबे में षड़यंत्रों का बाजार गर्म है या फिर यहाँ के लोग सरकार का विरोध करने को कटिबद्ध हो गए हैं। लेकिन मैं इस बात को भी नहीं छिपा सकता कि यहाँ सर्वत्र असुरक्षा की भावना लोगों में व्याप्त है जो कि हमारी सरकार की विश्वसनीयता और उसके उद्देश्य के प्रति अविश्वास के भाव पैदा करती है। यहाँ उच्च तबके से लेकर निम्न तबके के लोगों के दिमाग में इस गलत धारणा का बोलबाला व्याप्त है। मुझे लगता है कि अब वे कुछ न कुछ उद्देश्यपूर्ण कार्य भी करने लगे हैं। बिहार में तथा उत्तर पश्चिमी सूबों में कुछ ऐसी धारणा लोगों में घर कर गई है कि सभी सरकारें विशुद्ध निहित स्वार्थों से प्रेरित होकर कार्य करती हैं। हमारा गैर जिम्मेदाराना लेखन, अपनी बात मनवाने के लिए हमारी धमकी देने की आदतें, भारत की सर्वाधिक स्वामिभक्त बिहार की प्रजा की निष्ठा को चौपट करने के प्रमुख कारक हैं। हम उनके साथ अपना संपर्क स्थापित करने से भी कट गए हैं।

१९. मैं नहीं मानता कि जनसंख्या का बड़ा भाग फिर भी बगावत करने को तैयार है या नमकहरामी पर उतर आया है। हमारे जैसे अत्यन्त शक्तिशाली शासकों के

प्रति विद्रोह की सफलता के लिए पूरे राष्ट्र के लोगों का बहुसंख्यक रूप में साथ चाहिए, या पूरे देश को एकजुट होना चाहिए। ऐसी स्थिति आज बिल्कुल नहीं है। इसके लिए युद्धों एवं कुशल नेताओं की भी आवश्यकता होती है।

२०. फिर भी, हमारे तीस वर्षों के शान्तिपूर्ण शासन में इस तरह से कुछ भी करने से पूर्व, अंतिम कदम उठाने से पूर्व उन्हें व्यूहरचना करनी होगी। हमने उनके भले के लिए क्या कुछ नहीं किया है।

२१. जब तक सरकार मुसलमानों के साथ छेड़े गए धार्मिक युद्ध में स्वयं प्रत्यक्ष रूप से नहीं जुड़ती तथा अपनी ओर उँगली उठाने का मौका नहीं देती - जैसा कि वह इस समय कर रही है, तो झगड़ों और अशान्तिपूर्ण स्थिति से तंग आकर उनके दिमाग स्वयं शान्ति की ओर अग्रसित होंगे। हाँ, यह बात अलग है कि लगातार लड़ाई छेड़े रहने से उन्हें स्वाभाविक रूप से नेता अवश्य मिल जाएँगे।

२२. अधिकांश हिन्दू इस आन्दोलन के साथ अपनी धार्मिक श्रद्धा के कारण जुड़े हैं। कई हिन्दुओं और मुसलमानों को अशान्ति एवं विधिहीनता पसंद है। लेकिन बहुत कम, जो इस आन्दोलन के असली नेता हैं, हमारी सरकार के प्रति अत्यन्त घृणाभाव से पीड़ित हैं। वे हमारे शासन को यहाँ से किसी भी तरह से उखाड़ फैंकने को कटिबद्ध हैं।

२३. मेरा मानना है कि आप पूरा पढ़कर इस पर गौर करेंगे तो मानेंगे कि मैंने इसमें सरकार के सम्बन्ध में कुछ प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास किया है। इस विषय पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। मेरी बात को तब तक समझना थोड़ा मुश्किल है जब तक आप यह न जान लें कि मेरे विचारों को प्रभावित करनेवाली शक्ति कौन सी है, मैं आपको किसी भी समय इनकी यथातथ्यता के सम्बन्ध में अवगत कराने के लिए तैयार हूँ।

२४. मैं जानता हूँ कि इस देश में समस्त धार्मिक विचार किसी न किसी तरह से कुछ निश्चित दृष्टिबिन्दुओं से कम अधिक रूप में प्रभावित हैं। जब किसी भी मत के केन्द्रबिन्दु पर लोगों की आस्था को छेडा जाता है तो लोगों के सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों में दरार पड़ना स्वाभाविक ही होता है।

२५. बिहार में धार्मिक आस्थाओं के दो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण केन्द्र गया एवं बनारस हैं। मेरे जिले के समस्त प्रभावशाली परिवारों के साथ गया की अपेक्षा बनारस के साथ मेरे अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। इसका कारण यह भी है कि हम दक्षिण में कुछ भी घटित होने की अपेक्षा बनारस एवं उत्तर पश्चिमी सूबों में घटित घटनाओं प्रत्यक्षरूप से प्रभावित होते हैं।

२६. जब कुछ वर्ष पूर्व राजा शिव प्रसाद को ईंग्लैंड भेजकर इस देश में गोहत्या पर रोक लगाने के लिए सरकार पर दबाव डालने का विचार बनारस में शुरू हुआ तो इस समग्र विषय पर लोगों की रुचि अत्यधिक बढ़ी।

२७. जब श्रीमन स्वामी इलाहाबाद सभा के अवैतनिक सचिव, प्रांतीय सभाओं को संगठित करने के लिए बेतिया में १८८८ में आए, तो लोगों का विश्वास जीतने के लिए उन्हें अधिक परिश्रम नहीं करना पडा। उनको यह कार्य करने के लिए अत्यन्त सुगम रास्ता मिल गया।

२८. पहली सभा वृज बंश मिश्र एवं अन्य सदस्यों ने मिलकर बनाई। इस सभा की सहायता से उन्होंने निधि प्राप्त की।

२९. जब महाराजा कोलकता गए तो इन लोगों के महाराजा के साथ जाने के कारण यहां अपना त्यागपत्र दे दिया। उनके स्थान पर मेरे सरिश्तदार, मुंशी महावीर प्रसाद को अध्यक्ष के रूप में तथा मेरे कार्यालय के लिपिक और अब मेरे तहसीलदार पण्डित सूरज नारायण को सचिव के रूप में और एक साहूकार हजारी मल को कोषाध्यक्ष के रूप में रखा गया।

३०. महाराजा बहादुर को इलाहाबाद में सामान्य निधि में २००० रू. का अंशदान देने के लिए राजी किया गया।

३१. उस समय मैं इंग्लेंड में था। लेकिन लौटने पर मैं इस आन्दोलन के सम्बन्ध में अत्यन्त आशंकित था। मैंने राजा शिव प्रसाद को तथा एक अन्य व्यक्ति को जो अब मृत है, इस विषय पर छानबीन करने के लिए विशेष रूप से लिखा। मुझे इससे अलग रहने तथा महाराजा को भी इससे अलग रहने के लिए चेताया गया।

३२. जो भी सूचना मुझे प्राप्त हुई उसे मैंने महाराजा को अग्रेषित किया। उन्होंने मुझे सूचित किया कि उन्होंने सुना है कि श्रीमन स्वामी कांग्रेस पार्टी के साथ जुड़े हुए हैं।

३३. केंद्रीय समिति के परिपत्र से सभा के उद्देश्य घोषित हुए, उसके नियमों एवं उपनियमों के माध्यम से इसके संगठन के प्रबंधन को सुनिश्चित किया गया। आपके पास इस सभा के नियमों एवं उपनियमों की प्रतिलिपि होगी ही। मैं यहाँ यथासंभव उसका संदर्भ प्रस्तुत करूँगा।

१. ये मात्र श्रीमन स्वामी द्वारा हस्ताक्षरित है। श्रीमन केवल एक सम्मानसूचक शब्द है, जैसे श्री, श्रीयुत या बाबू । श्री स्वामी दक्षिण भारत की एक जाति के हैं।

२. केंद्रीय समिति, इलाहाबाद के प्राधिकार से परिपत्र जारी किया गया है। उपनियम भी उन्हीं के द्वारा बनाए गए हैं, लेकिन उनमें किसी भी नाम का उल्लेख नहीं किया गया है। उसमें यह बिल्कुल भी पता नहीं चलता कि समिति में कौन कौन है। वास्तव में, मुझे लगता है कि इसमें शामिल सभी लोगोंनें अपनी पहचान छिपाने में सावधानी बरती है।

३. उपनियमों से हमें ज्ञात होता है कि सभा संगठित होने वाली है। लेकिन बड़ी ही चतुराई से यह तथ्य छिपाया गया है कि विभिन्न समितियाँ किस प्रकार अपनी कार्यवाही करेंगी, और जब भी संगठित करना होगा तब उन्हें क्या होगा।

४. उपनियमों से हमें इस बात का पता चलता है कि एकत्रित समस्त निधि केंद्रीय समिति के अधीन रहेगी। प्रांतीय समितियाँ भी स्वतंत्र रूप से कार्य न करके केंद्रीय समिति के अधीन रहेंगी।

३४. मैं इस बात का पता लगाने में पूर्णतः असमर्थ रहा कि तब तक श्रीमन स्वामी का आगमन बेतिया में हुआ था या नहीं। मुझे बताया गया कि कुछ समय पूर्व वे सरन में थे लेकिन उनके पास बहुत कम सक्रिय कार्यकर्ता थे। इस जिले में मेरे लोग उनके बारे में कुछ भी बताने से इन्कार करते हैं। लेकिन इतना अवश्य बताते हैं कि वे सरन में दो लोगों को जानते हैं जिनमें एक धोलब के भगवती चरण हैं तथा दूसरे धूलेस्सन के हंस स्वरूप स्वामी (कल्पित नाम) हैं। ये दोनों मुजफ्फरपुर से सेगोवली तक अत्यन्त सक्रिय बताए जाते हैं। संभवतः हमारे पडोसी जिले का कोई भी व्यक्ति इनके चम्पारन के अनुयायियों के नामों की जानकारी दे देगा।

३५. मेरा विश्वास है कि कस्बों में ही नियमित सभाओं की रचना हुई है। चंदा एकत्रित किया जाता है, निधि एकत्रित की जाती है और प्रचारकों को एक गाँव से दूसरे गाँव में भेजा जाता है ताकि वहाँ के लोग इस आन्दोलन के साथ जुड़ सकें। उन्हें उपदेश दिए जाते हैं, किसी भी अशान्ति के सम्बन्ध में उन्हें जानकारी दी जाती है और आन्दोलन में रुचि लेकर काम करने के लिए प्रेरित किया जाता है।

३६. गोरक्षिणी धर्मसिद्धांतो के बारे में व्यापक रूप से प्रसार करनेवाले लोगों में मुख्यरूप से साधु संन्यासी ही हैं। ये पूरे देश में घूम घूमकर लोगों को आन्दोलन के साथ जुड़ने के लिए प्रेरित करते हैं। दक्षिणी ब्राह्मण तथा उत्तर पश्चिमी भागों के ब्राह्मण भी एक गाँव से दूसरे गाँवों में जाकर बिना किसी ग्रंथ की सहायता के भी उपदेश देते हैं। इनमें उत्तर पश्चिमी भागों के ब्राह्मण उत्तर-पश्चिमी सूबों में अशान्ति फैलाने वाले नेताओं के गुणगान करते हैं और मुसलमानों के साथ मित्रता रखनेवाले लोगों को पाप

का भागी बननेवाले कहकर उन्हें उकसाते रहते हैं।

३७. मैंने अभी तक कहीं से भी यह नहीं सुना कि किसी स्थानीय सभा ने केंद्रीय सभा को कोई भी निधि भेजी हो। केंद्रीय सभा ने अब तक हमारे महाराजा से २००० रू. की मोटी रकम हाँसिल करके संतोष व्यक्त किया है। स्थानीय सभाओं की निधि पर उसका अब कोई नियंत्रण नहीं रहा है।

३८. उपदेशकों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए निधि की आवश्यकता पडने पर या अत्युत्साही लोग किसी भी मुसीबत में पड़ने पर स्थानीय निधि के पास सहायता प्राप्त करने के लिए विश्वास के साथ आवेदन प्रस्तुत करते हैं।

३९. नव सिद्धांतवादी लोगों में कायस्थ लोगों का दबदबा है। लोग इससे अच्छी तरह से जुड़ गए हैं।

४०. कभी यह प्रस्तावित हुआ था कि प्रत्येक हिन्दू अपने प्रत्येक दैनिक भोजन से एक निश्चित मात्रा में अंश निकाल कर एकत्रित करके उससे प्राप्त धन को सभा की सामान्य निधि में देगा। लेकिन उम्मीद के अनुरूप यह कार्य आगे नहीं बढ़ पाया है।

४१. मैं मानता हूँ कि ग्रामीण जनता की सद्भावनाएँ पूरी तरह से आन्दोलन के साथ हैं, फिर भी, सभी ग्रामवासी इसके साथ जुड़ने के लिए वचनबद्ध नहीं हैं। लेकिन यदि कोई व्यक्ति इसके कारण किसी मुसीबत में फँस जाता है तो उस पर होने वाले खर्च में हाथ बँटाने के प्रयत्न सब करते हैं।

४२. सरकार इस आन्दोलन के दूतों एवं उनके सूत्रधारों के नाम जानने के लिए इच्छुक है। इसके बारे में आपको सूचना दे पाना असंभव है। वे हमारे पास कल्पित नाम से आते हैं या फिर लोग उनके नाम पूछते ही नहीं हैं। वे जानना भी चाहें तो उन्हें बताते नहीं हैं। जहाँ तक इनके सूत्रधारों के बारे में जानकारी प्राप्त करने का प्रश्न है, प्रत्येक हिन्दू ऐसा अवश्य करना चाहेगा। बैकुंठपुर के पोवारीजी इन भागों में आन्दोलन के मुख्य प्रवर्तक हैं। सभी बेतियावासी उनका तथा उनके अनुयायियों का किसी भी समय आतिथ्य करके गौरव अनुभव करेंगे।

४३. लोकमानस को असंतुलित करने के उद्देश्य से चित्रों एवं पुस्तिकाओं का वितरण खूब किया जाता है। लेकिन मेरा मानना है कि इससे उतनी अधिक हानि नहीं पहुंचती जितनी अन्य प्रकार से होती है।

४४. लोगों की भावानओं के साथ कई तरह से खिलवाड़ किया जाता है। जब भी कहीं भी अशान्ति व्याप्त होती है तो उसके समाचार देश में [illegible] दिए जाते हैं। प्रायः लोग अशान्ति पैदा होनेवाले स्थान के सम्बन्ध में ठी[illegible] नहीं ५

पाते। वे इस स्थान के बारे में जानते तक नहीं हैं। बिना जाने केवल अनुमान से वे मेले में एकत्रित होने लगते हैं।

४५. मुजफ्फरपुर, दरभंगा : बसंतपुर के दंगे भड़कने के कुछ दिन पूर्व, हमने उस विषय में लगातार अफवाहें सुनीं, बाद में हमने कभी कहीं दंगा भड़कने की अफवाह सुनी तो कभी किसी दूसरी जगह। ये सभी उसी स्थान को निर्देशित करती थीं जहाँ वास्तव में दंगा हुआ। बर्रीरिया मामले से पूर्व पुलिस अधीक्षक ने मुझे बताया कि उन्होंने सुना है कि इनमें से एक के बारे में यहाँ से अत्यन्त समीप घटने की बात की गई थी तथा एक की गत शुक्रवार को मोतिहारी में प्रत्याशित रूप से घटित होने की बात की गई थी लेकिन प्राधिकारियों ने उसे सफल नहीं होने दिया। अब लोग लगातार बातें करते दिखते हैं कि सेगोवली के निकट घटित हुई है। अतः मुझे बिल्कुल भी आश्चर्य नहीं होगा यदि वहाँ शीघ्र ही कोई घटना वास्तव में घटित हो जाए।

४६. मुझे यह भी बताया गया कि अशान्ति के इन प्रयासों के पीछे नागा और पौवारी साधु संन्यासियों का हाथ होता है। इस में कितनी सचाई है, मैं नहीं जानता। मुझे बताया गया कि मोतिहारी में नागा दिखाई दिए थे। इससे यह सिद्ध होता है (यदि सच हैं तो) कि ये सब पूर्वनियोजित कार्य हैं। जहाँ भी वे जाते हैं, शरारत करने से बाज नहीं आते।

४७. इनमें जिन प्रख्यात व्यक्तियों ने भाग लिया समग्र देश में उनकी प्रशंसा की गई। जिसने भी शान्ति की दिशा में, या मुसलमानों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध बनाने का प्रयास किया उस की निंदा की गई। लोग उनके साथ भाषा का व्यवहार भी इसी मानसिकता से प्रेरित होकर करने लगे। पत्र में उन्हें प्रणाम न लिखने तथा उनके विवाह समारोहों में न जाने के लिए चेतावनी भी दी गई और उसका पालन न करने पर जाति से बहिष्कृत करने की धमकियाँ दी गईं। लोगों को कहा गया कि वे ताजिया के जुलूस में शामिल न हों और यदि वे होते हैं तो उन पर भारी जुर्माना किया जाएगा। पत्र भेजे गए जिनमें लिखा गया कि कसाई देश में फैले हुए हैं तथा गायें विलाप कर रही हैं। गाय को कष्टों से मुक्ति दिलाने के लिए पूरे देश में गोविलाप की बात कही गई।

४८. मुसलमानों के ईद के त्यौहार पर गोहत्या रोकने हेतु उनके द्वारा सबसे पहले प्रयास किए गए, उनका वर्तमान समय का प्रयास - हमारी सेनाओं के लिए गोमाँस की आपूर्ति रोकना - अत्यन्त महत्वाकांक्षी प्रयास है।

४९. लोगों का गुस्सा इस बात से और अधिक भड़क रहा है, हिन्दुओं के द्वारा मस्जिदें अपवित्र करने के प्रयास किए जा रहे हैं और हिन्दुओ के मंदिरों में मुसलमानों

के द्वारा हड्डियाँ फैंककर उन्हें अपवित्र किया जा रहा है। उन्हें यह कहकर और अधिक प्रोत्साहित किया जा रहा है कि हिन्दु पुलिस उनके साथ है। मुसलमानों को यह कहकर चेतावनी दी जा रही है कि सरकार बहुत कमजोर है, अतः उनकी रक्षा नहीं कर पाएगी। साथ ही, हाल ही में, नेपाल सरकार द्वारा हिन्दुओं की सहायता के लिए लाए गए दबाव की रिपोर्ट से भी उन्हें अवगत कराया जा रहा है। उन्हें तो यहाँ तक कहा जा रहा है कि बड़ी संख्या में साधु संन्यासी इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए नेपाल जा रहे हैं।

५०. मुसलमानों में स्थिति बिल्कुल ही अलग है। वे उन लोगों के साथ रह रहे हैं। अतः वे क्यों अशान्ति के प्रति प्रयास करेंगे। वास्तव में, गत शुक्रवार को कुछ लोग मोतिहारी से लौटते हुए यह कहते हुए खेद व्यक्त करते सुने गए कि किसी ने ढेला भी नहीं फैंका था। लेकिन जब तक वे यहाँ अल्पसंख्यक हैं उन्हें अपनी सतर्कता समितियाँ बनानी होंगी जो कि उन्हें सूचना दे सकें कि वहाँ क्या घटित हो रहा है तथा यदि संभव हो तो यूरोपीय के साथ संपर्क भी बनाए रखें।

सरकार द्वारा उठाए जानेवाले कदमों के सम्बन्ध में

५१. सरकार जानना चाहती है कि मुख्य मुसलमानों एवं हिन्दुओं से अपील करने से क्या वे पारस्परिक सहिष्णुता का परिचय नहीं दे सकते। यदि उनके प्रयास केवल मुसलमानों द्वारा की जानेवाली पशुहत्या के विरोध में हैं तो उनके पक्षमें कुछ किया भी जा सकता है लेकिन विभिन्न गावों या कस्बों के समुदायों के अग्रणी लोगों को अपील करने से क्या फायदा जब वे हमारी सेना रसद विभाग के (जैसे दीनापुर आदि) विभिन्न सैन्य केंद्रो के लिए मवेशी खरीद रहे होते हैं उन्हीं पर आक्रमण करते हैं।

५२. महामहिम के भाषण के देशी भाषा में प्रकाशन से इस दिशा में सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। मुसलमानों में उनकी रक्षा के प्रति नया विश्वास जगा है तथा हिन्दुओं को चेतावनी दी गई है। इस प्रभाव में खलल न डालें।

५३. हर कसाई को पशु हत्या के लिए लाइसेंस लेने के लिए बाध्य करें। इसका भी आग्रह रखें कि वह कहाँ पशु हत्या करेगा। निश्चित स्थान के सिवाय उन्हें कहीं भी पशु हत्या करने की अनुमति न दें। मैं तो इससे भी आगे कहूँगा कि लाइसेंस के सिवाय किसी को भी पशु हत्या के लिए मवेशी खरीदने की अनुमति न दें। यद्यपि मैं हिन्दू नहीं हूँ, फिर भी, मैं किसी भी कसाई को अपना बछड़ा या बैल यह जानते

हुए बिल्कुल भी नहीं बेचूँगा कि वह उसकी हत्या करेगा। फिर हिन्दू ऐसा ही सोचकर अपनी मवेशी कसाइयों के हाथ कैसे बेच सकते हैं।

५४. ऐसे लाइसेंस विशेष अवसरों पर बिल्कुल न दें, वर्ष में एक बार ही दें।

५५. उनके व्यवसायों को यथासम्भव संरक्षण दें, और उनके व्यवसाय के स्थान से सड़क पर मवेशी लाने में भी संरक्षण दें।

५६. केंद्रीय समिति को समाप्त करने की शुरुआत से लेकर मुख्य षड्यंत्रकारियों को गिरफ्तार करें।

५७. जब आप भीड़ पर काबू पाने के लिए अपने पुलिस बल को गोली चलाने का हुकम दें तो खाली कारतूसों का प्रयोग करने की बजाय छरों का उपयोग करें, नीचे की ओर गोली चलाएँ तथा जो भी पहला पुलिस का सिपाही हवा में गोली चलाए उसे फाँसी पर लटका दें।

५८. और सभी साधु संन्यासियों को उनके मठों या बस्तियों में रहने के लिए कहें, उन्हें एक साथ बड़ी संख्या में देश में जाने की अनुमति न दें।

विशेष सूचना : हम अंग्रेज लोग अत्यन्त भाग्यशाली प्रजाति हैं। ईश्वर का आभार कि उसने उन्हें जिस काम के लिए भेजा है, उसे हम क्रियान्वित कर रहे हैं।

पटना मण्डल के आयुक्त को एच.जे.एस.कॉटन का पत्र

९१२ जे.डी.

प्रेषकः एच.जे.एस. सी.एस.आई., बंगाल सरकार के मुख्य सचिव।
सेवा में, आयुक्त पटना मण्डल।
कोलकता, ८ नवम्बर १८९३
महोदय,

आपको सूचना देते हुए मुझे गौरव की अनुभूति हो रही है कि पशुहत्या सम्बन्धी आन्दोलन विषयक आपकी २७ अक्टूबर १८९३ की रिपोर्ट को कार्यकारी उपराज्यपाल ने अत्यन्त सावधानीपूर्वक पढ़ा है। वे इससे सहमत हैं। उन्होंने मुझे आपके द्वारा इसे तैयार करने में किए गए श्रम एवं सावधानी के लिए धन्यवाद व्यक्त करने के लिए कहा है। रिपोर्ट के साथ संलग्नक कागजात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी हैं।

२. इन कागजातों का अवलोकन करने के उपरांत महामहिम का अभिप्राय इस

प्रकार बना है। प्रथम यह कि यह आन्दोलन बिहार में एक साथ अचानक आरम्भ नहीं हुआ बल्कि इसे सूबे के बाहर के प्रचारकों द्वारा वहाँ आरम्भ किया गया। इन प्रचारकों ने मेलों और बाजारों में भाषण देकर लोगों को उकसाकर अपना कार्य किया। तदुपरांत उन्होंने कस्बों में और गाँवों में सभाओं का विस्तारकार्य करने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया। प्रथम दृष्टया इन सभाओं के उद्देश्य बिल्कुल भी आपत्तिजनक नहीं हैं, साथ ही, कई सभाएँ अपने मूल विशुद्ध धार्मिक उद्देश्यों को लेकर ही आगे बढ़ रही हैं, लेकिन इनमें बहुत सारी सभाएँ अपने मूल उद्देश्यों से भटक गई हैं यह कार्य मात्र बाहरी तत्त्वों के द्वारा ही नहीं किया जा रहा है बल्कि स्थानीय लोग भी इसमें बढ़चढ़कर अपनी भूमिका निभा रहे हैं। ये सभाओं के मूल उद्देश्यों से च्युत हो गए हैं। पशु हत्या की स्थिति पैदा होने पर ये लोगों को भड़काकर उनके बीच विष के बीज बोते हैं और उनमें द्वेषभाव पैदा करते हैं। ये प्रचारक तथा उनके संघ सदस्य पशु हत्या निषेध के सांसारिक रूप को आध्यात्मिक कट्टरपन के रूप में लागू करते हैं। मुसलमानों में भी कुछ बस्तियों में प्रतिक्रिया स्वरूप आन्दोलन किए जाते हैं। अंततः मुस्लिम यत्र तत्र हिन्दुओं की धार्मिक भावानाओं को भड़काते हैं।

३. महामहिम की दूसरी राय यह बनी है कि स्थानीय अधिकारी यद्यपि इन आन्दोलनों के अस्तित्व के सम्बन्ध में आरम्भ से जानकारी रखते हैं, फिर भी, वे इनके सम्बन्ध में या इनके प्रचारकों के चरित्र के सम्बन्ध में जानकारी एकत्रित करने की कोशिश नहीं करते और न कुछ सक्रिय कदम ही उठाते हैं। साथ ही, आन्दोलन को अवैध रूप से विकसित होने से रोकते भी नहीं है और न प्रतिबंधित करने के लिए ही प्रभावी कदम उठाते हैं। उदाहरण के लिए, सरन रिपोर्ट में कहा गया है कि गत मई के महीने में जिला प्राधिकारियों के प्रभावी संपर्क पर्यवेक्षण के बिना सरन जिले में बलिया के एक प्रख्यात प्रचारक ने अपने २०० से ३०० अनुयायियों के साथ प्रवेश किया और उपदेश दिए। दरभंगा रिपोर्ट में भी यह कहा गया है कि वहाँ भडकाऊ सामग्री वाली पत्रिकाएँ वितरित की गईं लेकिन मजिस्ट्रेट के निरीक्षण के लिए उसकी वह प्रतिलिपि भी प्राप्त नहीं की गई। पुलिस अधिकारी भी इन उत्तेजनाओं के परिणाम स्वरूप फैलने वाली हिंसा के सम्बन्ध में अवगत थे, मवेशी को भी जोर जबर्दस्ती से मुक्त कराया गया परन्तु इसकी रिपोर्ट मजिस्ट्रेट तक को भी नहीं दी गई।

४. इन कागजों के अवलोकन करने से महामहिम की अंतिम जो धारणा बनी है वह यह कि इस आन्दोलन में गोरक्षिणी सभाओं के साथ स्थानीय अदालतों, विद्यालयों और डाकघरों के सरकारी कर्मचारियों का मुख्य रूप से हाथ है। सरकार के कर्मचारियों

का वास्तव में इस आन्दोलन को फैलाने तथा अपने विचारों को थोपने और अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये जिला प्राधिकारियों की बिना किसी भी तरह की रोकटोक के उपयोग किया जा रहा है।

५. दरभंगा के जिलाधीश श्री विलियम्सने जिला प्रशासन को इस निष्क्रियता के सम्बन्ध में खुलासा माँगने का सुझाव दिया है। क्योंकि इस आन्दोलन को सरकार के उच्च पदस्थ बहुत से लोगों का समर्थन प्राप्त है। अतः विचार किया गया कि इस आन्दोलन में हस्तक्षेप नहीं किया जाए। इसके और अधिक आपत्तिजनक रूप से विकसित होने पर भी हस्तक्षेप नहीं किया जाए। व्यावहारिक रूप से जिला अधिकारियों ने इस आन्दोलन के अपूर्ण चरित्र के सम्बन्ध में विशेष शाखा कार्यालय द्वारा कुछ कदम उठाए हैं, बहुत कम दंगाइयों को दंडित किया है तथा कुछ अशांत स्थानीय विस्तारों में अतिरिक्त पुलिस बल भी लगाया है।

६. जिस तरह से यह आन्दोलन विकसित हुआ है, दंगे भड़के हैं, रक्तपात हुआ है, जिला अधिकारी का रवैया अधिक समय तक चल नहीं सकता । इस विषय पर धार्मिक भावनाएँ कुछ भी हों लेकिन बहुत से मामलों में जिस पद्धति का उपयोग किया गया वह अवैध है। अतः जिला अधिकारी सभाओं के कार्य में हस्तक्षेप न करें लेकिन वे उन्हें उनके मूल उद्देश्यों पर चलकर निर्दोष भाव से कानून का पालन करते हुए अपनी सीमा में रहने को कहें। लोगों को भड़काने के लिए मना करें और ऐसा कुछ भी न करने दें जिससे लोगों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचती हो या फिर वैमनस्य बढ़ता हो। वे कितना ही प्रगति पथ पर अग्रसित क्यों न हों लेकिन उनका आगे चौकसी पूर्वक निरीक्षण किया जाए। हिन्दू आन्दोलनकारियों की तरह ही मुस्लिम आन्दोलनकारियों को भी आड़े हाथों लिया जाए। इसके लिए महामाहिम निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। साथ ही चाहते हैं कि जिला कार्यकारी प्रशासन इन पर निरंतर ध्यान दें।

७. १. जैसा कि दर्शाया गया है कि पशु मेलों एवं बाजारों को भड़काने वाले प्रचारकों के द्वारा अभियान हेतु स्थान चयन किया जाता है अतः ऐसे स्थानों पर समुचित संख्या में पुलिसबल लगाया जाना चाहिए ताकि शान्ति एवं व्यवस्था बरकरार रखी जा सके। यदि किसी वक्ता की भाषा उत्तेजना पैदा करनेवाली हो या शान्ति का भंग करनेवाली हो तो उसके व्याख्यान को रिकॉर्ड किया जाए और आवश्यक हो तो फौजदारी कार्यवाही कोड के अध्याय-५ एवं १३ तथा १८६१ के अधिनियम-५ की धारा २३ के तहत पुलिस अधिकारी कार्रवाई कर और यदि अपराध के निवारण या

अपराध-दुष्प्रेरण के लिए आवश्यक हो तो श्रोताओं को बिखेरने या किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार करने हेतु कदम उठाएँ।

२. जैसा कि दर्शाया गया है कि कुछ परिभ्रामी प्रचारक गाँव गाँव में घूम घूमकर भाषणबाजी करके लोगों को भड़काते फिरते हैं। तथा लोकशान्ति भंग करते हैं। अतः जो भी व्यक्ति इस तरह की उत्तेजक बातें करे या जो इसका संतोषजनक उत्तर न दे पाएँ उनके खिलाफ फौजदारी कार्यवाही कोड के अध्याय-८ के अंतर्गत कार्रवाई की जाए।

३. जैसा कि उल्लिखित किया गया है कि कुछ सभाओं ने प्रस्ताव पारित करके प्रत्यक्ष रूप से समुदायगत वैमनस्य की स्थिति पैदा की है तथा आम शान्ति भंग हुई है अतः मजिस्ट्रेटों को उन्हें सूचित करके उनके अस्तित्व, उद्देश्य, उनकी शाखा-प्रशाखाओं तथा ऐसी समस्त सभाओं की सदस्यता तथा उनकी कार्यपद्धति के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। यदि इन सभाओं के कार्यकलापों से किसी भी तरह के दुष्कृत्यों के परिमाणवाले संकेत मिले तो मजिस्ट्रेट को उन सभाओं के पदाधिकारियों के समक्ष विरोध प्रस्तुत करना चाहिए तथा उनसे असंतोषपूर्ण स्थिति पैदा करने के समस्त कारकों को दूर करने के लिए कहना चाहिए। साथ ही, दोषी पाए जानेवाले एजेंटों को बर्खास्त किया जाए। इस तरह के प्रतिवादों के असरकारी परिणाम न मिलने पर ऐसी सभाओं के खिलाफ फौजदारी कार्यवाही कोड की धारा १४४ के तहत कार्रवाई करनी चाहिए या फिर दंड संहिता के अध्याय-२२ के तहत अपराधों के सम्बन्ध में कार्रवाई की जानी चाहिए। ऐसा भी माना जाता है कि कुछ मामलों में बाह्य तत्त्वों (मारवाड़ी लोग तथा अन्य) द्वारा प्रमुख रूप से उत्तेजना फैलाकर अशान्ति पैदा की जाती है अतः इसको वैकल्पिक कार्यवाही के लिए १८६४ के अधिनियम ३ की धारा ३ की ओर ध्यान आकर्षित किया जाता है कि जिला अधिकारी ऐसे किसी भी व्यक्ति को ब्रिटिश अधिकार वाले क्षेत्र से बाहर खदेड़ सकते हैं जो शान्ति भंग करता है या किसी भी तरह की अशान्तिपूर्ण स्थिति पैदा करने के लिए कारक बनता है।

४. आपराधिक अभित्रास के मामले में या जब लोगों को अवैध रूप से जोरजबर्दस्ती अवपीड़ित किया जाए या वे मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत प्रस्तुत करने में भय का अनुभव करते हों तो पुलिस को १८६१ के अधिनियम की २३ एवं २४ वीं धाराओं के द्वारा दी गई शक्ति का उपयोग करते हुए अपराधियों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई करनी चाहिए।

५. इन दस्तावेजों में यह भी प्रदर्शित किया गया है कि इन सभाओं द्वारा

समर्थित प्रचारक उत्तेजक भाषा का उपयोग करते हैं तथा इन सभाओं के सदस्य सरकारी नौकर भी हैं। यह भी बताया गया है कि सरकारी नौकर कई बार उन्हें इस कार्य में लगाते हैं। कार्यकारी उप राज्यपाल इन उत्तेजनात्मक चरित्रवाली सभाओं के साथ सरकारी नौकरों के जुड़ने की भर्त्सना करते हैं। इसके पश्चात् कोई भी सरकारी अधिकारी इन सभाओं या परिषदों के साथ जुड़ा पाया गया जो उत्तेजनात्मक भाषा का उपयोग करके या लोगों की भावनाओं को भड़काकर उन्हें गुमराह करते हैं तो उसे तुरन्त अपने सभा के साथ सम्बन्ध विच्छेद करने होंगे। लोक भावना की विद्यमान वर्तमान स्थिति को देखते हुए जिला अधिकारी जहाँ भी आवश्यक समझें, इन्हें रोकने के लिए प्रदत्त शक्ति का उपयोग करें। किसी भी अधिकारी का इन सभाओं के साथ सम्बन्ध हो जो लोकशान्ति भंग करती हो, उनके खिलाफ कार्रवाई करनी चाहिए, क्योंकि सभाओं के साथ उनके इस प्रकार के सम्बन्ध होने से उनकी लोकसेवक के रूप में कार्य करने की उपयोगिता गम्भीर रूप से अप्रभावी हो जाती है।

८. इन आरंभिक निर्देशों से आपको प्रतीत होगा कि ये इस मामले में किसी भी विषम प्रकार की स्थिति उपस्थित नहीं करते। इनमें निहित आशय यह है कि इससे जिलों के इससे सम्बन्धित कार्य में विशेष ऊर्जा प्राप्त होगी एवं गतिविधि भी बढ़ेगी। महामहिम का जिला अधिकारियों पर पूर्ण विश्वास है। जिनका कर्मचारीवर्ग पूरी तरह से इस कार्य में दत्तचित्त होकर इस प्रकार की गतिविधि पर विवेकपूर्ण रूप से नियंत्रण करने में लगा हुआ है तथा उनके श्रेष्ठ एवं सर्वाधिक विश्वासपात्र अधीनस्थ अधिकारी इस कार्य में तथा निर्णय लेने में अपने कर्तव्य का पूरी तरह से निर्वाह कर रहे है।

९. सरकारी राजपत्र के प्रथम भाग में प्रकाशित पटना मण्डल की विगत प्रशासन रिपोर्ट लाए गए प्रस्ताव के सम्बन्ध में की गई टिप्पणियों से आप महामहिम ने भू स्वामियों पर इसकी जवाबदारी डालने की बात उनकी स्थिति के अनुसार कहकर इस ओर पूरा ध्यान दिया है। अतः उम्मीद है कि जिला अधिकारी अपने दौरों में इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मसले को नजरंदाज नहीं करेंगे। इसी प्रस्ताव में यह भी कहा गया है कि बिहार के हिन्दुओं को इस सम्बन्ध में सरकार का पूरा समर्थन रहेगा कि वैध प्रयासों के माध्यम से गैर हिन्दुओं द्वारा पशु हत्या रिवाजी तौर की सीमा में ही प्रतिबंधित की जाए। यदि कोई भी व्यक्ति कानून की सीमा का उल्लंघन करता है तो प्रथा चाहे कुछ भी हो, पशु हत्या नहीं होने दी जाएगी तथा हिन्दुओं की भावना का पूरा ख्याल रखा जाएगा। जिला अधिकारी इन सिद्धांतों के पालन में किसी भी तरह की कोई ढील न दें। जब भी किसी भी गाँव में पशुहत्या किए जाने की रिवाजी तौर पर

सूचना मिले या पशुहत्या पर आपत्ति दर्ज की जाए तो उन्हें प्रथा एवं मामले की आवश्यकतानुसार तुरन्त उपयुक्त संभाषित प्रबंध करने चाहिए। जहाँ भी पशु हत्या की जाए ऐसे किसी भी स्थान पर प्रभावी रूप से व्यवस्था करके फौजदारी कार्यवाही संहिता के अध्याय-११ के तहत या नगरपालिका कानून के तहत कार्रवाई करनी चाहिए।

१०. इस आन्दोलन के सम्बन्ध में जिला अधिकारियों द्वारा इन निर्देशों को कानूनी तौर पर अब लागू करके समुचित प्रभावी परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। महामहिम की टिप्पणियाँ हिन्दू आन्दोलनकारियों एवं प्रचारकों की भाँति ही मुसलमानों पर भी लागू है। उम्मीद है कि विद्यमान उत्तेजनापूर्ण स्थिति पर काबू पाया जा सकेगा। विशेषतः कार्यकारी उपराज्यपाल महोदय को अवैध अवपीड़न एवं दंगों की संभावित उत्तेजना को समाप्त करने हेतु इनसे अत्यन्त प्रभावी परिणाम प्राप्त होने की आशा है। आपके विचाराधीन पत्र के सम्बन्ध में आपने अशान्ति पर काबू पाने के लिए अतिरिक्त पुलिस बल तैनात करने हेतु अंतिम उपाय सुझाया है। यह निस्संदेह रूप से शान्ति प्रस्थापित करने की दिशा में प्रभावी प्रयास है लेकिन आपात् स्थिति पर काबू पाने की सामान्य जिला कार्यपालक शक्ति की असमर्थता की स्थिति इसे लागू करने में आडे आती है। यद्यपि आवश्यकता पड़ने पर एक उपाय के रूप में इसका सहारा भी लिया जाना चाहिए लेकिन आम शान्ति बनाए रखने के लिए इसका उपयोग मुख्य उपाय के रूप में नहीं होना चाहिए।

सादर

आपका आज्ञाकारी

एच.जे.एस.कॉटन

बंगाल सरकार के मुख्य सचिव

डब्ल्यू.एम.डी.सी.

सं. ५३७८ सी-३४०

१४-११-९३

भारत सरकार के गृह विभाग को एच. जे. एस. कॉटन का पत्र

सं. ४६५८ जे

प्रेषक : एच.जे.एस.कॉटन, सी.एस.आई., बंगाल सरकार के मुख्य सचिव

सेवा में, सचिव, भारत सरकार, गृह विभाग

कोलकता, ११ नवम्बर १८९३, न्यायिक

महोदय,

पटना मण्डल में पशुहत्या विरोधी आन्दोलन से सम्बन्धित पार्श्व टिप्पणीवाला दस्तावेज ७ भारत सरकार की सूचना हेतु प्रस्तुत करते हुए निवेदन है कि पत्राचार में उल्लिखित मुद्दा विद्यमान कानून के तहत नहीं आता। अतः कार्यकारी उपराज्यपाल का मानना है कि इन्हें पटना के आयुक्त के पत्रानुसार निपटाया जाए। पत्र पर परामर्श लिया गया तथा माननीय महाअधिवक्ता की सहमति प्राप्त हो गई है। विद्यमान कानून को और अधिक सुदृढ़ बनाने के सम्बन्ध में मेरे २८ अक्टूबर १८९३ के पत्र सं. ८४९ जे.डी. पर पृथक् रूप से विचार किया गया है।

२. साथ ही, श्री गिबन के पर्यवेक्षण में स्थिति के सम्बन्ध में व्यक्त निराशावादी दृष्टिकोण के समान सर मैकडोनैल के विचार बिल्कुल नहीं हैं। उसे पटना के आयुक्त से प्राप्त पत्र को संलग्नक के रूप में प्रेषित किया जा रहा है।

सादर,

आपका सर्वाधिक विनीत आज्ञाकारी सेवक

एच.जे.एस.कॉटन

मुख्य सचिव, बंगाल सरकार

विभाग ४

विशिष्ट महानुभावो के मंतव्य

११. ब्रिटिश साम्राज्ञी रानी विक्टोरिया

वायसराय लॉर्ड लैंस्डाउन को (८-१२-१८९३)

१२. पशुहत्या विरोधी आन्दोलन विषयक

वायसराय लॉर्ड लैंस्डाउन का कार्यवृत्त

१३. गो विषयक महात्मा गांधी के भाषण (सारांश)

(१९१७-१९२०)

११. ब्रिटिश साम्राज्ञी रानी विक्टोरिया

वायसराय लॉर्ड लैंस्डाउन को (८-१२-१८९३)

महारानी ने गोहत्या आन्दोलन विषयक वायसरॉय के भाषण की अत्यन्त तारीफ की है। वे समुचित रूप से सन्तुलित दृष्टिकोण बनाए रखने की हिमायती हैं। वे मानती हैं कि मुसलमानों को हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक संरक्षण देने की आवश्यकता है क्योंकि वे अधिक स्वामिभक्त रहे हैं। मुसलमानों द्वारा की जाने वाली गोहत्या तो इस आन्दोलन का बहाना मात्र है, वास्तवमें यह हमारे खिलाफ एक सोची समझी साजिश है क्योंकि हम अपनी सेनाओं आदि के लिए मुसलमानों की अपेक्षा अधिक गोहत्या करते हैं। फिर भी, यदि (जैसा कि महारानी साम्राज्ञी ने वायसरॉय द्वारा उन्हें लिखे जाने के उत्तर में सुझाव दिया है) दोनों धर्मों के प्रभावी एवं महत्त्वपूर्ण लोग इस तरह की घटनाओं की पुनरावृत्ति न होने देने के लिए नियम बनाकर उनका सख्ती से पालन कराएँ तो (आशा है कि) इस तरह की भीषण स्थिति से बचा जा सकेगा।

१२. पशुहत्या विरोधी आन्दोलन विषयक वायसराय लॉर्ड लैंस्डाउन का कार्यवृत्त

१. यदि आरम्भ से ही इसके उग्र स्वरूप को दबाया जाता या इस आन्दोलन को नियंत्रित करने हेतु प्रभावी कदम उठाए जाते तो यह शायद यह रूप नहीं ले पाता क्योंकि इसके सम्बन्ध में आरम्भ से ही मेरी राय बिल्कुल अलग ही रही है। मैं ने कहा भी है कि यह सब हमारे खिलाफ सोची समझी साजिश का ही अंग है जिसके खतरे भी हैं। इसके विपरीत मुझे शंका है कि बगावत के समय से ही किसी भी आन्दोलन के प्रति भारत सरकार का ध्यान बरबस आकृष्ट हुआ है। बार बार ऐसी शरारतें होती रही हैं। इससे खतरे का प्रभाव बढ़ता है। इस आन्दोलन ने भारतीय समुदाय से समग्रतः द्रोही तत्त्वों को एकजुट करके बाहर निकाला है। इस आन्दोलन का उन्हें व्यापक समर्थन प्राप्त है। अराजक तत्त्वों को इससे पहले इतना अधिक समर्थन किसी भी अन्य स्रोत से प्राप्त नहीं हुआ है। इस मामले की आयरलेंड के मामले से काफी कुछ समानता है। उसकी तुलना में स्वराज्य आन्दोलन शक्तिहीन ही है जबकि इसके समर्थक अपनी माँगें राजनीतिक एवं संवैधानिक सुधारों तक सीमित रखते हैं। अतः मुझे विश्वास है कि भारत में कोई विशुद्ध राजनीतिक आन्दोलन हानिकर नहीं हो सकेगा क्योंकि उनके आन्दोलन में अर्द्धशिक्षित वर्गों की व्यर्थ राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं के सिवाय कुछ भी होता नहीं है। उनमें विधायी परिषदों के पुनर्गठनगत सुधारों या शस्त्र अधिनियम में संशोधन या फिर न्यायपालिका के कार्यपालिका से अलग करने की माँग के सिवाय और अधिक कुछ होता नहीं है। लेकिन, जैसा कि आयरलेंड में घटित हुआ है, वहाँ स्वराज्य आन्दोलन यथार्थतः विकट स्थिति में उस समय पहुँच गया जब श्री पनैल की दूरदर्शिता ने इसे कृषि सम्बन्धी प्रश्न के साथ जोड़ दिया और परिणाम स्वरूप प्रत्येक आयरलैंडवासी किसान की स्वराज्य आन्दोलन के प्रति भौतिक रूप से रुचि बढ़ गई। इसी तरह से भारत के असंतोष एवं घबराहट के स्वर की अभिव्यक्ति

कांग्रेस-आन्दोलन में तथा अन्य राजनीतिक घटकों के माध्यम से हुई है। इससे मुझे भय है कि यह और अधिक खतरनाक सिद्ध हो सकता है क्योंकि शिक्षित हिन्दुओं को सामान्य आधार प्राप्त हो गया है। अनभिज्ञ जनसमुदाय भी इसमें शामिल हुआ है जो उनकी ताकत में अभिवृद्धि करेगा।

२. अतः घृणाभाव से पैदा हुए इस खतरे को समाप्त करने के लिए किसी भी तरह से किसी भी साधन का उपयोग करना होगा। लेकिन मेरी यह बलवती धारणा है कि यदि हमने इसे हड़बड़ी में या बिना सोचे-समझे दबाया तो यह और अधिक खतरनाक मोड़ ले लेगा। हमारी कार्रवाई से इस आन्दोलन में नवीन चेतना का संचार होगा। यदि हम भयभीत होकर एक इंच भी तटस्थतापूर्ण व्यवहार से पीछे हटे तो भारत सरकार अब तक के समस्त प्रश्नों के समाधान ढूंढने के प्रयास कर रही है, उन पर असर पडेगा।

३. जैसा कि सर एंटनी मैकडोनैल ने संकेत दिया है (देखें बंगाल सरकार के २८ अक्टूबर के पत्र का अनुच्छेद २) हमें ध्यान में रखना चाहिये कि हमें केवल अभी पैदा हुई समस्या से निपटना नहीं है। यह समस्या ऐसी है जिसके मूल बहुत प्राचीन परम्परा में हैं। कुछ प्राचीन हिन्दुत्व के पुनर्जागरण से, कुछ शिक्षित हिन्दुओं में व्याप्त राजकीय अस्वस्थता से, कुछ रेल आदि की सुविधा न होने पर जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती इतनी प्रभावी लोगों की सम्पर्क करने की और संगठित हो जाने की क्षमता से आज वह अत्यन्त पराकाष्ठा पर पहुंची हुई है। हमारा पाला उससे पडा है।

४. स्थिति इस समय और अधिक विकट रूप इसलिए धारण कर गई है कि यह आन्दोलन प्रथम दृष्टया वैध एवं अनिन्द्य है। इस समस्या को सर डेनिस फिट्जपैट्रिक के प्रस्ताव में (इस नोट का अनुच्छेद-९ देखिए) और अधिक विस्तारपूर्वक उठाया गया है। गोहत्या विषयक इस संगठित आन्दोलन को रोकने के उद्देश्य से उपाय सुझाए गए हैं। यदि यह आपराधिक अभित्रास से अल्पजीवी होकर समाप्त हो जाता है, साथ ही, पहले की तरह लोगों को शान्तिपूर्ण ढंग से सभाओं को आयोजित करने की अनुमति दी जाती है, गोशालाओं के लिए धन एकत्रित करने दिया जाता है तथा उनका कामकाज चलाने की उन्हें प्रशासनिक छूट दी जाती है तो मुझे नहीं लगता कि हम उनकी शान्तिपूर्ण सभाओं को उनकी खतरनाक प्रकृति की सभाओं से सफलतापूर्वक अलग कर पाएँगे। जैसा कि श्री डैस ने भी कहा है कि यह आन्दोलन

पूर्णतः वैध प्रकृति का है और जब तक इसकी गतिविधियाँ वैधरूप से चलती हैं, हम इसे कानूनी तौर पर आपत्तिजनक करार कर पूर्णतः प्रतिबन्धित नहीं कर सकते, न इसमें हस्तक्षेप कर सकते हैं।

५. नजरंदाज न किए जाने वाले एक अन्य मुद्दे के प्रति मैं ध्यान आकृष्ट करना चाहूँगा कि गोहत्या विरोधी ये सभाएँ ही केवल हमारे लिए खतरे की घंटी नहीं है जिनसे हमें संघर्ष करना है। देश के एक भाग से दूसरे भाग, एक गाँव से दूसरे गाँव तथा एक मेले से दूसरे मेले में घूम घूमकर जगह जगह जाने वाले परिभ्रामक उपदेशक संभवतः अधिक खतरनाक तत्त्व हैं जो कि स्थानीय सभाओं की अपेक्षा अधिक आन्दोलन का प्रचार करते हैं तथा यूरोपीय ढंग से अपने नियम गढ़ते हैं। इनका पूरा का पूरा तंत्र गुप्त रूप से स्थानीय संगठन से परे होता है जो कि भूमिगत रूप से प्रच्छन्न होकर कार्य करते हैं। इनकी पद्धति इतनी सुनियोजित होती है कि इनके बारे में संभवतः हमें बहुत कम ज्ञात होता है। ये कुछ भी सुराग नहीं छोड़ते या फिर इनकी कार्यवाही के सम्बन्ध में सुराग लगाना मुश्किल होता है। यदि हम इन सभी सभाओं को नेस्तनाबूद कर दें तथा इनका अस्तित्व ही मिटा दें और इनके पदाधिकारियों को गिरफ्तार कर लें या उन्हें तड़ी पार कर दें तथा इन सभाओं के मुख्य मिशनरियों को अपने षड़यंत्र में फाँसने में सफल भी हो जाएँ तो भी मुझे भय है कि हमारे इन समस्त प्रयासों के बावजूद भी यह आन्दोलन अपना अस्तित्व खोएगा नहीं, बना ही रहेगा।

६. सर चार्ल्स क्रास्थ्वेट द्वारा प्रस्तावित विशेष विधायी व्यवस्था लागू करने में मेरी हिचकिचाहट का एक अन्य कारण यह है कि विधायी उपबंधों की प्रायोज्यता निस्संदेह पूर्णतः सामान्य प्रकार की होगी। लेकिन ऐसे कानून से यथार्थ में सभाओं पर कोई उद्देश्यपूर्ण नियंत्रण नहीं होगा। हर व्यक्ति इससे सचेत हो जाएगा। सर डेनिस फिट्जपैट्रिक (कृपया इस नोट का अनुच्छेद सं.१० देखें) ने बताया है कि, उत्तर पश्चिमी सूबों के लिए प्रारूप वास्तव में हिन्दुओं के खिलाफ तैयार किया है इसका उन्हें तुरन्त पता चल गया। अतः हम समग्र भारत में हिन्दू जाति से संघर्ष में उलझ जाएँगे। यह संघर्ष ऐसा होगा जिसमें कोई सहजता से नहीं जुड सकता। मैं ऐसे किसी भी संघर्ष में फँसना निश्चित मन से नहीं चाहूंगा। जब सम्मति वय विधेयक पर चर्चा चल रही थी तब ऐसी ही संकटपूर्ण संघर्ष की स्थिति पैदा हुई थी। सौभाग्य से हमने उससे बचने के पूरे प्रयत्न किए और हमें सफलता भी प्राप्त हुई।

७. एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इस समय उपस्थित परिस्थिति पर काबू पाने के लिए क्या विद्यमान कानून अपर्याप्त एवं शक्तिहीन है? इस मुद्दे पर पूर्ण विश्वासपूर्वक मैं कुछ नहीं कह सकता लेकिन एक अन्य बात जिसमें मुझे कोई भी शंका नहीं है वह यह है कि वर्तमान समय में विद्यमान कानूनों का समुचित परिणाम प्राप्त नहीं हुआ है। बंगाल सरकार के दिनांक २८ अक्टूबर के पत्र या पटना मण्डल के आयुक्त का ८ नवम्बर का पत्र इस निष्कर्ष पर आने के लिए सूचित करता है। सर एंटनी मैकडॉनेल ने पटना के पत्र के अनुच्छेद संख्या-७ में इस ओर संकेत करने में पूरा जोर लगा दिया हैं। परिभ्रामक उपदेशकों को रोकने के लिए उन्होंने अनेक उपाय बताए हैं। सभाओं, आन्दोलन समर्थकों एवं उन्नायकों पर काबू पाने के लिए फौजदारी कार्यवाही एवं दंड संहिताओं के विविध उपबंधों, एवं १८६१ के अधिनियम ५ के तहत कार्रवाई करना भी निर्देशित किया है। अभी तक उन्हें लागू नहीं किया गया हैं। सभी मामलों में पूरी तरह से समुचित रूप से मुकद्दमे भी नहीं चलाए गए हैं। अब एक बात पूर्ण रूप से निश्चित है कि क्या भारत सरकार विशिष्ट प्रकार की अवपीडक विधायी व्यवस्था करे। एक प्रश्न पूछा जा सकता है कि क्या विद्यमान कानून का मुकद्दमा चलाने में पूरा उपयोग हुआ है और क्या उसे अपर्याप्त पाया गया है। जब तक हम इस प्रश्न का सकारात्मक रूप में उत्तर नहीं खोज पाते तथा हमारे कथन के पक्ष में साक्ष्य नहीं प्रस्तुत कर पाते तब तक मुझे नहीं लगता कि किसी भी दमनात्मक विधायी व्यवस्था की आवश्यकता होगी। यदि की भी गई तो उस पर आपत्तियाँ उठाई जाएँगी। इसे अतिशय ईर्ष्या से देखा जाएगा। इससे प्रतिबन्धों की बात तो दूर बल्कि पूर्वोपाय भी सर्वथा व्यर्थ सिद्ध होंगे।

८. एक सामान्य सा अन्य पर्यवेक्षण भारतीय प्रेस पर अंकुश लगाने से सम्बन्धित है। उसके लिए विशेष शक्ति की प्रयोज्यता के लिए तर्क दिए गए हैं। मैं कहना चाहूँगा कि मैं इससे होनेवाली हानि से अवगत हूँ। इस समय पूरे देश में आन्दोलन को अत्यधिक वेग प्राप्त हुआ है तब ऐसा करने से हमारे लिए अत्यधिक संकट की घड़ी उपस्थित हो जाएगी। मुझे संदेह है कि कानून में किसी भी प्रकार के परिवर्तन से स्थिति में कोई भी प्रभावी सुधार आएगा। जैसा कि सर डैनिस फिट्जपैट्रिक ने कहा है यथार्थ स्थिति यह है कि भारत में संकटपूर्ण स्थिति के भीषण परिणामों से बचने के लिए कदम उठाना अत्यन्त आवश्यक है। गैर-जिम्मेदाराना रूप

में जानबूझकर लोगों को उत्तेजित करने के उद्देश्य से प्रकाशित साहित्य को छपने से रोका जाए। किसी भी अंग्रेजी, देशी भाषाओं, युरोपीय या स्थानीय पत्रों में आपत्तिजनक अच्छी, बुरी या भड़काऊ ढंग की ऐसी सामग्री को छपने से रोका जाए जो लोगों के दिमाग को अतार्किक भ्रमात्मक मोड़ देकर दूषित करती हो।

९. मैं दृढतापूर्वक मानता हूँ कि अब तक ऐसी स्थिति उपस्थित नहीं हुई है कि विशेष शक्ति प्राप्त की जाए। भविष्य में भी ऐसी स्थिति पैदा होने के कोई आसार नहीं हैं।

१०. इन सामान्य अवलोकनों को प्रस्तुत करने के उपरांत मैं सर चार्ल्स क्रास्थ्वैट की योजना पर उत्तर पश्चिमी सूबों की सरकार द्वारा दी गई टिप्पणी पर अत्यन्त संक्षेप में अपनी बात कहना चाहूँगा।

११. मैं सर चार्ल्स क्रास्थ्वेट द्वारा षड्यंत्र विषयक कानून में परिवर्तन करने की सिफारिश का पूरी तरह से विरोध करता हूँ। मुझे खुशी है कि इस प्रस्ताव की मद्रास की सरकार को छोड़कर शेष सभी स्थानीय सरकारोंने निंदा की है। मुझे संदेह है कि सर चार्ल्स क्रास्थ्वेट के कानूनी सलाहकार ग्रेट ब्रिटेन के षड़यंत्र विषयक कानून से पूर्ण रूप से अवगत हैं। सर डैनिस फिट्जपैट्रिक ने अपने कार्यवृत्त के अनुच्छेद ५, ६ एवं ७ में इस मुद्दे पर पूर्ण प्रकाश डाला है। उन्होंने वहाँ जो कुछ भी कहा है, उससे मैं पूरी तरह से सहमत हूँ। श्री डैस द्वारा प्रस्तावित संशोधित भारतीय कानून से पूरी तरह भिन्न होंगे। मुझे यहाँ कहना पड़ रहा है तथा इसके लिए मैंने ऊपर कारण भी गिना दिए हैं कि मैं सर डैनिस फिट्जपैट्रिक के सुझावों का पूरी तरह से विरोध करता हूँ तथा श्री डेस के प्रारूप को थोड़ा सरल बनाकर सभाओं से जुडने को अपराध की सीमा में रखकर या षड्यंत्र में भागीदार होने के रूप में रखकर या फिर सभाओं में उपस्थित रहना या सभाओं के किसी भी उद्देश्य की पूर्ति हेतु कारक भूमिका निभाना या षड्यंत्र में भागीदारी करना या बैठकों में शामिल होना आदि को अपराध मानकर थोडा सुधार करके संशोधित रूप में रखा जा सकता है, क्योंकि इससे धार्मिक रूप से उत्तेजनापूर्ण स्थिति पैदा होती है और इससे विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों के लोगों के बीच वैरभाव बढ़ता है जिसके परिणाम स्वरूप शान्ति भंग होती है, अतः इससे अपराध बनता है। निस्संदेह रूप में ऐसे कानून बनने से हमारे उद्देश्य पूर्ण होंगे और वह भी अत्यन्त सुविधापूर्ण ढंग से। लेकिन मैं एक पल के लिए भी विश्वास नहीं करता कि हमें अपना

जाल इससे अधिक फैलाना चाहिए। उपराज्यपाल के शब्दों में मेरा विचार है कि १८७८ के देशी भाषाओं को प्रेस अधिनियम लागू किया जाए।

१२. जब दंड संहिता संशोधन हेतु प्रस्तुत की ज़ाएँगी, मैं उसकी धारा ५०५ में संशोधन करूँगा जिसमें सत्य से परे प्रचार करने के लिए लोगों में फूट डालने के उद्देश्य से उत्तेजनापूर्ण बयान प्रकाशित करनेवाले पत्रों के संपादकों आदि के लिए दंड की व्यवस्था होगी। मेरा विचार है कि इससे कानून में आवश्यक संशोधन होगा जिसका अपना ही लाभ होगा और आपत्तिजनक सामग्री प्रकाशित होने पर कार्रवाई की जा सकेगी। लेकिन मैं किसी भी प्रेस कानून में कोई भी हस्तक्षेप नहीं करूँगा। मुझे उम्मीद है कि इसके सार्थक परिणाम प्राप्त होंगे। मैं प्रेस की शक्ति के साथ बिल्कुल भी छेड़छाड़ नहीं करूँगा।

१३. मेरा विचार है कि फौजदारी कार्यवाही संहिता (ग्राम मुखिया आदि की नियुक्ति) की धारा १५ में उत्तर पश्चिमी सूबों की सरकार द्वारा प्रस्तावित संशोधन के पक्ष में काफी कुछ गुंजाइश है। संशोधन का सिद्धांत निर्विवाद रूप से आवश्यक है। लेकिन इसे तैयार करने के लिए अत्यधिक सावधानी बरतने की आवश्यकता है।

१४. मेरा विचार है कि १८६१ के पुलिस अधिनियम-५ में भी संशोधन करना वांछनीय है। बंगाल सरकार ने अपने २८ अक्टूबर के पत्र के अनुच्छेद संख्या-१० में प्रस्तावित किया है कि अवैध रूप से लोगों के जमावड़े या दंगा भड़कने की सूचना के सम्बन्ध में जमींदारों पर अतिरिक्त जवाबदारी डालने के लिए कानून में पुनः संशोधन किया जाए। यह बिल्कुल ठीक है। सर एंटनी मैकडोनेल कहते हैं कि दंगा होने की या शान्ति भंग होने की सम्भावना का प्रमाण नहीं है यह सिद्ध करने का दायित्व जमीनदार या उसके प्रतिनिधि पर रहेगा, मुकदमा दायर करनेवाले पर नहीं। मैं उस हद तक जाने का समर्थन नहीं करता। मैं मानता हूँ कि यह अति होगी। दूसरी ओर, इस मामले को सिद्धांतरूप में देखा जाए तो हम जमींदारों के दायित्वों में वृद्धि करेंगे और ऐसा करके हम जमीन मालिकों की फेहरिश्त बना कर उन पर इस दायित्व का हस्तांतरण कर देंगे। यह सुधार इस देश के लोगों की स्वीकृत मान्यता के अनुकूल होगा।

१५. १८७१ के पशु अपचार अधिनियम में संशोधन के औचित्य में मुझे संदेह है।

१६. अब समय एवं पद्धति का प्रश्न शेष रहता है कि हम कानून में संशोधन

कब करते हैं तथा उसका अध्यादेश कब जारी करते हैं। इसके लिए, मेरा मानना है कि किसी भी उत्तेजनापूर्ण विवाद की स्थिति से बचने के लिए या वर्तमान समय में लोगों की उत्तेजना में उद्दीपक का कार्य न करके हमें इस अध्यादेश को उपर्युक्त बिंदुओं को मद्देनजर रखते हुए तत्काल एक साथ लागू नहीं करना चाहिए। जैसे ही उपयुक्त अवसर आए तो मैं दण्डात्मक एवं दीवानी कार्यवाही संहिताओं को अध्यादेश के रूप में लाना चाहूँगा। मैं ऐसा करने में बिल्कुल भी घबराऊँगा नहीं। मैं मानता हूँ कि मैं अन्य विवरणों में जल्दी ही १८६१ के अधिनियम-५ में आवश्यक संशोधन करूँगा। ऊपर चर्चित संशोधनों को लागू करने के कई लाभ भी हैं। यदि भारत सरकार की यह राय हो तथा कठोर कदम उठाना आवश्यक हो तो मैं सलाह देना चाहूँगा कि एक विधेयक लाया जाए और उसका सम्पूर्ण विवरण परिषद में निर्णीत किया जाए। तदुपरांत इसे एक अध्यादेश के रूप में पारित किया जाए। उसके पश्चात् आन्दोलन के पुनः फैलने पर इसकी आवश्यकता होगी। इस समय, आन्दोलन बिल्कुल शांत है। जो लोग इसमें शामिल हुए हैं वे अपने व्यवहार के लिए सजा भुगतेंगे। उन्हें इसके साथ जुड़ने की मूर्खता पर रोना आएगा। यदि ये समस्याएँ पुनः उठती हैं तो मैं उन्हें पुनः पूर्व के जैसी उत्तेजना नहीं फैलाने दूँगा। वे उत्तेजना फैलाने न पाए इस लिये भरसक कार्रवाई करूँगा।

१७. एक सुझाव मैं यह देना चाहूँगा कि बंगाल सरकार के ८ नवम्बर के परिपत्र को गृह विभाग के आवश्यक पर्यवेक्षण के साथ अन्य स्थानीय सरकार को भेजा जाए। मुझे विश्वास है कि उत्तर पश्चिमी सूबों की सरकार में इसका पहले ही अवलोकन कर लिया है।

१८. अब बंगाल सरकार के २३ दिसम्बर के पत्र में निहित महत्त्वपूर्ण प्रस्तावों की ओर ध्यान दिलाना शेष रहता है। मेरी सर चार्ल्स इलियट की सलाह के प्रति पूरी सहानुभूति है कि हमारा कर्तव्य केवल इतना ही नहीं है कि कानून भंग करनेवालों को हम दण्डित कराएँ। हमें उस उत्तेजना एवं भडकानेवाली स्थिति पर काबू पाना होगा जिससे हिन्दू पूर्वाग्रहों को इस हद तक ले जाने का प्रयास होता है। मैंने हमेशा यह महसूस किया है, कि हम अंग्रेजों के लिए किसी समस्या को, या विवादों को पूर्ण निष्पक्षता से देखना सरल नहीं होता है। हम उनके पूर्वाग्रहों का शमन कर भी दें - जो कि पूर्ण असम्भव है - तो भी हिन्दू हमें पूर्वाग्रहयुक्त मानसिकता से मुक्त होकर नहीं

देखेंगे। अतः सर चार्ल्स इलियट द्वारा सुझाई गई दिशा में कुछ भी कर पाना न्याय एवं इष्टसिद्धि दोनों ही दृष्टि से वांछनीय होगा। सर सी. इलियट द्वारा प्रस्तावित दमनात्मक उपाय विविध उद्देश्यों हेतु विविधरूप से ढाला जाए जिससे हिन्दुओं को लगे कि हम यह सब कुछ उनके भले के लिए ही कर रहे हैं।

१९. तथापि, मुझे भय है कि हम सर चार्ल्स इलियट की सिफारिशों में से उन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण सिफारिशों को लागू करने में सफल नहीं हो पाएँगे जिसका श्री लियाल की २५ दिसम्बर की टिप्पणी में अत्यन्त कुशलता पूर्वक परीक्षण किया गया है।

२०. यह प्रस्ताव कि (अ) हत्या करने के लिए मवेशी को 'यथासम्भव' मुख्य सड़कों से नहीं ले जाया जाना चाहिए जैसा कि लियाल ने प्रदर्शित किया है, इसे लागू करना अत्यन्त कठिन होगा। मैं कल्पना कर सकता हूँ कि देश के कई भागों में रास्ते नीचे हैं और कीचड़ भरे हैं। केवल एक मुख्य सड़क ही होती है। कुछ भी हो, मुझे यह समझ में नहीं आता कि हिन्दुओं को सडक की निगरानी रखने का अधिकार दिये बिना और आनेजाने वाले प्रत्येक ने पूछनेवाले को सन्तुष्ट किये बिना यह जानना कैसे सम्भव होगा कि यह मवेशी हत्या हेतु नहीं ली जा रही है। मुझे भय है कि इस तरह का प्रस्ताव जिस उद्देश्य के लिए लाया जा रहा है, उससे ठीक विपरीत प्रभाव ही डालेगा। हमें उपराज्यपाल द्वारा बिठाई गई जाँचों के परिणामों की प्रतीक्षा करनी चाहिए और प्रस्तुत होनेवाले किन्हीं विशिष्ट प्रस्तावों पर निष्ठापूर्वक विचार करना चाहिए । मुद्दा (अ) को इसके वर्तमान रूप में स्वीकृत कर पाना कानून के आधार पर भी अत्यन्त अस्पष्ट ही होगा ।

२१. रसद विभाग के लिए पशुओं की हत्या के प्रश्न पर सेना विभाग ने पहले ही कार्रवाई की है। महाधिवक्ता के विभाग द्वारा अशांत जिलों में सेना को तैनात करने के आदेश जारी कर दिए गए हैं जिसके द्वारा सेना वहाँ तैनात हो चुकी है तथा अन्य अशांत जिलों में भेजी जा रही है। मैंने भी निर्देश दे दिए हैं कि बंगाल सरकार को इन निर्देशों के बारे में सूचित कर दिया जाए। सर चार्ल्स इलियट के एक अन्य पत्र में छपरा मामले में, जिसकी जाँच चल रही है, की गई विशेष सिफारिशों की जाँच सेना प्राधिकरण करेगा। मेरा मानना है कि जहाँ तक सेना के वास्तविक प्रभारवाली मवेशी का प्रश्न है, किसी भी अपराध का मामला बनाने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

२२. (ब) एवं (स) के अनुसार मेरा मानना है कि भोजन हेतु की जानेवाली मवेशी की हत्या सुनिश्चित स्थान पर ही की जानी चाहिए। ऐसे मामलों में ध्यान रखा जाए कि वहाँ से गुजरनेवाले लोगों की दृष्टि में ऐसा करना अपराध का मामला न बन पाए। लाइसेंसवाले अहातों में गोमाँस की बिक्री पर भी मेरे विचार से किसी को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। मुझे समझ में नहीं आता कि स्थानीय रूप से विधि निर्माण करना क्यों आवश्यक है।

२३. (द) में की गई सिफारिशों पर सर्वाधिक कठिन प्रश्न उठता है। मेरा विचार है कि यह ठीक ही होगा कि पंजाब के नियमों को समग्र भारत पर लागू कर दिया जाए। यह स्मरण रखना चाहिए कि इसका उल्लेख हमारे ४ अक्टूबर के परिपत्र में किया गया है। मुझे यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण लगा। १८९३ में समग्र भारत में अशान्ति का साम्राज्य फैला हुआ था। दिल्ली तथा रोहतक में १८९१ में अत्यधिक समस्याजनक स्थिति पैदा हुई, लेकिन अब वहाँ पूर्ण शान्ति है। मुझे पंजाब के नियमों में सकारात्मक और सुदृढ आधार दिखाई दिया। फिर भी, वहाँ मैंने जो कुछ भी सुना था वह अत्यन्त संदेहास्पद था। कुछ भी सकारात्मक कर पाना संभव नहीं दिख रहा था। जैसा कि श्री लियाल ने बताया है कि पंजाब का मामला अन्य सूबों से पूर्णतः भिन्न है क्योंकि वहाँ एक शताब्दी से भी अधिक समय से ब्रिटिश संरक्षण है। पंजाब के नियमों का विस्तार समग्र भारत में करने से हिन्दुओं को व्यापक रूप से छूट प्राप्त हो जाएगी और मुसलमान इनका अत्यन्त भीषण विरोध करेंगे। सर चार्ल्स इलियट भी प्रायः ऐसा ही महसूस करते हैं। (उनके पत्र का अनुच्छेद ६ देखें) मेरा भी विचार है कि इस सम्बन्ध में किया गया कोई भी प्रयास रुढिबद्ध प्रथा के रूप में अपनाना असंभव ही नहीं होगा तो इससे वह उत्तेजना भी पुनर्जीवित हो जाएगी जो इस समय सौभाग्य से समाप्तप्राय हो गई है। इससे दोनों समुदायों में कलह की स्थिति पुनः पैदा हो जाएगी । इस सम्बन्ध में उपराज्यपाल दो मानदंड प्रस्तावित करते हैं : जो भी व्यक्ति बकरईद के अवसर पर पशुहत्या करना चाहता है उसने विगतवर्ष भी रिवाजी तौर पर पशु हत्या की हुई होनी चाहिए तथा उसके पास इसके लिए अपना एक ऐसा स्थान होना चाहिए जहाँ समुचित एकांत में पशुहत्या की जा सके। श्री लियाल ने बताया है कि यदि कोई मुसलमान अपने किसी निजी त्योहार के अवसर पर बैल की हत्या करना चाहता है और उस स्थान का पूर्वनिरीक्षण किया जाए तो उस पर क्या कुछ नहीं बीतेगी। इसलिए

अच्छा तो यह होगा कि (और मेरा मानना है कि श्री लियाल ने भी प्रस्ताव रखा है) यदि कोई व्यक्ति पशुहत्यावाले स्थान को नियमानुसार समुचित रूप से निर्धारित नहीं करता तो वह दंड का भागी होगा। इस कानून में इस दिशा में कुछ सुधार भी अपेक्षित होंगे लेकिन जहाँ रिवाजी तौर पर प्रथा का पालन किया जाएगा वहाँ कानून में छूट दी जाएगी, और जहाँ ऐसा नहीं होगा वहां, मुझे पूरा विश्वास है, दिक्कत पैदा होगी तथा यह कानून का उल्लंघन माना जाएगा। सर चार्ल्स क्रास्थ्वेट को भेजे गए श्री इवान के पत्र को सर चार्ल्स के निजी पत्र दिनांक २६ अक्टूबर के साथ संलग्नक के रूप में मुझे भेजा गया। श्री लियाल को इस मुद्दे पर उद्धृत करना अधिक उपयुक्त होगा। मुझे उम्मीद है कि कई मामलों में यह सुनिश्चित कर पाना कठिन होगा कि रिवाजी तौर पर प्रथा का पालन किया गया है या नहीं, और यदि किया गया है तो यह प्रथा कब से अस्तित्व में है। यथार्थ स्थिति यह है कि यह प्रथा अलग अलग स्थानों पर अलग अलग समय से चल रही है। इसमें एकरूपता का सर्वथा अभाव है। मेरा विश्वास है कि ऐसे कई स्थान हैं जहाँ पशुहत्याएँ होती रही हैं लेकिन उन पर किसी ने कोई आपत्ति दर्ज नहीं की है। वहाँ काफी अरसे से मुक्तरूप में पशु हत्याएँ की जाती रही हैं। ऐसे जिलों में मुसलमानों के अधिकार की बात करने में राजनीति खेले जाने की संभावना भी है। कोई भी मुसलमान पशुहत्या करना चाहता है तो क्या उसे उस हत्या का स्थान पंजीकृत कराना होगा ? हत्या के स्थान के पंजीकरण करने से उसके पडोसी को उसके पशु कुर्बानी के अधिकार को चुनौती देने का संकेत नहीं मिल जाएगा? क्या इससे दोनों सम्प्रदाय के बीच टकराहट नहीं पैदा हो जाएगी? मुझे भय है कि किसी स्थिति को उत्तम बताने के प्रयासों से कई बार स्थिति और अधिक बिगड़ जाती है तथा भयानक रूप धारण कर लेती है।

२४. ब्राह्मणी बैल का प्रश्न शेष रहता है। मुझे आशंका है कि इस सम्बन्ध में शिकायतों की भरमार है जब कि कानून की स्थिति संतोषजनक नहीं है। संशोधन प्रस्तुत करने से कुछ लाभ होगा। बैलों की सम्पत्ति को किसी स्थानीय प्राधिकरण को दिया जाना ठीक रहेगा ।

२५. यदि गृह विभाग द्वारा सारिणीबद्ध विवरण तैयार किया जाए तथा प्रत्येक स्थानीय सरकार के प्रस्तावों को इसमें समाहित किया जाए (श्री थोरंटन की टिप्पणी का अनुकरण किया जा सकता है)। तथा इसके प्रत्येक समानांतर स्तंभों में अन्य

सरकारों से प्राप्त प्रत्येक प्रस्ताव को दर्शाया जाए तो हमें इससे किसी निष्कर्ष पर पहुँचने में सहायता प्राप्त होगी।

२६. मैंने अपनी इस टिप्पणी को अपने सम्माननीय सहयोगियों के समक्ष रखने का असामान्य प्रयास किया है। जब मैं दौरे पर रहा तब मैंने अधिकांश दस्तावेजों का अध्ययन किया। मेरी बिदाई समीप है इसलिए भी स्थिति अपवादात्मक ही बनती है।

एल-२८-१२-(१९)९३

१३. गो विषयक महात्मा गांधी के भाषण (सारांश)

(१९१७-१९२०)

बेतिया का भाषण : (लगभग अक्टूबर ९, १९१७)

इस कस्बे में गोशाला की आधारशिला रखने के लिए मुझे आमंत्रित करने के लिए मैं गोरक्षिणी सभा तथा आप सभी का धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। हिन्दुओं के लिए गोसंरक्षण कर्तव्य है। हिन्दुओं के लिए यह पुण्यकार्य है। गोरक्षा प्रत्येक भारतीय का प्रथम कर्तव्य है। तथापि, मेरा अनुभव है कि जिस तरह से इस महत्त्वपूर्ण कार्य हम कर रहे हैं उसमें सुधार करना अपेक्षित है.....

इसके अतिरिक्त, यह भी ध्यान रखना चाहिए कि भारत में सभी बड़े शहरों में बूचड़खाने हैं। अधिकांश बूचड़खानों में ब्रिटिश लोगों को गोमाँस की आपूर्ति की जाती है। इस हत्या के प्रति हिन्दू समाज विवश होने के कारण मौन धारण किए रहता है। कोई प्रतिकार नहीं करता। जब तक हम इस महाघातक पशुहत्या से छुटकारा नहीं प्राप्त करते तब तक, हम मुसलमानों के दिल में कोई प्रभाव पैदा नहीं कर पाएँगे तथा उनसे गायों की रक्षा भी नहीं कर पाएँगे। अतः हमारा दूसरा कार्य हमारे ब्रिटिश मित्रों के बीच इस आन्दोलन को चलाना होगा। इस समय हम उनके खिलाफ बुद्धिहीन शक्ति प्रदर्शन करने की स्थिति में तो बिल्कुल भी नहीं हैं। केवल तपश्चर्या एवं विनम्रता से उनसे अपनी बात मनवाई जा सकती है। उनके लिए गोमाँस भक्षण कोई धार्मिक कृत्य नहीं है। अतः उन्हें इसे छोड देने के लिए राजी करना आसान कार्य होगा। इसके लिए सबसे पहले तो हमारे लिए यह निहायत जरूरी है कि हम हिंसा का रास्ता छोड दें। मैं ने पहले भी कहा है कि हम अपने ब्रिटिश मित्रों को गोमाँस भक्षण न करने तथा बैलों एवं गायों की हत्या न करने के लिए राजी करेंगे और उसके बाद ही अपने मुस्लिम मित्रों को भी कुछ कह पाने के पात्र होंगे। मैं आपको भरोसा दिलाता हूँ कि जब हम ब्रिटिशों

का दिल जीत लेंगे तो हमारे मुसलमान भाईयों की भी हमारे प्रति और अधिक सहानुभूति पैदा होगी। तब वे अपने धार्मिक विधि विधानों को कुछ अन्य भेंट अर्पण करके पूर्ण करेंगे।

मुजफ्फरपुर का भाषण : नवम्बर ११ १९१७

हिन्दुओं और मुसलमानों में गो विषयक मतभेद है। यदि हम गायों को संरक्षित देखना चाहते हैं तो हमें उन्हें बूचड़खानों की ओर ले जाए जाने से बचाना होगा। ब्रिटिश लोगों के लिए प्रतिदिन ३०,००० से अधिक गायों और बछड़ों की हत्या की जाती है। जब तक हम इन हत्याओं को नहीं रोक पाते तब तक मुसलमानों की ओर इस विषय में उँगली उठाने का हमें कोई अधिकार नहीं है ।

बेतिया गोशाला का भाषण : दिसम्बर ८ १९२०

मुसलमान गायों की हत्या गोमाँस के लिए तो कभी कभार ही करते हैं लेकिन अंग्रेज तो गोमाँस के बिना एक दिन भी नहीं रह सकते। लेकिन हम उनके गुलाम जो ठहरे। हम इस सरकार के विद्यालयों एवं अदालतों के हामी हैं जो हमारे धर्म को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते। ऐसा नहीं है कि मैं इस बात को पहली बार आपके ध्यान में ला रहा हूँ। पहले भी मैंने उनके गोमाँस भक्षण को सहा है क्योंकि मुझे आशा थी कि वे हमारा कुछ न कुछ हित तो अवश्य सोचेंगे । अब उनसे कोई भी आशा करना व्यर्थ है। अतः मैंने उनके खिलाफ असहयोग आन्दोलन छेड़ने की घोषणा की है।

विभाग ५

उपसंहार

१४. उपसंहार

१५. सूची

१४. उपसंहार

बिहार के कुछ कस्बों, विभिन्न शहरों तथा बनारस शहर में ब्रिटिशों द्वारा लगाए गए आवास कर की अवधि के ब्रिटिश सरकारी पत्राचार के अभिलेख १९६६ के आसपास मुझे पढ़ने को मिले। ये अभिलेख लंदन की भारत कार्यालय पुस्तकालय (India Office Library : IOL) में थे। यह आन्दोलन लगभग एक महीने तक चला। प्राधिकारियों ने इसे इतनी उग्रतापूर्वक दबाया कि यह नागरिक अवज्ञा कुचल दि गई। बाद में जिन लोगों को कर भरने के लिए कहा गया उन्होंने स्वेच्छा से कर नहीं भरा। जिन लोगों को कर-संग्रह का कार्य सौंपा गया उन्होंने करदाता से कर लेने या नकद राशि के स्थान पर कुछ की संपत्ति ही जब्त कर ली। इस आन्दोलन के दौरान बनारस में सभी प्रकार से गतिरोध की स्थिति बनी रही। गंगा के घाट पर मृतदेहों का अंतिम संस्कार तक रोक दिया गया था और उन्हें नदी में बहा दिया जाता था। दुकानें तथा व्यावसायिक प्रतिष्ठान बंद रहे। लगभग २,५०,००० लोगों ने दो या तीन सप्ताह तक धरना दिया। बनारस के आसपास के गाँवों के लोगोंने इस आन्दोलन में प्रतिभागिता की। लुहारी कार्य से जुड़े कर्मियों, नाविकों आदि जैसे अनेक लोगोंने अपना कार्य बंद कर दिया और आन्दोलन एवं धरना में प्रतिभागिता की।

यदि कोई इस वाराणसी के आन्दोलन के साथ साथ पशुहत्या विरोधी आन्दोलन का एक साथ अध्ययन करता है तो उसे इन दोनों में बहुत महत्त्वपूर्ण समानताएँ देखने को मिलेंगी। दोनों ही में, भारत के विविध भागों में कृषि भूमि पर ब्रिटिशों द्वारा लगाए गए अंधाधुंध भूराजस्व की माँग के विरुद्ध किसानों द्वारा छेड़े गए अन्य आन्दोलन की तरह ही लोगों का सहयोग प्राप्त हुआ। (उदाहरण के लिए बंगाल के रंगपुर क्षेत्र में अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में या फिर कर्नाटक के केनरा में उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में)। आन्दोलनकारियों ने संदेश भेजने के लिए उपयुक्त साधनों का उपयोग किया और आसपास के इलाकों के लोगों को एकजुट होकर

संगठित होने तथा सरकार का विभिन्न स्रोतों से प्रतिकार करके उसका सामना करने, अपनी माँगों के विषय में दबाव डालने के तरीके दर्शाए। वाराणसी में तो मानो सारी गतिविधियां रोक दी गई थीं। लोग धरने पर बैठ गए। अत्यन्त व्यापक तथा लम्बे समय तक चलनेवाला देशव्यापी पशुहत्या विरोधी आन्दोलन हजारों के समूहों और सभाओं ने गोसंरक्षण एवं गोहत्या निषेध हेतु चलाया। यह आन्दोलन आगे चलकर व्यापक जन हस्ताक्षर अभियान के रूप में चला। ब्रिटिश सरकार के समक्ष गोहत्या के खिलाफ विराट याचिकाएँ प्रस्तुत की गईं। कुछ भारतीय गोहत्या के खिलाफ मामला दायर करने लन्दन भी गए। बहुत से संन्यासियों समेत बड़ी भारी संख्या में लोग पूरे भारत में घूम घूमकर बहुत विशाल जनसमुदाय को संबोधित करके उन्हें उनकी सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना का ज्ञान कराकर बृहत् स्तर पर लोगों को संगठित करते रहे। इसके लिए साहस एवं शक्ति की अत्यन्त आवश्यकता थी।

वाराणसी नागरिक अवज्ञा (१८१०-११) एवं आधे भारत से भी अधिक भू भाग में फैला पशुहत्या विरोधी आन्दोलन (१८८०-१८९४ तथा शताब्दियों के पश्चात् भी जारी), तथा उपरि-उल्लिखित किसान आन्दोलन आदि घटनाएँ महात्मा गांधी के समय से बहुत पहले घटित हुईं। फिर भी, जिस प्रकार ये पैदा हुईं, उभरीं तथा उसने संगठित रूप प्राप्त किया, उसमें पर्याप्त समानताएँ देखी जा सकती हैं। कहा जाता है कि आन्दोलनों का गांधीजी द्वारा प्रवर्तन एवं नेतृत्व किया गया। यह एक ऐसे नेता की प्रेरणा एवं दिशा निर्देशन का ही परिणाम था कि आन्दोलन गतिमान रहे। लेकिन वाराणसी के मामले पर, या पशुहत्या विरोधी आन्दोलन या कृषकों द्वारा चलाए गए प्रतिरोधी आन्दोलन पर गौर किया जाए तो उनमें छोटे या बड़े सभी समुदायों के लोगों के सम्मिलित विचार एवं लक्ष्य शामिल थे चाहे उनका कोई विशेष नेता या कोई मुख्य समूह हो या न हो। शायद उस समय तक महात्मा गांधी एक नेता के रूप में पहले दक्षिण अफ्रिका में तथा बाद में १९१७ से आगे चम्पारन से आरम्भ करके भारत में भारत के लोगों को अन्याय का प्रतिकार करने के रास्ते दिखाए, उनका निर्देशन किया, उन्हें परामर्श दिया। लोगों की हिम्मत तथा विश्वास डगमगा रहा था और उनके हौसले भी पस्त हो चुके थे। ऐसे समय में उन्हें किसी ऐसे करिश्माई नेता की आवश्यकता थी जो उन्हें उनकी शक्ति से सही रूप में परिचित कराए, उन्हें अपनी बात पूरें सामर्थ्य से कहने के लिए प्रेरित करे।

यह परंपरागत राजनीतिक आग्रह, उदात्तता और नीतिमता के प्रति निष्ठा, विविध प्रकार के संगठनात्मक कौशल होते हुए भी भारतीय अपने शत्रुओं को प्रभावी और निश्चयात्मक ढंग से क्यों परास्त नहीं कर सके यह एक पहेली ही है। ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय लोगों और उनके नेताओं की तथा यूरोप, साथ ही, हाल ही में यूएसए के भी, के आक्रमणकारियों की राजनीतिक समझ के बीच अलंघ्य बेमेल था। उनके विचारों में, रहनसहन आदि में कहीं भी पटरी बैठती ही नहीं थी, भारतीय लोगों को अपनी बस्तियों एवं समुदायों में सदैव सापेक्ष्य सौहार्द के साथ रहने की घुट्टी बचपन से ही पिलाई जाती थी। वे मात्र मानवजाति के प्रति ही नहीं अपितु समस्त प्राणीजगत के प्रति दयाभाव से प्रस्तुत होते थे। दूसरी ओर पश्चिम के लोगों को विध्वंसात्मक प्रवृत्ति बचपन से ही घुट्टी में मिलने के कारण उनकी प्रकृति हिंसक थी। विजेता होने के कारण उनकी प्रकृति में और अधिक अक्खड़पन था। इसके बावजूद भी पश्चिमी लोगों में लकड़ी काटनेवाले, पानी लानेवाले लोग भी थे जो उनकी आज्ञा सदियों से यंत्रवत् मानते चले आ रहे थे। वे विजेता नहीं थे लेकिन उन्हें इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता था। जब तक जातियों और समाजों को तहसनहस न कर दें, या उन्हें गुलाम न बना दें, या उन्हें समाप्त न कर दें तब तक इन यूरोपीयों को चैन नहीं आता था। पश्चिम के अन्य लोगों में से प्लेटो को समझ में आया कि देशों के बीच निरन्तर युद्ध की स्थिति बनी रहना ही यूरोपीयों का यथार्थ था, और यूरोपीयों की महत्वाकांक्षा सर्वोच्च विजेता बनने की थी।

तथापि विश्व की अधिकांश सभ्यताओं एवं समाजों ने न तो पश्चिम के मॉडल का ही अनुकरण किया है और न पश्चिमी रँग-ढंग में ढलना ही स्वीकार किया है। पुनः कहें तो पाश्चात्य संस्कृति अपनी विदग्धता के बावजूद भी, अविष्कारशीलता और लड़ाकू प्रकृति के कारण अत्यन्त बदमिजाज एवं असभ्य, नृशंस एवं रक्तपिपासु है। इसकी समस्त उपलब्धियाँ अंततः दूसरों के लिए ही नहीं अपितु स्वंय के लिए भी घातक हैं। जिस दिन इसकी अनुभूति विश्व में सभी को, विशेपकर पश्चिमी लोगों को हो जाएगी उस दिन मानव मानव के बीच, मानव एवं अन्य प्राणियों के बीच, मानव और प्रकृति के बीच तथा एक सभ्यता एवं दूसरी सभ्यता के बीच समुचित संतुलन की स्थिति पैदा होकर एक महत्त्वपूर्ण मोड़ आएगा। अफ्रीका में आरंभिक अवस्था में महात्मा गांधी ने इस समस्या को देखा था तथा इसका संतोषजनक समाधान खोजने

संगठित होने तथा सरकार का विभिन्न स्रोतों से प्रतिकार करके उसका सामना करने, अपनी माँगों के विषय में दबाव डालने के तरीके दर्शाए। वाराणसी में तो मानो सारी गतिविधियां रोक दी गई थीं। लोग धरने पर बैठ गए। अत्यन्त व्यापक तथा लम्बे समय तक चलनेवाला देशव्यापी पशुहत्या विरोधी आन्दोलन हजारों के समूहों और सभाओं ने गोसंरक्षण एवं गोहत्या निषेध हेतु चलाया। यह आन्दोलन आगे चलकर व्यापक जन हस्ताक्षर अभियान के रूप में चला। ब्रिटिश सरकार के समक्ष गोहत्या के खिलाफ विराट याचिकाएँ प्रस्तुत की गईं। कुछ भारतीय गोहत्या के खिलाफ मामला दायर करने लन्दन भी गए। बहुत से संन्यासियों समेत बड़ी भारी संख्या में लोग पूरे भारत में घूम घूमकर बहुत विशाल जनसमुदाय को संबोधित करके उन्हें उनकी सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना का ज्ञान कराकर बृहत् स्तर पर लोगों को संगठित करते रहे। इसके लिए साहस एवं शक्ति की अत्यन्त आवश्यकता थी।

वाराणसी नागरिक अवज्ञा (१८१०-११) एवं आधे भारत से भी अधिक भू भाग में फैला पशुहत्या विरोधी आन्दोलन (१८८०-१८९४ तथा शताब्दियों के पश्चात् भी जारी), तथा उपरि-उल्लिखित किसान आन्दोलन आदि घटनाएँ महात्मा गांधी के समय से बहुत पहले घटित हुईं। फिर भी, जिस प्रकार ये पैदा हुईं, उभरीं तथा उसने संगठित रूप प्राप्त किया, उसमें पर्याप्त समानताएँ देखी जा सकती हैं। कहा जाता है कि आन्दोलनों का गांधीजी द्वारा प्रवर्तन एवं नेतृत्व किया गया। यह एक ऐसे नेता की प्रेरणा एवं दिशा निर्देशन का ही परिणाम था कि आन्दोलन गतिमान रहे। लेकिन वाराणसी के मामले पर, या पशुहत्या विरोधी आन्दोलन या कृषकों द्वारा चलाए गए प्रतिरोधी आन्दोलन पर गौर किया जाए तो उनमें छोटे या बड़े सभी समुदायों के लोगों के सम्मिलित विचार एवं लक्ष्य शामिल थे चाहे उनका कोई विशेष नेता या कोई मुख्य समूह हो या न हो। शायद उस समय तक महात्मा गांधी एक नेता के रूप में पहले दक्षिण अफ्रिका में तथा बाद में १९१७ से आगे चम्पारन से आरम्भ करके भारत में भारत के लोगों को अन्याय का प्रतिकार करने के रास्ते दिखाए, उनका निर्देशन किया, उन्हें परामर्श दिया। लोगों की हिम्मत तथा विश्वास डगमगा रहा था और उनके हौसले भी पस्त हो चुके थे। ऐसे समय में उन्हें किसी ऐसे करिश्माई नेता की आवश्यकता थी जो उन्हें उनकी शक्ति से सही रूप में परिचित कराए, उन्हें अपनी बात पूरें सामर्थ्य से कहने के लिए प्रेरित करे।

यह परंपरागत राजनीतिक आग्रह, उदात्तता और नीतिमता के प्रति निष्ठा, विविध प्रकार के संगठनात्मक कौशल होते हुए भी भारतीय अपने शत्रुओं को प्रभावी और निश्चयात्मक ढंग से क्यों परास्त नहीं कर सके यह एक पहेली ही है। ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय लोगों और उनके नेताओं की तथा यूरोप, साथ ही, हाल ही में यूएसए के भी, के आक्रमणकारियों की राजनीतिक समझ के बीच अलंघ्य बेमेल था। उनके विचारों में, रहनसहन आदि में कहीं भी पटरी बैठती ही नहीं थी, भारतीय लोगों को अपनी बस्तियों एवं समुदायों में सदैव सापेक्ष्य सौहार्द के साथ रहने की घुट्टी बचपन से ही पिलाई जाती थी। वे मात्र मानवजाति के प्रति ही नहीं अपितु समस्त प्राणीजगत के प्रति दयाभाव से प्रस्तुत होते थे। दूसरी ओर पश्चिम के लोगों को विध्वंसात्मक प्रवृत्ति बचपन से ही घुट्टी में मिलने के कारण उनकी प्रकृति हिंसक थी। विजेता होने के कारण उनकी प्रकृति में और अधिक अक्खड़पन था। इसके बावजूद भी पश्चिमी लोगों में लकड़ी काटनेवाले, पानी लानेवाले लोग भी थे जो उनकी आज्ञा सदियों से यंत्रवत् मानते चले आ रहे थे। वे विजेता नहीं थे लेकिन उन्हें इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता था। जब तक जातियों और समाजों को तहसनहस न कर दें, या उन्हें गुलाम न बना दें, या उन्हें समाप्त न कर दें तब तक इन यूरोपीयों को चैन नहीं आता था। पश्चिम के अन्य लोगों में से प्लेटो को समझ में आया कि देशों के बीच निरन्तर युद्ध की स्थिति बनी रहना ही यूरोपीयों का यथार्थ था, और यूरोपीयों की महत्वाकांक्षा सर्वोच्च विजेता बनने की थी।

तथापि विश्व की अधिकांश सभ्यताओं एवं समाजों ने न तो पश्चिम के मॉडल का ही अनुकरण किया है और न पश्चिमी रँग-ढंग में ढलना ही स्वीकार किया है। पुनः कहें तो पाश्चात्य संस्कृति अपनी विदग्धता के बावजूद भी, अविष्कारशीलता और लड़ाकू प्रकृति के कारण अत्यन्त बदमिजाज एवं असभ्य, नृशंस एवं रक्तपिपासु है। इसकी समस्त उपलब्धियाँ अंततः दूसरों के लिए ही नहीं अपितु स्वंय के लिए भी घातक हैं। जिस दिन इसकी अनुभूति विश्व में सभी को, विशेषकर पश्चिमी लोगों को हो जाएगी उस दिन मानव मानव के बीच, मानव एवं अन्य प्राणियों के बीच, मानव और प्रकृति के बीच तथा एक सभ्यता एवं दूसरी सभ्यता के बीच समुचित संतुलन की स्थिति पैदा होकर एक महत्त्वपूर्ण मोड़ आएगा। अफ्रीका में आरंभिक अवस्था में महात्मा गांधी ने इस समस्या को देखा था तथा इसका संतोषजनक समाधान खोजने

का प्रयास भी उन्होंने किया था। लेकिन प्रयास के अंतिम दिन तक दुनिया महात्मा गांधी की दृष्टि के अनुरूप कार्य करने तथा इन समस्याओं के समाधान खोजने के लिए तैयार नहीं थी। उस समय के सत्ताधीशों ने अपना मुख्य कर्तव्य उनके कार्यों के नामोनिशाँ मिटा देना ही माना। लेकिन उन्हें पता नहीं था कि इस दुनिया में अकल्प्य घटित होकर ही रहता है। उन्होंने इसके पुनरुत्थान की बात सोची ही नहीं होगी।

* * *

ब्रिटिशों द्वारा भारत में दैनन्दिन गाय एवं उसकी संतति की हत्या किए जाने का क्रम विगत १५० वर्षों से भी अधिक समय से बरकरार है। इन वर्षों में गोहत्या में अत्यधिक वृद्धि हुई। जैसा कि गांधीजीने उल्लेख किया है, १९१७ के आसपास लगभग ३०,००० गायों की हत्या प्रतिदिन की जाती थी। १९३९-१९४५ के विश्वव्यापी युद्ध की समाप्ति पर लगभग १९४५ की समाप्ति के आसपास अंग्रेजी एवं अमेरिकी सेनाओं की भारत से वापसी के समय से की जानेवाली गोहत्या की संख्या इतनी ही रही होगी। यही वह समय था जब भारत बूचड़खानों को बंद करना शुरु कर सकता था तथा कुछ महीनों या एक वर्ष के अन्दर अन्दर इस भीषण दूषित उद्यम का अन्त हो सकता था।

ऐसी असीम दैनन्दिन हत्याओं की अनगिनत शाखाएँ, प्रशाखाएँ संभवतः भारत के प्रत्येक जिले में फैली हुई थीं। १८४० तक प्रत्येक जिले में गोहत्या हेतु एक या अधिक बूचड़खाने कार्यरत थे। मद्रास प्रेसीडेन्सी की १८९३ की रिपोर्ट के अनुसार प्रेसीडेन्सी के प्रत्येक जिले में गोमाँस हेतु एक बूचड़खाना कार्यरत था। हत्या से विविध प्रकार का गोमाँस ही प्राप्त नहीं होता था अपितु चमड़ा समेत कई उप उत्पाद भी प्राप्त होते थे। इस सम्बन्ध में यह ध्यातव्य है कि १९४६ में राष्ट्रीय कांग्रेस की राष्ट्रीय योजना समिति की एक उप-समिति ने गो-चमड़े को अत्यन्त मूल्यवान बताते हुए उसके निर्यात की सिफारिश की थी। यह वही कांग्रेस थी जो १८९० के दशक तक गोहत्या का कडा विरोध करती रही थी। अब यह बूचड़खानों को बंद करने के पक्ष में बिल्कुल भी नहीं थी। इस समय तक लोगों के बूचड़खानों से जुड़े हुए अन्य हित भी होंगे, जैसे कि जो वास्तव में पशु हत्या करते थे, बूचड़खानों का प्रबंध करते थे, तथा बूचड़खाने के मालिक थे तथा हत्या के उपरांत प्राप्त विविध उप उत्पादों के व्यवसाय से जुड़े हुए थे। सम्भवतः सन १९४६ में यह भारत का सर्वाधिक व्यापक एवं सबसे

बड़ा सफल औद्योगिक उद्यम था। अतः इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि बूचड़खानों को चालू रखने के लिए अत्यन्त शक्तिशाली प्रकोष्ठ कार्यरत थे। वे इनके बंद होने का जमकर विरोध कर रहे थे। ब्रिटिश सेनाओं के भारत से प्रस्थान के पश्चात् भी ब्रिटिश नागरिक उस समय माँस का निर्यात करनेवाले सर्वाधिक शक्तिशाली प्रकोष्ठ के रूप में सन्नद्ध थे। आज इन्होंने माँस-उत्पादन का विस्तार कर दिया है। उप-समूह-११ माँस क्षेत्र की रिपोर्ट से संकेत मिलते हैं जिनके बारे में दसवीं भारतीय पंचवर्षीय योजना २००२-२००७ के इन पक्षों पर तैयारी करते समय चिंता व्यक्त की गई है।

उपर्युक्त उप-समूह की रिपोर्टों एवं सिफारिशों को तथा कार्यसमूह द्वारा इनकी जाँच किए जाने से यह कहा जा सकता है तथा उनके पाठों के आधार पर भी यह सिद्ध होता है कि जीभ के स्वाद का मजा उडाने के लिए बड़ी भारी संख्या में पशुओं की हत्या की जाती थी। हालाँकि आज भी लिखित साक्ष्यों का अवगाहन किया जाए तो स्थिति में कोई खास परिवर्तन नहीं आया है। १९७० के दशक के मध्य की भारतीय कृषि आयोग की रिपोर्ट पढ़ने से पता चलता है कि इसमें लाखों भैसों का प्रजनन एवं पालन करने की सिफारिश केवल दूध प्राप्त करने के लिए न होकर मूलरूप से उनकी हत्या से माँस प्राप्त करने के लिए की गई थी। इससे पता चलता है कि १९५० के दशक से हमारी पंचवर्षीय योजनाओं ने इसी लीक पर चलकर कार्य किया है। उनके अध्यक्षों - जिन में भारत के प्रधानमंत्री इसके अध्यक्ष होते हैं - उपाध्यक्ष के पद पर कार्यरत किसी वरिष्ठ मंत्री ने सुनियोजित रूप से पशुओं की हत्या और तेजीसे करने को भी अनुमोदित किया था। दसवीं योजना में 'उपसमूह : माँस क्षेत्र' के सुझावों को लागू करके सभी प्रकार के पशुओं की हत्या बड़े पैमाने पर बढ़चढ़कर किया जाना सोचा जा सकता था। ५०,००० अतिरिक्त बूचड़खानों की स्थापना किए जाने के विचार से ऐसा लगता है कि आयोग के वर्तमान उपाध्यक्ष के विशिष्ट अनुमोदन को मुख्य रूप से लागू करने का कार्य हो रहा है तथा आयोग के अध्यक्ष भारत के प्रधानमंत्री का भी इस कार्य में संभवतः अनुमोदन प्राप्त हो चुका है।

फिर भी, एक आशा की किरण शेष है कि उपसमूह के इस विचार को योजना आयोग द्वारा निरस्त किया जाएगा तथा इस तरह का कोई भी अनुमोदन भी नहीं मिला होगा। यदि इस तरह का कोई अनुमोदन दिया भी गया होगा तो भारत के लिए यह अत्यन्त दुखद स्थिति होगी। इससे सिद्ध होगा कि पशुओं की हत्या अन्य देशों की

अपेक्षा भारत में अधिक होती है। केवल वे ही लोग नहीं जो गोहत्या के विरोध में आन्दोलन करते हैं तथा प्रचार करते हैं, अपितु उनके साथ साथ यदि भारत के सभी लोग एकजुट होकर जोर देंगे तथा विविध साधनों का इस हेतु उपयोग करेंगे तथा इस आत्मविस्मृति एवं सत्ता में बैठे लोगों की गलत धारणा को दूर करके उन्हें अपावन कार्यों से रोककर पावन कार्यो की ओर उन्मुख करेंगे तभी भारत एक बहुत बड़े राजनीतिक एवं सामाजिक युद्ध को जीत पाएगा।

✿ ✿ ✿

फिर भी, इनमें मात्र उपरि उल्लिखित स्वार्थों तक बात सीमित नहीं है जिसकी वजह से भैंसों, गायों तथा उसकी संततियों समेत सभी प्रकार के पशुओं की हत्या बड़े पैमाने पर की जाती है। अंग्रेजों के भारत पर शासन के १५० वर्षों या उससे भी अधिक समय में भारतीय समाज में फूट पड़ गई है। समय बीतने के साथ, विशेष रूप से परंपरागत भारतीय शिक्षा को खत्म करने तथा विनाश के कगार पर पहुँचाने से तथा भारतीय राज्यों में नए शिक्षा प्राधिकारियों ने पढ़ने के लिए अंग्रेजी ढर्रे के पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकें निश्चित करके लागू कर दी हैं। भारतीय पाठ्यपुस्तकों की पाठ्यवस्तु में इंग्लैंड के उच्चाधिकारियों की भी गहन रुचि रही है, जैसे कि ब्रिटिश प्रधानमंत्री पाल्मेर्स्टन ने १८५७-५८ के दौरान रुचि दिखाई थी। भारत सरकार को उनकी सलाह थी कि भारतीय मूर्तिपूजा को इससे तुरन्त निकाल देना चाहिए।

तत्पश्चात् शीघ्र ही प्रवर्धित रूप से बड़ी भारी संख्या में भारतीय लोगों ने अंग्रेजों के ढर्रे पर चलना आरम्भ कर दिया और उनके जीवन मूल्यों को अपनाना शुरू कर दिया, परिणाम स्वरूप वे अपने निजी जीवनमूल्यों, शिष्टाचारों, परंपराओं, रीति नीति, आचार विचारों को छोड़ गए। भारतीय जीवनमूल्यों को वे निकृष्ट कोटि का सिद्ध करने लगे। नई शिक्षा के माध्यम से विदेशी प्रभाव से प्रेरित होकर गाय की मंगलकारी एवं पवित्रता के प्रतीक रूप में भावना भी शनै-शनै आहत हुई। भारतीय लोग भारी तादाद में बढ़ती हुई लोक संख्या में गाय के प्रति मतभेद की भावना पैदा होने लगी और यदि सन् १९०० के पश्चात् गाय के बारे में सोचते भी थे तो मात्र दूध देनेवाली गाय के बारे में ही सोच पाते थे। पवित्रता एवं मांगलिकता की भावना उनके दिमाग में पैदा नहीं होती थी। यूरोपीयों ने इस दृष्टि से गाय को अधिक उत्पादनक्षम माना था। सन्

१९२० के अंत तक, जब भारतीय कृषि पर रॉयल आयोग की रिपोर्ट आई, भारतीय गाय के प्रति पश्चिमी शिक्षा के रंग में रँगे एवं शहरी अभिजनवर्ग में अत्यन्त उपेक्षा भाव पैदा होना आरम्भ हुआ।

फिर भी, सामान्य भारतीय गाय के विरोध में एक शब्द भी नहीं बोलते लेकिन गाय के संरक्षण एवं उसकी जीवनरक्षा का प्रश्न उनकी शक्ति की सीमा में नही रहा। वह उनके बस की बात नहीं रही। वास्तव में, सन् १९४७ तक तथा उसके बाद ९५ प्रतिशत भारतीयों में गाय के लिए सम्मानजनक भाव फिर भी बरकरार था। यदि किसी गृहस्थ के घर में एक या दो गाएँ होती थीं तो उसके लिए यह बड़े सौभाग्य की बात समझी जाती थी। *१९४७ के आसपास भारत में सामान्यतः ५० प्रतिशत गृहस्थों के* पास एक जोड़ी बैल थे या फिर वे इन्हें कृषि जोत के लिए उपयोग में लाते थे।

भारतीय शिक्षा के ह्रास का सामान्य प्रभाव विशेष रूप से भारतीय ज्ञान के सभी क्षेत्रों में यह था कि वे अपनी स्मरणशक्ति खोने लगे, जानकारी तथा तकनीकी विशेषता से कुंठित होने लगे तथा उनकी प्राचीन काल से परंपरागत रूप में स्मरण शक्ति के विकास की बात धीरे धीरे लुप्तप्राय होने लगी। उनके स्थान पर नई पाठ्यपुस्तकें आ गईं। पश्चिमी इतिहास की कुछ सूचनाओं को इसमें समाहित किया गया। भारतीय के स्थान पर पाश्चात्य को रखने का यह क्रम बड़ी ही त्वरित गति से चला जिसकी वजह से नवीन यथार्थ सामने आए। भारतीय समाज और जीवनशैली कुछ सन् १८०० के पूर्व के पाश्चात्य रूप रंग में ढलने लगे और भारतीय अपनी नई पाश्चात्य छवि स्वीकार करने लगे। परिणाम स्वरूप, भारतीय कृषि, विविध प्रकार की भारतीय तकनीक या भारतीय औषधि जो कि सन् १८०० तक अत्यन्त प्रभावी एवं अत्यन्त परिष्कृत एवं सुविज्ञ थी, उसे १८५० आते आते निष्प्रभावी, निकृष्ट एवं त्रुटिपूर्ण कहा जाने लगा।

भारतीय तथा देशी चीजों के प्रति स्मृति के ह्रास से निकृष्ट रवैया अपनाए जाने से असंख्य भ्रम एवं चूकें हुईं, यथा : आज भी गाय, बैल, साँड़ या बछड़े मरने के पश्चात् उनके निपटारे विषयक काफी गलत सूचनाएँ दी जाती हैं। आज लोगों की आम धारणा यह बन गई है कि उनका चमड़ा प्राप्त करने के लिए उनकी खाल उतार ली जाती है। तथापि, आज भी अपने गृह क्षेत्रों की बातें लोग बताते हैं, जैसे कि उत्तरप्रदेश गोला गोकर्णनाथ में इस विषय में आज प्रचलन है कि वहाँ मृत गाय को दफना दिया

जाता है। उस क्षेत्र के एक सामाजिक कार्यकर्ता एवं शिक्षक ने स्वयं अपनी आँखों के सामने आठ से दस ऐसी दफनाए जानेवाली घटनाएँ देखी थीं। हाल ही में, सन् २००२ में तमिलनाडु में मदुरई के नजदीक के गाँव में जब एक बैल की मृत्यु हुई तो उस गाँव के १२ लोगोंने उस बैल के सम्मान में शोक व्यक्त करने के लिए अपने सिर के बाल मुंडवा लिए। तत्पश्चात् उस बैल को मंदिर के पिछवाड़े दफनाया गया और उस के सम्मान में समाधि बनाई गई। राजस्थान में कुछ समय पूर्व, एक ग्रामीण महिला ने अपनी बीमार गाय के स्वास्थ्यलाभ के लिए धर्मग्रंथ के पाठ कराने का आयोजन किया था लेकिन जब गाय ठीक नहीं हुई और उसकी मृत्यु हो गई तो उस महिला ने मानव की मृत्यु के पश्चात् किए जाने वाले सभी विधिविधान किए तथा उसे दफनाया गया। आज भी भारत के विविध भागों में ऐसे दफनाने के प्रसंग लाखों मिल जाएँगे। यदि गाय को मांगलिकता एवं पावनता का प्रतीक माना जाता है तो जब उसकी या उसकी संतति की मृत्यु होती है तो उसकी वही पवित्रता रहती है जो मानव की मृत्यु होने के पश्चात् होती है। अतः उसके मृत शरीर के साथ किसी भी प्रकार का दुर्व्यवहार नहीं किया जा सकता।

ऐसी स्थिति में लगता है कि भारत में बृहत् स्तर पर गोहत्या करने से पूर्व किसी मृत गाय की खाल उतारी गई होगी। सामान्यतः किसी मृत गाय की खाल उसी स्थिति में उतारी जाती होगी जब उसका माँस आदि किसी के लिए उपयोग में आता हो। सामान्यतः मृत गाय के माँस का उन लोगों द्वारा भी भक्षण नहीं किया जाता जो उसकी खाल उतारते हैं। मृत गाय की खाल व्यावसायिक दृष्टि से भी अधिक उपयोगी नहीं होती। केवल उसी पशु की खाल उपयोग में ली जाती है जिसकी हत्या भोजन के लिए माँस प्राप्त करने के लिए की जाकर उतारी जाती हो। उन्नीसवीं शताब्दी में तथा सन् १९४० तक अधिकांश ग्रामीण भारत भीषण गरीबी की चपेट में रहा। भारत की जातियों में से चमार, महार, माला आदि ने गाय की चमड़ी उतारने से पहले उसके माँस को भोजन के लिए उपयोग करना आरम्भ कर दिया। और यदि उस माँस में से कुछ हिस्सा बच जाता तो उसे सुखा लिया जाता तथा उस का ऐसी ही विकट स्थिति के लिए उपयोग हेतु भोजन के लिए रख लिया जाता। लेकिन ऐसी भीषण घटनाएँ विश्व के काफी बड़े भूभाग में इसी तरह से हुईं। ब्रिटिश शासित भारत में ऐसी घटनाएँ बड़े ही व्यापक स्तर पर असामान्य लम्बी अवधि तक घटती रहीं।

इसके अतिरिक्त गायों की निरंतर हत्या तथा अंततः उनकी खाल उतारना लगभग सन् १८०० से शुरू हुआ होगा। इसका अनुकरण भी बहुत लोगों द्वारा किया गया और उन्होंने भी मृत गायों की खाल उतारनी शुरू की होगी। लगभग ३००-४०० वर्ष पूर्व या सन् १००० के आसपास भारत के अधिकांश भागों में वास्तव में इस सम्बन्ध में क्या कुछ घटित हुआ होगा उसे उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर देखने की आवश्यकता है।

❁ ❁ ❁

पुरातन समय से ही गाय भारत के लोगों के लिए मंगलसूचक एवं पवित्र रही है। लेकिन जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है गाय के सम्बन्ध में विशेषकर पाश्चात्य ढंग से शिक्षित लोगों में इस पवित्र दृष्टिकोण में व्यापकरूप से परिवर्तन आया है। हालाँकि ये लोग आज २-३ प्रतिशत से बढकर १०-१५ प्रतिशत हुए हैं लेकिन ये भारत के राज्यों के ढाँचे में बहुत अधिक प्रबल हैं। ये प्रशासन वर्ग से सम्बन्धित हैं। भारत की शेष जनता, ८०-९० प्रतिशत लोग, भारतीय संस्कारशील विचारधारावाली है। ये लोग गाय को मंगलकारी एवं पवित्र मानते हैं। लेकिन आज वे इतनी तंगहाली एवं गरीबी में जी रहे हैं कि वे गाय को अपने घर के सामने खूँटे पर बंधी देखने का सपना देखने के सिवाय यथार्थरूप में कुछ भी करने में सक्षम नहीं हैं। कुछ भी हो अधिकांश भारतीय गाय एवं इसकी संतति के प्रति आत्मीय प्रेमभाव रखते हैं।

१९४८-४९ के दौरान नए भारतीय संविधान निर्माण के समय गोहत्या पर सम्पूर्ण प्रतिबंध लगाने के लिए बहस हुई थी। व्यावहारिक रूप से समस्त प्रमुख मुसलमानों समेत संविधान सभा के सभी सदस्य इस तरह के प्रतिबंध के पक्ष में थे। लेकिन संविधान का प्रारूप तैयार करने वाले विदेशी शिक्षा के रंग में रँगे प्रबुद्धजनों के दिलोदिमाग में भारत के भावी स्वरूप का निर्माण पाश्चात्य दृष्टिकोण के अनुसार का था। इसलिए उन्होंने गोहत्या पर संपूर्ण प्रतिबंध लगाने का प्रावधान भारतीय संविधान के अभिन्न अंग के रूप में करने की बजाय इसे राज्यों के विधानमण्डलों पर छोड़ दिया।

अंग्रेजों के भारत से जाने के समय से ही भारत के लोगों द्वारा गोहत्या पर तत्काल प्रतिबंध लगाने की मांग जोर देकर करनी चाहिए थी तथा प्रतिबंध लगवाना

चाहिए था क्योंकि ऐसे जोर देकर किए गए दावे अन्य कई मामलों में किए गए। अंग्रेजों ने जून १९४६ के आसपास भारत से जाना तय किया था क्योंकि उनके पास भारत के शासन को चलाने के लिए तथा लोगों की आवाज को दबाने एवं कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए समुचित मात्रा में सेना नहीं थी। हालाँकि उनकी सेना पूरे भारत में थी, फिर भी उन्हें भारतीय सत्ता छोड़कर यहाँ से जाने के लिए विवश होना ही पड़ा। वे यहाँ अपने पैर जमाए रखना चाहते थे लेकिन विवशता के वशीभूत होकर उन्हें जाना पड़ा। लेकिन सन् १९४७ के आरम्भ में स्वतंत्रता दिवस से मात्र दो माह पूर्व ही अंग्रेजों ने मामलों पर बड़ी ही शीघ्रता एवं त्वरित गति से निर्णय लिए तथा दो माह पश्चात् ही वे भारत से चले गए। भारत के लोगों के लिए उन्होंने रणनीति तैयार करने के लिए कोई समय नहीं दिया। भारतीयों को सुनियोजित रूप से अंग्रेजों की तरह ही रणनीति तैयार करनी चाहिए थी। भारत इस समय अत्यधिक आहत था। पूर्ण गतिरोध की स्थिति थी, समस्याओं के अम्बार लगे हुए थे तथा समस्याएँ भी कोढ़ में खाज की तरह ही थीं। अतः भारत के लोग समस्याओँ के चक्रव्यूहों में फँसकर पहले से देखे हुए स्वराज के स्वप्न भी भूलते गए और भारत को स्वतंत्र करने के लिए अंग्रेजों का आभार मानने लगे, उन्हीं की तरह का राजनीतिक एवं प्रशासानिक ढाँचा गढ़ने के हामी हो गए। उसी क्षण से भारत के सामान्य से सामान्य लोगों का भी उत्साह, हौसला एवं विश्वास चरमराने लगा तथा अंतिम अर्द्ध शताब्दी के दौरान निरंतर अपसरण होना ही अपनी नियति बनी।

ऐसा लगता है कि सन् १९४७ में आए भटकाव के पुनर्नवीकरण के लिए पीछे लौटकर पुनः संगठित करने का अवसर ही मात्र भारत के लिए उज्जवल भविष्य का रास्ता हो सकता है। भारतीय मूल्यों एवं स्वभाव के अनुरूप इस तरह का पुनर्गठन करने से भारत में विदेशी मूल्यों के स्थान पर भारतीय जीवनमूल्यों की प्रस्थापना हो सकेगी और व्यर्थ के भार से मुक्ति मिल सकेगी। क्योंकि अभी तो भारत की चहुँदिश प्रगति के सभी रास्ते रुद्ध हो गए हैं। यदि इन अवरोधों को पूरी ताकत से दरकिनार किया जाता है तथा पुनर्गठित होकर भारतीय गाय को उसकी मांगलिकता एवं पवित्रता का भाव पुनः लौटाकर भारत समृद्धि के पथ पर अग्रसित हो सकता है तथा विगत २००-३०० वर्षों में उसका जो विनाश हुआ है (अंतहीन असीम दैनन्दिन हत्या के कारण किसान कंगाल होकर रह गए। वे हल चलाने के लिए एक जोड़ी बैल भी अपने

खूँटे पर बाँध नहीं सकते तथा गाय पालने का भी उनमें दमखम नहीं बचा), उसकी भरपाई हो सकेगी तथा भारतीय गाय उन्हें समृद्धि के पथ पर अग्रसित करेगी।

इस पुस्तक में उल्लिखित घटनाएँ उन्नीसवीं शताब्दी की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटनाएँ है। इनका महत्त्व १८५७-५८ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की घटना से किसी भी तरह से कम नहीं है जिसने भारत के लोगों को एक उदात्त उद्देश्य की सिद्धि के लिए संगठित किया। १८५७-५८ में ब्रिटिशों द्वारा लाखों लोगों की हत्याएँ की गईं। पशुहत्या विरोधी आन्दोलन के चौदह वर्षो में १०,००० से अधिक लोगों की हत्याएँ ही हुई हों। परवर्ती महत्त्वपूर्ण घटनाओं का मनोवैज्ञानिक प्रभाव अधिक गहरा और शक्तिशाली होना चाहिए। पशुहत्या विरोधी आन्दोलन १८९३ के पश्चात् शिथिल पड़ने लगा इसमें विषाद भी महत्त्वपूर्ण घटक हो सकता है। लेकिन इसके अवशेष अभी भी शेष हैं। बस देखनेवाले की नजर की तुर्शी इसके प्रति होनी चाहिए। यदि भारतीयों के भाग्यने जोर दिया तो वे कभी भी इसे पुनः जागृत कर देंगे। १८८० के दशक के पशुहत्या विरोधी आन्दोलन से बहुत कुछ महत्त्वपूर्ण सीख आज का भारत ले सकता है।

अतः गोहत्या पर प्रतिबंध लगाना भारतीयता के प्रति कदम बढ़ना ही कहा जाएगा। भारतीय समाज को इससे मांगलिकता एवं पवित्रता ही पुनः प्राप्त होगी। गाय को उसके खोए सम्मान को पुनः प्राप्त कराकर भारत की वैचारिक उन्नति होगी। इससे पाश्चात्य विचारों एवं भारतीय जीवनमूल्यों के बीच विरोधाभास की स्थिति तो पैदा होगी ही, फिर भी इस तरह की आशंका की परवाह किए बिना भारत के लोगों को उनका पारंपरिक प्राचीन गौरव प्राप्त कराना आवश्यक भी होगा। यह प्रसिद्धि उसी तरह की होगी जिस तरह की ऊपर उल्लिखित रंगपुर (१७८० का दशक), कनारा (१८३० का दशक), वाराणसी (१८१०-११) के लोगों को सफलता के पश्चात् मिली थी। उन्होंने गोहत्या के विरोध में आन्दोलन चलाकर अंग्रेजों के खिलाफ आवाज बुलंद की थी। उस कार्य का ऊपर उल्लेख किया गया है। वे अंग्रेजों के दमन एवं मनमानेपन का विरोध करने के लिए इसी प्रकार के तरीके अपनाते रहे थे।

यदि इसका वास्तव में मूलभूत समाधान निकलता है तो भारत के उन ग्रामीण एवं अर्ध ग्रामीण इलाकों के लोगों को भारतीय संविधान में इस सम्बन्ध में आमूलचूल परिवर्तन कराने पर जोर देना चाहिए। वे ही गोसंरक्षण को भारतीय प्राचीन परंपरा के

रूप में देखते हैं और समझते हैं। नया संविधान उनके सामुदायिक विचारों, पड़ोस एवं प्रकृति के साथ सौहार्दपूर्ण जीवनयापन पर आधृत होना चाहिए। इस नई व्यवस्था के रंग में रँगे लोगों की वैचारिकता के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। उनकी वैचारिकता की झलक इसमें कम से कम आनी चाहिए। वास्तव में इस तरह के प्रयासों से ही इस बीमार मानसिकता से मुक्ति पाई जा सकती है तथा पवित्रता को पुनः स्थापित किया जा सकता है। यदि वे ऐसा करना चाहें तो महात्मा गांधी के विचार इस कार्य में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकते हैं। वास्तव में, वर्तमान कुचक्र से बाहर निकलने के रास्तों की कमी नहीं है। हम जब एक बार भारतीय समाज को उसके मूल स्वरूप की दिशा में पुनर्गठित करना आरम्भ कर देते हैं तो हम भारतीय परंपराओं, जीवन मूल्यों तथा सभ्यतागत संस्कारों से जुड़ सकते हैं। यहाँ यह भी समझना जरूरी है कि दुनिया के समान विचारोंवाले लोग इसमें जुड़े हुए हैं तथा पुनर्नवीकृत भारतीय समाज के साथ जुड़ना चाहते हैं।

सेवाग्राम, जुलाई, २००२

सूची

अ

इ

ई

उ

ए

ख

ग

फ

ब

य

र

ल

लेखक परिचय

श्री धर्मपालजी का जन्म सन् १९२२ में उत्तर प्रदेश के मुझफ्फरनगरमें हुआ था। उनकी शिक्षा डी. ए. वी. कालेज, लाहौर में हुई। १९३० में ८ वर्ष की आयु में उन्होंने पहली बार गांधीजी को देखा । उसके एक ही वर्ष बाद सरदार भगतसिंह एवं उनके साथियों को फाँसी दी गई। १९३० में ही वे अपने पिताजी के साथ लाहौर में कोंग्रेस के अखिल भारतीय सम्मेलन में गये थे। उस समय से लेकर आजन्म वे गांधीभक्त एवं गांधीमार्गी रहे।

१९४० में, १८ वर्ष की आयु में उन्होंने खादी पहनना शुरू किया। चरखे पर सूत कातना भी शुरू किया। १९४२ में 'भारत छोडो' आन्दोलन में भाग लिया। १९४४ में उनका परिचय मीराबहन के साथ हुआ। उनके साथ मिलकर रुड़की एवं हरिद्वार के बीच सामुदायिक गाँव के निर्माण का प्रयास किया। उस सामुदायिक गाँव का नाम था 'बापूग्राम'। आज भी बापूग्राम अस्तित्व में है। १९४९ में भारत का विभाजन हुआ। परिणाम स्वरूप भारत में जो शरणार्थी आये उनके पुनर्वसन के कार्य में भी उन्होंने भाग लिया। १९४९ में वे इंग्लैण्ड, इझरायल और अन्य देशों की यात्रा पर गये। इझरायल जाकर वे वहाँ के सामुदायिक ग्राम के प्रयोग को जानना समझना चाहते थे। १९५० में वे भारत वापस आये। १९६४ तक दिल्ली में रहे। इस समयावधि में वे Association of Voluntary Agencies for Rural Development (AVARD) के मन्त्री के रूप में कार्यरत रहे। अवार्ड की संस्थापक अध्यक्षा श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय थीं, परंतु कुछ ही समय में श्री जयप्रकाश नारायण उसके अध्यक्ष बने और १९७५ तक बने रहे। १९६४-६५ में श्री धर्मपालजी आल इण्डिया पंचायत परिषद के शोध विभाग के निदेशक रहे। १९६६ में लन्दन गये। १९८२ तक लन्दन में रहे। इन अठारह वर्षों में भारत आते जाते रहे। १९८२ से १९८७ सेवाग्राम (वर्धा, महाराष्ट्र) में रहे। उस दौरान चैन्नई आते जाते रहे। १९८७ के बाद फिर लन्दन गये। १९९३ से जीवन के अन्त तक सेवाग्राम, वर्धा में रहे।

१९४९ में उनका विवाह अंग्रेज युवति फिलिस से हुआ। फिलिस लन्दन में,

बापूग्राम में, दिल्ली में, सेवाग्राम में उनके साथ रहीं। १९८६ में उनका स्वर्गवास हुआ। उनकी स्मृति में वाराणसी में मानव सेवा केन्द्र के तत्त्वावधान में बालिकाओं के समग्र विकास का केन्द्र चल रहा है। धर्मपालजी एवं फिलिस के एक पुत्र एवं दो पुत्रियां हैं। पुत्र डेविड लन्दन में व्यवसायी है , पुत्री रोझविता लन्दन में अध्यापक है और दूसरी पुत्री गीता धर्मपाल हाईडलबर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी में इतिहास विषय की अध्यापक है।

धर्मपालजी अध्ययनशील थे, चिन्तक थे, बुद्धि प्रामाण्यवादी थे। परिश्रमी शोधकर्ता थे। अभिलेख प्राप्त करने के लिये प्रतिदिन बारह चौदह घण्टे लिखकर लन्दन तथा भारत के अन्यान्य महानगरों के अभिलेखागारों में बैठकर नकल उतारने का कार्य उन्होंने किया। उस सामग्री का संकलन किया, निष्कर्ष निकाले। १८ वीं एवं १९ वीं शताब्दी के भारत के विषय में अनुसन्धान कर के लेख लिखे, भाषण किये, पुस्तकें लिखीं।

उनका यह अध्ययन, चिन्तन, अनुसन्धान विश्वविद्यालय से उपाधि प्राप्त करने के लिये या विद्वता के लिये प्रतिष्ठा, पद या धन प्राप्त करने के लिये नहीं था। भारत की जीवन दृष्टि, जीवन शैली, जीवन कौशल, जीवन रचना का परिचय प्राप्त करने के लिये, भारत को ठीक से समझने के लिये, समृद्ध, सुसंस्कृत भारत को अंग्रेजों ने कैसे तोडा उसकी प्रक्रिया जानने के लिये, भारत कैसे गुलाम बन गया इसका विश्लेषण करने के लिये और अब उस गुलामी से मुक्ति पाने का मार्ग ढूंढने के लिये यह अध्ययन था। जितना मूल्य अध्ययन का है उससे भी कहीं अधिक मूल्य उसके उद्देश्य का है।

श्री जयप्रकाश नारायण, श्री राम मनोहर लोहिया, श्री कमलादेवी चट्टोपाध्याय, श्री मीराबहन उनके मित्र एवं मार्गदर्शक हैं। गांधीजी उनकी दृष्टि में अवतार पुरुष हैं। वे अन्तर्बाह्य गांधीभक्त हैं, फिर भी जाग्रत एवं विवेकपूर्ण विश्लेषक एवं आलोचक भी हैं। वे गांधीभक्त होने पर भी गांधीवादियों की आलोचना भी कर सकते हैं।

इस ग्रन्थश्रेणी में प्रकाशित पुस्तकें १९७१ से २००३ तक की समयावधि में लिखी गई हैं। विद्वज्जगत में उनका यथेष्ट स्वागत हुआ है। उससे व्यापक प्रभाव भी निर्माण हुआ है।

मूल पुस्तकें अंग्रेजी में हैं। अभी वे हिन्दी में प्रकाशित हो रही हैं। भारत की अन्यान्य भाषाओं में जब उनका अनुवाद होगा तब बौद्धिक जगत में बडी भारी हलचल पैदा होगी।

२४ अक्टूबर २००६ को सेवाग्राम में ही ८४ वर्ष की आयु में उनका स्वर्गवास हुआ।